समस्त आर्य्य (हिन्दू) जाति के प्रति



प्यारेः———

मैं नहीं जानता कि क्या कहकर तुम्हें सम्बोधन करूं!

अपने मन ते जानिये,
मेरे हिय की बात!

तेरह चौदह महीने तुमसे अलग रहकर, विदेशाचीन प्रवासी—होकर, जो कुछ देखा सुना, मनमें जो कुछ "उधेड़बुन" हुई, वह सब तुम्हारे सन्मुख निवेदन करदेना उचित जानकर ही यह गाथा तुम्हारे चरणार्पण करता हूं॥

तुम्हारा अभिन्न
गदाधर.

———

धन्यवाद ॥

अब मोहिं भा भरोस हनुमन्ता ।
बिनु हरि कृपा मिलैं नहिं सन्ता ॥

इस पुस्तक को प्रेस में देने के पहिले इच्छा हुई कि यदि मैं इसपर किन्हीं प्राड्विवाक् महाशय की सम्मति भी प्राप्तकर सकता तो अच्छा होता। इतने में सौभाग्यवश मान्यवर श्रीयुत पण्डित श्यामबिहारी मिश्र, एम० ए०, तथा श्रीयुत पण्डित शुकदेवबिहारी मिश्र, बी०ए०, से आलाप हुआ। तत्क्षणात् प्रफुल्ल मन से उपरोक्त कवि वचन स्मर्ण हुआ ॥

निःसन्देह परमेश्वर की महान् कृपा के बिना उक्त महानुभावों की अनमोल सम्मतियां मैं क्योंकर पा सकता? मैं उक्त महाशयोंका उनकी कृपाओं के लिये सातिशय कृतज्ञ हूं ॥

और अपने प्रिय भाई कुँवर मुकुटसिंहजी तथा श्रीयुत ठाकुर शिवलोचनसिंहजी (जमादार) का भी अत्यन्त अनुग्रहीत हूं कि जिनकी विशेष आग्रह और सहायता से ही यह पुस्तक प्रकाशित कीगई है ॥

गदाधर सिंह.

चीन में तेरह मास ॥

विषय सूची ।

———o———

निवेदन ॥



चीन देश में जो यह सन् १९०० ईस्वी में बाक्सर विद्रोह उठा उसके कारण हमारी अंगरेजी सरकार को भी निज मंत्रिदलोद्धार हेतु सेनासन्धान करना पड़ा था। तदनुसार हमारी सातवीं राजपूत सेना भी तारीख २९ जून १९०० ई० को कलकत्ते से चीन को प्रस्थानित हुई थी ॥

परमेश्वर की कृपासे इस संसार समराङ्गण में हिन्दुस्थानी फौजों की कार्य्यावली सर्वतोभावेन प्रशंसित हुई ॥

युद्धक्षेत्र से लौटेहुये व्यक्ति, विशेषतः सुप्रशंसित, विजय प्राप्त दलके सैनिक की कहानी सुनने को आपका चित्त अवश्य ही चाहैगा। यही जानकर मैंने यह समाचार लिखे हैं। लिखेहैं सब कुछ समर क्षेत्र मेंही, जहांपर आप बिना कहेही जान सकते हैं कि लिखने पढ़ने का कुछ भी सुपास सम्भव नहीं होता!

सुविधा सुपास की बात तो अलग रहै चार घड़ी स्थिर चित्त से बैठने काभी तो सावकाश नहीं होता! सो इस दशा में जैसा कुछ लिखा जाना सम्भव था यथा सक्ष्य उसमें त्रुटि नहीं की गई है ॥

युद्धके समाचार सुनाने के साथ साथ देशके अन्यान्य वृत्तान्त भी संग्रह किये गये हैं जोकि आपको अवश्यही अधिक रुचिकर होंगे ॥

एक तो साधारण सैनिक की लेखनी दूसरे समरक्षेत्र तिसपर भी समय संकीर्णता आदि कारणों से जो कुछ त्रुटियां रह गई हों उनके लिये विज्ञ पाठकजन क्षमा करैंगे!

निवेदक

गदाधर सिंह.

—ओ३म्—

चीन में तेरह मास

चीन संग्राम.

—समुद्र यात्रा—

मसीही संवत् १९०० के जून २९ तारीख को-मैं बंगाल की सातवीं राजपूत पलटन के हेड कार्टर के साथ "पालम कोटा" नामक जहाज पर कलकत्ता में सवार हुवा॥

ऋतु बहुत गरम थीही-प्रातःकाल ६ बजे के समय फोर्टविलियम से खिदरपूर "डक" तक जाने ही में सबलोग पसीनों से तर होगये थे॥ जहाज किनारे खड़ाथा। फौज रणसाज से सुसज्जित किनारे की रविश पर जमाई गई॥ फोर्ट विलियम के जरनैल लीचसाहब बहादुर ने फौज को यात्रा विषयक एक संक्षिप्त वक्तृता दी। जनरल साहब ने फरमायाः—

राजपूत लोगो! सरकारहिन्द तुम्हारा बहुत विश्वास करके तुम लोगों को चीनदेश को भेजती है॥ चीन में "संसार शक्तियों" का मंत्रिदल वहां की एक नवीन सम्प्रदाय (बाक्सर) के लोगों से बहुत दुःखित हुवा है-उसी के उद्धार के लिये यह रण रंग रचागया है। तुमलोग तनमन से-मन प्राण से सरकार के कामपर ध्यान दो। और "फतह" करो॥ तुम्हारी यह फौज पहिले भी सन् १८५८-५९ ईस्वी में चीन की मुहिम्म पर गई थी। सो यह यात्रा तुम्हारे लिये नयी नहीं है। उम्मैद है कि तुमलोग कामयाब होगे॥

हुर्रे-जयजय कार-इत्यादि की ध्वनि हुई और फौज जहाज पर सवार हुई!

दिनभर जहाज किनारे ही पर रहा। लग भग चारबजे सायंकाल किनारे से हट कर बीच नद में नवाब वाजिदअली शाह के मटिया बुर्ज के "ज़ेर साया" खड़ा रहा॥

फौज को युद्ध यात्रा की आज्ञा मिलने के दिन से अर्थात् २० जून से २८ जून तक रात्रिन्दिवा कारवारमें जुटे रहने के कारण २९ को जो तनिक सावकाश मिला तो मुझ को तो सिवाय अपने "कैविन" (जहाज में रहने की कोठरी) में पड़े रहने के और कुछ भी न सूझा!

सायंकाल दिन अस्त होते समय जो बाहर निकल कर " अपरडेक " (ऊपर की छत) पर जाकर इधर उधर देखने लगा तो मन में न जानें क्या क्या भाव उदय होने लगे ! अस्ताचल को चलता हुवा सूर्य्य जो अपनी रक्तिमा मय प्रतिच्छाया गंगाजल पर विस्तारित किये था, उस से समस्त जल आलोकमय दीख पड़ा !

हिलोड़ें खाता हुवा जल रह रह कर बिजली की भांति अपूर्व चकाचौंध मचा रहा था ।

देखते ही देखते न जल की चंचलता और न सूर्य्य भगवान् की लालिमा ही शेष रही ! सब कुछ धीरे धीरे अंधकार में परिवर्तित होने लगा !! वा यों कहिये कि अन्धकार के काले सागर में लीन होगया ॥

मन में एक प्रकार का भय उत्पन्न हुवा ! भगवान् ! क्या यही गति प्राचीन चीन देश की भी तो नहीं करने वाले हैं ? नहीं तो प्रायः चार हजार वर्षों से शान्ति मय सुपुप्त देश के कतिपय वंश क्यों इतना उद्धत स्वभाव हो उठे हैं ? जो सुशीतल श्वेत वर्ण जल में भी रक्तिमा दीख पड़ने लगी !

क्या चीनका शुभ्र चन्द्रमा भी अस्त हुवा चाहता है ? आर्य्यावर्त का प्रचण्ड मार्तण्ड तो अस्त होही गया !!!

मन में तरंग उठी कि चीन के पड़ोसी जापान ने चीन की हीनता प्रत्यक्ष कर दी है ? सत्य है:—पड़ोसी का विवाद हानिकारक होता ही है !

" घरका भेदिया—लंका दाह " ॥

चंचल मन दौड़ता हुवा जापान जा पहुंचा ! स्मरण हुवा कि जापान जिस समय परदा नशीनी हालत में था अर्थात् महाराज " मिकाडो " जब परदे ही में बैठकर राजकाज किया करते थे तब एकबार अमरीका सरकार से युद्ध ठना था और जापानको शिकस्त हुई थी ! वह शिकस्त ऊंघते को ठेल वा डूबते को तिनका की सदृश होगई थी । तभी से " मिकाडो महाराज " अंधेरे से उजाले में पधारे—परदे में जो वस्तुवें कभी न देखसके थे उन्हे बाहर आते ही प्रत्यक्ष देखने लगे ।

उन्होंने न केवल परमेश्वर भगवान् के भरोसे उनकी दी हुई लालटेन सूरज के ही प्रकाश में काम करना आरंभ किया वरन अपनी करतूत को भी उस में जोड़कर अंधेरे में इलेक्ट्रिक लाइट (बिजली की रोशनी) से उजाला करके

परमेश्वर को बड़ी मदद पहुंचाई और परस्पर सहानुभूति (खुदा और खुद) के द्वारा अपने देश को वह उन्नत दिन-दिनमणि दिखला दिया जो आज सब आंख वाले निहार रहे हैं॥

मनमें आया क्या चीनकी सन्तान भी तो इसी तरहकी जाग्रत अवस्था को नहीं प्राप्तहुवा चाहती? तब तो मुकाविला खूब सख्त होगा॥ जोहो—हमैं तो अपनी सर्व शक्तिमान् सरकार की ही जय चिन्ता है। परमेश्वर हमारी जय करैं॥

सोचते सोचते खूब अंधेरा होगया। कलकत्ते में जलतेहुये कुछ चिरागों के सिवाय और कुछ न सूझने लगा!

"डेक" से उतर "केबिन" में जाकर घरपर का पकाहुवा भोजन जो मौजूद था उसे खाकर लेट रहा॥

इस कहानीको पढ़ने सुननेवाले कोई कोई महाशय शायद हसैंगे कि "केबिन" तो सिर्फ सोनेकी जगह है। भोजन तो "सलून" में करनाथा। परन्तु भाई! सिकाडो वाला परदा अभी सिर्फ जापानही से तो उठा है। हिन्द में तो परदा न केवल घरों वा वस्तुओंहीं पर, वरन अक़्लों परभी तो खूब आच्छादितहै! इतना कि कहीं हवाभी न लग सकै! डर है कि बिना हवा के कहीं दम न घुटजाय! फिर भला मैं "सलून" में क्योंकर खाना खा सकता था? सो महाशय! उस पहिले दिन तो खाया अपनी कोठरी ही में और घर परका पकाहुवा भोजन॥ परन्तु आगेआगे हमारे हज़ारे बेड़े में कोईभी छूआ छूतका विचार बाकी नहीं रह गया!

खाने पीनेकी चर्चा अभी और भी आपको सुनाना पड़ेगी। क्या आपने नहीं सुना "भूखा बङ्गाली भातही भात" चिल्लाता है? उसी तरह हमारा भुक्खड़ आर्य्यावर्त देश अब जिधर सुनिये उधरही केवल खाने पीनेही की चर्चा में मगनहै!

हिन्दू किसी के हाथका खानेही से पतित होजाता है-बाजपेयी जी तिवारी जीके हाथ का न खायँगे! अंग्रेजी पढ़ेवाले आधे किरिस्टान हैं क्योंकि कपड़ा पहिने रोटी खालेते हैं। पश्चिम के ब्राह्मण श्रेष्ठ नहीं क्योंकि ब्राह्मण खत्री साथ बैठकर खालेतेहैं। कनौजिया ब्राह्मण अच्छे नहीं क्योंकि मांस मछली खालेते हैं! और कश्मीरी इस लिये अच्छे नहीं कि मुरगी भी नहीं छोड़ते!

(सारी बड़ाई छोटाई और "धर्म-अधर्म" खाने पीनेही पर निर्भरहै) इत्यादि यही सब तो हमारी नित्य की गप्प शप्प होरही हैं!

अधिक क्या कहूँ-जिस आर्य्यसमाज ने आर्य्यावर्त्त के उद्धार का बीड़ा उठाया है-वेदका उपदेश संसार भरमें एक ओर से दूसरे छोर तक प्रचारित करने का व्रतधारण किया है कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था का "एलान" दिया है-वही आर्य्यसमाज भी तो आज "खाने पीने" के झगड़े में उलझपड़ाहै!

पापी पेटको मांस से भरें कि घास से! पुरुषों को भोजन ब्राह्मणों के लेटर बक्स द्वारा भेजें या जीवितों के पेटभरने ही पर संतोष करें?

शोकहै कि ऐसे बड़े महान उद्देश्य वाला आर्य्यसमाज भी इसी पापी पेट के झगड़े में लिपट रहाहै!

गोस्वामी तुलसीदासजीने सत्य कहाहैः-

आरत काह न करैं कुकर्मू !!!

सो हम आरत भारत सन्तान क्षुधा पिपासा और अशन वसनसे त्रसित इन्हीं बातों के लिये झगड़ने के सिवाय उच्चाभिलाष और उच्च वासनायें कहांसे लाते?

अशनं वसनं वासो-येषां चैवाविधानता!

मगधेन समा काशी-गंगाप्यङ्गारवाहिनी!

अशन वसन और बासका जिन्हें त्रासहो-उनको काशी भी उजार और गंगा भी अंगार दीखपड़ती हैं॥

सो हमारे दुर्भाग ने आर्य्यसमाज में भी हमें शान्ति न मिलने दी!

जिस आर्य्यसमाज का महान् उद्देश्य "संसार भरका उपकार" करना है। जिसकी उच्चघोषणाः-

"उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य, वरान्निबोधत"!

है वही यदि उपरोक्त तुच्छ झगड़ों में अपना अनमोल समय बितावे तो निस्तार की आशा कहां से कीजावे?

इसीसे तो कहते हैं कि भूखे को भातही भात सूझताहै।

सो यदि हमारी पल्टन में जहाज पर सवार होतेही खाने पीनेकी वार्ता छिड़ी तो क्या आश्चर्य?

सफर एक दो दिन वा चार छः दिन का न था! जाना था जहाज द्वारा अनुमान से पूरे पच्चीस दिन! दो एक दिन तो अपना चौके का पकाया हुवा भोजन जहाज पर लोग खाते रहे! आगे एकादि दिन चना चबैना खाकर रहे! दोएक दिन जहाज के हालाडोल-तूफानी वायु वेग के झकोरों से और समुद्र यात्रा अनभ्यस्त होने

से प्रायः सभी लोग चक्कर में पड़े रहे, जब इनसब झझटों से पार हुये, तबीयतें कुछ स्वस्थ हुईं-बहुतेरों को अनाहार वा स्वल्पाहार के कारण बहुत सुस्त वा मूर्च्छित पाया गया-तब खाने पीनेकी बात फिर उठी। सूबेदार मेजर गुरदत्त सिंह बहादुर तथा डाक्टर रामदत्त अवस्थी साहब एवं और भी कतिपय विचारवान् महाशयों ने सब सरदार लोगों और ओहदेदारों को समझाया कि बीसपचीस दिन निराहार वा स्वल्पाहार अथवा शुष्काहार रहकर क्या खाक युद्ध करेंगे? जिस शीघ्रतासे यात्रा कर रहे हैं जहाज डबलस्पीड (दूनीचाल) से चल रहा है और युद्ध क्षेत्रके संबाद जैसे भीषण मिले हैं उससे क्या अनुमान हो सकता है कि उतर कर एक दिन भी बैठना मिलैगा? कदापि नहीं! उतरतेही रण रंग रंजित होनाहै तो क्षुधार्त्त-सुस्त-मूर्च्छित फौज कहो तो क्या कर दिखावैगी? हफ्तों सूखा आहार खाकर प्रथम तो जहाज से उतरतेही एक महीना वा अधिक डायरिया (दस्त) रोगसे मुक्ति लाभ करने-को दरकार होगा! फिर राजपूतों से सरकार क्या खाक उम्मेद कर सकती है?

इस लिये सबको उचित है कि अच्छी तरह जहाज पर खाना पकावें और इच्छानुरूप भरपेट खावें-ताज़े तगड़े बने रहें। युद्धमें नामवरी हासिल करें॥

सब सरदार लोग सहमत हुए और अपने अपने समुदाय (कम्पनियों) को भली भांति समझाया॥

जो राजपूत जाति सदासे युद्ध प्रिय है, जिसका व्यवसायही युद्ध है और जिसका जन्महीं युद्धके लिये है उस जातिको इतना कहना आवश्यकतासे भी अधिक हुवा॥

यदि खाना न खायँगे तो जहाज से उतरतेही "डायरिया" होजायगी और युद्धके लायक न रहेंगे। यह तो बड़े दुःखकी बातहै!

"राजपूत" युद्धकी अयोग्यता का अपमान नहीं सहन कर सकता! युद्धमें नामवरीही उसका जीवन सर्वस्व है, **जीवनोद्देश्य** है!

तुच्छ खाने पीनेहीके कारण हम युद्धके अयोग्य होजायँगे-तो हम ऐसी परहेज़गारीही को लेकर क्या करेंगे? जिससे हमारी जाति कलंकित हो!

बस प्रायः सभीलोगों ने प्रसन्नता पूर्वक खाना पकाना स्वीकार किया जहाज का लौह मय बावरचीखाना खूब पानी से साफ सुथरा करदियागया (क्योंकि पहिले उसमें मुसलमान खलासी वगैरः भूना पकाया करते थे) और "पंडित

बावरचियों" को (सिपाही लोग रसोइया को पण्डित कहते हैं) पकाने में नियुक्त किया गया ॥

फिर तो खूब मजे से सब लोग पांतकी पांत बैठते और पण्डितलोग एकओर से परोसते खिलाते थे। दोही तीन दिनमें सब लोग फिर ताजे तगड़े दीख पड़ने लगे !

अंगरेज अफसर लोगभी हमारे भाइयोंके इस कर्तव्य से बहुत प्रसन्न हुए और विश्वास किया कि वास्तव में हिन्दुस्तानी लोग आवश्यकता पड़ने पर सब कुछ कर सकते हैं !

इनका विश्वास सदाशुभ होगा-धोखा किसीप्रकारसे कभी नहीं होसकता। सरकार की तनिक भी हेठी यह लोग सह्य नहीं कर सकते !

गंगासागर पार कर बंगाले की खाड़ी में बढ़े-सबओर जलमय दीख पड़ने लगा ! जल और आकाश भिन्न संसार में मानो कुछभी नहीं रहा !

इसी भांति कितनेही पानी पार करते हुए जहाजरूपी जलचर चलता रहा ! पानियों का विशेष विवरण करके जुगराफ़िया खोलना आवश्यक नहीं-हिन्द से चीनको जो राह आप जानते हो बस वही हमारा भी पन्था या देवयान समझ लीजिये ! क्योंकि हमारे हिन्दू शास्त्रकारों ने ऐसाही कहाहै-

येनास्य पितरो याता, येन याता पितामहाः। इत्यादि ॥

राम राम भला हिन्दू मर्यादा छोड़ मैं अथवा हिन्दू राजपूत फौज अन्य किसी मार्ग से क्या चीन जासकते थे ?

हमारे बूढ़े अर्थात् १८५८ साल वाले सिपाही भी इसी राहसे चीनको गये थे॥ उसी सनातन मार्ग से हमभी चले ॥

चले तो थे लड़ाई पर-लड़ाईमें सभी जानते हैं बन्दूक तोप सब कुछ चलाना होताहै। परन्तु एक बात सुनकर आप पाठक वा श्रोतालोग विलक्षण अचरज करेंगे ! अचरज यही कि जो बन्दूकें पल्टन के पास थीं उनका चलाना कोई न जानता था ! तोपभी थी "मेगज़िम गन" (Maxim Gun) वह भी कैसे भरी दागीजाती है सो सिपाहियों में कोई भी न जानता था !

कहिये तो भला-इससे भी अधिक आश्चर्य की बात और कुछ होसकती है ? परन्तु इसमें एक कारण था :—

हिन्दुस्तान की फौजों में यह चाल देखने में आई है कि हिन्दुस्तानी सिपाहियों की अपेक्षा गोरे सिपाहियों को एक दरजा उत्तमतर हथियार दिये जाते हैं॥ अधिक दूरकी बात तो मुझे याद नहीं है अभी उनदिनों सन् १८८६ ईस्वी में जब हिन्दुस्तानी सिपाहियों के पास "ब्रीचलोडर" ब्न्दूक थी तब गोरों के पास "मार्टिनी हेनरी" और ब्रह्मा की लड़ाई के बाद सन् १८८७ में जब गोरों को "मेगज़ीन" बन्दूक दीगई तब हिन्दुस्तानियों को "मार्टिनी" मिली ! सो फौजी सनातन धर्म हिन्द में यही था कि गोरों की अपेक्षा काले एकदरजा कमज़ोर हथियार पावैं॥

तदनुसार हमारी फौज में भी मार्टिनी बन्दूक थी॥

जब ता० २० जून १९०० ई० को चीन युद्ध यात्रा का हुक्म मिला तब कर्तारों को यह विचार भी उपस्थित हुवा कि पुरानी भद्दी मार्टिनी बन्दूक लेकर काले काले सिपाही जब संसार भरकी शक्तियों के साथ साथ (बाजू ब बाजू) लड़ने चलैंगे तब हमारी (ब्रिटनकी) हेठी अवश्य होगी। हमारे हथियारों के भद्देपनपर हँसी अवश्यही उड़ैगी॥

यही सोच विचारकर सनातनधर्म की भी परवाह छोड़कर (जैसे आजकल बहुतेरे पढ़े लिखे लोग निज भद्देपनके "रिफार्म" (सुधार) पर उद्यत होजाते हैं और सुधार करही छोड़ते हैं) हमारी फौज को वही गोरी बन्दूक "ली मेटफोर्ड" उन्हीं पांच छः दिनों के दरमियान येन केन प्रकारेण बांट दी गई थी॥

बस वही बन्दूकें लेकर हम लोग जहाजपर सवार हुये थे॥

यद्यपि बन्दूक चलाना नहीं जानते थे। पर कवायद और मस्केटरी (इल्म गोलन्दाज़ी) जानने वाली फौज के लिये यह त्रुटि एक बहुत सामान्य सी थी॥ मस्केटरी के थियोरी और प्रिन्सपेल (अस्त्र संचालन विद्या और उद्देश्य) जाननेवाले लोगों को केवल हथियार के नमूना मात्रकी तबदीली कुछ विशेष यत्न की सापेक्ष न थी। तौभी एकादिवार अभ्यास करना—गोली चलाकर देख लेना आवश्यकही था। तदनुसार जहाज पर दोनों वक्त सिखलाई की परेड होने लगी। चलते हुये जहाज के पिछाड़ी उछलते हुये पानी पर टीन या कागज के पुलन्दे फेंककर उन्हींपर निशाना और फायरकी शिक्षा दी जाने लगी॥

कहा जाता था कि तमाम यूरोप की शक्तियां जो चीन को चबाने चढ़ी हैं

उन सबोंके पास यही नवाविष्कृत रायफल है । न केवल यही वरन चीना इम्पीरियल फौज भी इसी हथियार से सज्जित है, सो हे राजपूतो ! तुम लोग यदि तनिक भी इस बन्दूक के काम में कमजोर रहे तो बड़ी बदनामी की बात होगी । और तुम्हें भी अच्छा न होगा । बन्दूक चलाना न जानोगे तो क्या दुश्मन के पहिले शिकार तुम्हीं नहीं होगे ?

सो हमारे राजपूत लोग सब चिन्ता त्याग तन मन से बन्दूकमय बनते हुये डबल स्पीड से पानीपर रेंगते चले जाते थे ॥

—नोट—

हिन्दुस्तान में विलायत यात्रा की गप्पें करते हुये मेरे एक मित्रने कहा था कि जहाज के सफर में कुछ थोड़ी ब्राण्डी या ह्विस्की शराब पीना बहुत लाभकारी होता है ॥ मैं इन बातों को क़हक़हे में उड़ा दिया करता था और इसमें केवल शौकीनों की इच्छा पूर्तिही समझता था । परन्तु स्वयम् जब मुझ को विलायत से भी लम्बा सफर करने का अवसर हुवा तब अनुभव मिला कि उक्त महाशय का कथन किसी अंश में सत्य भी था । जहाज का सफर एक प्रकार की निराली यात्रा होती है । आकाश पाताल के सिवाय—हालाडोल के सिवाय—राशि राशि जल के हिलोड़ों के सिवाय और कूप मंडूकवत् डेढ़ कदम "डेक" के अवकाश के सिवाय वहां चित्त स्थिर रखने का सामान ही क्या है ?

जहाजी सफर में चित्त बहुत चंचल होजाता है । अनेकों प्रकार की भावनायें उठती हैं । ऐसीही दशा में स्थिरता के लिये शायद हमारे मित्रने वह उपदेश किया होगा ॥ परन्तु दूसरे मित्र यह भी कह सकते हैं कि चित्त को स्थिर रखने के लिये उस जहाजी निरालेपन में परमेश्वर का ध्यान क्यों न किया जाय ? देखो शायद वहीं कुछ शान्ति मिल जाय ! प्राणायाम क्या प्राण स्थिर नहीं करसकेगा ?

जो हो—मैं तो दोनों उपायोंमेंसे एकको भी नहीं आज़मा सका ! और न चित्तही स्थिर रहा ! सत्य तो यह है कि जितनी चंचलता (घबराहट) समुद्र यात्रा के मध्य में रही उतनी अन्य किसी अवसरपर नहीं हुई ॥

—०—

आठ नव दिनतक पानी पर "ईश्वर के आत्माकी भांति" डोलता डालता हमारा जहाज सिंगापुर के निकट पहुंचा ॥

मन में एक प्रकार की प्रसन्नता संचारित हुई ! अपरडेक में जाकर दूरबीन से नगर निरीक्षण करने लगे ॥ देखतेही देखते समीप पहुंच गये। बन्दर से "सब कुशल" का सिगनेल (इशारा) मिला । "आगे फौज की बड़ी जल्दी है" "समाचार भीषण हैं" यह भी बताया गया ॥

जहाज ठहराने को फिर कहाँ अवकाश ! "चलाचलेतिसंसारे" की ठहर गई ! सिंहलद्वीप वा सिंहापूर को समुद्रही में छोड़कर हम लोग फिर अपने अपने डेरोंमें पद्मासीन होगये !

देखतेही देखते नगर बस्ती सब मानो प्रलय जलमें मग्न होगई !!

जलमय प्रलय फिरभी चहुंओर भास होनेलगा !

मन में आया क्या यह नौका "नूहकी किश्ती" तो नहीं है? सिवाय अपने और कहीं कोई जीव दीख तो पड़ते नहीं? परन्तु उस "किश्ती" में तो सब जीवधारियों के जोड़े थे—(नहीं तो फिर दुनियां कैसे उपजती—) हम लोग वे जोड़ही हैं। सो वह सन्देह भी दूर होगया ॥

"आगे चले बहुरि रजपूता"

तारीख १२ जुलाई को हाङ्काङ्ग पहुंचे । समय लगभग दश बजे प्रातःकाल ॥ आगे क्या होगा—क्या करना है—सो अबतक कुछ मालूम नहीं ॥ क्षणैकही में कलौनी के कर्तार लोग (हाङ्काङ्ग के सैनिक अफ्सर लोग) लंचारोहण करके (किश्तियों में सवार होकर) हमारे जहाज में आ कूदे ॥

समर संवाद सुना—कि टीनसिन में भारी युद्धका आयोजन है। फौज को अत्यन्त शीघ्र पहुंचना चाहिये । जहाज को सिर्फ कोयला पानी लेने भरका अवकाश दिया जाय। और अवश्यही जहाज में गोला बारूद तोप इत्यादि सामान और भी भरा जाय ॥ यह सब कुछ करके आजही चार बजे रवाना होना चाहिये ॥

प्रस्ताव के अनुसारही कार्य आरम्भ होगया! हमने देखा कि नौकायें भरभर कर अम्यूनीशन के बाक्स गोले और पीपे आने लगे । वही चीनालोग नौकारोही—मजदूर—कुली-खलासी-इत्यादि सब काम में नियुक्त—कैसा दृश्य था ? इस को अधिक न कहूंगा क्योंकि "हिन्दू" को "पाप" का भी तो बड़ा डर है !!!

कई घंटों का अवसर था—अंगरेज अफसर लोग प्रायः नौकाओं द्वारा शहर को पधारे। हमभी कतिपय महाशयों के साथ नौकारूढ हो किनारे जा उतरे। कई दिनोंबाद भूमिस्थ होपाये थे—बड़ा आनन्द हुवा॥

जहाज परही कई पत्र लिखे थे सो उन्हे भेजने के वास्ते सर्व प्रथम डाकखाने की खोज हुई। डाकघर मिला परन्तु हिन्दुस्तानी अंगरेजी चांदीका सिक्का डाक के कर्तार लेंगेही नहीं टिकट मिलै तो क्योंकर?

जहाज पर तो हमारे साथ गिनी, पाउंड—सेर-पसेरी सब थे पर अपने साथ में था केवल रानी सूरत का रुपैया! समय बहुत संकीर्ण! हमने बहुत कोशिश की कि हमारे हिन्दुस्तान का महाराणी मूर्तिसम्पन्न रुपया हांकाङ्ग ब्रिटिश उपनिवेश में कहीं तो आदर पावे परन्तु शोक कि किसी सरकारी कर्मकारने न अपनाया॥

एक चीना महाशय ने जो अंगरेजी बोलते थे कहा कि बैंक में जाकर रुपये डालर से बदललो। वही करने के लिये हम बड़ी तलाश से बैंकमें भी पहुंचे पर वहांभी जवाब सूखाही मिला!

अन्ततः एक कोठी के द्वारपर कुछ पारसी पोशाक के सभ्य दीखपड़े। हमने उनसे जाकर अभिवादन किया और अपनी आवश्यकता प्रकट की। उन्होंने बड़ीकृपा से डालर बदल दिये और सज्जनता पूर्वक आलाप किया॥ समय की कमी के कारण हमको दौड़ादौड़ पड़रही थी। ज्योंत्यों कर अपने सब आवश्यकीय कार्य समापनकिये और फल फलादि ले लिवाकर पुनः जहाज को रवाना हुये॥ कालनी का म्यूनिसिपेल बाज़ार दो मंजिला बहुतही सुन्दर बना हुवा है। वहां सभी चीजें बिकती हैं—कोई कोई दूकानदार कुछ कुछ दो एक बात अंगरेज़ी बोलते हैं शेष सब इशारों से सौदा सुलुंफ (विदेशियों के साथ) निपटाते हैं॥

यह बाज़ार घाट के समीप ही है सो जहाजी यात्रियों के लिये अधिक सुविधा भी होती है॥

"हांकाङ्ग" ब्रिटिश सरकार की एक कालनी है सो तो सब लोग जानतेही हैं। बड़ा सुन्दर साफ सुथरा शहर है। पहाड़ काट काट कर बसा प्रतीत होताहै॥ प्रत्येक गली में मानो कोठोंपर चढ़ना होताहै॥

ट्राम गाड़ी भी भूलभुलैयों की तरह बड़े फेरफार से चलती है॥

हांकाङ्ग रेजिमेंट भी हिन्दुस्तानी लोगों की है ॥ इसकी दो कम्पनियां आगे लड़ाई को जा चुकीथीं ॥ सम्पूर्णनगर परिधि में छव्वीसमील है । वह चोटी जिसपर अंग्रेजी झंडा दोलायमान होरहाहै वह उंचाई में १८२५ फुट है ॥

हांकाङ्ग की प्रजा सुखी प्रतीत होतीथी । उद्विग्नता का चिह्न उनपर दीख नहीं पड़ता था । यह बस्ती अंग्रेजी अमलदारी में ता० ५ अप्रैल १८४३ ई० में शामिल की गई थी ॥ यद्यपि हाङ्काङ्ग चीनदेशकाही एक नगर है। चीनालोगही यहां के बाशिन्दे हैं। और चीनदेशही में आग भड़क कर छार खार कररही है परन्तु यहां के लोग उनसब बातों से नितान्त अनभिज्ञही दीख पड़ते थे ॥

सचहै—"आंखओट पहाड़ ओट" ॥

कोउ नृप होय हमैं का हानी । चेरी छाँड़ि न होवे रानी ॥

हाङ्काङ्ग तो अब ब्रिटिश साम्राज्य के ऐशइशरत भोग रहा है । सुखनींद की जमुहाई लेरहा है । चीनहीनसे उसको क्या मतलब !!!

वहां हमारे जहाज पर चलने की तय्यारियां होरहींथीं ॥

हमभी ठीक समय पर पहुंच गये ॥

जहाज फिरभी अग्रसर हुवा ॥ दोतरफा बस्ती के कारण वहां पर जो जल राशि तालाब वा झील सी प्रतीयमान होरहीथी सो पुनरपि वदन विस्तार करने लगी । थोड़ेही देर में फिरभी वही घटाकाश-मठाकाश-मेघाकाश-दीर्घाकाश-सब कुछ जल और आकाश होगया ॥

चलते चलते चीन का हालही परित्यक्त टापू "वईहाई वाई" आ पहुंचा वा हमहीं वहां पहुंच गये, जहाजी अस्वास्थ्य (Sea sickness) के कारण कुछ समझाई न पड़ा !

समाचार प्राप्त करने के वास्ते वहां जहाज कुछ देर ठहरा ।

हुकुम तत्काल आगे बढ़नेही का हुवा और सांझवेला फिरभी आगे रवाना हुये ॥

जब हम यहां सफर कर रहेथे तब टीनसिन में भयानक युद्ध ठन रहाथा । सैकड़ों "गच्छन्ति यम मन्दिरे" का दृश्य दिखा रहेथे । यहां हमारे राजपूत लोग भी चटपटा रहेथे कि कैसे जल्दी जहाज उड़ै और हमभी समरक्षेत्र की फाग खेलैं ॥ देखैं तो कैसे कैसे रंगीले खिलाड़ी अखाड़े में अवतीर्ण हुवेहैं ! रंग विरंगे मल्लों का अखाड़ा क्या क्या रूप धारण किये है ! देखैं तो किसका बल पराक्रम किस दरजे का है ! इत्यादि वार्तायें सोच सोच कर हमारे लोग कैसी

जल्दी प्रकट कररहेथे सो तो वरुण देवता के सिवाय और कोई देखही नहीं सकाथा साथ के सब लोग तो साथी होनेके सबब एकही मार्गके यात्रीथे ॥

सत्य है राजपूत रुधिर में युद्ध की भीषणता के समाचार पाकर उष्णता संचार करना स्वाभाविकहीहै । उत्तेजित न होना अवश्यही आश्चर्य्यकी बात है ॥

" वाईहाई वाई " से भी आगे बढ़े । और "टाकू" बन्दर के निकट पहुंचे ॥

अगले समय के चारजन बूढ़ों की गप्प में सुना करतेथे कि "समुद्रमें आग लगै तो कौन बुझावै " कबीर की कहावत—" नैया बिच नदिया डूबीजाय"-- इत्यादि

सो प्रत्यक्ष देखा कि मानो टाकूका समुद्र जल रहाहै । भक भक करके अग्नि स्फुलिङ्ग सहित धूआं आकाश को मेघपूर्ण कररहा है राशि राशि काले कालेऔ रंग बिरंगे ढेर जलपर जलजलकर भस्म राशिसी इकट्ठे होरहे हैं ॥

देखा कि वह सब बड़े बड़े जहाज खड़ेहैं—बहुतेरे दौड़े चले आरहेहैं । उन्हीं का प्रबल धूआं आकाश को छिपाये देताथा । इसीको शायद समुद्र में आग लगना कहते होंगे !

अग्नि प्रकोप में धन जन प्राण प्राणी स्थिति अवस्थिति सब स्वाहा होते हैं समुद्र में आग लगने पर भी ऐसाही होना चाहिये ।

मालूम हुवा कि हमारे आने के पूर्वही यही दशा टाकू बन्दर में हुईथी, दो जहाज धन जन सैन्य सामन्त नाव नाविक समेत आहुति होचुकेथे, सो सचमुच समुद्र में भी आग लगा करतीहै । और उसही आगका शमन करनेवाला, ससागरा पृथिवी का भूपति हुवा करता है ॥

शोक है कि सम्प्रति हमारे देश आर्य्यावर्त्त से रण चर्चा मानो अलोप सी हो गई ! वीरवंशोद्भव क्षत्रिय जातिभी आल्हा ऊदल कोही समर की अतः पर सीमा समझ बैठी है !!!

मुझको बड़े आश्चर्य्य के साथ प्रायः देखना पड़ा है कि हमारे खासे भले विद्वान् लोग एम०ए०, बी० ए०, उपाधिधारी एवं मुंसिफ़, मजस्टर, वकील आदि पदाधिकारी महाशय गण भी युद्ध विषयक विज्ञान और वार्ताओं से इतना अनभिज्ञ रहते हैं कि साधारण बन्दूक चलानेकी बातको और मामूली सिपाही की गप्प को बड़े आग्रह और अचरज से पूछते सुनतेहैं ! और अपनी अनभिज्ञता जतलाने में लज्जा बोध नहीं करते ! वरन उक्त विषयमें अनजानपन को अमीरी

का एक लक्षण समझते हैं। समुद्री युद्ध विद्या—जहाजी लड़ाई-पर्वतीय युद्ध मैदानी लड़ाई—किले की लड़ाई--घाटियों की लड़ाई—इत्यादि की बातही क्या कहनी॥

हमयह क्योंकर मानलें कि उन्होंने वैदेशिक इतिहास नहींपढ़े, यूरोपीय सागर समर विवरण नहीं जाने अथवा साम्प्रत शक्तियों की उन्नत्यावनति से अनजान हैं! तिसपर भी उनकी इसभांति अनभिज्ञता देख सुनकर हमें तो लज्जा आती है! उनके मनकी परमेश्वर जानें! हमारे समझ में तो जो देश वा सन्तान युद्ध विद्या से अनभिज्ञ है वा युद्ध प्रिय नहीं है वह सब भांति दीन हीन है॥

युद्धज्ञान के विना सब ज्ञान अधूरे हैं! यह अत्युक्ति नहीं-मुबालिग़ा नहीं क्योंकि इसके आगे सभी ज्ञान ध्यान को शिर झुकाना पड़ता है!!

मैंने कतिपय धर्म प्रचारक महाशयों को यह भी कहते सुना है कि "सन्सार में रक्त नद वहाना सभ्यता नहीं है" "युद्ध करना सभ्यता नहीं जंगली पन है" "युद्ध विद्या वास्तविक विद्या नहीं वरन तमोगुण का एक साक्षात् दृश्य है" परन्तु प्रियमित्रगण! रक्त की नदी वहाना युद्ध विद्या की अनभिज्ञता से होता है। समर कोविद अपने रण कौशल से ही विजय प्राप्त करलेता है। जब कि युद्धानभिज्ञ जन अनेक हानि उठाकर भी पराजित होता है॥ देखते हैं कि पुराने समय में तलवार की लड़ाई होती थी तब लाखों लाशें ढोये नहीं चुकती थीं। विद्वानों ने जब उत्तमोत्तम बन्दूकें वनाईं (पुराने जमाने में बन्दूक आदि की थियोरी-विद्या-तो थी परन्तु शायद प्रैक्टिस-अभ्यास-कम था) तब हताहत संख्या कितनी घटगई!

उन्हीं बन्दूकों के बांधने वालों में भी अभिज्ञता और अनभिज्ञता के कारण वड़ा भेद देखा गया है।

युद्ध विद्या और युद्ध प्रियता की प्रशंसा में हमारे अनेकों बड़े बड़े ग्रन्थ भरे पड़े हैं। यहां तक कि स्वयम् वेद भगवान् भी इसकी महिमा का प्रतिपादन करते हैं:- **शत्रुहा-भीमउग्रः सहस्रचेताः** इत्यादि. शत्रुकी हनन करने वाली-अत्यन्त प्रचंड उग्र स्वभाववाली-हजारों प्रकार के विचारों को मस्तिष्क में स्थान देसकने वाली जातिही संसार में सुख और शान्ति का उपभोग करसक्ती है॥

आजकल जो देश सभ्य वने हैं वहांका वारह वर्ष का वालक भी इस महा

विद्या का ज्ञाता है। युवा और वृद्ध महाशयों की तो बातही क्या ?

वालयून्टीयर सेना—किसान लोगों की सेना—लार्ड लोगों की सेना—युवा-दल—जातीय दल—कितने रूप में समस्त यूरोप क्षत्री स्वरूप में सुसज्जित हुवा है ! सो देखसुनकर भी हमारे पढ़े लिखे लोग सिपहगरी के फन को आदर से न देखें और अपना भी कर्तव्य न समझें तो उनका मग़ज़ (गुस्ताखी माफ़) निःसन्देह पीकिन के कोलहिल वाले ढेलों* से भरा है । चाहै मेरी गवाही ले लीजिये ॥

मैंने सुना था " नैया बिच नदिया डूबीजाय " सोभी देखा कि बात असत्य नहीं है ॥ चालीस करोड़ की जनसंख्या वाला चीनदेश धन जन यौवन, नदी नद सागर, वन उपवन, महल मंदिर, राज्य राजा सहित सब एक बारगी आभास (Socalled) धर्म की एक छोटी सी डोंगी वा जङ्क (Junk) में डूबने के लिये अब तब हो रहा है !!!

महात्मा कबीर ने संभवहै कि हिन्दुस्तान की ऐसीही गिरती दशा देखकर यह वचन कहा हो ॥ भाई ! महापुरुष कबीर के नाम लेनेवालो ! क्या महात्मा के वचन का आन्तरिक मर्म समझने की तनिक भी कोशिश करोगे ?

चीन में धर्माध्यक्ष पादरी साहबान मुक्ति तक़सीम करते थे। चीन की एक बे-वक़ूफ़ सन्तान ने अज्ञान वश वा " दीदादानिस्ता " जीते जी मुक्ति लेना नहीं चाही ॥

"परोपकाराय सतांहि जीवनम् " के अनुसार कृपालु धर्माधीशोंने प्राण प-णसे चीनियों को मुक्ति देनेका व्रतधारण किया और समस्त चीन को " धर्म-जङ्क " पर चढ़ाही तो दिया ॥

धन्य है धर्मका महाप्रताप ! हे धर्म ! तुम बारम्बार धन्य हौ ! तुम्हें बारम्बार नमस्कार है ॥ तुम्हारे सहस्रों रूप हैं। " सहस्र शीर्षा पुरुषः " वाला वेद मंत्र भी शायद तुम्हारेही रूपका वर्णन करता हो। सो तुम्हारे सब रूपों को सब ओर से हमारा नमस्कार हो ॥

हम हिन्दुस्तानियों को तो तुमने बारम्बार परम पावन बनाया है। महात्मा बुधके साथ पधारकर तुमने हमें परम शांति दी थी। फिर हज़रत मुहम्मद के साथ तशरीफ लाकर हमें पाक फरमाया था और अबः—

---

* कोलहिल के ढेलों का वर्णन आगे आवेगा।

खबर ले ऐ मसीहा. तू कहां है ?
तेरा बीमार बिस्मिल नीम जां है ॥

दोहाई प्रभुकी ! हाय मुक्ति !! हाय मुक्ति !!!

हम हिन्दुस्तानी लोग धर्म को खूब मानते हैं— पर शायद जानते नहीं ! जानते तो " धरम धरम " करके क्यों आपुसही में मुंह नोचते फिरते ? धर्म महाराज का कब कब कहां कहां क्या क्या काम पड़ता है सो हमें नहीं मालूम है॥ हमको तो यही ज्ञात है कि " खाने पीने में धरम " श्राद्ध तर्पण में धरम " व्याह बरात में धरम " मरने उपजने में धरम" और भी जब जब पंडित जी वा जोतिषी जी बतावैं तबतब धरम की जरूरत पड़ती है ॥ और भी धरम का महा-उपदेश यह है:—

श्रद्धयादेयम् अश्रद्धयादेयम्
भयादेयम् इत्यादि

परन्तु ! प्यारे भाई ! :—" धर्मस्य तत्वं निहितं गुहायाम् " † धर्म के वास्तविक स्वरूप को कोई आंख कान वाला हमारे मान्यवर पादरी साहबान से पूछै !!

हम अपने प्रिय बन्धुवर्गों से इसी लिये क्षत्रित्व के निहोरे और आवश्यकता पर अपनी सरकार के कार्य योग्य बन सकने के लिये नम्रता पूर्वक अनुरोध करते हैं कि स्वयम् और अपनी सन्तानगण को साम्प्रतिक उन्नत जातियों के इतिहास, यूरोप के महावीरों के जीवनचरित्र, उनके अनुभूत युद्ध विवरण—सागर समर लीला—और रण कौशल की पुस्तकें अवश्यमेव पढ़ैं पढ़ावैं और वास्तविक तत्त्वको भी समझैं समझावैं ॥

इस महाविद्या से अनभिज्ञ रहना सभ्यताके विरुद्ध और क्षत्रित्व के तो नितान्तही अयोग्यहै-अंगरेजी प्रजा कहलाकर भी वीरत्व गुणसे निर्गुण रहना क्या लज्जा की बात नहीं है ॥

उस धूआंधार भरपूर समुद्रके बीच कुछ थोड़ी देर ठहरना पड़ा क्योंकि जहाज के जाने योग्य आगे जल न था । और लाइटर्स (छोटे धूआंकश) के आने में कुछ देरथी ॥ अन्ततः धूआंकश आगये और हमारी सेना जहाज पर से उन पर उतरी ॥

† अर्थः— धर्म का तत्त्व बड़े विचार और दीर्घ दृष्टि से जाना जाता है ॥

घोड़े और खच्चरों को जहाज परसे नौकाओं पर उतारना चढ़ाना बड़े तमाशे का दृश्यहै ॥

थोड़ी देरमें हमारे "अग्निबोट" पीहोनदी के मुहानेपर टाकू किलों के नीचे आन पहुँचे ॥

टाकू किले भस्मप्राय-भग्न-क्षत विक्षत और मृतकंकालकी भांति दीखपड़े!!!

टाकू बन्दर बड़ी कठिन लड़ाई का मोरचा था। इतना सुदृढ़-सुसम्पन्न और अच्छी पोज़ीशन (स्थिति) में था कि युद्ध विद्या विशारद सेनाकी रक्षामें रहते हुये किला छुटाना दुःसाध्यही नहीं शायद असाध्य होता॥ (टाकूका अधिक वृत्तान्त आगे पढ़ियेगा) परन्तु वही किला हमें जनमेजय के सर्पमेधस का आहुतिकुण्ड जैसा काला दीखपड़ा!!!

सचहैः—ब्रिटिस सिंह, सोभी संसार शक्ति समावेष्टित सर्वशक्तिमान् बन कर धावा करैं-सोभी धर्म के उद्धार के लिये। और टाकू किला न टूटै-जोकि कानफ्यूशस और मानश्यूअस के मतानुयायी चीनियों की रक्षामें हो जिनका उपदेश था कि "युद्ध करना पापहै" तो आश्चर्यही है॥

किले की अवस्था देखकर वहांके युद्धकी भीषणता सद्यः प्रतीयमान होगई!

अब हम लोग पीहोनदी मार्ग से चले! दोनों ओर हरियालीमय खेत, कुछेक गांव गँवई दीखपड़े! अठारह बीस दिनतक हमारे लिये परमेश्वर की सृष्टि में जल और आकाश भिन्न मानो कुछ थाही नहीं। भूमिकी हरियाली देखकर मन में एक प्रकार का उल्लास उदय होताही था कि किनारों परके गांव दीखपड़ने लगे जिनमें बहुतेरे तो अब भी अग्निमय धूधूकर जल रहे थे! और अनेकों केवल खाक सियाह भस्मकी ढेर!!!

रात आगई! संसार भरके सब प्राणी सब वस्तु सब व्यापार तमोमय होगये! जैसे हमारे यहांके कथित (Socalled) ब्रह्मज्ञानी ब्रह्ममय होजाते हैं॥ मैंभी अपना अनेक भावनाओं से भरपूर मन लेकर "टग" (किश्ती) के एक पार्श्व में अपना कम्बल खोल सबूट बन्दूक सोरहा! दिन तो जुलाई के थे पर जाड़ा मालूम हुवाथा॥ अवश्यही किश्तियों पर चहुँओर पहरा लगा था। कहा जाताथा दुश्मनका मुल्क है-होशियार चलना चाहिये। सम्भवहै गावों सेवा आस पाससे गोला गोली चलजाय!

सवेरा हुवा-जाग पड़े-फिर वही दृश्य-वही भस्म होते हुवे गांव-घूमते हुवे

कूकुर-पड़ेहुवे मुरदे-!! शायद पचास साठ गजभी आगे न बढ़ते होंगे कि दो एक लाशें किनारे पर पड़ी न दीख पड़ती हों!

अनुमान सैकड़ों लाशें टाकूसे टीनासिनके मार्ग भरमें मिलीं! किन्हीं को कूकुर चवाते नोचते हुवे-कोई जलमें बहती हुई। और बहुतेरीं किनारों पर विश्राम लेती हुई!!!

गांव तो प्रायः सभी फुंके हुवे-ग्रामीण कोई भी नहीं परन्तु प्रत्येक भस्म ढेरी पर-भग्न अट्टालिका पर-एकादि झंडी-फ्रैंच, रूस, या जापानियों की दोलायमान होरही थीं! कहीं कहीं किसी किसी गांव में एकादि जीवित वृद्ध कंकाल मूर्ति लाठी के सहारे खड़े देखे गये! पत्थर हृदय भी उनकी अवस्था देख पसीज जाता!

हमारा हृदय द्रवित होने की कोई आवश्यकता तो नहीं थी, क्योंकि चीना लोगों से युद्धही करने तो हम आयेथे। परन्तु......अपनेसे मिल तू रंग देखकर कर्तव्य में नहीं तो मनमें तो अवश्यही एक "भाव" उत्पन्न हुवाथा॥ चीनालोग बौद्धधर्मावलम्बी हैं। (कानफ्यूशियन धर्मकी बात मैं तबतक नहीं जानताथा) हिन्दुस्तानके सहधर्मी हैं। एशिया खण्डके निवासी होने से निकट स्वदेशी भी हैं। रंग राह, रसम रिवाज में भी बहुत भेद नहीं है! क्यों परमेश्वर ने इन पर विपत्काल डाला! क्या इनका सहाय होना परमेश्वर को न चाहिये था?

मन में तरंग उठी कि आज चीना लोगों की विपत्ति देखकर मन में सहानुभूति की रेखा उठती है—भला हमारे वह पुरखा लोग कैसे थे जो दिल्ली के लिये लाहौर से लड़ते थे वा जयपूर के लिये चित्तौड़ से! अकबर के लिये राठौड़ से लड़ते थे और अंगरेजों के लिये रणजीत से। क्या उन के हृदयों और मस्तिष्कों में सचमुच कीड़े पड़गये थे? फिर मन में आया कि क्या जाने भगवान् ने चीन के मंगल के लिये ही यह प्रपंच रचा है! चीनभी हमारी सर्वशक्तिमान् सरकार के हाथ में आकर वही सुख और वेफिक्री की नींद प्राप्त करे जो हमारा पवित्र आर्य्यावर्त देश लूट रहा है॥ तब तो बड़ी खुशी की बात हो। परमेश्वर तुम्हारा भलाहो—ऐसाही करो! चीन को भी उसी महाशक्ति के हवाले करो जिसके आर्य्यावर्त किया है! "हिन्दू चीना" बनाकर एशियाका एक विशाल राज्य स्थापित करो! अस्तु!

——०——

सोचते,विचारते देखते भालते टीनसिन के निकट आपहुंचे। "टग" पर एक "ब्ल्यूजाकट" (जहाजी सिपाही) आयरिश सिपाही ने मेरे साथ जो भ्रातृभाव प्रदर्शित किया था उसका कुछ वर्णन किये विना मैं समुद्रयात्रा वन्द नहीं कर सकता! किश्ती पर आने के समयसेही वह सिपाही मुझ पर बड़ी प्रीति प्रगट करने लगा था! शायद इसलिये कि मैं अंगरेजी भाषा में उससे वातचीत कर सकता था। परन्तु अन्य कई जन भी तो अंगरेजी में वातचीत करते थे और कई दूसरे ब्ल्यूजाकट गोरेभी थे। उसने टाकू तथा टीनसिन की लड़ाइयों के जो अभी तीन चार दिन पहिले हुई थीं. अनेक वृत्तान्त मुझ से कहे! और युद्ध सम्वन्धी अपनी समझ के मुताबिक कई शिक्षायें भी उसने मुझको दीं! उसने कहा कि मैंभी अंगरेज नहींहूं—आइरिशहूं—परन्तु अंगरेजी सरकार के लिये युद्ध क्षेत्र में आयाहूं। वैसेही तुम सव भी अंगरेज नहींहो तौभी उक्त सरकार के लिये आयेहो-यह वड़ी अच्छी वातहै। परस्पर सहानुभूति अच्छीवात है। परन्तु चीनालोग सभ्य जाति नहीं हैं वह विलकुल जंगली हैं! उनपर दया का काम नहीं! इत्यादि—यह तो उसके उपदेश थे! खातिरदारी के विषय में भी उसने वहुत कुछ आदर सत्कार किया-वियर रम-रोटी विस्कुट-मक्खन-मटन-सभीकुछ देना खिलाना पिलाना चाहा। सवही से इन्कार सुनकर वह वहुत आश्चर्यित हुवा।

"एक ग्लास लाइमजूस का शरवत तो भला स्वीकार करो" यहकहकर वहुत आग्रह किया! मुझको उसकी इतनी खातिरदारी देखकर अगत्या स्वीकार करना पड़ा।



अव हमलोग टीनसिन पहुंचगये! दोनों ओर किनारों पर शहर था पर आज तो खाक थी!!

किनारों पर अनेकों फौजी अफसर इत्यादिक खड़े थे। वड़ी जयजयकार ध्वनि हुई। वड़े आदर सन्मान से फौज उतारीगई!

रशियन अमरीकन इत्यादि प्रायः सभी अफसर और सिपाही जय ध्वनि करते थे॥

विदा होते समय हमारे उक्त ब्ल्यूजाकट मित्रने विदायी के उपहार में एक "गोली" देकर कहा कि कृपापूर्वक मेरीओर से यह वीरोचित उपहार स्वीकार

करो। मैंने प्रेमपूर्वक उस उपहार को धन्यवाद सहित स्वीकार किया और हृदयोपरि पाकट में स्थान दिया॥

इस विदायी के साथ साथ हमारी समुद्रयात्रा भी पूरीहुई।

समुद्रयात्रा विधायक प्रत्यक्षप्रमाण॥

हमने अपने हिन्दू भाइयों को समुद्रयात्रा सम्बन्ध में अनेक प्रकार के प्रश्नोत्तर करते और वेद शास्त्र आदि के प्रमाण खोजते देखाथा॥

वहुतसे प्रमाण वहुत महाशयों ने खोजे पाये भी। परन्तु प्रत्यक्ष प्रमाण से बढ़कर शायद दूसरा कोई भी प्रमाण नहीं हुवा करता! सो आज हमारे हिन्दुस्तानी फौजों की यह चीन यात्रा साफ सुथरी प्रमाण की मूर्ति सन्मुख आ खड़ी हुई है॥

ऐसे प्रमाण, अदन-अफ्रीका और मिश्रआदि देशों की यात्राओंद्वारा हिन्दू फौजों ने पहिले भी कईबार दिये हैं-यहांतक कि वहुत से फौजी हिन्दू लोग खास लण्डन को भी सन् १८८२ में हो आये हैं और उनकी जातपांत में तनिकसी हवा भी नहीं लगसकी! परन्तु यह चीन यात्रा बिलकुल ताजी टटकी प्रमाण की जिनिस है॥

संसारभर जानता है कि हिन्दुस्तानी फौजें जो चीन में आई हैं इन में हिन्दुस्तानभर के प्रायः सभी प्रान्तों-जातियों-धर्मों-सम्प्रदायों-और विश्वासों के आदमी आये हैं॥

हिन्दुस्तान के नीचऊंच, वड़े छोटे, राजा रंक—सभी यहां आये हैं। आये हैं जहाजों पर चढ़ करही! और समुद्र में बीस बाईस दिनसे लेकर डेढ़ महीने तक का सफर किया है॥ रहन सहन खानपान रोटी पानी सभी व्यौहार जहाजों पर और चीन में कियाही है॥

सो समुद्रयात्रा और विदेशयात्रा हिन्दुस्तानी सभी जातियों के लिये वेद शास्त्र प्रत्यक्ष उपमान लोक परलोक सभों के अनुसार विहित होनेका इस प्रत्यक्ष प्रमाण से अधिक और क्या प्रमाण बाकी रहगया?

सो हे प्रिय हिन्दू सज्जनो! अब अधिक विचार करने का परिश्रम आपको करना नहीं पड़ेगा। वेखटके आप अपने स्वजनों को यूरोप अमरीका जापान.

आदि देशों में विद्योपार्जन और व्यापार शिक्षा तथा सिपाहगरी सीखने के लिये भेजिये । कोई तनिक भी आक्षेप नहीं करसकता !

जाति बाहर होनेका डर वृथा है । पहिले हम अठारहहज़ार हिन्दू आदमियों को कोई जाति बाहर करने का नाम उच्चारण करले तब पीछे आप से बोल सकैगा ॥

आपने सुन रक्खा होगा कि समस्त रत्न समुद्र गर्भही से निकले हैं । समुद्र मन्थनसेही सब प्राप्त हुवेथे ।

सो सचमुच ऐसाही है । समुद्रही को मथकर अंगरेज़ जातिने अमरीका पातालपुरी और भारत सी स्वर्णभूमि अधीन करी है और बीसियों उपनिवेश (बस्तियां) और टापू भी हस्तगत करसकेहैं । दुनियां भरका व्यापार सागरही की छाती परसे उठाते धरते हैं । और इनकी समुद्रीय शक्ति (Navy) ही के डर से संसार भर आतंक मानताहै ॥ यह सब समुद्र मंथनके करश्मे नहीं तो क्याहै ?

यह सब देख सुनकर भी यदि हम समुद्रयात्रा के "परहेज़गार" ही बनेरहैं तो बेशक आंख कान रखनेवाले लोग कहसकते हैं कि हमारी आंख गिद्धों ने अपने खाने के वास्ते फोड़ निकाली हैं और कान कौवे नोच लेगये !!! हायहाय गुलामी के फ्रास्ट (बरफ) ने हमारी नाक भी गिरायदी !!!

युद्धकाण्ड ॥

मुकाम टीनसिन ॥

त्यागं श्रेष्ठं मुनयो वै वदन्ति. सर्वं श्रेष्ठं यच्छरीरं त्यजेत ।
नित्यं युक्ता राजधर्मेषु सर्वे. प्रत्यक्षन्ते भूमिपाला यथैव ॥ *

Two things better than all things are,
The first is power the second is war ! +

हमारी आत्म कहानी का अब वह वर्णन आन पहुंचा है कि जिस के कारण से हम को यह यात्रा करनी पड़ी है। अर्थात् " युद्ध " !

हमारा देश आर्य्यावर्त थोड़े दिनों से युद्ध के नाम से कुछ अपरिचित सा हो गया है। लोग युद्ध को अनावश्यक दृष्टि से देखने लगे हैं। युद्धके कारण से युद्ध प्रिय सिपाही भी हीन दृष्टि से देखा जाने लगा है।

हमारे नव युवक भ्रातृगण सम्पूर्ण रूप से वेष भूषा बनाव सिंगार चाक चिक्य ही को सभ्यता सर्वाङ्ग समझने लगे हैं। सिपाही का मोटा खाकी कोट सो भी चारों ओर से कीचड़ में सनाहुवा-छाती पर की पाकट गोलियों के बोझसे झूलती हुई-पीठ पर बारान कोट-झोले और बोतल में रोटी पानी भरेहुवे और हाथ में वही घातकारिणी बन्दूक, ऐसी सूरत भला घिनौनी क्यों न जँचैगी ॥

पान फूल की तरह परवरिश पाये हुवे लोग-पिता की गोद के खिलौनारूपी सन्तान-और गुड़ियों के खेल जैसे दम्पति, सिपाही वा सिपहगरी को देखही किस दृष्टि से सकते हैं ! जो लोग-इत्र फुलेल चन्दन अर्गजा आदि से शरीर सुवासित करते हैं उन्हें रक्त मज्जा से सर्वाङ्ग सना सिपाही घिनौना क्यों न दीख पड़ैगा ?

एक लाला साहब लैला मजनू का किस्सा कहते हुवे फरमाते थे कि " लैलीरा वदीदये मजनू बायद दीद " अर्थात् लैली का सौन्दर्य्य मजनू की आंखों

---

* मुनि लोग त्याग को सर्वश्रेष्ठ कहते हैं। अन्य पदार्थों के त्याग की अपेक्षा वह त्याग विधान कैसा महान् है जिसमें शरीर पर्यंत अर्पण करादिया जाता है। वही महात्याग क्षत्रिय लोग समरभूमि में प्रत्यक्षही किया करते हैं ॥

+ संसार में सर्वोत्तम दोही पदार्थ हैं—प्रथम " शक्तिमानता " और दूसरे " युद्ध "

से देखना चाहिये ॥ सो मैं भी अपने भाइयों से अनुरोध करता हूं कि हमारे युद्ध सम्वाद वा सिपाही वेष को हमारी ही आंखों से देखने की चेष्टा कीजिये।

या हिन्दू धर्म के निहोरे महात्मा भीष्मपितामह के कथन का तो निरादर न कीजियेः—वह देखिये महात्मा क्या कहते हैं ॥

लोहितोदां केशतृणां गजशैलां ध्वजद्रुमाम्।
महीं करोति युद्धेषु क्षत्रियो यः स धर्मवित् ॥

अर्थात् युद्धक्षेत्र को जो जन रक्त शोणितरूपी जल और केशों के तृणसमूह,हाथी घोड़ों के शवों के पर्वत और पताकाओं के पेड़ पल्लव आदि सामग्री से भरपूर कर सकता वा करदेता है वही क्षत्र विद्या का ज्ञाता क्षत्री कहाने योग्य है ॥

मुझ को यह भी ज्ञात है कि हमारे स्वदेशी लोग लड़ाई की बातों को बड़ी दिल्लगी से पढ़ते सुनते हैं। अखबारों की खरीद भी प्रायः लड़ाई की गप्पें पढ़ने के वास्ते बढ़ जाया करती है। मैंने कलकत्ता में देखा था कि ट्रान्सवाल की लड़ाई के आरंभ के दिनों सड़कों पर सैकड़ों नहीं हजारों ही अखबार के परचे बात की बात में बिकते थे। बिकते सिर्फ लड़ाई की गप्पों के लिये थे ॥ लड़ाई के साधारण वृत्तान्त (मामूली हालात) का लिखनामात्रही हमारे देसी अखबार नवीस अपनी इति कर्तव्यता समझते हैं। पर वह पढ़ना-वह लड़ाई की गप्प सुनना-हमारी आंखों में कुछ जँचता नहीं! वह तो सिर्फ "खाव आमद ओ खर रफ्त" वाली मसल चरितार्थ होती है। कुछ लाभ नहीं होता। बल्कि व्यर्थ समय नष्ट होता है ॥

युद्ध विषयक वार्ताओं को केवल गप्पकी भांति पढ़जानेकी आदत होना हमें कुछ आश्चर्य्य की बात नहींहै। जिसेजिस विषयमें जितना चोप होताहै उसको वह उसी दृष्टिसे देखता भी है ॥

ब्रिटिश राज्य की सुन्दर शीतल शान्ति भरी छाया में, मैनचेष्टर के बने दुपट्टे तानकर सुखनींद सोनेवाली भारत सन्तान युद्ध की बात को "गप्प" से अधिक और क्या सुनाम देसकती है !!!

परन्तु संसार परिचालक "वीर" लोग कहते हैंः—

रण विटपहि माली सुभट, निज शोणित जल सींचि।
सेवत सविधि, सुशान्ति फल खात प्रजा दृग मींचि॥

युद्ध सुन्दर वृक्ष है और शान्ति उस के सुस्वादु मीठेफल। सिपाही अपने अनमोल रक्त जल से उसवृक्ष का सींचने वाला माली है और सम्पूर्ण देश शान्ति रूपी मीठे फलों का उपभोग करने वाला॥

जिस ब्रिटिश राज्यकी शान्ति भरी गोद में हमलोग सो रहे हैं उसी की निज प्रजाको तनिक नेत्रोन्मीलन करके देखिये-उनकी युद्धप्रियता निहारिये-कार्य्य-दक्षता देखिये और परस्पर सहानुभूति विचारिये॥

इससे अधिक और ज्वलन्त प्रमाण आप को क्या मिल सकता है?

हिन्दुस्तान सुखनींद सो रहा है—सब ओर अमन अमान, सुख चैन विराज रहा है। सो किस कारण से? क्या आपने कभी विचार किया है कि आप को शान्ति किस कारण से मिल रही है?

प्यारे बंधु! विश्वास करो-केवल "युद्ध" ही की बदौलत तुमको आज दिन भी शान्ति मिल रही है! "युद्ध" ही तुम्हारी रक्षा कर रहा है। और युद्धही के डर से तुम्हारी रात दिन की नींद में भी कोई खलल नहीं पड़सकता॥

तुम सोते हुवे जानते हो कि समस्त संसार सो रहा है! लक्ष्मण जी की कहावत सचमुच चरितार्थ कर रहेहो कि "मूंदहु आंखि कतहुं कोउ नाहीं"-पर नहीं जानते कि तुम्हारे लिये तुम्हारे रक्षक रात्रिन्दिवा कितना व्यस्त रहते हैं? तुम्हें सोते में न छेड़े जाने के लिये ब्रिटन कितने उद्योग कितने कौशल कर रहे हैं! उन्हें रात दिन नैतिक विचार और समर सामानही में विताना पड़ता है! लाखों जन धन वह न्यौछावर कररहेहैं! सागर को समरयानों (Navy) से भरदिया है। भूमि भी रण साज से रिक्त नहीं रक्खी! सब ओर से तुम्हारी रक्षा के लिये अनेक प्रबन्ध करते हैं। प्यार पूर्वक थप थपा कर तुम्हें सोलाये रखते हैं। पर प्रबन्धका सुविशाल अंग वही "युद्ध"!!!

ब्रिटिश सिंहकी युद्धकुशलता ही तुम्हारी शांतिका कारण है॥

"बाघ और बन्दूक बांधे" हमारे बैसवाड़े की यह एक कहावत है।

सो इसी रूप में हमारे राजाधिराज हमारी रक्षा कररहेहैं। तभीतो हमें सब ओर से सुखशांति मिलरहीहै?

ऐसे राजाधिराज के लिये जो केवल हमारे सुखनींद शयन के आयोजन में स्वयं विद्यावल और जनवल से सम्यक् दत्त चित्त हो हमें तनमन से न्यौछावर हो जाना चाहिये।

न्यौछावर होनेका उपाय—प्रियवर! वही "युद्ध" है॥

सुनते हैं कि पहिले पहिल जब अंगरेज लोग हिन्दुस्तान में आये और कुछ ज़मींदारी हासिलकी तब बंगाली लोगों को अपनी सेनामें नियुक्त किया॥ जब बंगाल से विहार की ओर बढ़ने का अवसर मिला और भोजपुर में राज्य स्थापित हुवा तब बंगालियोंकी अपेक्षा भोजपुरियों का आदर सेनामें अधिक हुवा॥ फिर जब सौभाग्य लक्ष्मी बैसवाड़ा और अन्तरवेद मेंभी जा चमकी तब भोजपुरिये भी भद्दे जंचनेलगे! परमेश्वरकी कृपासे—और परमेश्वरहीकी कृपाक्या ("God helps those who help themselves.उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः") अपने कौशल और चातुर्य्य के बल से जब पंजाब और पश्चिम सीमा तकभी राज्य विस्तीर्ण होगया तब सिख गोरखा और पठानोंके आगे समस्त "पुरबिया" मात्र तनिक हीन दिखाई पड़ने लगे! बात सिद्ध भी सचमुच ऐसीही हुई! बंगालियों की ढीली धोती—भोजपुरियोंका भात भोजन और अंतरवेदियोंका चौका चूल्हा सिपाहगरी में सिख गोरखे और पठानों की क्या खाक बराबरी करते?!! क्या कोई विलायत में भी ऐसा भेद भाव दिखला सकताहै? विलायतका कोई भाग किसी अन्यभाग से किसी दरजे सिपहगरी में कम नहींहै *॥ न केवल प्रान्तोंही में भेद भावका अभावहै वरन वहांकी कोई जातिभी इस महाविद्या और महागुण से खाली नहीं है। वहां के फौजी लोग तो क्षत्रीहई हैं—उनकेगुण गौरव और धीर वीरता का कहनाही क्या? वाणिज्य व्यवसायी बनियें भी युद्धविद्या में किसी क्षत्री से कम नहीं हैं। आवश्यकता पड़ने पर वहांके बड़े बड़े सेठ साहूकार लोग अपने प्यारे नवयुवक लड़कों की सेना बातकी बात में प्रस्तुत करदेते हैं। पादरी साहबान जिनका तन मन धर्म पर न्यौछावर रहता है—धर्मही जिनका जीवन सर्वस्व कहा जाता है—उनके युद्ध कौशल सुनकर आपके बड़े वीरों कोभी शायद शरमाना पड़े॥ और कहां तक गिनावें—आपलोग जोलाहा जातिके लोगों को बड़ी छोटी निगाह से देखते

* नोट—किसी किसी भागके लोगोंका सिपाहियाना विख्यात तो बेशक है जैसे:—" हाइलेंडर लोग बड़े शूरवीर सिपाही होते हैं " इत्यादि॥

हैं-इस जाति को बड़ी भीरु बताते हैं-पर उधर आंख उठाकर मेनचेष्टर की ओर भी तो निहारिये! वह देखिये वहां के जोलाहे और कोरी ट्रान्सवाल में कैसा अलौकिक युद्ध कौशल दिखलाकर अपनी वीरता संसार भर पर सिद्ध करने की चेष्टा कररहे हैं!!

हे प्यारे आर्य्य सन्तान-ब्राह्मण-क्षत्री खत्री, कायस्थ कुरमी, जाट गूजर, अहीर गरूड़ आदि प्रियतम भ्रातृवर्गो! क्या तुम्हें जुलाहोंकी करतूत पढ़ सुनकर भी लज्जा न आवैगी!

प्यारे भोजपुर-बैसवाड़ा औ अन्तरवेद गंगापार यमुनापारबासियो! क्या अबभी तुम आंख न खोलोगे!

निःसन्देह तुम्हें अपनी सरकार के लिये और अपने देशके गौरव के लिये युद्ध प्रिय होना चाहिये। उचित तो यहीहै कि हम लोग भी अपने राजाका अनुकरण करके "यथा राजा तथा प्रजा" हिन्दूजाति की युद्ध योग्यता संसार पर सिद्ध करदें॥ इस ज्वलन्त शताब्दी में "जैसी बहै बयार पीठ तव तैसी दीजै" के अनुसार जिस ढंग से तमाम सृष्टि उन्नति पथपर चलरही है हमभी उस ओर चलने के लिये कटिबद्ध हो जायँ॥

गैर मुल्क वाले कहते हैं "Devide and rule" "फूट में बादशाही" अर्थात् अंगरेज लोग हिन्दुस्तानकी हकूमत उसके जाति भेद और मत भेद केही कारण कररहे हैं। परन्तु यह बात गलतहै। हम हिन्दू लोग तो यह मानते हैं कि अंगरेज लोग हमारी भलाई के लिये हमपर शासन करते हैं॥ पर हम अपने घर में वा मनमें भलेही मानते रहैं विदेशियों पर यह बात कैसे साबित हो? प्रियराज भक्त हिन्दूगण! इसीलिये आवश्यकहै कि हमलोग आपुसका भेदभाव-प्रांतिक भेद, जातिभेद-व्यवसाय भेद आदि आदि नौसौ निन्नानवे भेदों को अलगकर के एक "हिन्दू क़ौम" ("Indian Nation") रूप में आकर सिद्ध करदें कि अंगरेजों का राज हमको विभक्त करने को नहीं वरन संयुक्त करने के वास्ते है॥ यदि हम (Devide and rule फूट डालकर राज्य करना) कलंक को अपने राजाधिराज के मत्थे से मिटासकैं तो इससे बढ़कर राजभक्ति और क्या होसकती है?

युद्ध विद्या चाहे हमैं भूलगई है। हिन्दू युद्ध कौशल से अनभिज्ञ होगये हैं। परन्तु यह प्यारा हृदय का उमंग बढ़ानेवाला नाम "रणरंग" और

"समर साज" के खिताब से विभूषित होकर हमें बारम्बार याद तो अब भी आता है ॥

उसी प्यारे नाम का काम कर दिखाने के लिये हम लोग चीन के टीनसिन नगर में तारीख १७ जुलाई १९०० ई० के दो पहर को लाइटरों से उतरे ॥

हिन्दुस्तान से आनेवाली फौजों में हमारी यही नम्बर सात राजपूत पलटन सर्व प्रथम चीन देश में पहुंची थी। सो बड़े भारी आदर सन्मान से वहां उतारे गये ॥

टीनसिन उत्तरी चीनका एक बड़ा समृद्धि शाली नगर है वा था! नगर तो है परन्तु नागरिक नहीं! गृह तो हैं परन्तु गृही नहीं! शरीर तो है परन्तु प्राण नहीं! ऐं? तब तो कुछ भी नहीं है! मैं है-है-क्या खाक कहगया!!!

टीनसिन में तब कुछ भी नहीं था॥ वैदेशिक सेनाओं के वीर लोग अपनी अपनी खाकसे सनीहुई खाकी पोशाक पहिने इधर उधर घूमते थे! और थे थोड़े से पकड़े पकड़ाये चीना कुलीलोग-जो लाशों को और कूड़ा करकट को ढो ढोकर साफ करते थे॥

आकाश धूंआं से अबभी छायाहुवा था। मकान अबभी अग्नि से चटाचट जल रहे थे। पीहो नदी का जल रक्त मज्जा और हाड़ मांस से इतना शरबती बन रहा था कि स्पर्श करना भी हानि से खाली न था॥ कुछेक मकान बचाये हुवे थे जिनमें सेनायें रहने लगीं। और युद्ध मन्त्रणा के कार्य्यालय स्थापित हुये॥

हमारी पलटन को भी नदी के किनारेही एक पार्श्व में टीन से छाई हुई एक बड़ी हातादार गुदाम रहने को मिली॥

इसी के एक पार्श्व में रूसी सेना पहिले से विराज रही थी॥ हमारे आने के तीन दिन प्रथम टीनसिन में भयानक युद्ध हुवा था! बिना युद्ध के क्या नगर प्रवेश संभव था?

जिन चीनियों ने टाकू बन्दर में खासे भले बड़े बड़े जहाज तबाह करदिये थे टाकू में भयानक अग्नि लीला दिखाई थी और मीर बहर अडमिरल सीमोर की कठिन गतिरोध की थी वही चीना लोग टीनसिन में भी प्रलय कारी समर लीला के नायक हुये थे॥

मैं अपनी इस आत्म कहानी में केवल वही बातें कहूंगा जिनसे हमारी पलटन

का सम्बन्ध है। इसी कारण टाकू और टीनसिन युद्ध विषय यहां विशेष नहीं लिखा है (रिपोर्टों से संग्रह करके अन्यत्र थोड़ासा हाल दिया है) तथापि टीनसिन संग्राम का थोड़ा सा वृत्तान्त यहां भी बिनाकहे रह नहीं सकता॥

टीनसिन में लगभग आठसौ विदेशी हताहत हुवे थे !!!

एक अमरीकन से मैंने बात चीत की तो वह बड़ेजोर के साथ जापानियों की तारीफ करने लगा॥ उसका कथन था कि टीनसिन में प्रवेश और विजय जापानियों केही कारण से हुवा॥ नहीं तो असाध्य था॥

नगर दुर्ग बड़ी दृढ़ता के साथ सुरक्षित था। प्रायः सब ओर चीनियों ने तोपें लगा रक्खी थीं॥ रायफल फायर की भी कमी नथी। फायरिंग लाइन क्षण क्षण में विध्वस्त होनेलगी॥ रीइन्फोर्स (मदद) आते देर न होती कि फिर भी लाइन भग्न दीख पड़ने लगती! जापानियों की तरफ देखागया कि फायरिंग लाइन कदापि नहीं टूटती॥ लाइन में क्षणक्षण पर दो दो चार २ और अधिक भी पतन होते और तत्काल न जानै कहां से बिजली की भांति सिपाही लाइन की खाली जगहों में आमिलते! कोई जान न सकता था कि उनकी फायरिंग लाइन में कोई गिरता भी है वा नहीं॥

लड़ाई देरतक इसीभांति होती रही। बढ़कर दुर्ग फाटक पर हमला करना और फाटक तोड़कर पोजीशन (मोरचा) लेलेना असाध्यसा दीखपड़ने लगा। अम्यूनीशन (गोली बारूद) भी कम पड़ने का भय उपस्थित हुवा!

देखते देखतेही जापानी एक सेक्शन (जमायत) भयंकर अग्नि वृष्टि में कूद पड़ी और फाटक के नीचे पहुंचकर उसके उड़ा देनेका प्रबंध करादिया! फायर बराबर जारी है। सैकड़ों भूमिशायी हो रहे हैं। अग्नि वर्षा बन्द होने का उपायही नहीं सूझता॥

वीर वर जापान को और अधिक नुकसान सह्य नहीं हुवा। अनेकों आदमियों के मरने की अपेक्षा थोड़े आदमियों का बलिदान—अपनी वीरोचित इच्छानुसार बलिदान—होना सर्वश्रेष्ठ दीखपड़ा। सो कुछ लोग आगे बढ़े कदम कदम पर प्राणाय स्वाहा! परन्तु अन्त तक एकादि तो पहुंचही गये और स्थिर भावसे बारूद में आग देही तो दी॥

निःसन्देह उसी अग्नि के साथ साथ उन, वीरवरों की भी यात्रा समाप्ति होनी ही थी सो हुई॥

बस फाटक का उड़ना था कि चीनियों के पांव उखड़ गये !

वैदेशिक समस्त सैनाका एकबारगी धावा (बेयनटचार्ज) हुवा और सुविशाल टीनसिन नगर का पतन होगया !!!

अमरीकन साहब के कथनानुसार सचमुच विजय जापानियोंनेही की ! उस ने कहा कि यावज्जीवन मैं जापानकी वीरता भूल नहीं सकता ॥ वरन उपमान रूपमें सबको जापान की सी वीरता धारण करने का उपदेश करता रहूंगा ॥

प्यारे पाठक वृन्द ! विचार कर देखो तो जापानियों में यह वीरता क्योंकर आई ? क्या कारण है कि जापानी अपने प्राणका तनिकभी मोह न करके इस-प्रकार आग में कूद पड़ता है ?

हिन्दुस्तान में होली की आग पर चलने का बहुतेरे लोग तमाशा दिखाते हैं और दर्शकों को आश्चर्य्य में डालते हैं। लोग अचंभा करते हैं कि लाललाल अंगारों पर चलने से पैर क्यों न जले ?

पर इस अत्यन्त तीक्ष्ण अग्नि-जलतेहुवे अंगारमय गोला की अग्नि-प्रलयकारी अम्यूनीशन की अग्नि-पर चलनेवाले की वीरता का तमाशा देख सुनकर कहिये तो आपका मन क्या कहता है ?

आपका मन आश्चर्य्य नहीं शायद भय करेगा !

आप कहेंगे नाहक यह हत्या लीला हुई ! क्यों चाररुपये के वास्ते सिपाही अपना अनमोल प्राण बेंच देता है ? क्यों उस चाररुपये के सिपाहीने अपना प्राण गँवाना अच्छा समझा ! वह मूर्खथा—अन्य सिपाही भी तो उतनीही तनख़्वाह पातेथे जितनी कि वह—फिर दूसरे क्यों न जायं ? वही क्यों जाय ? उसी के प्राण क्या भारथे? ऐसीही ऐसी बातें कहकर आप उसकी मूर्खता सिद्ध करना चाहेंगे। हिन्दुस्तानी सिपाही भी कभी कभी ऐसाही कहते हैं ॥

आजकल की हिन्दुस्तानी निगाह से बातभी ऐसीहीहै। हम लोगोंके विचा-रही आजकल इसीतरह के होगये हैं ! भेदभाव देखना तो हमारी आदतसी हो गई है ! हमें जितना प्रेम अपने शरीरका है उतना अपने सगेभाई क्या खुद खुदा का भी नहीं है। अन्य की तो बातही क्या ?

शोकहै कि महाराजा रामचन्द्र जैसे मर्य्यादा पुरुषोत्तम की सन्तान, दधीचि, शिवि-आदि की सन्तान, आज स्वार्थ परता के कठिन फांसमें जकड़कर परोप-कार को बिलकुल भूलही गई !!!

सो भाई! हिन्दुस्तानी निगाहसे न देखकर जापानी वीरकी करतूतको जापान की दृष्टिसेही देखने की चेष्टा करौ। अथवा यदि कुछ भी अपने आप का गौरव और ममता रखतेहो तो अपनीही दृष्टि को उस दरजे तक पवित्र करके अन्तर्दृष्टि से देखो !!

जापानी सिपाही के परिचय के वास्ते आवश्यक है कि संक्षेपसे जापान का कुछ हाल भी यहां वर्णन किया जाय ॥

आप को शायद ज्ञातहोगा कि जापान पहिले अनेक छोटे छोटे टापुओं में विभक्त था। सुना तो है कि शायद सब मिल तीनहज़ार टुकड़ोंसे कम न होंगे अनेक दिनोंतक लोग अमनचैनसे एकान्त बसते रहे। न ऊधव के लेने न माधव के देने ॥ परन्तु कौरव पांडव केसे वा आल्हाऊदन केसे युद्ध तब भी बराबर होते थे ॥ एक टापू वाला दूसरे टापू से एक गांव वाला दूसरे गांव वाले से लड़ झगड़ मरते थे। पर विदेशियों का आवागमन नहीं था ॥

इसी बारहवीं शताब्दी में शायद यूरोपियनों की पहिली आमदरफ्त का सूत्र पात हुवा ॥ सोलहवीं शताब्दी में पुर्तगालवालों से जापानियों का लेन देन आरंभ हुवा था ॥

तब तक जापान "साम्राज्य" नहीं बना था—ज़मींदारियों वा तअल्लुकेदारियों की ही भांति विभक्त था ॥ मानो अयोध्या के दशरथ—मिथिला के जनक— ॥ अवध की ताल्लुकेदारी के राजाओं की भांति सभी अपने अपने घर के राजा और गांव के बादशाहथे ॥

क्या जानै अगले समयमें समस्त भूमण्डलकीही यही प्रणालीथी! इंगलैंड—जरमनी—इटाली—हिन्द—चीन—जापान सभी देशोंमें तो पहिले मांडलिक राज्य प्रणाली रही सुनते हैं! और क्रमशः सभोंने शक्ति सम्पादन पूर्वक साम्राज्य स्थापित किये ॥ अस्तु

जापान की वह दीन दशा विचार कर डच लोगों ने पुर्तगाल के बादशाह को पत्र लिखा कि सेना भेजकर जापान के बादशाह को गद्दी से उतार देना चाहिये ॥

जब जापान नरेश को यह खबर मालूम हुई तब सभी विदेशियों को जापान छोड़कर चलेजाने की राजाज्ञा दीगई और डच लोगों को एक छोटे से टापू में क़ैद करादिया गया ॥

अठारहवीं शताब्दी तक फिरभी वैदेशिक यातायात शिथिलरहा। सन् १८५३ई० में अमरीका की आमदरफ़्त जारीहुई ।

इस समय राजा को वड़ा भय उत्पन्न हुवा-और आज्ञा हुई कि सब प्रजा और जोतिषी लोग सूर्य्यदेवी * की प्रार्थना करैं कि विदेशी लोग हम से दूरही रहैं ॥

परन्तु समझदार जापानी लोग समझ गये कि अव इन वातों से काम नहीं चलैगा ॥ जड़ पदार्थों के साथ जड़का घर्षण होसकता है। ज़मींदारों की ही लड़ाई ज़मींदारों के मुक़ाविले होसकती है। सम्राटों के सामने विना साम्राज्य स्थापित हुवे ठहरना असम्भव है ॥ ज्वलन्त शक्ति (Power) के आगे "सूर्य देवी" के किये कुछ न होसकैगा, वहां तो "चेतन भगवान्" कीही दरकार है ॥ अस्तु !

देशके शिक्षित युवालोग सम्मतियां करने लगे। और विचारने लगे कि क्यों कर सब टापू सम्मिलित होकर एक विशाल साम्राज्य स्थापित होसकै जिससे किसी विदेशी शत्रुका भय न रहजाय। यदि युद्ध करके सबों को एकत्रित करना चाहैं तो उसमें हानि अधिक है और यह भी डरहै कि कहीं वीचही में "दाल भात का मूसरचन्द" कोई विदेशी भूत न कूद पड़े और सभी धान माटी में मिटजायँ ! जैसी हिन्दुस्तान की दशा हुई !

महात्मा कृष्णका उद्देश्य भी यही था कि सारे भारतवर्ष की छोटी छोटी ज़मींदारियां तोड़कर-अयोध्या-मिथिला-मथुरा-वृन्दावन-उग्रसेन-जरासन्ध—कौरव-पाण्डव-इत्यादि सभोंको एक तरफ से ध्वंस करके एक सुन्दर विशाल साम्राज्य "भारत" से "महाभारत" रूपमें वनादें ॥

परन्तु भारतवर्ष प्राचीन देशथा। साथही सभ्य, विद्वान्, और गौरव पूर्णभी था। विना युद्ध-विशालयुद्ध-के सवका गर्व खर्व करना और एक सूत्रवद्ध होना असम्भव था ॥ सो भगवान् कृष्णचन्द्र ने युद्ध ठाननाही एक मात्र उपाय विचारा था ॥ और घोर रण रंग रचही तो दिया ॥ वड़े वड़े योद्धा रणधीर रण शायी हुवे। सभोंके गर्व टूटगये-शक्तियां टूटगईं ! कहतेहैं उससमय भारत युवा शून्य होगया था ॥

* नोटः—जापानी लोग सूर्य्य को देवी मानते हैं। और अपने को सूर्य्यवंशी क्षत्री कहते हैं ॥

समय उपयुक्त आगयाथा कि भारत देश "महा भारतवर्ष" का कोई एक महाराजा नियुक्त होता। परन्तु कालचक्र उलटाही घूमगया! क्या जानै क्या कारण हुवा-भगवान् कृष्णचन्द्र का अचानक प्राण त्याग हुवा और "महाभारत" नाम केवल पोथीही में शेष रहगया!!!

भारत! शक्तिहीन भारतमें मानो मूशलचन्दों के कूद पड़ने का फाटक खुलगया!

हाय! आज उन महामहिम भगवान् कृष्णचन्द्र आनन्दकन्दका सच्चा उपासक भी कोई दीख नहीं पड़ता! जोहैं सो इसी मसलके अनुगामी हैं कि॥

"पिये रुधिर पयना पिये, लगी पयोधर जोंक"

रास विलासही में मग्नहो डूबरहे हैं!!! हा भारत सन्तान! तेरे भाग्य!!!

सो जापानियों ने ठीक सोचा कि युद्धसे यदि ऐक्यता स्थिर करनेका उपाय अवलम्बन कियाजाय तो अन्तमें डरभी अधिक है और सफल मनोरथ होने में बाधायें भी पड़सकती हैं! अतएव उन्होंने दूसराही पन्थ अवलम्बन किया और बड़ी योग्यता से कृतकार्य हुवे॥

जापानी विद्वान् लोगों ने व्याख्यानों द्वारा साम्राज्य स्थापन करने की आवश्यकता देश भरमें प्रकटकी और जमींदारों वा राजा लोगोंको बतलाया कि तुम्हारे यह छोटे छोटे राज्य तुमको तो अवश्यही राजापदका गौरव प्रदान कर रहे हैं, परन्तु तुम्हारे समस्त देशका चिर कल्याण इस तरह स्थिर नहीं रह सकता! देशका मंगल तो यों होसकता है कि सब छोटे छोटे राज्य टूटकर एक विशाल साम्राज्य स्थापित होवै॥

धन्यहै उन वक्ताओं को और सहस्र बार धन्यहै उन सच्चे धार्मिक श्रोताओं को जिनके पवित्र हृदयने सच्ची बातके स्वीकार करने और तत्काल कार्य परिणत होने में क्षणमात्र भी विलम्ब न किया॥

सचहैः— होनहार बिरवानके, होतचीकनेपात॥

सब राजाओं ने अपने अपने अधीन देशकी समस्त प्रजामें आज्ञा प्रचारित करदी कि आज से हम राजापद को त्याग करते हैं और महाराज "मिकाडो" की साधारण प्रजा बनते हैं। सो तुम सब प्रजालोग उक्त महाराज कोही अपना राजाधिराज समझो और हमको अपनी भांति साधारण प्रजा॥

सन् १८७१ ईस्वी में सब राजा और धनाढ्य लोग "टोकियो" नगरमें मिले और अपना अपना शिर महाराज "मिकाडो" के आगे झुकाया॥ महामन्त्रीने छोटे छोटे राज्यों के टूट जाने और सबके एक होजाने और जापानका विशाल साम्राज्य स्थापित होनेका शुभ संवाद राजाज्ञा से समस्त देशमें प्रचारित किया॥

वह दिन–वह शुभदिन–वह चिरस्मरणीय दिन जापानके उन्नतिका प्रारम्भ महोत्सवथा–महाशक्ति सम्पादन का आनन्दमय सुदिन था॥

प्यारे पाठक! कुछ समझ में आया जापानी क्यों शक्तिमान् हुवे?

क्योंकर यह छोटीसी–तनिकसी–पिपीलिका हाथी की नाकमें घुसकर उसके प्राण संकट में डालसकी? और क्यों वह टीनसिन वाला चार रुपये का सिपाही समर यज्ञमें "*उद्बुद्धस्वाग्ने" कहनेको अग्रसर हुवा?

महाशय! सच तो यह है कि जिस व्यक्ति वा जाति में "स्वार्थ बुद्धि" भरा हो उससे नीचातिनीच दुनियां में कोई भी नहीं है। और जो निःस्वार्थ हैं–संसारका भला चाहनेवाले हैं उनसे कोई भी ऐसा काम जगत् में नहीं जो साधन न होसकै॥

जिन जापानी राजाधिराजों ने देश के मंगलार्थ राज्याधिकार तक परित्याग करने में तनिक भी आगा पीछा न किया। राज्यपद से साधारण प्रजापद ग्रहण करना श्रेष्ठ समझा। एक दो वा चार छः ने नहीं–समस्त देशभरने!

उन्हीं परोपकारी नरसत्तम महानुभावों की सन्तान हमारा टीनसिन वाला प्यारा भाई अपने देशके गौरव के लिये, यदि प्राण विसर्जन करने में अग्रसर हुवा तो आश्चर्य्य ही क्या?

उसने अपना औचित्य पूरा किया। वह अपना काम खूब समझता था अपना नाम भी भूला नहीं था। वह जानता था कि मुझपर कितना बड़ा विश्वास करके मेरी सरकारने रणभूमि में भेजा है। देशकी नामवरी मुझको सौंपी गई है। मेरी कितनी बड़ी जिम्मेदारी है। इतना ज्ञान रखता हुवा सिपाही यदि दीप पतंग बने तो क्या अचरज की बात है?

हम नहीं जानते कि हमारे देश के विद्वान् लोग भी इस सिपाही के बराबर बुद्धि रखते हैं वा नहीं!

---

* अर्थः—इष्ट पूर्ति के लिये उद्योग में तन्मय होजाना॥ यह यज्ञकुण्ड में अग्नि स्थापन करने का यजुर्वेद मन्त्र है॥

मन से तो कुछ "नहीं" कीसी आवाज निकलती है-यदि हों तो हमारे सौभाग्य के दिन दूर न होंगे ॥

मैं तो अपने उस अमरीकन मित्र की बातें सुनकर स्तम्भित रहगया !

अमेरिका जैसे "स्वतन्त्र" सर्वसम्पन्न देशका निवासी जिसको हर बात में हर तरह से सब भांति के गौरव स्वयम् अपने आप में प्राप्त हैं—संसार में अपनी वीरता प्रत्यक्ष दिखादी है—अनेक दिनों निरन्तर समर लीला दिखाकर जिन्होंने सुविशाल स्वतन्त्र प्रजा राज्य स्थापित कियाहै—वही अमेरिकन मुक्त-कंठ से जापानी की प्रशंसा करै—प्रशंसा ही नहीं वरन उपमान भावमें लेकर अनुकरण करने का उपदेश करै—यह साधारणतः आश्चर्य हैही ॥ परन्तु वास्तव में "गुण ग्राहकता" और "सार ग्रहण" इसीका नाम है ॥ अमरीका देश जो सर्व सम्पन्न हुवा है सोभी गुण ग्राहकता गुणसे ॥ परमेश्वर ऐसी सुमति सबको दें ॥

और जापान की उन्नति का मूल कारण "रणवलि" "आत्मसमर्पण" "आत्म गौरव" "आत्म निर्भरता" आदि चाहै जिन शब्दों में कहिये मूल कारण "स्वार्थ त्याग" हीहै ॥ अन्य सभी कारण जो जापानदेश की उन्नति के हैं जैसेः—पुरानी रस्म रवाजों का शोधन-धर्म की ऐक्यता वा धार्मिक स्वतन्त्रता-विद्योन्नति सम्बन्ध में भाषा की उन्नति—कला कौशलादि शिक्षा—व्यापार की उन्नति—अन्यान्यउन्नतदेशों का अनुकरण-समरसाजबाज-इत्यादि जितनेहैं सभी उस महापुरुष "स्वार्थ त्याग" के (Legitimate children) औरस सन्तति गणहैं॥

दूसरे देशों की बात कहते सुनते जब हमें अपने देशकी याद आती है और वही पूर्वा पर विषय अपने देशपर विचारते हैं तो एक अपूर्व भ्रम में पड़जाते हैं। देखते हैं तो हममें उन्नति पथपर चलने में सहायक कोई भी गुण दीख नहीं पड़ते । और न आजकल गुणोपार्जन की ओर कोई ध्यानही देता है !!!

कहा जाता है कि आर्य्यावर्त "धर्म प्रधान" देशहै । और वास्तव में है भी ॥ अबतक तो सब कुछ धर्मही के नाम से होता आया है ॥ और आर्य्यावर्तही में क्या—सर्वत्रही "धर्म" की आड़ एक बड़ी भारी ढाल है । बड़े बड़े परिवर्तन धर्म के नाम से हुवे हैं । बड़ी बड़ी जातियां इन्हीं महापुरुष के नाम से संसार में क़ायम हुईं ॥ परन्तु विचारणीय वार्ता एक और है । धर्म के नामपर जो जातियां संसार में संस्थापित हुईं वह किन बातोंका मूल लेकर और किन अवस्थाओं

में हुई ? आजकल भी उसी उद्देश्य उन्हीं नियमों पर कोई काम किया जाता है वा नहीं ?

सम्प्रति देखने में आता है कि जातियों का संगठन तो नहीं होता वरन उलटे उनके विभाग होते जाते हैं ॥

एक ओर उपदेश होताहै कि ऐक्यता धर्मकामूल है वा धर्म ऐक्यता का स्थापक है-पर दूसरी ओर अत्यन्त दुःखसे देखना पड़ताहै कि दर्शित (Socalled) धर्महीं भेद भाव उत्पन्न कराता है !!! नहीं तो क्यों हिन्दू समाज आर्य्यसमाज-खालसा समाज-ब्राह्म समाज आदि आपुस में शत्रु बनकर गाली गलौज करते नहीं अघाते हैं ?

इसमें सन्देह नहीं कि धर्म के खोखले नियम वा सूत्र जिन्हें गृह्य सूत्र कहिये चाहे कहिये जगत् जंजाल-जितनेही अधिक गढ़ेजातेहैं-उतनाही अधिक अधिक मत भेद बढ़ता है !!!

समस्त संसार वा देश की रुचि एक करना असंभव बात है ॥ यही "असंभव" जब "संभव" बनाने का यत्न किया जाता है तभी एक न एक नूतन सम्प्रदाय वा जाति की टुकड़ी क़ायम होजाती है। और वह अपनीही मूल संघातिनी !!!

अन्न में जिसभांति स्वयमेव घुन उत्पन्न होकर (सरदी आदि उपादान पा करही) सम्पूर्ण अन्नभण्डार को खोखला कर डालता है उसी तरह जातियों वा धर्मोंमेंसे (अपनीही कड़ाई वा नरमाई का उपादान पाकर) छोटी छोटी टुकड़ियां रूपी कीड़े उत्पन्न होकर समस्त जाति का सत्यानाश कर देते हैं !

स्मरण रहे कि सृष्टि क्रमके अनुकूल जो नियम हों उनसे बाहर कोई जाही कहां सकता है ? जैसे पानी से प्यास मिटती है सो सर्वत्रही सब ठौर सब स्थानों में सबके लिये एकसां है । यह अपनी अपनी रुचि रही कि कोई कटोरा से पानी पियै कोई ग्लास से-कोई अंजुलीही से पीलेवै । कोई निरा पानी पियै-कोई शरबत, कोई दाखरस-कोई सोडालेमन पियै, कोई गुलाब जल । हम साथी सिपाही कभी "लेडी स्मिथ" जैसे किले में घिरकर खच्चर के रक्त ही को शुद्ध करके पीलेवैं । इत्यादि—

मैं इन्हीं भेद भावों को "धर्म के खोलले गृह्य सूत्र" के नाम से कहता हूं। पाठक क्षमा करैं यदि पसन्द न आवै तो सिपाही की गप्पही समझकर सुन

डालें। पर आवश्यकता पड़ने पर फिर भी यह गप्प आपको सच्ची सिद्ध होजायगी॥ अभी यह निरी सीधी सांच चाहै भद्दी भले ही जानपड़ै !!!

अस्तु!

सो हम देखते हैं कि हमारे देश के विद्वान् लोग भी अपना समय–अनमोल समय–इन्हीं खोखले सूत्रों की उलझन में खोरहे हैं !!!

तब आर्य्यावर्त के सुधार की क्या खाक आशा कीजाय ?

इससे तो परमेश्वर हमलोगों को "रेड इण्डियन्स*" की भांति नाशही कर देता तो भला था !!!

इतिहास वेत्ताओं से छिपा नहीं है कि संसार में रीति रस्मों के कितने परिवर्तन समय समय पर हुआ किये हैं। और होते रहते भी हैं। पोशाक में खान पान में-मिलने जुलने में-और व्यौहार वर्ताव में।

सो यदि रुचि भेदके कारण हमारे हिन्दू (आर्य्य) समाज में रीति रस्मों के भेद हों तो उनके कारण क्या हम जुदे जुदे समझे जावें ? अथवा हमको आपुस में लड़ना झगड़ना वा कलह करना चाहिये ?

हमारे एक मित्रने पवन पवित्रता के लिये घर में हवन यज्ञ कराया। उस में कांच के ग्लासों में और चीनी मट्टी के घड़ों में पानी धरा और रकावियों में धरी शाकल्य॥

दूसरे एक मित्र ने उसी अभिप्राय से हवन किया–उसने चांदी कांसे के वर्तन इस्तेमाल किये॥

एक तीसरे मित्र ने खूब बड़ा यज्ञ ठाना। वायुशुद्धि के साथ साथही ख्याति की भी इच्छा हुई! बहुतेरे आदमियों को एकत्रित किया और खूब बड़ा हवन रचाया। दिल्लगी के लिये कुछ खेल तमाशे भी करवाडाले॥

तीनों महाशयों ने काम तो किये तीनप्रकार से पर तात्पर्य्य और परिणाम सभों के एक थे!

अब हम पूछते हैं कि इन तीनों को आपुस में एक दूसरे की भरपेट निन्दा करके सूतापट्टी की दूकानें खोलनी चाहिये ? और परस्पर शास्त्रार्थ का चैलेंज (प्रचारणा) देदेकर सभ्य जगत् को कठपुतलियों का स्वांग दिखाना चाहिये ? अथवा परस्पर प्रेम पूर्वक एक दूसरे की प्रशंसा इसलिये करना चाहिये कि तीनों

* अमेरिका के असली निवासी॥

महाशयों ने तीन तरह से काम करके एक बड़े अभीष्ट को सिद्धकर दिखायाहै ?

जोहो—हमारे धर्माध्यक्षों के कर्तव्य तो उन्नति के विरोधी ही दीख पड़ते हैं ॥

मैं जानताहूं कि मेरी उपरोक्त "बात" भी बिना दोचार बातसुने अछूती न जायगी ! मेरी बात अखंड्य है भी नहीं। पर "अपनी बात" पर जगत् हँसाई देखकर बिना कहे रह नहीं सका !

क्याही अच्छा होता यदि हम अपनी "बात" बहती हुई बयार का रुख देखकर कहा वा किया करते !

जापानी में "स्वार्थत्याग" का गुण था। जिससे बड़े बड़े राजाओं ने अपने २ राज्य पर्य्यन्त महाराज के हवाले कर दियेथे ॥ हमारे "धर्मावतार" अपनी सूत्रपद्धतिही को लिये डोलते हैं। बात बात में जगत् गुरू बनने की डींग हांकनेको हर शख्स कमर कसे रहता है-"हाथी के दांत खाने को और दिखाने को और" के अनुसार वाग्युद्ध में तो बड़े प्रवीण। परन्तु कर्तव्य में-कहेंगे क्या करें अभी ज़रा बिरादरी का डर है-मवक्किल पंडे नाराज होजायँगे तो वकालत में खलल पड़ेगा—इत्यादि ॥ भला खुद ग़रज़ी का कहीं ठिकाना है !!!

जापानी में दूसरा गुण विद्योपार्जन और स्वभाषा का मानसिक प्रेम था। सभ्य देशों में जा जाकर भलीभांति विद्योपार्जन किया और सारे देशभरके ज्ञान के लिये विदेशी भाषाओं के ज्ञान विज्ञान ग्रन्थों को निजभाषा में अनुवाद कर सब के लिये विद्या का द्वार खोल दिया। दुनियां भर में जो पदार्थ विज्ञानहैं वह सब जापानी भाषा में मौजूद हैं ॥

हमारे महाशय गण-"एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मना" के घमंड ही में चूर हैं ! बाप दादा गुरूथे पर हमतो चेला बननेकी भी योग्यता नहीं रखते निरे निरे चैला (चूल्हा जलाने के काष्ठ) बनगये !!!

और हमारे विद्वान् कहाने वाले महाशय गण क्या कर रहे हैं ? बहुतसे साहबान की विद्या तो केवल उदरम्भरी ही विद्या है। बी० ए० एम०, ए० डिगरियां हासिल कीं-बड़ी बड़ी सनदें प्राप्तकीं-डाक्टर, इंजीनियर, बारिष्टर माजिस्टर, वगैरः बने परन्तु फिरभी बहुत ही कम लोग हैं जिन की विद्या से देश को भी कुछ लाभ पहुँचा हो ॥ अधिक नहीं तो अपनी उपार्जित विद्या ही के पुस्तक अपनी देश भाषा में अनुवाद कर दिये होते ! यह तो अलग रहै—आपुस के

पत्र व्यौहार भी तो उपरोक्त श्रेणी के महाशयगण विदेशी भाषा में करते हैं। बस इसी से स्वभाषा प्रेम की थाह मिली जाती है !!!

इसी कारण कहना पड़ता है कि इन महाशयों का वैदेशिक विद्याओं वा भाषाओं का ज्ञाता होना न होना देश के लिये बराबर ही है। न पढ़े होते तौ भी भरपेट अन्न खाते ही, और अब भी खाकर सो रहते हैं !!!

जापानियों का तीसरा गुण "आत्मनिर्भरता" था।

सभ्य जगत् को जो वस्तुवें दरकार होती हों वह सब स्वयमेव प्रस्तुत कर देना—अपनी आवश्यकता पूरी करने के अपने आप योग्य होना "आत्मनिर्भरता" का सुन्दर नमूना है। जापान ने वह सब करके दिखला दिया।

सूती रेशमी वस्त्र-छाता-दियासलाई-चाह-कांच-मट्टी के वर्तन-धात्वादि निर्मित अनेकों प्रकार के घर सजाने के खिलौने-काठ के सामान-घड़ी चेन-तेल-मोम-वत्ती-लैम्प इत्यादि-न केवल अपनी ही आवश्यकता भर को वरन लगभग तीन करोड़ येन अर्थात् छः करोड़ रुपये का रेशम और छासठ लाख की दियासलाइयां हरसाल विदेश को भेजने लगे!

इधर भारत का हाल देखियेः—धर्माध्यक्ष महाशय की भात की हंड़िया भी न गरम हो सके यदि विदेश की दियासलाई न हो! और शास्त्रार्थ व धर्म चर्चा करने को नतो चिराग ही जल सकै न फरश बिछ सकै। यदि मान चिष्टर के जोलाहे दो दिन को आराम करने लगें!! यही हाल व्यापार का है !!!

स्वार्थ त्याग-आत्मनिर्भरता-विद्योपार्जन-विद्याप्रचार-व्यापार-युद्धकौशल-यही सब क्रमशः उन्नति के अंग और साक्षात् धर्म के अंग हैं॥ पर ऐसा कहने में तो हमारे भाई प्रमाण पूछेंगे कि बताओ कौन से "धर्मशास्त्र" में लिखा है कि उपरोक्त कार्य्य साक्षात् धर्म के अंग हैं? मनु में-पाराशरी में-या याज्ञवल्क्य में-उनको तो "नक्काल" होना ही पसन्द है-इन जगत् जाल सूत्रों में लिखा न हो तो धर्म ही नहीं है॥

समझ में नहीं आता कि जब तक "स्वार्थ त्याग" नहीं किया जाता तब तक धर्म का उपदेश भी क्या खाक किया जा सकता है?

हमारे नामधेय उपदेशक लोग जब तक आधुनिक सभ्य जगत् की शैली पर पहिले स्वयम् शिष्य न बनलें तब तक उपदेश करना विड़म्बना मात्र है।

"हमको हवालात में न लेजाना क्योंकि हमारे बाबाजान कोतवाल थे" ऐसा कहने से अब काम नहीं चल सकता !

सो हे प्रिय भारत सन्तान ! जगत् गुरू की प्यारी सन्तति गण ! पहिले साम्प्रतिक सभ्य जगत् के इतिहास पढ़ो तब धर्म व्यवस्था देने के लायक बनोगे ! और तभी तुम्हारी धर्म व्यवस्था का सब लोग आदर कर सकते हैं।

धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम्।
महाजनो येन गतः सपन्था॥

धर्म का तत्त्व बड़ी कठिनता से जाना जाता है। महाजन लोग जिस मार्ग से चले हों वही अनुसरन करना चाहिये॥

"महाजन" शब्द के अर्थ में न भूलें—महाजन—महत्त्व किस वस्तु का नाम है पहिले यही विचारणीय है। औरः—

जो महत्त्व सम्पन्न हों—जिन में गौरव हो, जो जगन्मान्य हों—वही महाजन हैं। प्राचीन काल में जो महाजन थे उनके पन्थानुगामी तत्कालीन जगत् था। आज जिस पन्थानुसरन से महत्त्व प्राप्त होता हो वही पन्था महाजनों का राज मार्ग कहावैगा॥

गुज़रे जमाने में "आर्यावर्त्त" "स्वर्णभूमि" और "आर्य्य" "जगत् गुरु" थे। आज वही "देश" "द्वार भिखारी" और "देशी" "दासानुदास" हैं !!! याद रहे "धर्म" में और "पन्था" में भेद है॥ धर्म तो वह है जो सृष्टि क्रमानुकूल सदा एक रस हो और "पन्था" वह है जो समयानुकूल हो॥

जैसे "गमन=चलना" जीवों का सृष्टि क्रम से एक काम है—सो इसे धर्म के नाम से कह लीजिये और बैलगाड़ी द्वारा चलना—वा रेल जहाज द्वारा चलना समयानुकूल "पन्था" है॥

सो महाशयगण ! इन बातों को भलीभांति सोच विचार कर अपनी दृष्टि और जापानी की दृष्टि का मिलान कीजिये। तब ज्ञात होगा कि वह सिपाही क्यों समर प्रदीप का पतंग बनकर कूद पड़ा था॥

यदि हमारे भाई उस जापानी सिपाही के अनुकूल कार्य्य करना तो तनिक कठिन बात है उस की प्रशंसा ही भरे मन से कर सकें और उस को मानसिक प्रेम से सराह सकें तो भी हमारा इस कहानी का उल्लेख करना सार्थक होजाय॥

जापानी सिपाही के वीरचरित सुनकर मनमें अनेकों प्रकार की भावनायें उत्पन्न हुईं! और वारंवार मन से उसकी सराहना की। "परमेश्वर वैसी महान् भावता हमारे मन में भी स्थापित करते" ! यही लालसा वारंवार मनको लालायित करने लगी ॥

घर में बैठकर—कुछ मित्रगणों के साथ बैठकर जब गप्प करते थे तब भी बहुतेरी भावनायें मन में उदय होती थीं। अपने राजाधिराज अंग्रेज समाज की उन्नति और उन्नति शिक्षायें सुनकर मन तो चाहने लगता था कि उनका अनुकरण करें। परन्तु शीशा लेकर जब अपना मुंह देखते तो शरमा जाते थे—क्या काला चमड़ा भी उन्नति कर सकता है? कर सकता तो "रेड इन्डियन" क्यों न उन्नति कर सकते!

साथी मित्र लोग कहते थे कि जैसे हाथ पैर मुंह नाक आंख कान अंगरेजों के हैं वैसेही तुम्हारे भी तो हैं—फिर तुम क्यों उन्नति नहीं कर सकते?

तब मैं कहता कि सब कुछ हो सही पर चमड़ी तो काली है! हमारे बाबा सूरदास जी महाराज कहगये हैं:-

जैसे कारी कामरी चढ़ै न दूजो रंग॥

सो हम काली कमलियों में सुरखो कैसे चढ़सकैगी!

इत्यादि प्रकार की अनेकों गप्पें किया करते थे॥

पर यहां आकर प्रत्यक्ष देखा कि वह हमारे ही रंगवाला जापान कैसे कैसे आश्चर्य्य कामकर रहाहै॥ उन्नति उसके आगे हाथबांधे खड़ीहै॥

तब मनमें आया कि हां ठीकहै:—

जलता हुवा अंगार भी कभी कोयला हो जाता है।

और अत्यन्त काला कोयलाभी लाललाल अंगार बनता है॥

सो यहां असम्भव कुछभी नहीं है। चाहिये केवल "पुरुषार्थ" और "स्वार्थ त्याग"॥ सो हम लोगों को भी चाहिये कि सरकार के लिये अंगारवत् काम करें। काले कोयलाही न बनेरहैं॥ अस्तु॥

हमें टीनसिन पहुंचकर एक टीन के गुदाम में निवास मिला। हाता खूब बड़ा सा—सामने नदी की ओर दो फाटक और पीछे वस्ती की ओर एक फाटक था। पीछे का फाटक वस्ती से बिल्कुल मिला हुवा। गुदाम पर सैकड़ों गोलियों के

छेद। एकादि दिन पानी बरसा तो छेदों से खूब पानी चूआ था बिस्तर समेटते ही बीतता था॥ कुछ लोग गुदाम में और कुछ हातामें डेरेलगाकर रहेथे॥

अब तक हमारे "चीफ कमांडिंग्" लेफ्टिनेंट जनरल गेसली साहब नहीं पधारे थे सो आगामी कार्य्य वाही उनके आने तक के लिये रुकी रही॥

नदी के एकही ओर धूम्रयानों के लिये ठहरने के घाट थे॥ दूसरी ओर जाने आने के वास्ते दो पुल बनाये हुवे थे। एक रूसियों ने दूसरा जापानियों ने॥

सभी मुल्कों की फौजें एक अभीष्ट साधन के लिये आई थीं। सभों के देश, वेश, रीति, नीति, हुकुम, हासिल, सिपाही, सालार सब जुदे जुदे होतें हुवे भी उस समय सभी एकाकार बने हुवे थे॥

सभों के परस्पर मेल मिलाप देखकर मन प्रफुल्लित हो जाता था। बोली वाणी सभों की भिन्न। परन्तु एक दूसरे की खातिरदारी और आदर सन्मान करना सब को स्वीकार॥

जिस दिन हम यहां उतरे थे उसी दिनकी एक बात सुनियेः-

हमारे साथ में बहुतसी खूराकी भेंड़ बकरियां भी आई थीं जो उसी समय किनारे पर उतारी गई थीं। सड़कपर से चारपांच अमरीकन सिपाही गाड़ीपर पानी के मशक लादे हुये स्वयम् खींचे लिये जातेथे। उनमें से एक मेरी ओर बढ़कर कुछ इशारा करके "में-में-" बकरी की सी बोली बोला। मैंने समझा शायद यह हम हिन्दुस्तानियों को बकरीकी भांति समझताहे! सो मैंने अंगरेजी में उसको उत्तर दिया कि ऐसा कहना आपको उचित नहीं है। क्या हम तुम को गदहा या खच्चर नहीं कह सकते? मुझे अंगरेजी बोलता सुनकर उसने विनय पूर्वक क्षमा मांगी और कहा कि मेरा अभिप्राय आपसे एकबकरी खाने के वास्ते मांगने का था कि यदि आपके शक्ति में हो तो एक हम को देदीजिये क्योंकि बहुत दिनों से हमको अच्छे भोजन नहीं मिलेहैं। यदि इस बातसे आपका अपमान हुवा हो तो क्षमाकरें॥ इत्यादि-

मैंने देखा कि यह तो अजब तमाशा है। कहने वालेका तात्पर्य्य कुछ और होताहै समझने वाला कुछ और ही समझ लेता है।

ऐसी दशा में बहुत सी हानियां होजायाकरती हैं॥

क्या अजब है हमारे देश में धर्म विषयक व्याख्यानों के समझने में भी ऐसीही गड़बड़ हुईहो!!!

सुनाथा कि दो फक़ीर एक कमली में गुज़रकर सकते हैं परन्तु दो बादशाह एक मुल्क में नहीं समासकते ! और दो तलवारें एक मियान में नहीं समा सकतीं। पर यहां देखा-दो नहीं पूरे आठ बादशाह एकही मुल्क में मौजूदहैं ॥ "चतुरंग" नहीं " अठरंग" एकही स्वरमें अलापा जा रहाहै ॥ चाहे यह एकाकार वृत्ति कार्य्य विशेष और समय विशेष के लियेही क्यों न हो ॥

सो यह सब देखकर मन में प्रश्न उत्पन्न हुवा कि जब अनेकों विदेशी लोगभी परस्पर मिल जुलकर स्वदेशी की भांति हिलमिल सकते हैं तो क्या निरे एक देशी हिन्दुस्तानी लोग परस्पर ऐक्यता सम्पादन नहीं करसकते ?

एक देश, एक वेष, एक मत ,एक वाद, एक खान पान, एक रहन सहन, थोड़े बहुत हेर फेरसे एकही भाषा एकही विद्या, एकही ईश्वर, एकही वेद, इतनी एकता होनेपर भी क्या हम "एक" नहीं हैं ?

हृदय तलसे तुरन्त उत्तर मिला कि बेशक एकहैं। भेदभाव क्षणिकहै—ऊपरी है। हमारे सब के-हिन्दूमात्र के-अन्तःकरण एक हैं और एक होंगे। जुदे जुदे मार्ग जुदी जुदी बातें तो केवल ऊपरी हैं—दिखाने कीहैं। वास्तव में हम सब एक हैं परमेश्वर ऐसाही करें॥

रूसी सेना हमारे बगलही में पड़ी थी। सो उन सिपाहियों से प्रायः अधिक भेंट हुवा करतीथी। परन्तु न उनकी मैं समझता था न वह मेरी। बस किस्सा तमाम ॥ बहुतेरे रूसी लोग " सलामवालेकुम " जानतेथे सो हम लोगोंको देखकर यही शब्द उच्चारण करके अभिवादन करतेथे ॥

एक दिन ठाकुर शिवलोचन सिंहजी (जमादार) नदी के दूसरी पारसे अपने सिपाहियों द्वारा कुछ तरकारी के टोकरे लिवा लाते थे। रूसी पुलपर से आना था परन्तु बीचमें पुल कुछ टूट गयाथा सो उछल कर फांद जानेकी जरूरतथी। सिपाहियोंका हियाव न पड़ता था कि टोकरे सहित कूदकर पार हो जायँ ॥ एक रूसी इनको आगा पीछा करते हुवे देखकर तुरन्त आया और तत्काल एक टोकरा उठा कमर पर धर उस पार कूदगया तब तो हमारे सिपाहियोंकी भी हिम्मत बँधगई। और दूसरे टोकरे रूसी को उठाने न पड़े। हिन्दुस्तानी सिपाही लोग कमर पर धर धर कर पार होगये ॥ यह वृत्तान्त सुनकर मेरे मनमें आया कि बात निश्चयही ऐसी है ! हिन्दुस्तानी लोग करतो सब सकते हैं पर पहिले काम करने की हिम्मत नहीं पड़ती ! आगा पीछा करने

लगते हैं ॥ एक बार भय छूट जाय फिर तो पहाड़को भी बातकी बातमें रौंदकर रेणु करडालेंगे ॥

पीनेका पानी पेंचसे साफ करके एकही स्थान पर मिलता था। पीपे और पखाल (मशक) भर भर कर कहार लोग खच्चरों पर लाद कर लाइन में लाते तो थे पर वह प्रायः कम पड़ जाताथा। गरमी के दिनथेही सो सिपाही लोग अक्सर स्वयम् पानी लाने चले जाया करते थे। पेंच खाली तो कभी मिलताही न था रूसी, अमेरिकन, जापानी, अंगरेज, इत्यादि पानी भरतेही रहा करते थे ॥

यहां पर देखागया कि जापानियों को अक्सर निज हाथों पानी भरना नहीं पड़ताथा। अंगरेज, अमेरिकन, रूसी—चाहे जो कोई पहिले पानी भरे होता वही अपने बरतन का पानी तत्काल जापानी को देदेता। और वह खुशी खुशी पानी लेकर चलदेता ॥

वह लोग ऐसा क्यों करतेथे ?

मैंने उन्हें कहते सुना कि जिस जापानने टीनसिन संग्राम की भांति अतुल वीरता दिखाई हो उसके लिये पानी तो क्या हम लोग जान देने में भी उज्र न करेंगे ॥

सच है वीरता के आगे संसारभर के सभी सुख हाथ बांध खड़ेरहते हैं वीर लोग धन्य हैं। उनका सर्वत्रही आदर है ॥

जुलाई के महीने में टीनसिन में गरमी बहुतही सख्त पड़ीथी। एकतो ऋतुही गरम दूसरे सम्पूर्ण नगर अग्निके सिपुर्दथा! अबतक धुआं उठताहीथा। मकानों में भरे अन्न के ढेर सुलग रहेथे।

सो अग्नि भी मानो ऋतुको सहायता देरही थी ॥

सवेरे आठ नौ बजे से सूर्य्यास्त तक बड़ीही प्रचण्ड गरमी पड़ती थी॥ चीना लोग नगरके बाहर बड़े बड़े खड्डों में शरदऋतु में बरफ जमा कर रखते थे जोकि गरमी में व्यौहार करते। सो उन्हीं की धरी धराई बरफ़ काट काट कर आने लगी जिससे बहुत कुछ शान्ति मिलती थी ॥ टीनसिन की जुलाई महीने की गरद गुब्बार भी रेगिस्तानी दृश्य से कम न थी ! जलकी बड़ी तंगीथी॥ नदी एक तो "लाइटर" "लंच" "स्टीमर"–जंक. आदिके चलाचलीसे गुड़का शरबत बनही रहीथी दूसरे असंख्य शव प्रवाह से और भी शोरबा बन गई थी। सो उसका पानी छूने योग्यभी न था ! कूपों में भी चीनियों ने मुरदे फेंक दिये

थे जिसके कारण सब जल खराब होगया था ॥ लोग चीनोंको कोसते थे कि बदमाशों ने मरकर भी पानी बरबाद कियाहै–इससे उनको क्या लाभ ! परन्तु भोले लोग यह नहीं समझते थे कि यह भी तो एक युद्ध कौशल है ॥ दुश्मनको पानी पीने को न मिले इसका उपाय करना क्या समर चतुरई नहीं है ?

"सभ्य समर विद्या" (Modern warfare) में इसप्रकार के कौशल यथाः– मार्ग में कांटे कूसे वगैरः बहुतायत से लगादेना—दरख्त काटकर डालदेना पुलतोड़ देना–नदीके बांध काटदेना—उतारा वगैरः की नौकायें तोड़ डालना– रास्तों के निशान बिगाड़ देना—भ्रमाने के लिये कई रास्ते काट देना–इत्यादि बड़ी उचित रीति से सिखाये और वर्त्ते जाते हैं ॥

मुख्य चातुर्य्य तो समय की आवश्यकता को पहिचानना है । किस समय किस कार्य्य से क्या परिणाम हाथ लगैगा–यही समझनेवाला चतुर चूड़ामणि है । और वही समर विजयी एवं लक्ष्मीपति हो सकता है ॥

टीनसिन में हमारे पहुंचने बाद प्रायः नित्यही एकादि फाज आने लगी । फौजों के उतरते समय और जल मार्ग से जाते आते समय "हुर्रे" "जयजय कार" के शब्दों से आकाश गूंज जाता था ॥ सभी लोग जिनके कानों में स्पस्ट आवाज पड़ती ध्वनि में योग देते थे । सभी लोग वक्ता श्रोता दोनोंही पदों के अधिकारी थे । केवल श्रोता शायद कोई भी न था । जो कोई एकादि हो तो अवश्यही उसका मन किन्हीं अन्य विषयों की चिन्ता में चूर रहा होगा । इस अवस्था में उसे श्रोताही कैसे कहा जाय ॥

हमारे हिन्दुस्तानी लोग कहते हैं कि "भाई सच कहने का ज़माना नहीं है"! परन्तु यह कहना सर्वथा असत्य है । सत्य की सदा जय । सच्चेका बोल बाला। सचमुच ज़माना सचाई ही का है ॥ हमारे साम्प्रतिक हाकिम अंगरेज लोग सचाई का बहुत आदर करते हैं । देखते हैं सच बात को खोज निकालने के वास्ते आजदिन अंगरेज लोग सब तरह से सब उद्योग करते हैं । साधारण मामले मुकद्दमों कोही बात लीजिये—उन्हीं में कितने मग़ज़ दिनभर और रातभर के पूरे घंटों खरच हुवा करते हैं ?

और अख़बारों कोही न देखिये ! समालोचना करने लग जायँगे तो

लफ्टंटगवर्नर-गवर्नर-वाइसराय तो क्या खुद बादशाह सलामत को भी विना लक्ष्य बनाये न छोड़ेंगे। पर बात सच्ची होने से उन को कोई कुछ नहीं कह सकता ॥

सो यही देख सुनकर मुझ सरीखे सामान्य सैनिक को भी मन की कह डालने में कुछ भय नहीं लगता ॥

हिन्दुस्तानियों का पक्ष करने के कारण मिस्टर ब्रैडला को भी विलायत में सुनाम नहीं दिया जाता था। सो शायद यह बात सच ही है कि जो स्वदेश की अपेक्षा विदेश को अधिक चाहै वह कृतघ्न कहाता है॥ तो विदेशियों को अधिक चाहने वाले जो चीना लोग थे वह भी कृतघ्न क्यों नहीं ?

सो उस छार खार जले भुने खाक सियाह जन हीन टीनसिन में भी मुझ को कई कुल कलंक देश कालिमा चीना मूर्तियां रेशमी पोशाकें पहिने लम्बी चोटी लटकाये दीख पड़ी थीं ॥

यद्यपि यह सब हमारे सहायक, थे-भेदिये थे, जासूस थे, देश की सब प्रकार की खबरें देते थे, रसद पानी की भी सहायता करते थे, और कटाकट अंग्रेजी आदि विदेशी भाषायें भी बोलते थे परन्तु सचाई के अनुरोध से और अपने गुरुवर्य्य अंग्रेजों के मुंह से भी ऐसा ही सुने रहने के सबब से मैंने इन चीनियों को कुल कलंक और देश की कालिमा कहा है॥ सभ्य जगत् में सभी सभ्य लोग ऐसा ही कहते और मानते हैं ॥

हम सभ्य न भी हों (अथवा न-हीं-हों) पर सभ्य राजा की प्रजा अवश्य ही हैं और हम जिनकी प्रजा हैं उन्हीं की सचाई के अनुरोध से यह सच्ची बात कही है ॥ और जानते हैं कि जो हमारे देशी लोग अंगरेजी प्रजा कहाने का घमंड रखते होंगे वह सभी इस सच्ची बात को किसी अवस्था में झूठी न समझेंगे ॥

बात यह है कि कई चीना लोग सब तरह से विदेशियों को मदद पहुंचा रहे थे वही लोग लक़ दक़ पोशाक में मुस्कुराते हुवे मुंह वास्तव में बेशरम मुंह दिखाते फिरते थे ॥

वैदेशिक मंत्रिदल राजधानी पीकिन में बाक्सर सम्प्रदाय के लोगों से घिरा हुवा था। वहां की खबरें भी इन्हीं चीना लोगों की मार्फत कभी २

मिलती थीं ॥ इन में कई क्रिश्चियन मतावलम्बी थे-सो उन्हों ने स्वदेश प्रेम त्याग कर स्वधर्म अथवा स्वसम्प्रदाय प्रेम अवलम्बन करना श्रेष्ठ समझा था ॥

देश देशान्तरों में अपना मत प्रचार करना समय पर कितना लाभदायक होता है इसका तो चीन प्रत्यक्ष प्रमाण है ॥

बहुत से पादरी साहबान भी टीनसिन मे आ इकट्ठे हुए थे ।

मेरे हृदय में तो उन की प्यारी प्यारी वृद्ध और शान्त एवं प्रवीण और कर्मदक्ष मूर्त्तियों में भक्ति संचारित होती थी ! मनसे आवाज निकलती थी कि हे धर्मावतार ! तुम धन्य हो ! और धन्य है तुम्हारा कौशल और साहस युक्त अनथक धर्मप्रचार ! एवं धर्मार्थ बलिदान ! जो देश तुम्हारे जैसे धर्मप्रचारक पैदा कर सकता हो वह विजयी क्यों न हो ?

एक हैं आर्य्यावर्त्त के धर्मप्रचारक ?

आर्य्यावर्त्त में बहुत से मत मतान्तर हैं । मैं किसी की भी आलोचना करना नहीं चाहता-वा करही नहीं सकता-क्योंकि वे ऐब तो परमेश्वर के सिवाय कोई हई नहीं है । यदि मैं किसी में कुछ अवगुण देखता हूं तो गुण भी अवश्यही पाता हूं सो केवल अवगुणों का वर्णन करना और गुणों को न देखना-(चाहे दृष्टि दोष से मुझे दीख कोई भी न पड़ते हों यह बात ही जुदी है) मुझे जोंकवाली मसल का शिकार बनादेगी ॥

परन्तु जो डंका बजाकर धर्मका प्रचार करते हों उनके प्रति तो सिपाही बिना दो बात कहे कैसे चुप रहैगा ?

आर्य्यावर्त्त के धर्म प्रचारकों में आजकल सबसे बड़ा और कड़ाभाग आर्यसमाज लेरहा है ॥

पादरी साहब के कारनामों को देखकर तनिक आर्योपदेशक महाशय की ओर निहारिये ! सौम्य शान्तमूर्ति-परन्तु-कहते डर लगता है कहीं शास्त्रार्थ का चैलेंज न देदें-कोई तो केवल तनखाहके लियेही उपदेश कार्य स्वीकार करता है । वेतन में कसर हुई कि आपका धर्म भी पलटा खाने लगा ! सचमुच धरमकी नकेल टकाकी दुमके पीछे जोड़ रक्खी है !!! बात बात में झगड़े की बात करेंगे । "जी०ओ०डी-गाड होताहै कि डाग " यही व्याकरणके झगड़े !

कोई कहता है कि गृह्य सूत्रों ? में लिखे अनुसार यज्ञ करना वेद ? में लिखा है ॥ चाहे शास्त्रार्थ करलो ॥

मैं कहताहूँ कि वन्य सूत्रानुसार समर यज्ञ करना वेदमें लिखा है चाहे मुझसे भिड़कर देखलो !

किसी पर कोई धनसम्बन्धी ऐब लगाता है और उसपर पुस्तकें रची जाती हैं ! संवादपत्र काले होते हैं ॥

कहीं घास मासही की पिट्ठी बनती है। हाय पेट-हाय पेट !!! किसी की किसी ने कुछ आलोचना करदी-बस फिर क्या है मिलगया मसाला। सुरंगें खोदी जानेलगीं ! एक इधरसे तो दो उधरसे ॥

उपदेशकों के सौभाग्यसे आर्यसमाजों में फरीक भी पैदा होगये हैं । एक तरफसे किसी दोषके कारण पृथक् किये गये कि दूसरे में जा घुसे ! और लगे करने भरपेट बुराई ! जिससे फरीकबन्दी की और भी उन्नति होने लगी ! जड़ पकड़ने लगी ! जहां तक मुझको ज्ञातहै पंजाब और पश्चिमोत्तर में इसीतरहके आदमियोंके कारण फरीक बन्दियां हुई हैं !!!

क्या ऐसेही उपदेशों वा उपदेशकों के भरोसे आर्य्यसमाज अपने मन्तव्यों को सार्वभौम बनानेकी आशा करसकता है ॥

उधर पादरियों को देखिये ! उनके प्रचार कौशल किसी से छिपे नहीं हैं। पादरी-धर्मोपदेश करते समय प्रभु मसीह का निज अवताररूप बन जाता है। यदि उसके गालपर थपेड़ जमादो तो वह तुरन्त दूसरा गाल तुम्हारी तरफ फेर देगा-चाहे उसकी दाढ़ी के बाल चुभने के डरसे तुम दूसरी थपेड़ भलेही न लगाओ-पर वह तो प्रस्तुत है ॥ परन्तु इस प्रस्तुतिका परिणाम वह क्या निकालेगा ? तनिक सोच देखिये ! शास्त्रार्थ में वह बड़ा नैयायिक, वाक्चतुर, मिष्टभाषी, और समय का परखने वालाहै । समय की बात विचार कर जैसी आवश्यकता देखेगा वैसीही बात करैगा॥ हार मानलेने में उसको तनिक भी अपमान बोध नहीं होता । क्योंकि उसको तो झगड़े से मतलब नहीं है मतलब है केवल मतलब से। यदि तुम तनिक भी क्रोध दिखाओगे तो वह तुम्हारी हजार तरहसे खुशामद और हजार विनती करके तुम्हें प्रसन्न करदेगा । तुम शास्त्रार्थ में चाहे हजार बार पादरी को जीतलो परन्तु अपने व्यौहार और बर्तावसे वह तुम्हें क्या तुम्हारे अन्तरात्मा को जीतलेगा ॥

बीमारके समीप जाकर तो पादरी मानो उसके घरका टहलुआ बनजाता है। दवा दरमत, सेवा सुश्रूषा, वायु बतास, सभी तरहकी टहल करने लगता है

हैजा, महामारी, चाहे संसार मारी क्यों न फैली हो पादरी अपने प्रोग्राम के कामोंपर अवश्य जायगा और तो क्या भीषण युद्ध क्षेत्र में भी तो पादरी मूर्ति के दर्शन होते हैं! जो पादरी उपरोक्त अवस्थाओं में मोम से भी नरम, नवनीत से भी तरल था वही आवश्यकता पड़ने पर सिंह से भी अधिक वलवान्, और सिपाही से भी अधिक कठिन वन जाता है ॥

हमने तो यह सभी गुण पादरी साहबान में पाये!

क्या हमारे आर्य्यसमाज के प्रचारक महाशयगण तनिक इन बातों पर ध्यान देंगे?

यदि प्रचार प्रणाली पर भली भांति विचार करके और साथही देशदशा को ध्यान में धरके काम न किया जायगा तो हमारे समझ में नहीं आता कि आर्य्यावर्त के नौसौ निन्नानवे मत मतान्तरों की अपेक्षा आर्य्यसमाज अधिक गौरव का पात्र और माननीय क्योंकर होसकता है?

पादरी साहब का और आर्य्यसमाज का एकही उद्देश्य समझकर अर्थात् पादरी साहब बाइबिल की मनादी तमाम दुनियां में करना चाहते हैं और आर्य्यसमाज वेद का प्रचार सारे संसार में करना चाहता है यह जानकर ही मैंने दोनों दलों का किञ्चित् मिलान करने की धृष्टता की है सो मान्यवरलोग क्षमा करें. और यदि कुछ उचित ध्यान भी दे डालें तो अहोभाग्य!

हम लोग टीनसिन में १७ जुलाई को पहुंचे थे सो वह दिन तो असबाब उतारते-तीन महीने का रसद पानी वरदी सामान उतारते धरते वीत गया। अगला दिन भी इसी में व्यतीत हुवा ॥ उसीदिन नगर दुर्ग पर एक कम्पनी भेज दीगई थी ॥

चीन में दुर्ग नाम केवल शहर पनाह का है। प्रत्येक शहर या ग्राम. प्राकार से घिरा हुवा होता है। फाटकों पर और चार दीवारियों पर बुर्ज और मोरचे होते हैं-इसी से इन घेरों को किला कह लीजिये। अन्दर तमाम वस्ती होती है। वाहर भी प्रायः वस्ती होती है। सो किला की जैसी मज़बूती होनी चाहिये वैसी इन अवस्थाओं में नहीं होसकती ॥ इन्हीं चार दीवारों के बुर्जों पर हमारे फौज की एक कम्पनी भेजी गई थी ॥

पहिले कह चुका हूं-नगर जन शून्य! सो केवल दो चार दसबीस वृद्ध अस्थि चर्म विशेष कंकाल मूर्तियों के सिवाय टीनसिन नगर में कुछ न था! जलनेसे बचेहुवे मकानात माल असबाब से अलबत्ता भरेथे! और भरेथे सड़ते गलते हुवे मुरदों से!!!

श्रीमद्भागवत में जो रौरव नरक की प्रशंसा सुनी थी वही प्रत्यक्ष दीख पड़ी! नगर प्रवेश करना और रौरव नरक को जाना एकही बात थी! उसी नरकपुरी से नारकी जीवोंके माल असबाब की लुटन्त भी खूबही हुई थी!!!

स्थानिक ब्रिगेडियर जनरल साहब की आज्ञानुसार प्रायः नित्यही एकादि कालम (यूथ) सौ दोसौ आदमियों का आस पास के गांवों में भेजा जाता था और दुश्मन की तलाश की जाती थी॥ जिस किसी गांव से एक भी गोली वा पटाके की आवाज़ पुट्ट से सुनाई पड़ती कि बस फागुन सुदी पूर्णमासी की रात्रि मौजूद हो जाती॥

आज चीन में चहुंओर आग ही आग का दृश्य!

"जरै नगर अनाथ कर जैसा"

पीकिन पयान।

यही सब तमाशे तारीख २७ जुलाई तक रहे! क्योंकि इसदिन तक अंगरेज़ी फौजों के चीफ कमांडिंग-लेफ्टनेन्ट जनरल गेसली साहब नहीं आये थे। २७ को उक्त जनरल साहबने स्टाफ सहित पधारकर. पीकिन उद्धार की बात चीत अन्यान्य पावरों (वैदेशिक दलपतियों) से आरम्भ की॥

चीन राजधानी पीकिन में जो वैदेशिक मंत्रिदल अवरुद्ध था-उद्धार तो उन्हीं का करना था सम्पूर्ण पीकिन तो अवरुद्ध था ही नहीं। परन्तु चढ़ाई का नाम "पीकिन उद्धार" ही रक्खा गया॥

सो सार्वभौम सभाने पीकिन उद्धारार्थ यात्रा करने का मन्तव्य स्थिर कर दिया॥

युद्ध प्रबन्ध का जो नकशा ब्रिटिश जनरल ने बनाकर प्रस्तुत किया वही सर्वानुमोदित हुवा ॥ क्यों न होता ? ब्रिटन आज दिन जैसे सुसभ्य–सुशिक्षित–सुदक्ष–सुचतुर–सुपरामर्शकारी—और प्रवीण हैं. यह देखते हुवे कौन उनके उत्तम परामर्श का अनुमोदन वा अनुसरन न करैगा ?

सो मन्त्रणा स्थिर हुई कि यात्रा कर ही दी जाय।

वह दिन भी बात की बात में आन उपस्थित हुवा ॥ तीन तारीख अगस्त के पहिले यात्रा संवाद प्रकट नहीं हुवा था ॥

मन्त्र को गुप्त रखना हमारे बड़े बूढ़े भी कहते थे—परन्तु सांप बीछू झारने वाले वा भूत उतारने के मन्त्रों से तात्पर्य्य नहीं था ॥ ऊपर वर्णन की हुई बातों को गुप्त मन्त्रणा कहते हैं और इनका गुप्त रखना कैसा आवश्यक है सो समय पर ही जान पड़ता है ॥

निदान निम्न लेखानुसार फौजैं यात्रा वा चढ़ाई के लिये तय्यार हुईः–

जापानी	१०,०००	फौज	और	२४	तोप
रूसी	४,०००	,,	,,	१६	,,
अंग्रेज़ी	३,०००	,,	,,	१२	,,
फ्रेंच	८००	,,	,,	१२	,,
जरमन	२००	,,	–	—	
आस्ट्रियन और इटालियन	१००	,,	–	—	
अमरीकन	२,०००	,,	,,	६	,,
कुल	२०१००	फौज	और	७०	तोप ,,

खबरैं बहुत उड़ा करती थीं कि चीन में लाखों तो "बाक्सर" ही समुदाय है इम्पीरियल फौज की कथा ही क्या ?

लोग कहते थे कि चीन के शाहंशाह बाक्सरों को मदद दे रहे हैं ॥ शाही फौज भी बाक्सरों के तरफ होकर लड़ैगी। कोई कहते थे कि टीनसिन संग्राम में भी शाही फौज शामिल होकर लड़ी थी। आगे भी अवश्यही लड़ैगी पीकिन में तो युद्ध का घमासान हो जायगा ॥ नगर का प्राकार अभेद्य हैही अधिकन्तु असंख्य रक्षकों से सुरक्षित है। हमारी बीसहज़ार फौज तो चटनी होगी !

हज़ारों वर्षों से चीना लोग विदेशी रक्तके प्यासे भी हैं सो खूब भयानक रूप से लड़ेंगे ! इत्यादि-गप्पें-जिनको हिन्दुस्तान में बाज़ारू गप्पें और फौजों में तोशदानी खबरें कहते हैं उड़ा करती थीं ॥

सरकारी आज्ञा और खबर यह थीः—

" "पीट सांग" नामक गांव में जोकि पीहो नदी के तटपर टीनसिन से करीब
" आठ मील के फासिले पर है वहां पर दुश्मन लोग बहुत मज़बूत क़िलाबन्दी
" के साथ पीकिन का मार्ग अवरोध करने के लिये प्रस्तुत हैं ॥
" टीनसिन से पीकिन पीहोनदी के मार्गसे १३५ मील और पैदल मार्गसे ८०मील
" है ॥ चढ़ाई कालम का नाम " रिवर एक्स पेडीशन" (River Expedition)
" अर्थात् नदी मार्ग की चढ़ाई है ॥
" असबाब वगैरः नौकाओं पर और फौजें पैदल मार्ग से चलेंगी !
" मार्ग में "पीट सांग" की भांति अनेकों किले और मोरचे हैं !
" उनको शिकस्त करते हुवे आगे बढ़ना है ॥ पिछली खबर जो पीकिन से
" मिली है उससे ज्ञात हुवा है कि २० ता० जुलाई तक यूरोपमहाशक्तियों का
" सन्धिदल जीता जागता है। परन्तु चीनियों के द्वारा सताया जा रहा है।
" उनके पास रसद पानी और गोली बारूद कम होगया है बहुत से आदमी उ-
" नके मारे भी गये और बहुत घायल हुवे हैं !!
" इससे प्रथम कि वह लोग चीनालोगों के द्वारा मारे वा कैद कर लिये जावें
" उनका उद्धार करना अत्यन्त आवश्यक है ॥
" जिन चीना फौजों के साथ लड़ाई करना होगा वह दो प्रकार की हैं ! एक
"" बाक्सर " जोकि अपने कमर में लालरङ्ग का पट्टा बांधे हुवे होंगे। यही बा-
" क्सरों की पहिचान है ॥ दूसरी चीनाशाही फौज ॥ बाक्सरों के पास पुरानी ब-
" न्दूकें तलवारें वगैरः हैं और वह हथियार चलाना भी नहीं जानते । परन्तु
" शाही फौजों में यही विलायती नयी नमूनेकी अठल्ली मेगजीन राइफल हैं—तो-
" पें भी नई नई हैं ॥ यह फौजें युद्ध शिक्षा प्राप्त की हुई हैं ॥ आगे बढ़ते हुवे (अ-
" डवांस में) जब स्थान विशेष (पोज़ीशन) पर हमला (अटेक) करने का अ-
" वसर आवैगा। तब संभव है कि दुश्मन से दो हज़ार गज के फासिले पर पहुं-
" चते ही बहुत बड़ा नुकसान हो, परन्तु इससे यह परिणाम नहीं निकालना

"चाहिये कि ज्यों ज्यों निकट पहुँचेंगे त्यों त्यों अधिक अधिक हानि होगी ॥
"वास्तव में निकट पहुंचने पर हानि की बहुत कम संभावना है ॥ कारण यह है
"कि चीना लोग शिश्त लेना नहीं जानते ! अथवा डर के सबब गोली ऐसी
"बेढंगी रीति से फायर करते हैं कि ऊंचे से निकल जाती है सो दूर के फा-
"सिले पर तो हमला करने वाली फौज का नुकसान कर सकती है परन्तु
"निकट पहुंचने पर उन लोगों की गोलियां सिर के ऊपर से हवा खाती हुई
"चली जाती हैं ॥ उन लोगों की यह भी आदत है कि अपने मोरचे में बहुत से
"झूठे कारतूस (पड़ाके) रख लेते हैं और जब उनका दुश्मन नजदीक पहुंचता
"है तब उन पड़ाकों में आग लगा देते हैं । जिससे यह मालूम हो कि फायर
बहुत जोर के साथ कायम है । अग्नि वृष्टि की भीषणता विचारकर शायद
दुश्मन धावा (स्टार्म) न करै" ॥

अनजान चीना ! तुम्हारे समझ में फायर की तेजी सुनकर तुम्हारे दुश्मन डर जायँगे ! तुम नहीं समझते कि इससे तो तुम्हारीही कमजोरी और भीरुता प्रत्यक्ष प्रकट होजाती है ॥ मालूम होताहै कि तुम्हारे मन में फायर की अधिकता देख सुनकर अवश्यही बड़ा डर पैठ जाता है । इसी से समझते हो कि दूसरे भी डरते होंगे ! परन्तु जिसे "डर" है उसको क्या लड़ाई के मैदान में आने का साहस करना चाहिये ? संग्राम की प्रचण्डता ज्यों ज्यों अधिक बढ़ती है वीरों के हृदय भी उतनाही अधिक अधिक उत्साह – उमंग – और पराक्रम से समराग्रसर होते हैं । तुम लोगों को घर के कोने में बैठे बैठे अफीम के घूंट घटाघट करते हुये यह सब कहां से मालूम होसक्ता था !!!

— अस्तु —

"सो जब फायर की आवाजें बे तरतीब सुनाई पड़ें तब समझ लेना चाहिये
"कि वह पड़ाकों की आवाजें हैं । और तत्काल धावा (रश) करके दुश्मन से
"मोरचा छीन लेना चाहिये ॥

"सब किसी को अपना स्थान छोड़कर इधर उधर जाने की सख्त मनाही
"कर दी जाती है क्योंकि अलग पाकर चीना लोग पकड़ ले जा सकते हैं और
"बड़ी निर्दयता से प्राण हनन कर डालेंगे ॥

"हर एक कम्पनी के साथ एक एक खच्चर खाना ले चलने के वास्ते और दो
"खच्चर पानी के चलने के वास्ते रहेंगे ॥ पकापकाया खाना (रोटी वा पूरी)

"और पखालों में पानी धावा पर हमेशा तय्यार साथ रहैगा। अवश्यही गोली "गट्ठा के खच्चर तो साथ रहैंगेही ॥

"असबाब कपड़ा बिस्तर वगैरः का वज़न इस तरह होगा कि :—

"अफसर मय घोड़े का सामान और साईस के			८० पौंड
"पैदल अफसर	—	—	२७ पौंड
"सिपाही	—	—	१३॥ पौंड

"आठ दिन का रसद सामान—और पानी साफ करने के वास्ते फिटकरी और "पोटाश (Permenganate of potash) साथ लिया जायगा ॥

"साढ़े तेरह पौंड के असबाब में—एक बरसाती मोमजामा जो बिछाने और "आवश्यकता पर छोलदारी की तरह ऊपर तानने के काम आता है। एक क- "म्बल। एक कुरता। दो बनियान। एक धोती या पाजामा। एक जोड़ी मोजा। "एक लोटा ॥ बस यही साढ़े तेरह पौंड का असबाब है ॥ अफसरों के वरदी "सामान मात्रही का वजन अधिक है अन्य कुछ नहीं॥ हर एक आदमी के पाकट "में एक टिकट पर उसका नाम और फौज का नम्बर वगैरः लिखा हुआ अवश्य "रक्खा रहेगा। और एक पाकटमें एक दवाई की पुड़िया (जिसमें एक मलहम "लगी हुई पट्टी—कुछ रूई—दो आलपीन—एक मोमजामा का टुकड़ा और एक "लम्बी सी कपड़े की पट्टी रहती है) साथ रहैगी ॥

"गोली आदि से घायल होतेही तत्काल इस दवाई का इस्तेमाल कर लेवैं "जिस से अधिक रक्तपात के कारण बेहोशी न होने पावै तब तक डाक्टर आ- "कर इलाज करैहीगा" ॥

नाम लिखे हुये टिकट का तात्पर्य्य यह था कि अनेकों देशान्तर की फौजें साथ साथ ही चलरही हैं सो लड़ाई के समय चाहै जो जिस फौज का जिस के निकट हो वही आवश्यकतानुसार घायल की शुश्रूषा करके यथा स्थान पहुंचा देवै ॥

"गोली गट्ठा :—प्रत्येक सिपाही के पास डेढ़ सौ राउंड (मात्रा)। और दोसौ "रौंढ फी राइफल के हिसाब से खच्चरोंपर कालम के साथ। बाकी अम्यूनीशन "किश्तियों में" ॥

तीन हजार अंगरेजी फौज जिनको पीकिन उद्धार के लिये यात्रा की आज्ञा मिली थी वह इस प्रकार थी :—

पहिला नम्बर बंगाल लांसर रिसाल	४००
पहिली सिख पैदल पल्टन	५००
सातवीं राजपूत पल्टन	५००
चौबीसवीं पंजाब पल्टन	२५०
रायल वेलस फ्यूज़ लियर गोरी पल्टन	३००
हाङ्काङ्ग हिन्दुस्तानी पल्टन	१००
बारहवीं फील्ड बाटरी तोपखाना	६ तोप
हाङ्काङ्ग तोपखाना	४ ,,
जहाजी नेवी (Navy)	३ ,,

बाकी फौजें टीनसिन में और अन्यत्र कुमक (रीइन्फोर्स) आदि के लिये छोड़ दी गई थीं ॥

समर प्रसंग में जनरल गेसली साहब का एक व्याख्यान जो फील्डफोर्स आर्डर द्वारा सेना को विदित कराया गया था उसका उल्लेख भी कर देना यहां समयोचित होगा :—

आर्डर में इस प्रकार लिखा गया था :—

" In assuming command of the Force General Sir Alfred Gaselee "K. C. B, A. D.C, desires to remind the corps composing it that they represent all classes of the Indian Army and that as the honor and "good repute of that army is in their hands, he expects from them a "high standard of discipline and soldierly smartness, as well as "valour and endurance.

"The occasion is unique in the annuls of the Indian army. 10,000 "men composed almost entirely of Indian soldiers cross the sea to "protect the lives of the Queen's subjects in a far distant land. The "duty thus entrusted to them shows the confidence which Her Gra- "cious Majesty Queen Empress puts in her Indian soldiers.

"Sir A Gaselee feels assured that that duty will be cheerfully "and bravely performed whatever the hardships, difficulties and "dangers of the enterprize may be. Further they go to meet as

"allies the troops of other Armies, Russians, French, German, Ameri-"cans and Japanese, and in the presence of these it behoves the "Indian soldiers of the Queen to show that they are second to none "in soldierly conduct and that Her Majesty has in her Indian "troops soldiers as good as those of any nation in the world."

अर्थात्:—

जनरल गेसली साहब चीन मुहिम्म की फौजों की कमान लेते हुवे सब को विदित कराना चाहते हैं और स्मरण दिलाते हैं कि इन में हिन्दुस्तान की प्रायः सभी जातियों के आदमी मौजूद हैं और देशी फौजों की नामवरी और इज्जत बिलकुल उन्ही के हाथ में है॥ वह आशा करते हैं कि हिन्दुस्तानी फौजें उच्च श्रेणी के युद्ध कौशल सिपाहाना फुरती सुचाल बहादुरी और धीरता दिखलावेंगे॥ हिन्दुस्तानी फौजों के इतिहास में यह संयोग अनूप है। दश हजार सैन्य प्रायः सभी हिन्दुस्तानी सिपाहियों की समुद्र पार इतनी बड़ी यात्रा कर महारानी की प्रजा की रक्षा करने के लिये अग्रसर हुई हैं॥ यह कार्य्यभार हिन्दुस्तानी सिपाहियों के सिपुर्द करके महारानी ने दिखाया है कि वह अपनी हिन्दुस्तानी फौज का कितना विश्वास करती हैं॥

जनरल गेसली विश्वास रखते हैं कि ऐसे बड़े काम को हिन्दुस्तानी सिपाही लोग बड़ी प्रसन्नता और उत्साह से पूरा करेंगे चाहे कैसीही कठिनाइयां—सख्तियां—और प्राण संकट भी आन पड़ें!

आगे यह भी देखना चाहिये कि वह लोग अन्य विदेशी फौजों के साथ संयुक्त होकर काम करने चलते हैं। रूसी—फ्रेंच—जरमनी— अमरीकन—और जापानी सभों के साथ साथ आगे बढ़ने का यह उत्तम अवसर मिला है सो महारानी के हिन्दुस्तानी सिपाहियों को उचित है कि अपनी बहादुरी और सुचाल से सब देशों पर सिद्ध करदें कि वह संसारभर की किसी शक्ति से सिपाहाना में कम नहीं हैं॥

यह "हुक्म" सब लोगों को सुनाया गया औ सभी प्रसन्नता से फूल गये॥ सच है सिपाही के लिये युद्ध यात्रा के समय अपने हाकिम के उत्साह पूर्ण वाक्यामृत से अधिक प्रिय पदार्थ और क्या हो सकता है?

———

पहिला मोरचा।

पीटसांग की लड़ाई ॥

टीनसिन से चार तारीख अगस्त के सांझ को अडवांस (यात्रा) किया गया ॥ पहिला काम पीटसांग का मोरचा छीन लेना था।

पीटसांग में पीहो नदी के दोनों ओर चीनियों ने मोरचा कायम किया था॥ इस स्थान पर उनका वहुत बड़ा कैम्प-सिलहखाना और रसदपानी का अड्डा था॥ कई मेगज़ीन नये पुराने गोले बारूद से भरपूर थे ॥

राजधानी रक्षा के लिये यह मोरचा चीनियों ने बहुत मजबूत बनाया था ॥ इस स्थान का नाम ही सिलहखाने (शस्त्रागार) के नाम से विख्यात है अर्थात् "पी=उत्तर +त्साङ्ग = सिलहखाना = उत्तरी सिलहखाना" सो फौजी सामान और कैम्प का यह प्रधान नगर था ॥

इसी मोरचे पर हमला करने के लिये निर्धारणानुसार रूसी फ्रेंच और जरमन बांई ओर से तथा ब्रिटिश-अमरीकन-और जापानी दाहिनी तरफ़ से चढ़े ॥

ब्रिटिश वाहिनी का अडवांस टीनसिन से इस क्रम से हुवाः—

रायल वेल्स फ्यूज़लियर अडवांस गार्ड।

रायल इंजीनियर डिटाचमेंट।

डिवीजन का हेडक्वार्टर स्टाफ।

जनरल साहब और उनका एस्कोर्ट सिख पल्टन से।

बारहवीं फील्ड आर्टिलरी।

अम्यूनीशन कालम।

हाङ्काङ्ग तोपखाना।

पहिले ब्रिगेड का स्टाफ।

सातवीं राजपूत पल्टन।

पहिली सिख पल्टन।

चीना रेजिमेंट।

पहिला बंगाल लांसर रिसाला।

बारबरदारी—कमसरियट ।

फील्ड हस्पताल ।

रियरगार्ड में एक कम्पनी राजपूतकी ॥

——*——

ठीक अढ़ाई बजे चढ़ाई आरम्भ हुई ॥ जिसप्रकार पैदल मार्ग दलसे भरपूर था—नदी मार्ग भी उसी भांति नौकाओं के खचाखच से दलदल हुवा जाता था। हमारे पल्टनके असबाब अम्यूनीशन वगैरः की चार किश्तियां थीं—वह भी इसी समय नदी में रवाना हुई। नदी गर्भ में सांस बाकी नहीं रहगई ! फौजों के असबाब की किश्तियां—इंजीनियरों के मसाले की किश्तियां—तार लगाने वालों के तार बांस बाटरियों की किश्तियां—कमसारियट की रोटी राशन की किश्तियां—अस्पतालों के दवाईखाने और बीमार घायल बैठाने की किश्तियां—और अखबार नवीसों के कागज पेंसिल की किश्तियां—यही सब सामान सब मुल्कों की फौजों के साथ न जानैं कितनी किश्तियां थीं—मुझ से तो गिनी नहीं जा सकीं ! यद्यपि मैं भी किश्तियों का ही एक आरोही था ॥

मोरचा से करीब एक या डेढ़ मील बगल में एक गांव "त्सीकू" था वहीं पर किश्तियां रात्रि में लगीं। और पल्टनैं भी खेतों में चुप चाप पड़ रहीं ॥

कहावत सुनी थी कि दल बादल साथ ही चला करते हैं सो भी देखा कि अढ़ाई बजे के बादही पूर्व की ओर से मेघराज ने भी चढ़ाई का नाद आरंभ किया ! छोटी मोटी आंधी गर्जन तर्जन के साथ साथही अंधेरा होते न होते वर्षा भी आरंभ होगई ! सो कैम्प में उस रात जैसी दुर्दशा हुई वह वहां के भुगतनेवाले ही जानते हैं—कह कर समझाना कठिन है ॥ यदि थोड़ा बहुत जाननेही की इच्छाहो तो अमरीकन सिपाही की ज़बानी सुन लीजियेः—उन्होंने अपनी वही में लिखाहैः—

The Night was chilly and we were drenched to the skin * * * For a bed that night the clinging mud accumulating for ages had to suffice. अर्थात्ः—

उस रात बड़ी सर्दी थी और सब लोग तर बतर पड़े रहे। और उस रातको आराम करने के लिये बिछौना वहां की भूमि पर पुश्तों से जमा हुवा कीचड़ मिला जो आवश्यकता के लिये पर्य्याप्त हुवा ॥

बहुत जोरका पानी तो नहीं बरसा परन्तु बरसताही रहा जबतक कि कोई साढ़ेचारबजे के समयसे अग्निलीला का आरम्भ नहीं हुवा॥

फायर शुरू होतेही इन्द्र महाराज भी न जानें कहां जा छिपे कुछ पता न लगा। मुझको उनका पीछा करने की फुरसत भी न थी॥

प्रबन्ध किया गयाथा कि कई तरफ से पोजीशन पर अग्नि वर्षा करके अन्त में स्टार्म (धावा) करके जगह छीन लीजावे। तड़के पटोत्तोलन की इच्छा थी। परन्तु चार भी न बजने पाये थे कि न जानें किधर से फायर हुई। फिर क्या था—दुश्मनों के दुश्मन भी शायद तय्यार ही बैठे थे। फिर तो भयानक आतशबाजी छूटने लगी!

अहा! वीर केशरी जापान!–आजभी वही जापानी फायरिंगलाइनमें थे॥ जापानी फायरिंगलाइन–ब्रिटिश (राजपूत फौज और सिखफौज) उनको दाहिनी ओर सपोर्ट (मदद) में। उस दिनकीसी अग्निलीला कभी आतशबाजी में भी देखने में नहीं आई थी॥

दिन निकलते निकलतेही लाइन कठिनज्वालाके बीचमें आनपड़ी तोप, गोला, गोली दहिने, बायें–इसके सिवाय और कुछ न था॥ घायल गिरते जाते थे और अडवांस जारी था॥

सूर्य भगवान् को जापानी और हिन्दुस्तानी सूर्यवंशियों को समरलीला देखने की जैसी छटपटी थी वीरोंको उसीभांति पोजीशन जीतलेने की उत्कण्ठा थी॥ इन दोनों की इच्छाओं में जैसे विराम न था, फायर कोभी उसी तरह मुहूर्तमात्र विश्राम न था॥

सुनाथा सो सचमुच देखने में आया कि चीनालोग विना विचारेही और शायद विना शिश्त लियेही (without aim) लक्षों गोला गोली फूंकते चले जाते हैं! वृथाही अपनी सारी शक्ति गँवाये देते हैं!!

इधरसे ठीक उपयोग विचार कर लक्ष्यस्थिर करके उत्तर प्रत्युत्तर बराबर दिये जाते थे परन्तु चीनों की तरह फुकन्त यहां जारी नहीं थी॥ जारीथा यहां बराबर अडवांस। उचित आड़ (cover) लेते हुवे अडवांस॥

इस लड़ाई का अधिक भाग जापानी और हमारी फौजों को ही लेना पड़ा था॥ अमेरिकन फौजें रिज़र्व (रक्षितदल) में थीं। फायरिंगलाइन का "रश" धावा होते ही अमेरिकन फौजें भी बड़े वेग से शक्तिभर आगे बढ़ीं

परन्तु स्थानपर पहुंचते पहुंचते पोजीशन पर दखल होगया था ॥

इस लड़ाई में जापानी तीनसौ अंगरेज़ी कुल पचीस हताहत हुवे थे ॥ जो निःसन्देह फायर की भीषणता विचारते हुवे अपेक्षाकृत बहुत कम नुक़सान था। हमारी पल्टन का नुकसान इसदिन एक सिपाही और तीन खच्चर हत तथा चार सिपाही आहत ॥ डाक्टर रामदत्त महाशय के बूट पर एक गोली लगी (जबकि वह अश्वारूढ़ थे) परंतु ठंढी होगई थी ॥ एक गोली पगड़ी काट कर भी निकल गई थी ॥

अफसर लोगों की बहादुरी बरसती हुई आग के बीच में खड़े होकर दूरबीन से दुश्मन की अवस्था देखने में और डाक्टर लोगों की बहादुरी ऐसी ही अवस्था में दौड़ दौड़ कर घायलों की चिकित्सा सुश्रूषा करने में अतिशय सराहनीय थी ॥ फौजों की प्रशंसा इस से अधिक और क्या हो सकती है कि ऐसी कठिन अवस्था में बिना किसी भांतिकी घबराहट के अनुद्विग्न और धीर मनसे फायर और अडवांस करते रहे कोई कहीं किसीप्रकार भी विचलित नहींहुवा॥

हमने देखा है कि हिन्दुस्तान में तनिक तनिक सी बातपर हमारे भाई घबरा जाते और कर्तव्य मूढ़ बन जाते हैं। वाग्युद्ध–बातों की लड़ाई में इतना अधीर हो उठते हैं कि परिणाम देख पछताना पड़ता है ॥ मैंने शान्तिका उपदेश करने वालों को भी क्रोध में अधीर देखा है ॥

सो उन महानुभावों को सदा के उद्धत स्वभाव सिपाही के युद्ध समय की शान्तिपर दृष्टि देना चाहिये ॥

कहते हैं कि लड़ाई झगड़ा हिन्दुस्तानियों की बड़ी प्रियवस्तु है। सो यदि ऐसाही हो तो क्यों न सिपाही की युद्ध प्रियता सीखें और अंगीकार करें ? यदि लड़नाही है तो सिपाही की भांति क्यों न लड़ें ? मुंह की लड़ाई लड़कर वृथाही मुंह क्यों खराब करें !!!

सो हे भाई ! उचित तो यही है कि ज़बानी जमा खरच वाली सभी बातोंको एक दम दूर करदीजिये ॥ जैसे हमारी फौजों ने दोपहर होने के पहिले ही पीटसांग के मोरचे से चीना लोगों को हटा दिया ॥

पोस्टपर कब्जा होगया ॥ थके थकाये लोगों को अब तनिक दम मिला ! घायलों को किश्तियों पर बिठाकर टीनसिन को वापिस कर दिया गया ॥

वीमारों के लिये किश्तियां बड़े आराम की वनाई गई थीं सो उन्हें किसी प्रकार की तकलीफ नहीं हुई॥

दुश्मनों का पीछा दो मील तक किया गया था परन्तु आगे उन लोगों के जम जाने की कोई सम्भावना न देख कर फौजें वापिस आईं और तीन तीन मील तक औट पोस्ट (चौफेर पहरा) लगाकर वहीं पड़ाव डाला गया॥ रात भरकी भीगी हुई-रातही से दोपहर तक आग वरसाई हुई पल्टनों ने अव तनिक आराम लिया। मुंह हाथ धोये। मानों अव सवेरा हुवा है। सच मुच उनका तो अव सवेरा हुवा ही था। युद्ध में विजय पाई है-कठिन परिश्रम वाद कुछ विश्राम मिला है। तनिक सा कुछ सूखा रूखा भोजन भी पेटतक पहुंचाया है॥

प्रातःकाल जैसे प्रकृति देवी का हास्य मय मुखमंडल शोभायमान दीख पड़ता है-सिपाही का चेहरा इस समय युद्धावसान में-हां-केवल पहिले दिन के मोरचे की जीत के वाद, वैसाही प्रफुल्लित दीख पड़ता था॥

साढ़े तेरह पाउंड वाले विस्तरे भी किश्तियों में ही लदे रहे-साथ में केवल शरीर पर पहिने हुवे वरदी के वस्त्र, झोले में किसी किसी के पानी पीने का गिलास या कटोरा॥ वस और कुछ नहीं था॥ किश्तियों पर से असवाव लाने का किसी को अवसर ही न हुवा॥

पड़ाव जिस जगह डाला गया था वह कवरिस्तान था सो कवरों के भिट्टों और पत्थरों पर टेकलगा चटाई आदि डालकर सव लोगों ने सुन्दर घर वना लिये जो धूप से वचाव के लिये वड़े आराम के वने॥

चीना लोगों के वड़े वड़े कड़ाह जिन में पका हुवा भात भराथा अनेक ठौर पर पड़े हुवे मिले॥ वहुत सी छोलदारियां भी मिलीं॥

जापानी तोपों से एक वारगी दश दश वारह वाढ़ों का फायर होना और उन्हीं की आग से चीना मेगजीनों का धरती समेत धड़ा धड़ उड़ना ऐसा जान पड़ता था मानों पूर्ण प्रकोप के साथ ज्वालामुखी पर्वत आग उगल रहा है! धरती पर भूकम्प पड़ गया था! भीषण अग्नि की तेजी के सामने सूर्य्य देव की तेजी पानी से भी फीकी होगई थी॥

"फ्रंट" (खेत) से पीछे लौटे हुवे जापानी घायलों के चेहरोंपर कैसा अपूर्व आनन्द झलक रहा था कि उस के आगे सव शारीरिक कष्ट विलकुल ही भूल जाते थे॥ वदन पर वीसियों पट्टियां सव ओर से वँधी हुईं

एक एक शरीर में छः छः गोलियां धँसी और पार गई हुई! अङ्ग प्रत्यङ्ग क्षतविक्षत–! परन्तु जापानी हृदय क्या तनिक भी कष्ट की बात जानता था? उसका प्रसन्न मुखमंडल—हँसताहुवा चेहरा—और सरलता एवं नम्रता भरी हुई सलामी के इशारे की चितवन देखने वालों के हृदयों पर अपूर्व भाव उपजाती थी॥ " Wé have won The day " आज का खेत हमारा हुवा " यही गौरव गरिमा से भरे हुवे सरल वचन परमानन्द दायक महामन्त्र थे॥

अपनी सुसज्जित बारहदरियों में बैठे हुये हमारे हिन्दुस्तानी महाशय गण सिपाही के इस " परमानन्द " की बात को शायद अचरज की दृष्टि से देखेंगे और सुनेंगे॥ और शायद हमारे धर्मोपदेशक लोग इसे बनावटही न कहदें! और कहेंगेः—भला रक्त की नदी बहाना और स्वयम् उसमें शराबोर होजाना क्या " परमानन्द " की बात हो सकती है? परमानन्द तो वही "ब्रह्मानन्द" ही कहाता है जिसमें मग्न होकर योगिजन अपने आपको भी भूल जाते हैं। क्षुधा पिपासा—शीत उष्ण—हानि लाभ-कोई भी द्वन्द्व उनको सता नहीं सकता? योगी की वही अवस्था परमानन्द की अवस्था कहा सकती है-इत्यादि-परन्तु मान्यवर! यदि आप तनिक गहिरे पानी पैठकर खोजें, तो पावेंगे कि हमारा यह समरानन्दही उस ब्रह्मानन्द का पवित्र सोपान है॥ उपरोक्त सब द्वन्द्व समरानन्द में भी तो समभाव से देखने भोगने होते हैं?–

देवताओं और ऋषियों के ब्रह्मानन्द में जब असुर लोग खलल डालते थे और वह आनन्द पाने में असमर्थ हो पड़ते थे तब इन्हीं राजन्यगण और सिपाहीगण का स्मरण होता था। इनकी रक्षा में ही उनका ब्रह्मानन्द वल्ली विस्तार होता था॥

यदि वीर क्षत्रीगण शारीरिक कष्टों को तकलीफ समझकर असुरों के मुक़ाबिले को न जाते तो क्या सम्भव था कि ऋषि और देवगण अपने योगाभ्यास और मनन निदिध्यासन में कृतकार्य हो पाते?

सो सचमुच जैसे योगिजन शारीरिक कष्टों और आवश्यकताओं की परवाह नहीं करते अनेक कष्ट सहन करते हुवे भी ब्रह्मानन्द में मग्न रहते हैं—ठीक इसी भांति वीर सिपाही भी अपने आपको विस्मरण करके चारों ओर प्रचंड पराक्रम दिखाता हुवा विजय प्राप्ति में तन्मय हो जाता है। विजयलाभ करने पर उसका हृदय कमल कैसा प्रफुल्लितमन विकसित और आनन स्वर्गीय आनन्द

से तेजोमय प्रकाशित होजाताहै वह भाव वहदशा बेशक वर्णनातीतहै—सचमुचः-

नशक्यते वर्णयितुं गिरा तदा—
स्वयं तदन्तः करणेन गृह्यते ॥ *

दूसरा मोरचा।

याङ्गत्सून की लड़ाई।

दूसरे दिन सबेरे "याङ्गत्सून" नामक गांव पर हमला करने का निश्चय था। यह मज़बूत और सुरक्षित मोरचा पीटसांग से बारह मील के फासिले पर था। खबर थी कि दुश्मन लोगों का एक फ्लांक (बाजू) पीहो नदी के रेल वाले पुल के बाईं तरफ को और शेष सम्पूर्णदल रेलकी खाई के बराबर पर है॥ सो उनपर हमला करने के लिये ब्रिटिशदल सन्मुख से, अमेरिकन दाहिनी ओरसे और जापानी बाईं तरफ से धावा करें प्रातःकाल होतेही अडवांस (कूच) किया गया॥

करीब ग्यारहबजे दिन के "फायररेंज" (गोले की मार) में पहुँच गये॥

रूसी एक बटालियन और तोप खानाने बायें ओर से हमला किया।

हमारी सेना सन्मुख से और अमेरिकन दाहिने से आगे बढ़े॥

अंगरेजी डिस्पोज़ीशन (तरतीब) यह थीः-पहिला बंगाल रिसाला आगे, पहिली सिख पल्टन और सातवीं राजपूत पल्टन सन्मुख हमला (फ्रन्टल अटाक) में॥ फ्यूजलियर गोरा पल्टन और चौबीसवीं पंजाब पल्टन सपोर्ट (कुमक) में॥

मोरचे से क़रीब पांच हज़ार गज़के फासिले से फौजें अटाक (हमले) की तय्यारीमें होगईथीं। अढ़ाई हजार गजका अडवांस तो बहुतही कठिन अग्निके बीच में पड़ा! परन्तु खुले तफावत (Extended order) की चालों के कारण अपनी हानि बहुत कम हुई! राजपूत पल्टन में तो कुछ भी हानि नहीं हुई! केवल एक हवल्दार के एक गोली ठंढी होती हुई लगी थी परन्तु घायल नहीं करसकी॥

* अर्थ। उस परमानन्द की वार्ता वाणी से बखानी नहीं जासकती क्योंकि उसका ग्रहण अन्तःकरण से होताहै॥

याङ्गत्सून का मोरचा दखल होने के पहिले संयुक्त दलों (Allied Troops) में कुछ ऐसी गड़बड़ होगई थी कि जिससे अपनीही फायर से बहुत कुछ अपनी हानि होगई ॥

अमेरिकन फौजका कुछ भाग दाहिने ओर के रास्तोंसे थोड़ा आगे बढ़गया ! उनके बढ़ने के पहिलेही कुछ फ्रेंच सेना आगेके खेतों में जा छिपी थी कि अवसर पाकर मोरचे पर हमला करे ॥

उधर रूसी तोपखाना जो बायें तरफ से बढ़ रहाथा वह दाहिनी चालों से बिलकुल अनजान था ॥

इन दिनों मकाई और जुवार के खेत इतने ऊँचे बढ़ रहे थे कि एक दूसरे फौजों का देखना व लगाव कायम रखना असम्भव था ॥

अग्रसर होती हुई अमेरिकन सेना का आहट पाकर फ्रेंच लोगों ने समझा कि " बाक्सरदल " आरहाहै। न जानें कैसे उन को दिग्भ्रम होगया कि जिससे अपने दाहिने ओर से आती हुई फौज को दुश्मन की फौज समझ बैठे और उधरही को अपनी फायर का रुख करके लगे आग बरसाने !!!

दूसरे तरफ रूसी फौज ने जब फायर की आवाज़ सुनी तब उन को भी निश्चय हुवा कि दुश्मन अब निकट ही है। फिर क्या था रूसी तोपें भी उधरही को आग उगलने लगीं ॥

खेतों की आड़ के सबब दिखाई तो कुछ पड़ता न था आहट के सहारेही रूसी और फ्रेंच की दो तरफा दावानल अमेरिकन टुकड़ी पर दहकने लगी !

अमेरिका वालों के भेदियों (Scouts) ने अडवांस के पहिले ही सब तरफ अच्छी तरह से देख भाल लिया था सो उन को निश्चय था कि यहां दुश्मन का कहीं नाम भी नहीं है। सो उन्होंने इस दो तरफा फायर को दुश्मन की फायर होने का कुछ भी शुबहा नहीं किया और एक भी गोली जवाब में नहीं दागी ॥

कैसी विचित्र दशा उस समय उन लोगों की थी ! दोनों तरफ से दो कठिन दुश्मन कठिन आग बरसा रहे हैं–और वह स्वयम् सब तरह की शक्ति रखते हुवे भी चुप चाप सब आग अपने ऊपर ले रहे हैं ! और चूं तक नहीं कर सकते !!! उस समय अमरीकन लोगों की दशा सचमुच Rats in a trap = मूशमारी (चूहेदानी) में चूहे की भांति थी !!!

सौभाग्य वश उस स्थान पर कबरिस्तान था सो उन्हीं कबरों की आड़ लेकर अमेरिकन पार्टी चुप चाप बैठ रही! परन्तु बचाव कहां तक होता! बहुत हानि उठानी पड़ी!

फ्रेंच लोगों ने कई मिनट तक फायर करते रहने पर जब देखा कि न तो कुछ आहट ही मिलती है और न जवाब में कुछ गोली ही चलती है तब क्षणेक फायर को रोका॥ इस अवसर को ग़नीमत समझ कर एकादि अमरीकन सिपाही ने कबर के ऊपर चढ़ कर अपनी बन्दूक से अमेरिकन झंडा ऊंचा किया! और बहुत बार हिलाया कि झंडा देखने से मालूम होजाय कि वहां कोई दुश्मन नहीं था। वह सब मार दोस्तही लोग सहन कर रहे थे! अन्ततः फ्रेंच लोगों को अपनी भूल ज्ञात हुई और फायर बन्द कीगई उधर तोपें भी ठंढी पड़ीं! आगे को अडवांस जारी हुवा! राम राम और खुदा खुदा करके वह चन्द लहमे पार होगये॥ परन्तु इस "रम खुदइया" में हमारी चौबीसवीं पंजाब के भी कई आदमी काम आगये। यह अवश्य ही गेहूं में घुन का पिसान हुवा!!!

जिस समय इधर यह घमासान मच रही थी उसी समय बाईं तरफ की फौजें सचमुच बाक्सरों के साथ मुटभेड़ में पहुंच गई! यांगत्सून गांव के निकट पहुंचते ही बाम पार्श्व को दुश्मन का सामना हुवा और जापानी तथा अमेरिकन फौजें खूब तेज़ी के साथ लड़ रही थीं कि उधर से रूसी तोपों ने गांव पर गोले बरसाना आरंभ किया॥ गांव में आग लग गई मोरचों पर भी बहुत से गोले पड़े परन्तु इन रक्त पिपासू गोलों ने अमेरिकनों को भी नहीं पहिचाना! इस बेर भी रूसी गोले ने अमेरिकन और जापानियों के प्राण लिये!!! इस ठौर सैकड़ों सिपाही खेत रहे थे॥

इस दिन ऐसी कठिन गरमी थी कि जिस का ठिकाना ही न था! और ठीक दोपहरी की लड़ाई! आज की तकलीफें कभी कोई न भूल सकैगा!!! लड़ाई में गिरे हुवे मुरदों के टीनों में से पानी लेने के वास्ते लोग टूटे पड़ते थे!!!

गरमी की अधिकता यहां तक थी कि फ्यूजिलियर गोरी पलटन समय पर स्थान तक पहुंच भी न सकी थी!! पीछे ही पड़ी रही!!! "गोरों" को "गरम" सताती भी बहुत है। क्या जानै "गोरा" और "गरम" एकही राशि के नाम हैं इसी सबब से अथवा अन्य कुछ कारण होगा! हमें तो लाल लाल चेहरों को गिरते देख दुख होता था! क्या करते! काशिनाथ महाशय का स्वर्ग वास हो

चुका था नहीं तो यहाँ की शान्ति का कुछ उपाय करवा देते जिस सें सूरज की गरमी बेचारे गोरों को इतना अधिक तो न सताती !!!

इस गरमी की बात अमेरिकन सिपाही यों कहते हैं।—

" It is all well enough to sit in a comfortable office with the ice chest near at hand, and discourse learnedly about the advisability of " just wetting the lips when thirsty " but let the exponents of this idea put it to as severe a test as did the troops at Yangtsun, and I'll wager a month's pay that they will soon be convinced of their error.

" क़ायदे और किताब लिखने वाले कहा करते हैं कि सिपाहियों को चाहिये कि कूच या धावा के वक्त जब प्यास लगे तो सिर्फ़ थोड़ा पानी पियें या सिर्फ़ ओठ भिगाना ही काफी होगा। इसी तरह जब जब प्यास लगे तब तब ज़बान ताज़ा करलिया करें इस से फायदा होगा और गरम से गिरना न पड़ैगा" परन्तु अमेरिकन सिपाही कहता है कि यह सब बात सुन्दर मंदिर में बैठकर पास ही बरफ का शीतल प्याला धरे हुवे ही कहते और विद्वत्ता झलकाते अच्छा लगता है। परन्तु उन्हीं विद्वज्जनों को एकबार यांगत्सून की भांति किसी लड़ाई के मैदान में भेज दीजिये और कहिये कि एक टीन पानी से होंठ भिगाकर मैदान में डटे रहैं तब निश्चय है कि उनको अपनी भूल विदित होजायगी और स्वीकार करना पड़ेगा कि धावापर सिपाही के लिये जितनी जरूरत गोली गट्टे की है उतनी ही आवश्यकता पानी की भी है॥ यदि वह मान न लें तो सिपाही एक महीने की तनखाह हारता है॥

इस दिन सचमुच बहुत ही कठिन धूप थी। प्यास से सभी व्याकुल हो उठते थे। परन्तु उनकी अपेक्षा हिन्दुस्तानी और जापानी कम गिरे थे॥

धावा धपेड़ में पानी की सख्त जरूरत होती ही है परन्तु थोड़ा २ बार बार पीना निःसन्देह लाभ दायक है। एकदम अधिक पानी पीलेने से अधिक व्याकुलता और हृदय वा पेटमें दर्द पैदा होजाता है॥ इसदिन कई अमेरिकन सिपाही गरमी के सबबसे मरगये थे॥

ऐसे अवसर पर हम अपने डाक्टर रामदत्त अवस्थी महाशय के पुरुषार्थकी

सराहना किये विना नहीं रहसकते कि जो बराबर प्रत्येक जनकी खबर लेने को तडितवत् पहुँच जाते थे !

गोली से या गरम से चाहै किसी सबब कोई लाइन से गिरा (fall out) नहीं कि डाक्टर महाशय उपस्थित हैं ! उचित शुश्रूषा और प्रबन्ध तत्काल करके फिरभी आगे मौजूद !

आपने कोई भेदभाव नहीं रक्खा। आपकी ड्यूटी यद्यपि केवल राजपूतोंके साथ में थी. तथापि निगाह पड़ने से अमरीकन, जापानी वा अँगरेज कोई भी होता उचित और आवश्यक सहायता अवश्य पाता था ॥

युद्ध क्षेत्र में डाक्टर महाशय को बारम्बार दूर दूर जाना पड़ता था सो भीषण गोला वृष्टि होते समय-और सभी अफसरों के पैदल रहते हुवे भी आपको सवार रहकर दौड़धूप करना पड़ाथा !

लाल लाल अंगार बरसते समय प्राणों का भय न करके सवार होकर दुश्मन का खुलाहुवा निशाना बनना पाठकगण विचार देखें कैसी कठिन बातहै ॥ कितनीही गोलियां बगलें झांकती चली गई ! परन्तु डाक्टर महाशय बराबर अपने कार्य में संलग्न रहे ॥

अन्ततः यह पोस्ट भी दखल होगया ॥ चीना लोग भाग निकले। सैकड़ों खेत रहे। सैकड़ों गांव में जल भुन गये। और सैकड़ों ही नदी में डूब मरे !!!

फौजों के कैम्प पड़गये। सब ओर "आउट पोस्ट" लगा दिये गये अग्नि वर्षा बन्द होने के साथ २ सूर्य्य भगवान् की गरमी भी शीतल पड़ने लगी। सिपाहियों के प्रज्वलित हृदय और खूनी चेहरे युद्धावसान में ज्यों ज्यों शीतल होने लगे त्यों त्यों संध्या देवी भी अपने मंद समीरन रूपी हाथों से प्यार थपकियां देने लगीं ॥

उस प्रचंड गरमी के पीछे सांझ वेला बड़ी सोहावनी मालूम पड़ती थी ॥

इस दिन फौजें बहुत थक गई थीं और आस पास से दुश्मन का यहां कुछ डर भी सुना नहीं गया था। सो एक दिन का विश्राम दिया गया ॥

ताः ७ अगस्त को याङ्गत्सून में "हाल्ट" (विश्राम) रहा ॥

यहां पर टीनसिन पीकिन रेलवे का पीहो नदी पर एक बड़ा लौहमय पुल है जो अब बाक्सरों ने अर्ध भग्न कर दिया था। उसी के पार्श्व में हमारा कैम्प पड़ा था ॥

दिन में इतनी प्रचंड गरमी थी। रात को विना कम्वल के सोने में सव को खूव जाड़े का स्वाद भी लेना पड़ा था॥

यह सव वातें सचमुच "लड़ाई" शब्द के अर्थ ही में भरी हुई हैं फिर लड़ाई करनेवाले सिपाही इस से कहां त्राण पासकते हैं॥

"साइसून" तीसरा पड़ाव.

याङ्गत्सून में मुकाम होने से सव फौजों को अच्छी आराम मिलगई। सव थकावट दूर हो गई। आगे के लिये ताजे होगये॥

पिछले दो कूचों और लड़ाइयों में अनुभव हुवा था कि गरमी से फौजें वहुत व्याकुल हो जाती हैं। इस कारण कूच का प्रवंध कुछ इस ढंग से किया गया कि असल दोपहरी में किसी को चलना न पड़े॥

सो अमेरिकन फौजें विलकुल तड़के मार्च करने लगीं और जापानी तो मन माने रात दिन अवेर सवेर जभी मौका देखते चल पड़ते थे। रूसी दल भी सवेरे ही कूच करने लगा॥

साइसून नामक स्थान याङ्गत्सून से दस मील था॥ खवर मिली थी कि इस कूच में किसी तरह का भय नहीं है। दुश्मन का कोई मोरचा या अड्डा इस वीच में नहीं है॥ सो वे खटके तड़के ही कूच करके साइसून में पहुंच गये॥

इस दिन न तो दुश्मन से कुछ मुक़ाविला हुवा और न सूर्य्य भगवान् ने ही कुछ अधिक तेजी दिखाई!

खेतों में पड़ाव पड़ा। फौजों ने आराम से खाना पीना किया। पिछले दो दिन तो केवल साथ का पका पकाया कुछ थोड़ा खाना या खेतों से तोड़ तोड़ कर मकाई के भुट्टे खाये गये थे॥

यह मकाई के भुट्टे कैसे स्वादिष्ट और कैसे पाचन थे कि यदि उन दिनों कोई हम से अजीर्ण रोगी के लिये पथ्य पूछता तो वही मकाई के भुट्टे वतला देते॥

सो इस दिन कुछ रोटी दाल भी पकी पकाई। सव लोग राजी खुशी होगये॥

रूसी फौजों के कमसरियट का अजव हाल था। सिपाही लोग इधर उधर से सुअर-वैल-भैंसे-खोज पकड़ लाते और झटपट काट पीट उधेड़ भून खा जाते थे॥ और वात की वात में ताज़ा दम आगे वढ़ने और लड़ने को तय्यार॥

जापानियों का हाल सुनिये—फौजों के पहुंचते पहुंचते चीना लोग घर बार छोड़ छाड़ भाग जाते ही थे सो यह लोग घरों में घुसकर भात के हंडे पके पकाये उठा लाते अथवा चावल और कड़ाह उठा लाकर तत्काल भट्ठा खोद कर उबालने को चढ़ा देते और बीसियों आदमी चारों ओर से जुट कर खा पी बराबर कर देते ॥

खाने पीने के सम्बन्ध में सभी देश वालों की फुरती और चालाकी देख कर हम को तो आश्चर्य होता था कि क्या हम भी सिपाही हैं ?

रोटी पानी के सम्बन्ध में दो एक चटकीली बात भी सुन लीजिये;— एक चौके में दो तीन राजपूतों ने अपना भोजन बनाकर तय्यार किया और बाहर निकल कर कुछ ठंढे होनेलगे कि तनिक विश्राम बाद भोजन करेंगे। इतने में एक अमेरिकन सिपाही आकर धीरेसे चूल्हेकी आग में अपना चुरट सुलगानेलगा !

हरे हरे राम राम ! यह क्या किया ! यह क्या हुवा !!!

बेचारा अमेरिकन सिपाही हैरान है कि क्या मामला हुवा ! वह समझा शायद यह लोग रोटी की चोरी लगातेहोंगे-बेचारा हाथ पांव कोट हैट झाड़कर दिखाता है कि देखलो मैंने रोटी नहीं लिया है सिर्फ चुरट सुलगाया है ॥ पर वहां तो मामला ही दूसरा था ॥ अमरीकन सिपाही तो इन को झमेला करते देख अपना राही हुवा । इन धार्मिक हिन्दुओं को सिवाय सब रोटी कृष्णार्पण वा पीहो नदी के समर्पण करने के और बश ही क्या था ?

एक दूसरे चौके में भी रोटी बन बना कर तय्यार हुई । चपातियों का बड़ा सा गड्ड थाली में चूल्हे के बगल रक्खा है। एक जापानी सिपाही आया और एक डालर (दो रुपया) थाली के निकट रख कर दो रोटियां उठालीं !

हाय हाय ! चौका तो छूत हो गया ! इतनी मेहनत करी कराई सब माटी होगई ! राजपूत लोग जापानी पर बड़े नाराज हुवे परन्तु वह बेचारा खड़ा मुंह ताक रहा है कि यह क्या और क्यों बक रहे हैं ? मैंने तो रोटियों के दाम से बहुत अधिक पहिले ही धरदिया था ॥

एकादि भले मानुस राजपूत ने देखा कि अब कहना सुनना वृथा ही है सो सब रोटी उठाकर जापानी को देने लगा और उस का डालर भी लौटा दिया ॥ जापानी ने समझा शायद यह लोग दाम देने से चिढ़ गये हैं । यही बात अनुचित हुई। सो उस ने बड़ी नम्रता प्रकट करते हुवे डालर वापिस लिया और

चाहता था कि थोड़ीसी रोटियां ले जायँ शेष इन लोगों के लिये छोड़दें । परन्तु यहां तो बात ही निराली थी ॥ लाचार धन्यवाद पूर्वक जापानी सब रोटियां भी ले गया और डालर भी ॥ राजपूत लोग अपने धर्म को समेट कर भुट्टे भूनने लगे ॥

यद्यपि चीन में हमारे राजपूतों ने " चौकाहे धर्म " में बहुत कुछ " माडीफिकेशन " (संशोधन) कर दिया था । कपड़ों की छूत छात-बूट जूता-चौके से होकर आना जाना-किसी से किसी का छूजाना-इत्यादि सब मुलतवी वा मोअत्तल थे। परन्तु तौ भी कहां तक होता.—शेख चिल्ली तो थे ही नहीं कि:—

" भैंसे को मल मल के पिस्सू करैं "

—o—

चौथा कूच "हू शी वू"

—o—

साइसून से हूशीवू १४ मील के फासिले पर था ॥ सवेरे के वक्त गोरी फौजों को मार्च करने का समय नियत था इस कारण कालों को काली रात ही में मार्च करना पड़ा—न करते तो क्या दोपहरी में सूर्य्य भगवान् से टक्करैं लेते ?

सो रात ही में मार्च करके राजपूत लोग तथा सिख और पंजाबी लोग भी अंधेरे ही समय मुकाम पर पहुंच गये ॥

रिसाला अपने मामूली काम रिकनायसंस (तलाशी) पर चारों तरफ रवाना होगया कि खूब अच्छी तरह से देख भाल कर औट पोस्ट लगा दिया जावे और रात भर की कूच की हुई फौजैं आराम करैं ॥

सो यही तलाशी करते समय गांव के आगे करीब दो मील पर उन को एक अच्छा मजबूत मोरचा मिला जिस में कुछ चीना हथियार बन्द आदमी अब भी मौजूद थे शेष सब भाग गये थे ॥ शायद यह लोग रात में फौजों पर हमला करने के इरादे से मोरचा को मजबूत कर रहे थे ॥

रिसाले ने बरछे का चार्ज करके बहुत चीनों को मुक्ति देडाली !!!

और बाकी भागगये ॥ आगे देखा गया कि इन चीनियों ने नदी का बांधभी काटना आरंभ कर दिया था । यदि यह बांध काटने का काम वह लोग पूरा कर पाते तो निःसन्देह नदी मार्ग तो बिलकुल रुक ही जाता ! और कुछ

काल के लिये रिवर एक्ल पेडीशन (नदी की चढ़ाई) को हाल्ट करना पड़ता ! परन्तु परमेश्वर को तो करनाही कुछ और था॥ प्रसिद्ध है कि "जहां शक्ति वहां भक्ति" परमेश्वर को क्या पड़ी थी कि आठ शक्तियों के होते हुये अकेले बूढ़े चीन के तरफ़दार बनते ? सो वह डर भी मिट गया । मोरचा भी साफ़ हो गया॥ फौजों ने फिर भी खेतों झुट्टों आदि का सहारा लिया॥

पांचवां कूच माटाऊ

दिन में आराम करने के बाद चार बजे सायंकाल को फिर भी कूचहुवा। आगे सुनागया कि बहुत खतरा नहीं है॥ पीकिन पहुंचने की सब को बड़ी जल्दी थी ही। क्योंकि मंत्रिदल मुद्दत से अवरुद्ध पड़ा है। न जाने उनपर क्या दशा बीतती होगी। बाक्सरों ने उनको जीवित छोड़ा है या समाप्ति करडाली। कुछ खबर भी नहीं मिली थी। इस से सब देशों की फौजें और जरनैल लोग बहुत ही जल्द पीकिन पहुंचने के इच्छुक थे॥

सो चार बजे सायंकाल को कूच करके बराबर दो बजे तक चलते ही रहे। तब एक "माटाऊ" नामक स्थान में पहुंचे॥ पल्टनें थक गई थीं। समय भी होही गया था। और यहभी सुनागया था कि माटाऊ में बाक्सर लोग आकर इकट्ठे हुवा करते हैं। सो वहीं पर पड़ाव डाल दिया गया। और निश्चय हुवा कि वहांपर थोड़ी फौज का पोस्ट दृढ़ता से बैठा दिया जावे जिस में मार्गावरोधका डर न रहजाय॥

दो बजे रात्रि में वहां पहुंच कर हाल्ट हुआ। और चारों ओर पहरा लगा कर फौज ने विश्राम लिया॥

विश्राम शब्द के अर्थ साफ साफ यही हैं कि चुप चाप भूमिपर बैठकर बन्दूक के स्लिग (तस्मे) को बगल से कंधे में लपेट कर एक करवट लेट जाना और एक हाथको सिर के नीचे दोहरा कर तकिया लगा लेना। सरदी लगी तो घुटनों को पेट में दबा लेना। बदन पर से कोई सामान वरदी वगैरः का अलग न करना। अधिक जाड़ा या वर्षा होने पर पीठपर का बारानी कोट अवश्य ही खोल कर ऊपर ओढ़ लेना॥ बस आनंद पूर्वक सुखकी नींद सो जाना॥-

यदि सौभाग्य वश खेत वा मैदान में ठूठियां वा कटी खेती की खूंटियां न हुई तब तो उस भूमि को मखमली बिछौना समझना चाहिये और यदि समथल भूमि न मिली, अथवा, खेतों में ढेले कंकड़ वा झार झंखार हुवा तो भी तकलीफ कुछ वैसी ही होती थी जैसी कि घर पर मुलायम रूई के गद्दों में बिनोले रहजाने पर होती है ॥

सो इसी भांति तीन चार घंटा आनन्द की नींद लेकर सब लोग फिर भी ताजे तगड़े होगये ॥

दिनभर मुकाम रहा और सायंकाल आगे कूच करनेके लिये हुक्म दियागया॥

छठवां कूच "चांचियावान्"

तारीख ११ अगस्तके सायंकाल ६ बजे फिर कूच हुवा और ठीक आधी रातके बारहबजे स्थान चांचियावान् में पहुँच गये ॥ यह गांव यद्यपि सामान्य सा था परन्तु सुनने में आया कि चिहली प्रान्तमें यह सम्पूर्ण प्रदेश की अपेक्षा अत्यन्त प्राचीन वस्ती है ॥ किसी समय यह एक बड़ा समृद्धिशाली नगरथा ॥

ताः ११ अगस्तके पहिले यह स्थान चाहे नगर न था पर गांव तौभी था। शोक ! कि आज १२ अगस्त १९०० कोअब गांव भी नहीं रहा ! शुद्ध ऊजड़ !! भस्म-और माटी का ढेर !!!

यद्यपि यहां लड़ाई कुछ भी नहीं हुई । न कुछ मोरचा या खाई खंदकही कुछ था परन्तु भयभीत होकर ग्रामनिवासी सब इधर उधर भागगये थे । खाली गांव में रूसी सैनिकों ने आग लगादी थी ! सो यह अत्यन्त प्राचीन नगर भी अपने जीवनके दिन पूरे करके कालकी अनन्त कन्दरा में लीन होगया !!!

उत्तर चीन की "खूपिङ्गताई" नामक पर्वत माला इस स्थानसे साफ दीख पड़ती थी । यद्यपि बहुत दूर मालूम होती थी ॥

सातवां कूच "टुंगचाओ"

चांचियावान् से टुंगचाओ बारह मील था । आगे बढ़नेकी जल्दी के कारण

१२ तारीख के फजिरेही नौ बजे कूच होगया। और दोपहर को टुंगचाओं प-हुँच गये ॥

जापानी और अमेरिकन फौजें बिलकुल तड़के चलदी थीं सो वह और भी जल्दी पहुँच गई थीं ॥

सबसे आगे जापानी थे॥ टुंगचाओ पर धावा भी इसी कारण उन्हींका हुवा॥ यह नगर नदी के किनारेही मुहाने पर से बसा है । यद्यपि प्राकारवेष्टित नगर किनारेसे कुछ परे हैं परन्तु बस्ती नदीसे मिलीहुई है । इन किनारेपर के मकानों को बाक्सरोंने मजबूत (defensible) किया हुवाथा–नदी की ओरको फायर करने के झरोखे (रन्ध्र) बनाये थे और कई खाइयां मोरचेआदि भी बनारक्खे थे । नगर के बुर्जोंपर तोपें भी चढ़ीथीं–तय्यारियां बहुत अच्छी तरह साज सामान के साथ कीहुईथीं । परन्तु जापानियों के सम्मुख बाक्सरों की क्या हिम्मतथी कि ठहर सकते !

जापानी दल आगे था–तिसके पीछे अमेरिकन ! नगरके निकट पहुँचतेही बाक्सरों की तोपों ने अगवानी की ! बस फिर क्या था–जैसेही दुश्मनकी आ-हट मिली कि जापानी टूट पड़े। मारे गोला गोलियों के धरती आकाश डोल उठा। तनिक देरतक अच्छी लड़ाई हुई ॥ पीछे मार्च करती हुई अमेरिकन फौजों ने जब आगे फायर की आवाज सुनी तब बड़ी तेजी के साथ डबल चालसे आगे बढ़ीं–बहुत दूरतक अविराम धावा करने परभी जबतक वह मार्के पर पहुँच सकें तबतक जापानियों ने मैदान खाली करलिया कई तोपें आदि कैद करके बुर्जों और नगर एवं सब मोर्चोंपर अपना दखल करलिया॥

राजधानी पीकिन के बचाव का अन्तिम मोरचा छूट गया ! बाक्सरों की सब आशायें निराशा में पलट गईं ! सबों के पेट पानी होगये छाती दहल उठी ! सब इधर उधर भाग निकले ! सैकड़ों खेतरहे । अनेकों बन्दी हुवे ॥

जिन चीनालोगों को टाकूसे लेकर यहां तक बराबर हारही हार देखनी पड़ी है–विधि वाम होगया है वह क्योंकर अधिक ठहर सकते थे ?

हमारी फौजोंको विशेष रूपसे यहां लड़ाई करना नहीं पड़ी !

बिना लड़ाईही सैकड़ों सहस्रों मन अन्न–खत्तेके खत्ते खाद्य पदार्थ–और क-मसरियट के योग्य सामान हाथ लगा ॥

यह नगर पीकिन से दूसरे दरजे का समझा जाता था ॥ जहाजी कारबारका केन्द्रस्थान और राजधानी पीकिन का अन्नादि पदार्थ संचित रखने का प्रधान भंडार था॥ यहां पर पीहोनदी प्रायःतितर बितर सी होगई है । छोटी धारा अन्य ओर से चलती है और नहर काटकर पीकिन को लाये हैं । बड़ी नौकायें और स्टीमर टुङ्गचाओ से आगे नहीं जासकते ! सो हमारे " रिवर एक्सपेडीशन " नदी धावे की यहीं इति सीमा हुई ॥

पीकिन चढ़ाई के लिये यही केन्द्रस्थान नियत हुवा । कमसरियट बारबरदारी आदि सब यहीं पर स्थित किये गये । और आगे बढ़नेकी मन्त्रणायें होने लगीं ॥

पीकिन अत्यन्त दृढ़ महानगरी है । उसका विजय करलेना साधारण बात नहीं है सो निश्चयहुवा कि टुङ्गचाव को मध्यस्थान बनाकर बराबर पीकिन पर चढ़ाई कीजावै और यहीं से मदद पहुँचाने आदिका काम जारी रहै ॥

पीकिन में १६ फाटक हैं । कौन फाटक से जाना सुगम होगा वा कौन शक्ति किस फाटकसे प्रवेशकरे यही सब परामर्श मानचित्र खोलकर होनेलगे ॥

महानगरी पीकिन पर चढ़ाई ॥

आज पीकिन नगर पर आठ महाशक्तियों की चढ़ाई का दिन है॥ एक समय था कि चीन नरेश की बड़ाई-शाहंशाही-समस्त संसार स्वीकार करता था-

चीन की हिकमत और विद्वत्ता दुनियां भरमें प्रसिद्ध थी । चीनी सन्तानगण के काम महान् समझे जाते थे । चीन की दीवार क़हक़हा (The Great wall) दुनियां की अजूबा चीज अबभी गिनी जाती है ! कारीगरी में " जेड " और " पोर्सेलेन * " की नक़ल आजतक किसी ने नहीं करपाई है ! समस्त संसार के राज प्रतिनिधिगण भेंट लेलेकर चीन दरबार में " साष्टाङ्ग " उपस्थित होते थे ॥

आज वही चीन नरेश-वही चीनी प्रजा अपना घर अपना प्राण बचाने में बिलकुल असमर्थ हो पड़े हैं !!!

जो राजा-जो प्रजा असभ्य जंगली जातियों के आक्रमणों से बचाव के लिये

* चीनी मट्टी, पत्थर और धात्वादि के, पात्रविशेष ।

"दी ग्रेटवाल" दीवार क़हक़हा निर्माण कर सके थे । दुनियां भर को-हां-द्ध सभ्य जगत् को अपने कर्तव्य से आश्चर्य चकित कर सके थे ! आज वही राजा और प्रजा अपने बाहुबल, धनबल, जनबल, और नीतिबल आदि सभी बातों में नितान्त असमर्थ होकर प्राण संकट में पड़ रहे हैं !

इसको विधिविडम्बना कहिये चाहै अकर्मण्य वा अविचार दोष कह लीजिये !!

पीकिन यहां (टुङ्गचाव) से नगर की बाहरी चारदीवारी तक तेरह मील है ॥ नगर प्रवेश के षोड़श राजद्वार हैं । कौन सा शक्तिबाण किधर से चलाया जाय ! एक शक्तिबाण से महाराज लक्ष्मण का प्राणान्त होते बचा था यहां तो पूरे आठ हैं ॥ सोलहद्वारी पींजरा पीकिन ही सब का लक्ष्य है ॥ सो आज पीकिन की "ग्रहदशा" अच्छी नहीं रही । "सूर्य्य" मंद होगये !!!

सैनिक मन्त्रणा में मुख्यकर दो बातों का ध्यान पहिले किया जाता है । एक तो ऐसा मार्ग वा स्थान लेना जहां से स्वयम् सब कुछ देख सकैं वा कर सकैं परन्तु शत्रु दल से सब भांति बचाव रहै । घेरे जाने का डर न हो ॥ दूसरे यह कि शत्रु की स्थिति का भलीभांति भेद लेना और उसकी शक्ति वा प्रबंध जिधर से कमजोर हो उधरही से धावा करना ॥

दूसरे नम्बर पर कही हुई बात के निरीक्षण करने के लिये जो-फौज वा व्यक्ति नियत होते हैं उनकी अवस्था कैसी खतरे की है सो सबलोग विना कहे ही समझ सकते हैं ॥

इस काम को रिकनायसेंस (Reconnoissance) कहते हैं । और जांबाज़ (Men of mettle) आदमी ही इस कामपर नियत किये जाते हैं ॥

सो टुङ्गचाव में इन्हीं विषयों पर सब वैदेशिक सेनापतियों के परामर्श होते रहे ॥

पीकिन का फ़ारेन लिगेशन (वैदेशिक मंत्रिदल) अब भी पूर्ण संकट में है ॥ बाक्सर लोग अब भी नगर पर खूब अधिकार जमाये हैं ।

प्राकार बुर्जों पर सैकड़ों तोपें चढ़ी हुई हैं ॥

परामर्श समाप्त हुवे । मंत्र निर्धारित हुवे ॥

बंगालरिसाला और हमारी राजपूत सेना को दो तोपों सहित (उसी) "रिकनाय संसड्यूटी" के लिये अडवांस करने की आज्ञा मिली ॥

तारीख १३ अगस्त प्रातःकाल चार बजे यह दल अग्रसर हुवा । निरीक्षण से ज्ञात हुवा कि सिवाय पीकिन प्राकार से तोप गोला फायर के अन्य कोई रुकावट का मोर्चा मार्ग में नहीं है ॥

उक्त तोपों से सवेरा होतेही अविराम गोले बरसने लगे । जो बिना किसी लक्ष्य (aim) के दागे जा रहे थे ।

हमारा निरीक्षक दल बराबर सब ओर निरीक्षण करता हुवा अडवांस करता रहा । और आठ मील पर एक गांव प्यूपूटियन (Piu Putian) में पहुंचकर हाल्ट किया ॥ " अब यहां से पीकिन वेष्टन पांच मील है, दीवारतक किसी तरफ भी कोई रुकावटी मोर्चा नहीं है " । यह खबर पीछे प्रधानदल (Main body) को भेज दी गई ॥

राजपूत सेना ने प्यूपूटियन में एक बड़े आदमी के खाली बड़े महल में डेरा डाला ॥

महल सुन्दर बगीचा और हाता से वेष्टित, चित्रालय और मन्दिर आदि से सम्पन्न था । परन्तु बिलकुल खाली ! सम्पूर्ण ग्राम जनशून्य कुत्तोंके सिवाय कोई जानवर भी न थे !

हमारी अडवांस सेना ने यद्यपि बड़े कौशल से यह पता लगा लियाथा कि पीकिन प्रवेश के लिये पूर्वी फाटक अन्यों की अपेक्षा सुगम है–

परन्तु पीकिन जैसे जगत् प्रसिद्ध चतुर्वेष्टित राजधानी पर धावाकरना और दखल करलेना कहने में चाहे सहज हो ! पर करने में अवश्यही कठिन काम था ॥

सांझ हुई ! कठिन गोला गोली के शब्द कान फोड़ने लगे ! डरहुवा कि कहीं कान फोड़ते फोड़ते शिर भी न तोड़ने लगें ! तब तो प्रासाद निवास का मज़ा मिल जायगा !

तत्काल ही पल्टन ने महल त्याग हाते के किनारे किनारे बातकी बात में मोरचे खोद डाले । और गोली चलाने के " लूप होल्स " (दीवार में छेद) एवं बचाव के खंदक (Trenches) फौरन तय्यार करालिये । और इन्हीं मोरचों में रात व्यतीत की ॥ जल वृष्टि भी इसदिन खूब हुई ! जिससे मार्ग में और सर्वत्रही कीचड़ का दलदल बनगया ! और सिपाही लोग मोरचों में मानों काशी की ज्ञान वापी वा सूर्य्य कुंडका लेवारा लेते रहे ॥

पुराने लोगों से गांवकी गप्प सुना करते थे कि शव को अकेले न छोड़ना चाहिये नहीं तो कोई भूत प्रविष्ट होकर उत्पात करैगा। कोई कोई कहानियां भी कहते कि अमुक मुरदे में भूत घुसगया था सो फलाने फलाने आश्चर्य्य कर्म करने लगा था। इत्यादि—

सो सचमुच देखा कि इस "य्यूपूटियन" नामक जनशून्य शव में भूत रूपी हम लोग प्रविष्ट होकर न जानै क्या क्या उत्पात करने और विचारने लगे!

शायद् हमारे बड़े बूढ़ों की गप्पैं मुरदा अकेला न छोड़ने वाली कुछ ऐसे हीं अवसरों के लिये रही होंगी। क्योंकि यदि यह गांवरूपी मुरदा जन शून्य न होता बल्कि वीरों से रक्षित रहता तो काहे को कोई भूत सहसा इस में घुसकर पीकिन निपात का उद्योग साधन कर सकता!!!

रिकनायसंसदल से "आलवेल" (अच्छा अवसर) की खबर पाकर टुङ्चाव से प्रधान दलभी तुरन्त रवाना होगया और रातों रात अपने अपने निर्दिष्ट मार्गों पर पहुंच गया॥

रूसी और जापानी दलों ने दो बजे रातही से पीकिन पर चढ़ाई करदी॥

अमेरिकनदल यहां करीब एकबजे रात को पहुंचा था और तड़केही आगे को रवाना हुवा॥

सबेरा होते होतेही अंगरेजी सब फौजैं भी आनमिलीं और साढ़ेसात बजे फजिर १४ तारीख अगस्त को हमारी फौजैं भी आगे बढ़ीं॥

पीकिन का पूर्वी फाटक अंगरेजी लक्ष्य स्थान था। तथा अन्यान्य फाटकों पर धावा करने को दूसरे पावरों के दल नियत हुवे थे॥

तोपों के फायर से धरती डोल उठी। इधर संयुक्त शक्तियों की दरजनों तोपैं, उधर चीनियों की बुर्जों पर चढ़ी हुई सैकड़ों तोपैं अविराम अग्नि वर्षाने लगीं!

पीकिन चतुर्वेष्टन से मानो अग्नि वृष्टिका मेघमंडल सा उमड़पड़ा॥ धूआं के बादलों से सचमुच सूर्य्य भगवान् बिलकुल मन्द पड़गये तोपों की गर्जन, रूसी संगीनों की चमकदार विज्जु छटा, धूम्रमय घनघोर घटा और अविराम अग्नि वर्षा को देखकर इन्द्रमहाराज का पावस भी बगलैं झांकताही रहगया!

बिलकुल शरमागया ! क्या जानै इसी शरमसे देश में बरसात नहीं होने दी और अकाल भी डाल दिया हो ॥

जो हो सिपाही को इस से क्या मतलब !

पिछली रात को प्यूपूटियन के मोरचों में बैठे हुवे जो भयानक तोपों की आवाजें सुन रहे थे सो पीछे से अब ज्ञात हुवा कि वह हमारे ऊपर फायर की आवाज नहीं थी बल्कि पीकिन लिगेशन पर बाक्सरों के फायर का शब्द था ॥

हमारी पल्टन ब्रिटिश वाहिनी के अडवांस गार्ड का एक भाग बनकर आगे बढ़ी ॥

खूब गोला गोली की मेघ वर्षा के बीच-में मार्च करते हुवे सब फौजें प्राकार के समीप पहुंच गईं ॥

सब से कठिन लड़ाई दक्षिणी पूर्वी फाटक पर हुई। रूसी जापानी और एमेरिकन फौजें यहां कठिन परीक्षा में पड़ी थीं।

फाटकों के कपाट करीब १६ इंच मोटे तख़्तों के बने हुवे हैं। जिनमें प्राचीन काल के नमूने के बड़े बड़े लौहमय कीले जड़े हुवे हैं जिनपर मत्तगजराज की दहल भी असर न करसकती !

बड़ेबड़े मोटे लोहे के शलाके भीतर से जड़े हुवे और अन्तरीय दोहरे फाटक से भी मज़बूत किये हुवे हैं ॥

चारदीवारी करीब ६४ फुट मोटी। चोटी तक करीब पचास फुट ऊंची और मुंडेर करीब तीस फुट चौड़ी है।

सोलह फाटकों के नाम यह हैं:—

(चीनी भाषा का अंग्रेजी तरजुमा)

(1) The gate of the exaltation of virtue. धर्माभ्युदय फाटक
(2) The gate of stable peace. अचल शान्त फाटक
(3) City armoury tower. नागरिक शस्त्रागारगढ़
(4) The gate facing the east. पूर्वाभिमुख फाटक
(5) The gate of the rising suu. उदय भानु फाटक
(6) The gate of the north east angle. ईशान कोण फाटक
(7) The gate of the great canal. बड़ी नहर का फाटक

(8) Watch tower. घंटाघर
(9) The left gate of peace. शान्ति फाटक का वामपार्श्व
(10) The gate of eternal constancy. नित्यदृढ़ फाटक
(11) The right gate of peace. शान्ति फाटक का दक्षिण पार्श्व
(12) Watch tower. घंटाघर
(13) The gate of perfect repose. पूर्ण विश्राम का फाटक
(14) The gate of the western angle. पाश्चिमात्य कोण फाटक
(15) The gate of the rampart. दुर्गावेष्टन फाटक
(16) The gate facing the west. पश्चिमाभिमुख फाटक

नगर प्राकार की परिधि सत्ताईस मील की है॥

अमेरिका की पैदल फौज ने दो घंटा तक दक्षिणी फाटक पर कठिन संग्राम करके उस ओर की दीवाल पर अधिकार किया और ऊपर से चढ़कर भीतर घुसी। सवा दो वजे के करीब यह फाटक खुल गया !!!

नगर के अन्यान्य फाटकों पर जिस समय रूसी और जापानी भयानक युद्ध कर रहे थे—तोप के गोलों से फाटक, और बन्दूक की गोलियों से दीवाल के गार्डों को उड़ाये देते थे उसी समय हमारा दल पूर्वी फाटक पर टूट पड़ा!

समर कौशल से अनभिज्ञ चीना लोग ऐसे अवसर पर जब कि सब ओर से अचानक ग्रसित होगये-नितान्त कर्त्तव्य मूढ़ हो पड़े। रूसी और जापानियों की भयानक अग्नि लीला से घबराकर प्रायः सब ओर से सिमट कर उन्हीं फाटकों पर इकट्ठे होकर लड़ने लगे! उन्हें याद नहीं रही कि दूसरे फाटकों से भी कोई धावा करके घुसना चाहैगा या नहीं?

थोड़ीही देर की लड़ाई में पूर्वी फाटक पर हम लोगों ने क़ब्जा कर लिया। और नगर के भीतर प्रविष्ट हुवे!

आसपास की प्रायः सब दीवारों बुर्जियों और मकानों पर से सड़क पर गोली चलरही थी। उसी अग्नि वर्षा के बीचही बीच अडवांस हो रहा था कि तत्काल "तातार सिटी प्राकार" पर एक झंडा खड़ा होता दीख पड़ा। ब्रिटिश झंडा खड़ा होता देखकर सभों को बड़ी खुशी तो हुई परन्तु एक बेर शुबहा भी हुवा कि कदाचित् दुश्मन लोगों ने धोखा देने के लिये यह झंडा खड़ा किया हो। और निकट पहुंचने पर कौशल से सारी फौज क़ैद करलें! सो तनिक

ठिठके और चारदीवारी की आड़ में होकर कुछ अपेक्षा करने लगे । इतने में "सिगनेल" की झंडियों से अंग्रेजी के अक्षरों में "वेलकम" आगे बढ़ने का इशारा मिला। ज्ञात हुवा कि वही "वैदेशिक मंत्रि भवन" (फारेन लिगेशन) था॥

सिगनेल द्वारा यह भी खबर मिली कि शाही नहर का पानी दरवाजा "लिगेशन" में आने के लिये सहज मार्ग है—उसी को तोड़कर प्रवेश करना चाहिये।

इस इशारे को पाकर सब लोगों के मन प्रफुल्लित होगये। तत्काल आगे बढ़कर उसी निर्दिष्ट "स्लूस गेट" पर पहुंचे और उस को तोड़ने का उद्योग करने लगे ॥

कठिन मार्ग । धूप की तीक्ष्णता । गोला गोलियों की निरन्तर अविराम वृष्टि और अनेक प्रकार की कठिनाइयों के कारण लाइन बहुत क्षत विक्षत और तितर बितर होगई थी॥

फाटक तोड़ने के समय सिख और राजपूत कुल डेढ़ दो सौ आदमी मात्र वहां पहुंचे थे ॥

जनरल गेसली अपने स्टाफ के कतिपय अफ़सरों सहित तथा राजपूत कमांडिंग मेजर व्हान और सूबेदार अधारसिंह उपरोक्त सिख और राजपूतों के सहित सर्व प्रथम लिगेशन में प्रविष्ट हुवे ।

भीतर की ओर नहर की खाई पर चढ़ने के लिये मंत्रिदल तथा चीना क्रृष्टानों ने तत्काल दीवाल खोद खोद कर ढालू मार्ग बना दिया था ॥

फाटक खुलना था कि भीतर से खुशी की जयजय कार ध्वनि आकाश लों विस्तीर्ण हो उठी ! लिगेशन के सभी बचे बचाये आबाल वृद्ध बनिता खुशी से फूले अंग न समाते थे ॥

उस समय कितनी खुशी कितना उल्लास दोनों ओर था यह वर्णनातीत है॥

यह हर्ष एक अनिर्वचनीय हर्ष है ! बिजय की खुशी विजयी के सिवाय और कौन जान सकता है ! सब दुख सब कठिनाइयां आज ऐसी भूल गईं मानो कभी हुई ही नहीं ॥

कठिन परिश्रम से जो वस्तु प्राप्त होती है सच मुच वह बड़ी ही प्रिय बहुत ही रोचक होती है । फिर ऐसे परिश्रम से प्राप्त की हुई वस्तु जो पसीना से कई दरजे अधिक रक्त बहाने के बाद मिली हो कितना अधिक मनोल्लास दायिनी होगी सहृदय गण स्वयम् विचार देखें ॥

शोक कि ऐसे हर्ष—अनिर्वचनीय उल्लास और विजय की अकथनीय खुशी बहुत दिनों से आर्य्यावर्त्त को देखने को क्या स्वप्न देखने को भी मिलने का सौभाग्य नहीं हुवा ! फिर हम किस रीति से इस खुशी की वात को अपने आर्य्य भाइयों को समझाने की कोशिश करें ! समझ नहीं पड़ता !

आज सच मुच लिगेशन दल को बड़े आनन्द का अवसर है फौजों को भी अपने कार्य्य पूर्ति और विजय से असीम आनन्द हो रहा है॥

जो मंत्रि दल बराबर दो महीने से शत्रुओं के घेरे में कैद हो कर अन्न जल के स्थान में गोला गोली का पान भोजन और नित्य प्राण संकट एवम् दो चार दस बीस स्वजनों का पतन निधन देख रहा था, आज अपनी बिजय पताका को आकाश में उड्डीयमान करके फूले अंग नहीं समाता है॥ बड़े बड़े मंत्रिवरों का सैनिकों से मिलना भेंटना-आदर करना-अपने रूमालों से उनके मुख और कोट पर पड़ी हुई मट्टी झाड़ना-शेष ही नहीं होने आता !

पान फूल मय मेम देवियां (जो इन पिछले दिनों दुर्गारूप धारण किये हुवे सैनिक कार्य्य करती थीं) आज बड़े आदर से काले सिपाहियों पर पंखा कर रही हैं॥

खाने पीने का सामान लिगेशन में अब बहुत ही कम रह गया था । एकादि खच्चर या घोड़ा अथवा गदहा रोज मारते थे और उसी को भून पका कर सब प्राणी मिल जुल खा पी लेते थे। आज भी उन्हों ने इसी शोरबे से आगन्तुकों का आदर सत्कार किया॥

अवश्य ही अपनी दूरदर्शिता से इन्हों ने कुछ मक्खन मुरगी चाय चीनी रोटी बिस्कुट और सागो अरारूट भी अस्पताल में बीमारों और घायलों के लिये सुरक्षित कर रक्खा था। कुछ बियर बरांडी सोडा लीमू भी मौजूद था। सो इन देव दुर्लभ? पदार्थों से मान्यवर मंत्रियों ने कालों का भी आदर करना चाहा ! किन्तु काली किस्मत में यह सब कहां ? सुंदर श्वेत गिलास से निरा पानी पीना भी तो काले कपाल में नहीं लिखा है !!!

देवियों को इन सिपाहियों के कर्त्तव्य (आदर स्वीकार न करने) पर कुछ उपेक्षा तो हुई कि सुन्दर साफ गिलासों से विशुद्ध जल न लेना और कूओं पर जा जा कर सिर की पगड़ी में बांध कर "तमलेट" से पानी खींच कर चुल्लू लगा लगा कर पीना जंगलीपन तो था ही-परन्तु आज बड़ी खुशी

का दिन है. इन जंगलियों ने ही प्राण की होड़ लगा कर लिगेशन उद्धार किया है अतः आज कुछ कहने सुनने का अवसर नहीं है । केवल हँसकर टाल देना और मन में इन को बिलकुल असभ्य जंगली और वनमानुस जान लेना ही पर्य्याप्त है ॥

आज लिगेशन तक पहुंचने में हमारे दो राजपूत सिपाही घायल हुवे थे। एक तो तत्काल अपने फील्ड अस्पताल में पहुंचाया गया। परन्तु दूसरा ऐसे अवसर पर घायल हुवा कि लोग देख न सके आमोद प्रमोद और मिल भेंट में ही लगे रहे। पर लिगेशन की माननीया देवियों की निगाह एक ओर ही नहीं थी। उनको सब तरफ की फिक्र थी। इस सिपाही को गोली लगना भी उनकी निगाह से चूक नहीं सका! धन्य है तुम को! संसार शिरोमणि देवियो! तुम्हारा कर्त्तव्य तुम्हारा साहस-धीर वीरता और पराक्रम! बारम्बार धन्य है! तत्काल तड़ितवत् गोली की बूंदा बांदी ही में उस ठौर पहुंच कर दो तीन मेम साहबों ने राजपूत को सहारा दे कर उठाया और अपने अस्पताल में ले गईं। अपने दुग्ध फेनवत् शय्या पर उस को पौढ़ाया और घावों को भली भांति धो पोंछ कर बड़ी सावधानी से मलहमपट्टी बांधी। गोली लगने पर प्यास तो स्वाभाविकही है सो यह सिपाही भी बहुत प्यासा हुवा और अपने बगल में लटकते हुवे तमलेट से पानी पीना चाहा-मेम साहबों ने इशारा समझ कर तत्काल बहुत सुंदर गिलास में ताजा ठंढा (शायद सोडा) जल लाकर उपस्थित किया। और अपने हाथों पिलाना चाहा! परन्तु हिन्दू क्या इस भांति पी कर धर्म खोडाल सकता था॥

उसने देवियों को दुतकार कर हटाना चाहा-लेडी लोग तनिक अलग हटगईं तब उसने बड़ी मुशकिल से अपना तमलेट मुंह में लगाय कुछ पानी घूंटा॥ देवियोंने मलहम पट्टी करने के बाद बहुत कुछ यत्न किया कि वह सिपाही तनिक सा कुछ सागो-अरारूट-चाय-दूध या अन्यकुछ "स्टीम्युलेंट" (ताक़त वर दवा) खाता पीता जिस से तकलीफ से कुछ शान्ति होती परन्तु उसने "ऊं हूं" के सिवाय और न कुछ कहा न किया !!!

लाचार मेमसाहबा ने राजपूत दल में आकर सब वृत्तान्त कहा-सुनकर सब अंगरेज लोग उस के जंगली पन पर अट्टहास्य हँसने लगे! डाक्टर

रामदत्त जी तत्काल मेम साहबाके साथ उन के अस्पताल को गये और अपने घायल की अच्छी तरह शुश्रूषा की। शोरबा-सागो वगैरः खिलाया पिलाया और अंडा ब्रांडी आदि का स्टीम्युलेंट पिलाकर पीछे अपने अस्पताल को उठा लाये॥

कहने की आवश्यकता नहीं है कि यह शुश्रूषा की चीजें जो डाक्टर बाबू ने खिलाया पिलाया सब वही थीं जो पहिले देवियां खिलाना चाहती थीं॥

प्रिय पाठक! मुझे क्षमा कीजिये-मैं यदि यह भी मानलूं कि इस सिपाही के स्थान में हमारे मान्यवर "अमुकप्रसाद बाजपेयी एम० ए० एल० एल० बी०" ही आये, होते और ऐसी ही अवस्था उन पर पड़ी होती. तो क्या वह प्रसन्नता पूर्वक लेडियों के हाथ से "सागो" "शोरबा" ग्रहण कर लेते?

यदि नहीं कर सकते तब जैसी हँसी सिपाही के जंगलीपन पर उड़ाई गई थी वैसी ही हमारे माननीय विद्वान् देवताकी भी उड़ती और हमारा निरा जंगलीपन सिद्ध होजाता॥

परन्तु यदि स्वीकार करलेते और उन चीजों के ग्रहण करने में लेडियों के हाथ से कुछ दोष वा पाप न समझते तो हँसी तो बेशक न उड़ती और न सभ्य जगत् के सन्मुख हम असभ्य कहे जाते। परन्तु-हमारा हृदय निःसन्देह दो टूक हो जाता! भारत की रही सही आशायें टूट जातीं!!

क्या विद्वान् लोग भी आत्मा के विरुद्ध कोई काम करते वा कर सकते हैं?

क्या "जस्टिस आफ पीस" (न्यायाधीश) पदाधिकारी महाशय को भी विद्वान् कहने में हिचकना पड़ैगा?

यदि "नहीं"—तो हमें अपने विद्वान् अगुआ लोगों के कर्तव्य और वक्तव्य में भेद क्यों दिखाई देना चाहिये?

विद्वान् आर्यों को क्या यह उचित होगा कि सभ्य जगत् के सन्मुख तो अपने व्यौहार सभ्यतानुमोदित रक्खें और हमारे जैसे असभ्य हिन्दुस्तानियों के सामने दूसरे ही रूपमें दर्शन दें?

नहीं, तो जो वर्ताव व्यौहार आज दुनियां भर—हां-समस्त सभ्य जगत् संसार भर सभ्यतानुमोदित समझता है और स्वयम् हमारे विद्वान् महाशय गण भी "असभ्यों" की आंख ओट अच्छा समझते हैं-उसको सर्वदा सर्वथा कहने और करने में क्यों आगा पीछा करें?

इस दशा में—मान्यवर पाठक! आपही फैसला कीजिये कि जब हमारे बड़े

विद्वान् लोग भी आत्मा के विरुद्ध कहते और करते दीख पड़ें तो भारत की आशा क्या खाक कीजावै ?

हृदय क्योंकर धीर धर सकता है ?

इसी चीन चलान में हमारे बहुत से साधारण वाजपेयी-द्विवेदी-त्रिवेदी और चतुर्वेदी-कायस्थ और खत्री आदि आये हैं और साम्प्रत अन्य सभ्यों की भांति सब व्यौहार वर्ताव खान पान रहन मिलन किया है परन्तु यह सब लोग हिंदुस्तान में जाकर फिर भी वही डेढ़ इंच के चौके में डेढ़ अंगुल की लंगोटी पहिनकर डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग अलग पकाने लगेंगे !!!

सच्ची बात तो यह है कि जबतक हम लोग साम्प्रत सभ्यसंसार की ओर आंख उघार कर न निहारेंगे—कुवें के मेंढक बने रहनाही पसन्द करते रहेंगे—तब तक हम में न तो लकीर लांघने का साहस ही होगा और न हृदय में महानुभावता और बल उत्पन्न होगा !

लिगेशन मंत्रिदल की अनेक प्रकार खातिरी प्राप्त करके पल्टन ने उसी हाते में कैम्प डाला ॥ अन्यान्य पावरों की फौजें भी अपने अपने निर्दिष्ट भागों में स्थित हुईं॥

असली उद्देश्य पीकिन लिगेशन उद्धार सिद्ध होगया । मंत्रिदल जो कल यमराज का पैंड़ा निहार रहेथे, आज स्वतन्त्रता पूर्वक विचरकर बीती विसूरते हुवे चीनियों से कठिन बदला चुकाने की ठान रहे हैं !

जो "चीन राज दरबार" कल युद्ध वा सुलह की बातें विचार रहा था आज न जाने किधर उत्तर की ओर-वृक्षों के नीचे श्रम और घाम निवारण कररहाहै ! सुना-कि ता. १३ अगस्त को "राज दरबार" पीकिन त्यागकर अन्यत्र चला गया था ॥

शाहज़ादा चिङ्ग (Ching) पीकिनके सर्वाधिकारी रूपमें रहगये थे परन्तु उनका सर्वाधिकार कैसा ? संसार का अटल और अचल नियम और सिद्धान्त तो यह है कि "जिसकी लाठी उसकी भैंस" सो आज विदेशी सिपाही लोग ही पीकिन और चीनके सर्वाधिकारी बनगये हैं !!!

"कथलीक गिरजाघर का उद्धार"

(Pei tang Roman Catholic Cathedral.)

संसार जानता है कि पीकिन नगर कितने घेर घरौंदों से घिराहुवा है—महाभारत के ज़माने का "चक्रव्यूह" किला जिस प्रकार भूलभुलैयों का सुनते हैं

शायद उसी की नकलपर पीकिन नगर निर्मित हुवा हो । हातों के भीतर हाते और घेरों के भीतर घेरे घिरेहुवे हैं । प्रधान प्राकार भेदकर विदेशी सेनाओं ने नगर प्रवेश तो किया परन्तु अभी वहुतेरे घेरे लड़कर लेने को शेष रहे थे !

सो १५ ता० अगस्त के अंधेरे सवेरेही भीतरी घेरों पर तोपें घहराने लगीं। अमेरिकन फौजें कतिपय फाटकों पर तथा राजधानी पर हमला करने गईं। और अन्यान्य शक्तियां दूसरी ओर सफाई करने लगीं !

हमारे दलका एक "कालम" जिसमें राजपूत पल्टन भी शामिल थी कथलीक गिरजाघर का उद्धार करने को नियत हुवा ॥ राजधानी से उत्तर की ओर छः सात मीलपर यह गिरजाघर है । सवरंग के पादरी लोग वाक्सरों से त्रासित होकर इसमें पड़े पाद रहे थे ! करीव २० पादड़ी और दोहजार के लगभग चीना क्रिष्टान घिरे थे । इनकी रक्षा के लिये करीब ४०-४५ फ्रेंच और इटालियन जहाजी सिपाही पहुंचे थे वही अन्दर से फायर करते हुवे सभों की जीवन रक्षा अवतक करते रहे थे ॥

शहर भीतर की लड़ाई बड़ी ही घनघोर थी । ऊंची ऊंची चतुर्वेष्टन दीवारों के भीतर तोपों की आवाजें कैसी भयंकर थीं-गोला गोली लगना तो दरकिनार-कपाल विदारनी आवाजें मात्रही प्राण उड़ाये दे रही थीं !!! सहस्रों चीना परिवार आवाजों के डरसेही मरमरकर घरों में ढेर हो रहे थे !!!

मार्गों पर अनेकों वाक्सरों की गोलियां "कुंवारी बरखा" कर रही थीं ! गलियों में चलना खतरे से खाली न था । चौराहों पर चलनेवालों मेंसे तो विना दो एक की वलिहुवे आगे बढ़नाही दुःसाध्य था !

इस दशा में नगरविचरण करना कैसा कठिन और हिम्मत का काम है सो कहकर समझाने की आवश्यकता नहीं है ॥ परन्तु जो लोग "सात समुन्दर पार" से चढ़ाई करके नगर प्रवेश करसके हैं उनको गलियों की गोली छोकरों की कंकड़ियों से अधिक नहीं जान पड़तीं !

सो हमारा यह धर्मोद्धारक दल सवेरेही "पीताङ्ग के कथलीक मसीही मंदिर" के उद्धारको रवाना हुवा ॥

हर्ष का विषय है कि राजपूतों को यहां परभी उनका सनातन कार्य्य "धर्मोद्धार" सिपुर्द हुवा । सदा काल से राजपूत गण धर्म की रक्षा और उद्धार

करते आये हैं। मानो राजपूत का जन्मही धर्म के उद्धार करने और धर्मार्थप्राण देने के लिये हुवा है॥ हमारे प्राचीन आर्य्य राजन्य गण के इतिहास किसीपर छिपे नहीं हैं–जवजव धर्मपर कोई संकट उपस्थित हुआ है तभी राजपुत्र गण स्वभावही से संकटमोचन और धर्मोद्धार में तनमन से प्रस्तुत होगये हैं॥ *

राजपूतों की उज्ज्वल कीर्ति संसार पर खूब प्रगट है। सूर्य्य और चन्द्रवंशोद्भव राजपूतों के प्रकाशपुञ्ज को हमैं अपनी तुच्छ लेखनी के दीपक से उजाला दिखाने की आवश्यकता नहीं है॥

आवश्यकता–और हमारे मन की लालसा–केवल यँही है कि हमारे राजपूत समुदाय का ध्यान आजकल के अपने धर्म की दशा की ओर भी झुकता! आज दिन आर्य्य (हिन्दू) धर्मपर सचमुच बड़े बड़े संकट आन खड़े हुवे हैं। जिनके कारण दिनोंदिन हमारा प्राणाधिक प्यारा धर्म छीजता चला जाता है। धर्मका छीजना–धर्म की आड़में अधर्म का प्रचार होने के तात्पर्य्य से कहागया है!

सचमुच यदि आजकल की आर्य्यावर्तीय धार्मिक दशापर ध्यान देकर देखें तो "पीताङ्ग कथीद्‌ल" (Peitang Cathedral) का कैदखाना उसकी दुरअवस्था के सामने कुछ भी न जँचेगा॥

इसी से प्यारे राजपूत गण! इसयुद्ध प्रसंग के बीच में हमने अपनी हृदयगत लालसा भी आपके आगे प्रगट कर दिया है। प्यारे! "धर्मएव हतो हन्ति–धर्मो रक्षति रक्षितः"

यदि तुम अपने धर्म की ओर ध्यानदेकर उसकी रक्षा करोगे तो निःसंदेह रक्षित धर्म सब अवस्थाओं में तुम्हारी रक्षा और सहायता करैगा और तुम्हारे बीतेदिन–हां नव जीवन का प्रभात काल फिरभी प्राप्त होसकैगा॥

एकही धपेड़ में "पीटाङ्ग गिरजा" का उद्धार होगया। पादरी दल बलैयां लेनेलगा॥ जो दल चीनियों को मुक्ति बांटते बांटते स्वयंबद्ध होपड़ा था–

---

* यथा भगवान् कृष्णचन्द्र कहते हैं:—

यदा यदाहि धर्मस्य, ग्लानिर्भवति, भारत!
अभ्युत्थानमधर्मस्य, तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

हे भारत! जब जब धर्मपर संकट वा धर्मभाव की कमी हो तब तब मैं, (चन्द्रवंशी और सूर्य्यवंशी क्षत्री लोग) जन्म लेकर वा उद्यत होकर धर्म की रक्षा में तत्पर होता हूं॥

हर्ष का विषय है कि राजपूतों की सहायता से उसको मुक्ति प्राप्तहुई ॥

"गुप्त राजनगर और राजभवन"

(Imperial forbidden city–Imperial palace.)

पीकिन नगर रूपी चक्रव्यूह के कई चक्करों के अन्दर एक प्राकार है जो "गुप्त राजनगर" कहलाता है। सिवाय राजपरिवार के सर्व साधारण का जाना-आना वहां बिलकुल मनाथा ॥

तातार नगर दखल करने के बाद "शक्तिदलपतियों" ने राजनगर पर भी क़ब्ज़ा करने का परामर्श स्थिर किया परामर्श में एक बात यह भी स्थिर होगई कि नगर पर दख़ल तो अवश्यही किया जाय परन्तु राजमहल में लूट खसोट और काट फांक न कीजावै !

दूसरे दिन अमेरिकन दलकी प्रधानता में संयुक्त शक्तियों का आक्रमण गुप्त राजनगर परभी हुवा ॥

राजनगर के चतुर्वेष्टन पर भी चीना बन्दूकबाज मौजूद थे ! टूटे हृदयों से ज्यों त्योंकर वह लोग फायर जारी किये थे। परन्तु "बेदिली" का काम क्या कभी फलीभूत हो सकता है ? थोड़ी देर विदेशियों की कठिन ज्वालाका सहन करके वहलोग हताश होगये और भाग निकले !

फाटकों पर तोप दागना और उड़ाकर खोल देना पहिलेही मनाकर दिया गयाथा सो नगर प्रवेश के लिये दीवार पर चढ़ना आवश्यक हुवा। लोग सोचने भी नहीं पाये थे कि "जापानी कुलीदल" (Japanese Coolie Corps) ने तत्काल सीढ़ियां लगादीं ! और सैन्यगण तुर्त ऊपर चढ़गये !

जापानियों की फुरती और कार्य्य तत्परता देखकर अमेरिकन अफसरों को बड़ा अचम्भा हुवाथा और मुक्तकण्ठसे कहने लगे थे कि "सचमुच जापानी सर्व व्यापी (Omnipresent) हैं"।

गुप्त राजनगर के फाटक खुलगये ! सम्पूर्ण दल नगर में प्रविष्ट हुवा ! परंतु आगे महलों की तरफ बढ़ने की मनाही थी। सबलोग उसी ठौर "हाल्ट"हुवे ॥

आज राजनगर में राजपरिवार नहीं है। जिनके लिये यह नगर निर्मित था-जिनके कारण से यह गुप्त नगरथा-जब वही नहीं हैं तब इसे "गुप्तनगर" वा "राजभवन" कहनेहो से क्या मतलब। आज तो यह राजप्रासाद नहीं प्रेतावास है!!!

पीकिन नगरकी नीव प्रतिष्ठा के दिन से आजपर्यंत कोई यूरोपीय इस गुप्त नगर में प्रवेश नहीं करसका था ! वही नगर आज रणचण्डी का रुण्ड मुण्ड मय क्रीड़ा स्थल और रंग बिरंगे सिपाहियों का अखाड़ा बन रहाहै !!!

इस नगर और राजमहलों की समस्त चारदीवारी और खपरैल आदि पीत वर्ण हैं । कल जिन दीवारों और अट्टालिकाओं की शोभा तीसरे पहर की सूर्य किरणों से आलोकित होकर सुवर्ण को भी लजाय रही थी-आज वही सब कुछ पीत वर्ण पकी खेती की भांति खड़ी दीख पड़ी ! जिसका जी चाहै काटकर खलियान करै और अपने काम में लावै !!!

तुलसीदासजी ने सच कहाहैः—

तुलसी करपर कर करौ, कर तर कर न करौ !
जादिन करतर कर करौ, तादिन मरण करौ !! *

निर्बल का जीवन संसार में कुछ भी नहीं है । निर्बलतासे अधिक तुच्छ पदार्थ संसार में और कुछ भी नहीं है ॥ यही अनुभव करते हुवे कविवर तुलसीदासजी ने उपरोक्त बात कही है कि परमेश्वर किसी को किसी का आधीन न करै । जिस दिन अधीनता करानी हो उस दिन मृत्यु देदे ॥ अधीनताकी अपेक्षा मृत्यु सौगुनी श्रेष्ठ है ॥

यही बात हमने अपने राजाधिराज अंग्रेजों सेभी सुनी है ॥ अर्थात् :—

Now this is the faith that the whitemen hold,
When they build their homes afar !
Freedom for ourselves & Freedom for our sons,
And failing freedom war. !

जिससमय फौजें नगर प्राङ्गण में हाल्टथीं-उस समय महलों के भीतर से सैकड़ों हजारों आदमियों के लड़ने झगड़ने की तीव्र आवाज़ें सुनाई पड़ती थीं ! समुद्र की लहरों की भांति उनके कलह की लहर भी बड़े वेगसे "चांव खांव" करके उठतीं बैठतीं फिर उठतीं फिर बैठतीं थीं ! एक दूसरे को बकबक कर मानो खाये लेताथा !

अमेरिकन सिपाही लोग सुन सुन कर कहते थे कि यह लोग अपने पराजय

* अर्थ समझने में भ्रम में न पड़ियेगा और न इस अर्थ को खींच खांच समझियेगा क्योंकि "कर तर कर होना" अधीनता भिन्न और क्या तात्पर्य्य दे सकता है ?

के विषय में वात चीत करके लड़ते हैं कि अमुक के दोषसे अमुक वात बिगड़ गई–इसीतरह प्रत्येक व्यक्ति अपने भिन्न दूसरे को दोषी वतानेकी चेष्टा करताहै और अपना दोष कोई भी स्वीकार नहीं करता ! यही सब वकवक होरही है ॥

कुछ कुछ चिल्लाने कराहने की आवाजें भी आती थीं। जिससे सिद्ध था कि वह लोग आपुस में झगड़ते झगड़ते मार काटभी करने लगते थे।

पाठक ! कहिये तो आप इन लोगों के विषय क्या सम्मति रखते हैं ? क्या यह "धोवी से न वशाने पर गधेका कान ऐंठना" नहीं है ?

हमारे मनमें अपने देशके विषय विचारते हुवे भी कुछ ऐसाही भाव उत्पन्न होता है !

अपनी अवस्था भी तो हम देखते हैं ऐसी ही होरही है ! वात बात में झगड़ा ! हर वात में कलह ! प्रत्येक विषय में मत भेद ! कोई भी हिन्दू वा आर्य्य किसी अवस्था में अपनी हारी वा भूल मानने को तय्यार नहीं देखा जाता ! जब किसी विषय में अनेक मत हैं तब कोई न कोई भूल पर अवश्य ही होगा परन्तु स्वीकार कौन करै ?

यही दशा धर्म सम्बन्ध में है ! अनगिनतियों धरम और धरम प्रचारक मारे फिरते हैं और एक दूसरे को लड़ाते हैं—कोई किसी को अपने से अधिक समझता ही नहीं !

हमने सैकड़ों शास्त्रार्थ भी देखे सुने–दोनों ओर के पुस्तकादि भी पढ़े—पर आज तक किसी से यह न सुना कि "अमुक विषय में हमारी भूल थी–" "हम अमुक शास्त्रार्थ में पराजित हुवे" !

सरासर देखते हैं कि हमारे शास्त्रार्थों और वकवक वा मतभेद को संसार भर "शृगालक्रन्दन" (सियार का हुवाना) के भिन्न अन्य कुछ नहीं कहता–परन्तु फिर भी हम तनिक नहीं लजाते !

हमारी कलह की मिसलों से अदालतें भरी पड़ी हैं। हमारे शास्त्रार्थों के पोथों के भार से गधे भी थक जायं ! पर हमारे झगड़े को विराम नहीं ! हमारा चित्त कलह से उपराम नहीं !!!

तभी तो मन में आता है कि जैसे पराजित होकर चीना लोग पीकिन राज मंदिर में परस्पर लड़ झगड़ रहे थें। आपुसमें मार काटकर रहे थे। उसी भांति

इस दशा को प्राप्त होकर हम हिन्दुस्तानी लोग भी " हड्डी पर कूकुर " की भांति लड़ते और " शेख चिल्ली की व्यवस्था " (निर्णय) की भांति शास्त्रार्थ करते फिरते हैं !!!

मान्य विद्वज्जनो और देश के सच्चे शुभचिन्तको ! क्या यह सब " फज़ीहती चाल चलन " अपने देश से दूर करा देना आप की सामर्थ्य से बाहर है ?

दया करके टुक ध्यान दीजिये !

गुप्त नगर के फाटकों पर अमेरिकन और जापानी पहरा नियुक्त होगया और फौजें अपने अपने कैम्प को वापिस आईं !!

" शाही शिकार गाह "

(Imperial hunting park.)

राजधानी पर भी विदेशी अधिकार होगया ! नगर के कतिपय फाटक अब तक जल रहे हैं। कई मकान भी अग्नि के अर्पण होकर भूशायी हो रहे हैं । किसी किसी मकान से अब भी एकादि फायर पुट्ट से हो जाती है बस तुरन्त वह घर लूट लिया जाता है और निवासियों को इकट्ठे कर एक पांति में खड़ा किया जाता है और बन्दूकों की "वाली" (बाढ़) झोंक दी जाती है ।

इसी भांति ताः १५ अगस्त से १९ अगस्त तक सर्वमेधस यज्ञ होकर अब प्रायः पूर्णाहुति का समय आगया है । नगर की सब प्रचंडता न जानै कहां विलुप्त हो गई ! जिन मार्गों और गलियों में गोला गोलियों की वर्षा के कारण चलना असंभव था अब उन में मच्छड़ भी नहीं भिनकते ! पीकिन नगर अब बिलकुल सुनसान—शान्ति रूप हो गया है ।

नेपोलियन बोनापार्ट की कहावत है कि " युद्धही के परिणाम में शान्ति की स्थिति है " सो प्रत्यक्ष देखने में आया ॥

अब नगर से बगावत प्रायः दूर हो गई—इधर उधर जहां कहीं थोड़ा बहुत विद्रोह सुना वा देखा जाता उस के दमन करने के वास्ते नित्यही तलाश पार्टियां घूमा करती थीं और उन के दबाने को वही पर्य्याप्त होती थीं ॥

सो फौजों को सुविधा के साथ रहने के लिये स्थानादि का प्रबंध होने लगा॥

ताः १९ अगस्त के दिन राजपूत पल्टनको सदेह स्वर्ग प्राप्त हुवा ! अर्थात् पीकिन

का स्वर्गमंदिर जो अब तक साधारण के लिये बिलकुल बन्द था वही पल्टनों की बारिकें बना ॥

ताः २० अगस्त को एक कालम (सेना) शाही शिकारगाह की तरफ भेजा गया जो स्वर्गमंदिर से करीब १३ मील है।

यह बहुत बड़ा हाता तीस चालीस मील के घेरे में, बहुत घना जंगल नदी झरने पर्वत सहित बना हुवा है ॥ इस में हरिण आदि वन्य पशु बहुतायत से हैं- महाराजाधिराज चीन का यह आखेट अखाड़ा है ॥

खबर मिली थी कि बाक्सर लोग इस शिकारगाह में इकट्ठे हो रहे हैं और लड़ाई की तय्यारियां करते हैं। सो उन्हीं को दमन करने के लिये एक कालम भेजा गया ॥

शिकारगाह में भी थोड़ी ही लड़ाई के बाद हमारा दखल हो गया बहुतेरे बाक्सर मारे गये। शेष तोपें बन्दूकें छोड़ छोड़ भाग गये ॥

जिन लोगों ने आरंभ से अब तक बराबर हार उठाई है वह आगे कहां तक रुक सकते थे! अन्ततः परास्त हुवे! और सब ओर सुनसान दीख पड़ने लगा!

"ग्रीष्म भवन"

(Summer Palace.)

ख्टष्टीय सम्वत् १८६० के अकतूबर महीने में जो ग्रीष्म भवन अंग्रेज़ी अंगारों का हवनकुंड बन चुका था। आज अगस्त सन १९०० ई० में फिर भी विदेशियों का लक्ष्य बना!

"ग्रीष्म भवन" पर्वत तड़ाग उपवन कंदरा आदि से सम्पन्न बहुत ही रमणीक स्थान है। सो सब शोभा आज सिपाहियों के कुन्दों और बूटों से रौंदी जा रही है!!!

यहां लड़ाई नहीं हुई! रक्षक फ़ौज आदि सब इतस्ततः भाग गयी थीं। सो विदेशियों ने सुखपूर्वक अधिकार जमालिया ॥

पीकिन राजधानी से ग्रीष्मभवन प्रायः तेरह मील है ॥

अंग्रेज़ी, इटालियन और रूसियों के पोस्ट क़ायम हो गये ॥

राजप्रासाद में विजय यात्रा।

(Triumphal march thro' the Imperial Palace.)

मसीही सम्वत् १९०० ताः २८ अगस्त चीन राजधानी पीकिन में विदेशियों के विजय यात्रा का दिन है!

महानगरी पीकिन आज बिलकुल सुनसान है। जिसभांति शरीर छोड़ कर जीवात्मा न जानै कहां वायुलोक में घूमता फिरता है? उसी तरह आज राजधानी परित्यक्त "चीन दरबार" न जानै किन जंगल पहाड़ों में विचर रहे होंगे!

शव रूप पीकिन नगर आज शिव जी का रुंड मुंड मय अपूर्व क्रीड़ा स्थान बन रहा है॥

रूसी, जापानी, अंग्रेज़, अमरीकन, इटालियन, आष्ट्रियन, जरमन, फ्रेंच इत्यादि अनेक रंग रूप के दल और दलपति आज "विजय महोत्सव" मनाने के लिये बड़े बनाव सिंगार से एकत्रित हो रहे हैं॥

रूसी जरनैल ही सब में बड़े बूढ़े सीनियर हैं सो वही आज के जशन में मीर मजलिस हुवे हैं॥

अंग्रेज़ों की निम्नलिखित पल्टनें इस जशन में शामिल हुईं:—

फयूजलीयर गोरा पल्टन—सातवीं राजपूत पल्टन—चौवीसवीं पंजाब पल्टन पहिली सिखपल्टन—छब्बीसवीं बलूच पल्टन—

हाङ्काङ्ग रेजिमेंट—और अंग्रेजी चीना रेजिमेंट!

राजमहल के प्रायः सभी फाटक सब ओर से खोल दिये गये॥

सब फौजें बड़ी सज धज से अन्दर फिराई गईं। महल के ख़ोजे लोग पंक्ति बांध कर दोनों ओर निश्चेष्ठ भाव से खड़े धरती निहारते थे! फौजों की "रहनवर्दी" से गोया "गुलिस्तां हुवा कूचा गर्द"

"घूम फिर" के बाद मीर मजलिस बहादुर की सलामियां उतारी गईं। उन्हों ने छोटी सी वक्तृता में सब फौजों की बड़ाई बखानी और धन्यवाद किया!

हुर्रे आदि की ध्वनि के पश्चात् उत्सव समाप्त हुवा और सब लोग अपने अपने कैम्प को वापिस आये ॥

मुबारकबादी तार ॥

(Messages of Congratulation.)

इंगलिस्तान की रानी और भारत की महारानी ने अंग्रेजी फौजों के जनरल कमांडिंग गेसली साहब को निम्नलिखित तड़ितसम्बाद भेजा जो सब लोगों को "जशन" के दिन ही प्राप्त हुआः—

"Heartily congratulate you and all ranks of my troops under your command on the success which has attended your remarkable advance to Peking. Trust that the wounded are doing well.

(Sd.) Victoria, R. I.

अर्थात्:-श्री महारानी जी जनरल साहब तथा अपनी फौजों के सब आदमियों को हार्दिक धन्यवाद देती हैं और पीकिन विजय के लिये बधाई देती हैं श्री मती आशा करती हैं कि घायल लोग अब अच्छे होंगे ॥

ह० विक्टोरिया, राज राजेश्वरी ॥

हिन्दुस्तान के कमांडर इनचीफ,-बंगाल के छोटे लाट, भारत के बड़े लाट, लाट रावर्ट्स, प्रभृति के-बधाई सूचक तार भी क्रमशः मिले ॥

महाराजा पटियाला ने भी बड़ी प्रसन्नतासे निम्न लिखित तार समाचार जनरल गेसली साहब के नाम भेजा ॥

"Please accept from myself and my state our personal congratulations to yourself and kindly convey same to the 1st Sikhs and 7th Rajputs on the brilliant part they played under you in the relief of Peking."

पटियाला के महाराजा साहब स्वयम् और अपने राज्य की ओर से जनरल गेसली एवं पहिली सिख और सातवीं राजपूत पलटनों को बधाई देते हैं और उपरोक्त पल्टनों की पीकिन उद्धार संबंधी उज्ज्वल कार्य्यवाही की बड़ी सराहना करते हैं ॥

फेंगटाई पोस्ट (मवास)

पीकिन नगर और आस पास सर्वत्र शान्ति होगई! तब बाहर को भी तलाश पार्टियां भेजी जानेलगीं॥

जहां कहीं जो कोई चीना आदमी एकादि सड़ीगली बन्दूक या लोहे का पटरा तलवार लिये मिलजाता तत्काल कैद करलिया जाताथा और दसबीस इकट्ठे होजाने पर उन्हें एकपांति में खड़ाकरके चांदमारी कर दी जाती थी!!!

सन् १९०० अगस्त २९ ता० को फेङ्गटाई नामक स्थानपर अंग्रेजी दखल हुवा॥ यह गांव रेलवे का जङ्क्शन (मध्यस्थान) था परन्तु वाक्सरों ने बिलकुल विध्वंस करके उजाड़ दिया था। और अपना अड्डा बनाया था॥

इस दिन गांवकी तलाशी लेकर राजपूतों ने दोचार का शिकार भी किया और पोस्टपर अधिकार करलिया॥

लूकाचाव पोस्ट (मवास)

(Luikochao post.)

तारीख १६ सितम्बर को एक कालम-दो तोप, एक स्क्वाड्रन रिसाला, दो कंपनी राजपूतों का पीकिन से पंद्रह मील दूर लूकाचाव नामक पोस्ट से उत्तर पहाड़ों की तरफ दुश्मन खोजने को गया॥

गांव उजाड़ागया-क्योंकि बाक्सरों का अड्डा सुनागया था! दसबीस मारडाले गये—क्योंकि बाक्सर होने का शुबहा हुवा था। इतने के बाद जो कुछ प्रजा बचगई थी उसको अभयदान दियागया और कालम वापिस आया॥

लूकाचाव में अंग्रेजी अड्डा स्थापित हुवा॥

इस गांव के आसपास कोयले की बड़ी बड़ी खानें हैं॥

एक देव मंदिर भी है जिसको कोयला रक्षक देवता कहा जाता है॥

कमांडर इनचीफ काउंट बलदर्शी.

(Count Von Waldersee. Commander-in-chief Allied Troops.)

जरमनी के सुप्रसिद्ध फील्डमार्शल काउन्ट बलदर्शी सब पंचों की सलाह से सबके बड़े अफसर बनकर यहां पधारे॥

यह महापुरुष सैनिक और राजनैतिक दोनों विषयों के परम पंडित हैं। जरमनी के प्रिन्स विस्मार्क के समकालीन और समकक्ष-सभी प्रकार के अनुभव प्राप्त किये हुवे यूरोप के पितामह बलदर्शी चीनपर भी बलदर्शाने, ज़ोर आज माई करने के लिये आन विराजे॥

यद्यपि चीन का सब कुछ हो चुका है। राजधानी पतन-बाक्सरदमन-मंत्रिदलोद्धार—पादड़ी उद्धार सभी कुछ होचुका है-तौ भी मान्यवर फील्ड-मार्शल के कथनानुसार अभी कामका आरंभही हुवा है। सो सचमुच ऐसा होहीगा। राजनैतिक वा सैनिक बातों में साधारण सिपाही क्या अपने "चीफ" की बात सत्य मानने में असमंजस कर सकता है?

श्रीमान् ने कमान की बागडोर थामते समय एक फरमान ज़ारी कियाः—

It fills my heart with pride and great pleasure to be placed at the head of such distinguished troops who have already given glorious proofs of their valour and heroism. Well knowing that I am entrusted with a difficult task I have never theless a firm conviction that I shall succeed quickly and surely with the help of these proved troops, in attaining the object placed before us now that they are combined under a single leader.

फरमान का तात्पर्य यही है कि श्रीमान् इन नामी पंचायती फौज़ों का सेनापति बनने को बड़ा गौरव समझते हैं। और आशा करते हैं कि इनकी सहायता से अभीष्टसाधन में शीघ्रकृतकार्य्य होंगे विशेषतः ऐसी अवस्था में जब कि सब फौजें संयुक्त शक्ति (मजमूई ताक़त) में एकही सेनापति के आज्ञावर्त्ती हों॥

पावटिङ्ग फू धावा॥

ता० १२ अकतूबर को एक संयुक्त सेना पावटिङ्गफू नामक स्थानको रवाना हुई। अंग्रेज़ी फ़ौजों की चार तोपें एक रेजिमेंट रिसाला और एक हज़ार पैदल पल्टनें इस कालम में शामिल हुई॥

हमारे मान्यवर महाराजा ग्वालियर भी इस चढ़ाई में जनरल गेसली के स्टाफ में शामिल हुवे थे ॥ इस दल में जरमनों की अधिकता औ प्रधानता थी ॥

चार पांच सप्ताह की भरमना करके यह मारका भी तय कियागया । बहुतेरी चीना जानें इस बेर भी चूर की गईं !

एक बड़े आदमी चीना फौजों के बड़े जरनैल बेचारे घोड़े पर सवार पेशवाई के लिये आगे बढ़े थे एक सवार की भूल से पिस्तौल के शिकार होगये ॥

☞हाय हाय इनके लिये पोसी बिल्ली के मरने के बराबर भी दुख प्रकाश करने वाला कोई न था !!!

जिस सवार ने चीना जरनैल पर गोली चलाई थी उस पर कोर्ट मार्शल का अभियोग चलाया गया था परन्तु वह निर्दोष ठहरा ॥

इसी प्रकार बराबर कोई न कोई दल एक न एक तरफ जाया आया करते रहे जिनका सिलसिलेवार गिनाना आवश्यक नहीं प्रतीत होता है ॥

" पीकिन मन्त्रिमण्डल "

(Peking Legation.)

चीन पर वर्तमान चढ़ाई का लक्ष्य "लिगेशन" ही था । इसी काम के वास्ते सारी दुनियां चीनपर उमड़ पड़ी थी । सो लड़ाई की चर्चा समाप्त करने के पहिले " पीकिन लिगेशन " का संक्षेप वृत्तान्त भी कहना आवश्यक जान पड़ता है ॥

लिगेशन का अवरोध " वाक्सरों " ने किया था । इन्हीं लोगों ने समस्त देश में पादरी प्रहार आदि के विद्रोह उभाड़े थे । सो इस लड़ाई को " वाक्सर बलवा " भी कहते हैं ॥

वाक्सर = ई,ख-च्वान्

"वाक्सर" विदेशियों का कल्पित शब्दहै । चीनी भाषा के " ई.ख.च्वान "

शब्द के तात्पर्य से वाक्सर शब्दकी रचना हुई है, अर्थात् "Fist of righteous harmony" "संयुक्त धार्मिक घूंसेबाज"

चीनमें कुछ का॰॰ से दो गुप्त समाजें स्थापितहैं-एक तो उपरोक्त "ई.ख.च्वान" और दूसरी "ता.ताव.ह्वी" (Big sword society) अर्थात् खड्गधारी समाज॥

धीरे धीरे यह दोनों समाज एकही साथ सम्मिलित होगये। और प्रगट रूपमें अपना उद्देश्य प्रचार करने लगे।

इनके पताका पर ऐसे शब्द लिखे हुवे हैं जिनका अंगरेज़ी भाषान्तर "Exterminate the foreigners" "विदेशियों को निकाल दो" कहा जाता है॥ संयुक्त धार्मिक घूंसे का तात्पर्य-

Fist of righteous harmony is, that the members will harmonise *together to push the cause of right*, if necessary by use of force.

सभ्यगण धार्मिक शान्ति प्रचारके लिये सम्मिलित होकर उद्योग करते हैं, आवश्यकता होने पर बलपूर्वक (शस्त्र धारण करके) भी॥

सभा का उद्देश्य इसप्रकार वताया गया है:—

The society is organised for spreading the worship of the Queen of heaven, the mother and nurse of all things.

सभाकी स्थापना स्वर्लोक राज्ञी जगद्धात्री माताकी पूजा प्रचारके लिये हुई है॥

इस सभा के ३६ नियम हैं जिन में सभ्यों के कर्तव्याकर्तव्य निश्चित किये गये हैं॥

एक पादरी साहब के कथनानुसार सभा में सम्मिलित होने की रीति यह है:—

The candidate stood underneath two drawn swords held over his head by two members while the elder brother heard him affirm his undeviating fidelity to the cause: and when this was finished the new member cut off the head of a cock with the exclamation "thus may I perish if the secret I divulge."

प्रार्थी दो तलवारों के वीच में खड़ा किया जाता है (अर्थात् दो सभ्य तलवार खींचकर प्रार्थी के शिर के निकट किये खड़े रहते हैं) और सभा का प्रधान (जिसको ज्येष्ठ भ्राता कहते हैं) उस से अचूक ईमानदारी के साथ नियम पालन की शपथ कराता है। शपथ हो चुकने के वाद नवीन सभासद एक कुक्कुट को हाथ में पकड़ कर निम्न शब्द उच्चारण करता हुवा उसका शिर तेज छुरी से काटकर फेंक देता है:—

"यदि मैं किसी प्रकार अविश्वासी होऊं तो इसीभांति मेरा भी शिर काटा जावै"—

कहते हैं वाक्सरों में अनेक आश्चर्य्य शक्तियां विद्यमान थीं उनके शरीर अकाट्य और अभेद्य होते थे॥

सभासदों में दो श्रेणियां हैं "अर्द्धसिद्ध" और "सिद्ध"॥ प्रथम के भी अनेकों आश्चर्य्य कार्य्य कर सकते थे परन्तु "सिद्ध लोग" तो न आग में जल सकते न जल में डूब सकते! तलवार उनको काट नहीं सकती! एक स्थान में वैठे हुवे सर्वत्र की कार्य्यवाहियां देख सकते और अत्यन्त दूर के अपने साथियों को आज्ञा और परामर्श दे सकते थे॥

चीना लोगों में तो इन की आश्चर्य्य शक्तियां अनेकों प्रकार की कही जाती हैं परन्तु विदेशी विद्वान् लोग भी वाक्सरों को किसी भांति मिस्मेरिज़्म शक्ति सम्पन्न स्वीकार करते थे॥

एक मान्यवर अंग्रेज़ अपनी देखी वात कहते हैं कि वाक्सर लोग दक्षिण पूर्व की ओर मुख करके कुछ मंत्र पढ़ते हैं फिर आंखें वन्द करके पीठ के वल पीछे गिर पड़ते हैं-क्षणेक पीछे उठकर उत्तेजित आंखों से सब ओर निहारकर वीर-भाव धारण कर लेते हैं। इस दशा में वह बड़े बड़े पेड़ों और दीवारों पर अनायास खटाखट चढ़ जाते हैं। अपनी भारी तलवार को इस भांति घुमाने लगते हैं कि जो दूसरे समय कदापि न कर सकते! लिगेशनगार्ड की एक वात आश्चर्य्य जनक यह है:—

Sir Robert Hart (सर रावर्ट हार्ट) अपनी किताव में लिखते हैं:—

One of the best shots, in a legation guard relates how he

fired seven shots at one of the Chiefs on the Northern Bridge, less than 200 yards off: the chief stood there contemptuously, pompously waving his sword and as if there by causing the bullets to pass him to right or left at will, he then calmly and proudly stalked away unhit, much to the astonishment of the sharp shooter!

लिगेशनगार्ड के एक अचूक निशानेबाज़ ने एक वार एक वाक्सर सरदार पर सिर्फ दो सौ गज के फासिले से सात दफे निशाना लेकर सात गोली फायर किया परन्तु उसको एक भी गोली नहीं लगी! वह अपने स्वभाव के अनुकूल खड़ा हुवा तलवार घुमाता रहा मानो इच्छानुसार गोली को इधर उधर हटा देता था अंत को वह सगर्व गौरव चला गया और सैनिक को आश्चर्य सागर में डुवो गया॥

यही आश्चर्य्य शक्ति सम्पन्न वाक्सर समुदाय चीन के इस विद्रोह का मूल कारण है॥

"आश्चर्य्य शक्ति" की बात कोई नई नहीं है। प्राचीन काल से ऐसा ही देखने सुनने में आता है। हज़रत महम्मद और महाप्रभू मसीह के माजिज़े एवं गुरू नानक जी के आश्चर्य्य कार्य्य की बातें किसने नहीं सुनीं? पंजाब के दशवें बादशाह गोविन्दसिंह की दुर्गादत्त तलवार क्या कम करश्मे की थी?

सो देखते हैं आश्चर्य्य शक्तियों की कल्पना वड़े वड़े कामों के करने के लिये स्वाभाविक बात है॥ परन्तु यह शक्तियां "निमित्त" मात्र हैं। वास्तविक शक्ति का "उपादान" तो "उद्योग" ही है॥

जैसे क्षुधा तृप्ति के लिये भोजन आवश्यक है और भोजन पाक करने को अग्नि वा उष्णता दरकार है अग्नि न होने से भोजन पकाया नहीं जा सकता सो भोजन पाक के लिये अग्नि आवश्यक पदार्थ ठहरा!

यह मान कर यदि कोई अग्नि से क्षुधा की तृप्ति मान वैठे तो कहिये क्या उसका मन्तव्य ठीक होगा? आग खा कर क्या कोई जीवित रहेगा? परन्तु विना आग के भी क्या कोई रह सकेगा?

इसी भांति आश्चर्य्य शक्तियों की कल्पना भी साधारण जन समूह को वि-

श्वास दिलाने के निमित्त लोग कर लिया करते हैं । परन्तु सर्वांश उन्हीं शक्तियों पर निर्भर करना सरासर भूल है ॥

इसी भूल में पड़कर हिन्दुस्तान का सर्व नाश होगया किन्तु इसी को "निमित्त" मात्र लेकर मसीही पादड़ी ने तमाम भूमंडल मथ डाला। और आज भी एशियाई मुल्कों के सामने उन्हीं करश्मों को बड़े बोलों बखानता डोलता है॥

सो चीना बाक्सर समुदाय ने भी केवल कल्पित आश्चर्य शक्तियों पर अपना समस्त निर्भर करने में बड़ी भारी भूल की और भूल के फल में सारे देश और राज्य को धूलि धूसरित कर दिया !!!

वाक्सर उत्तेजना

कौन नहीं जानता कि दुनियां में एक धर्म ही प्रधान वस्तु है। धर्म ही सर्वार्थ साधक और वही इह लोक परलोक का साथी है। सो यदि ईसाई पादड़ी लोग भी यही बात अपने जीवन में चरितार्थ कर दिखावें तो उन को दोष ही कौन दे सकता है?

यूरोपीय राज्य विस्तार के लिये पादड़ी दल अडवांस गार्ड (पेश ख़ीमा) का काम करता है । सो हिन्दू मतानुसार भी उचित ही है:—" अग्रे अग्रे ब्राह्मणः " ॥

चीन में यह पेश खीमा बहुत दिनों से काम करता रहा। फौजी अडवांस गार्ड की चालों की अपेक्षा पादड़ी धरम गार्ड की चालें कुछ कम न थीं—वरन चढ़ बढ़कर हुई! बहुतेरे देशी चीना लोग पादड़ियों के चेले बन गये। और अपने ही गांववालों को ऐसी तकलीफ देने लगे जैसी कि शरीर पर के व्रण (फोड़े) पीड़ा देते हैं!

पादड़ी लोग इन की पूरी तरफदारी करते थे और चीना हाकिमों को पादड़ियों की खातिरी भी आवश्यक थी! सो साधारण प्रजा इस अनुचित दवाव से गरुआने लगी!

शान्तन (Shantung) सूबे में पादड़ियों का यहां तक दवाव होगया था कि उनका दरजा सूबेकेगवर्नर के बराबर कहाजाने लगा!.

गवर्नर और वाइसराय लोग हरित वर्ण पालकियों पर सवार होकर निकलते हैं। यही उनकी राजकीययात्रा की पहिचान है । पादड़ी लोग भी ऐसीही

पालकियों पर उसी ठाट वाट से निकलने लगे! साधारण प्रजाको यह चाल असह्य प्रतीत हुई॥

उसी शान्तन (Shantung) सूबे के "फेचेङ्ग" (Feicheng) नामक गांव में कुछ साधारण लोगों (शायद् वाक्सरों) ने एक अंग्रेज़ पादड़ी ब्रूक्स को जनवरी १९०० में मारडाला!

वड़ा गुलगपाड़ा उठा, विदेशियों में हलचल मचगई! देशान्तरों को तार दौड़ गये! पादड़ी क्या मारागया मानो सूबे का प्रलय काल उपस्थित होगया! सारांश यह कि धर्मार्थ वलिदान का जैसा असर और फल होना चाहिये ब्रूक्स वलिने वह सब सम्पूर्ण रूप से प्रत्यक्ष करदिखाया॥

तदारुक होने लगे तहक़ीक़ातें जारी हुईं॥ परिणाम में पांचजन दोषी पकड़े गये। दोके शिरउड़ाये गये, तीनको आजन्म कैद किया गया॥ और पादड़ी साहवकी कवर वनाने को साढ़े सात हजार रुपये दिये गये!

मामला इतने पर भी तय नहीं हुवा!

पादड़ी साहब कैन्टरवरी कालिज के थे सो वहांपर उनका स्मारक स्थापित करने के वास्ते चीन सरकार से तेईस हज़ार रुपये लिये गये। इसके सिवाय वधस्थली-(उपरोक्त "फेचेङ्ग" गांव) में भी ब्रूक्स के नाम पर गिरजाघर वनाने की व्यवस्था हुई! इसके लिये भी चीनसरकार को उन्नीस हज़ार रुपये देकर प्रजाकी छातीपर गिरजा गाड़ने की बात में स्वीकृति देनी पड़ी!

इस पादड़ी वधके कारण फेचेङ्ग के मजिस्ट्रेट को भी वरखास्ती की सज़ा भोगनी पड़ी!!

इन सब कारवाइयों का असर प्रजा के दुखाये हुवे हृदयपर कैसा पड़सकता था सो विशेष रूपसे कहने की आवश्यकता नहीं है॥

इस घटना के पहिले जरमन के भी दो पादड़ी मारडाले गये थे। और उन के दामों में ज़रमनी ने चीन का (Kiao Chav) क्यावचाव नामक वन्दर (पोर्ट) छीन लिया था और वहां के गवर्नर (Liping Heng) लीपिङ्गहेङ्ग को पदच्युत करादिया था॥

इसी तरह एक न एक कौशल से रूसने पोर्टआर्थर-फ्रांसने काङ्गचाव अंग्रेज़ों ने वईहाईवाई आदि आदि दवालिये और प्राप्त किये॥

मेडकी को जुकाम की मसल चरितार्थ होने लगी!

इटाली ने भी (Chekiang) चेक्याङ्ग में एक वन्दर पाने का दावा पेश किया!

इन्हीं तमाम बातों से चीनसरकार भी तंग आगई। और अपने देशका इस प्रकार गौरव नाश और सीमा ह्रास देखकर प्रजा का मनभी कहां तक स्थिर रह सकताथा सो आज कलके उजाले ज़माने में अधिक टीकाके साथ कहना नहीं पड़ैगा॥

—बाक्सर विज्ञापन—

उपरोक्त घटनाओं की मनोवेदना से दुखित होकर जो "बाक्सर" सम्प्रदाय के लोग उत्तेजित होउठे–सो इसे उन्हींकी बदमाशी कहें या क्या?

परन्तु "प्राकृतिक नियमों" की ओर दृष्टि दौड़ानेसे मालूम होताहै कि "कमज़ोर" ही को "क़सूरवार" ठहराने का हमेशा नियम है। सर्वत्रही यही बात देखते हैं। कमज़ोरीही महापाप है:—

दुर्बलेदैव घातकः॥

सो दुर्बल महापापी क्यों न कहाजाय?

सो इस प्रमाण के अनुसार वर्तमान बखेड़े को बाक्सरों की बदमाशीही कहना संसार संगत होगा॥

बाक्सर बदमाशी के आरम्भ में अनेकों प्रकार के विज्ञापन तमाम देश में वितरित होने लगे॥

खास पीकिन राजधानी में अप्रैल १९०० ई० के दिनों गलियों में विज्ञापन लगाये गये थे जिनमें से एकका अंग्रेज़ी अनुवाद नीचे लिखाजाता है:—

"I-ho. chuan" at midnight suddenly saw a spirit descend in their midst—then a terrible voice was heard saying I am none other than the great Yu Ti (God of the unseen world) come down in person. Well knowing that ye are all of devout mind, I have just now descended to make known to you that these are times of trouble in the world and that it is impossible to set aside the decrees of Fate. Disturbances are to be dreaded from the foreign devils; they are starting missions telegraphs and building Railways. They do not

believe in the sacred doctrine, and they speak evil of the Gods. For this reason I have given forth my decree that I shall descend to earth at the head of all the saints and spirits; and that wherever the 'I-ho-chuan' are gathered together there shall the God be in the midst of them.

The will of Heaven is that the telegraph wires be first cut, then the Railways torn up, and then shall the foreign devils be decapitated.

The time for rain to fall is yet a far off and all on account of devils!

विज्ञापनका तात्पर्य्य.

श्रावणस्यामले पक्षे एकादश्यां महा निशि।
साक्षात् भगवता प्रोक्त स्तदक्षरमुच्यते!

एकदा महानिशि-अर्द्ध रात्रि-के समय "धार्मिक शान्ति संयोजकों" के सन्मुख अकस्मात् एक महा तेजोमय विमान अवतीर्ण हुवा! बड़ी गर्जनाओं के मध्य निम्न लिखित वाक्य श्रवणगोचर हुवेः—

"यह तेजपुञ्ज अन्य कुछ नहीं है। यह महान् येवूत्यी=देवत्रयी (त्रिदेव-trinity इत्यादि) परलोक स्वामी स्वयम् हैं। संयोजकों (वाक्सरों) की अटल भक्ति को पूर्णतया जानते हुवे संसार में स्वयम् अवतीर्ण हुवे हैं। जानना चाहिये कि वर्तमान समय संसार में अशान्ति और विग्रह का उपस्थित हुवाहै। विधि विधान अमिट होताहै सो यह विग्रह अनिवार्य है।

विदेशी विधर्मींही इसके मूल कारण हैं। वे लोग अपने प्रचार मण्डल-तार जाल और रेल रास्ते बनाते हैं- सत्यधर्म में उनका विश्वास नहीं है। वे लोग बड़े देवनिन्दक और नास्तिक हैं। अतएव स्वर्लोक धात्री औरदेवत्रयी की यह आज्ञा और घोषणा है, कि स्वर्गीय महाशक्ति का संसार में साक्षात् अवतार होगा—क्योंकिः—

यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भूतले !
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानंसृजाम्यहम् ॥

आज से सब महात्माओं और पवित्रात्माओं के साथ साथ स्वर्गीय महाशक्ति विद्यमान् रहेगी और जहांकहीं जब जब धार्मिक शान्तिसंयोजक (बाक्सर) लोग एकत्रित हुवा करेंगे वहां सबठौर सर्वदा सम्पूर्णदेवता लोग उपस्थितरहा करेंगे॥

स्वर्गीय आज्ञा और घोषणा यह है कि सर्व प्रथम तार जाल काट डालाजावे तत्पश्चात् रेल रास्ता तोड़कर विध्वंसकर दियाजावे ॥

तिस पीछे विधर्मी विदेशियों को निकाल दियाजावे अथवा शिरच्छेद दियाजावे ॥ मेघ वृष्टि अबभी दूरहै और यह दुष्काल भी केवल इन्हीं नास्तिकों के पाप से है ॥

टाकूजहाजोंसेसपोर्ट (पहिली मदद).

जब शान्तन जिले में बलवा फैलने लगा था और रेल तोड़ने पादड़ी मारने आदि की काररवाइयां जारी हुई थीं तभी "विदेशी मंत्रिदल पीकिन" ने टाकू जहाजों से मदद मँगवाली थी ॥ सो अमेरिकन, आस्ट्रियन अंगरेज़, फ्रेंच, इटालियन, जापानी और रूसी मिलजुल कुल करीब चारसौ हथियार बन्द सैनिक लिगेशन में मौजूद होगये थे ॥

यह "मदद" औरभी अधिक मज़बूत होगई होती यदि टीनसिन से रवानगी के समय परस्पर मत भेद न होता ।

रूस और फ्रेंच सिपाही प्रत्येक पचहत्तर से अधिक न थे किन्तु अंग्रेज़ सौ थे। सो पचीस आदमी लौटाल दिये गये ॥ रूसी सिपाहियों के पास एक तोप और एकहज़ार गोले भीथे-दूसरों के पास नहीं थे-सो वह तोप भी वापिस करदी गई ॥

जापानी केवल पचीस थे। परन्तु जो काम इन पचीस आदमियों ने किया वह सबसे श्रेष्ठ और सराहनीय था औरपचगुनी अधिक संख्याके बराबर हुवा॥

इस " मदद " का पीकिनमें प्रवेश करना यद्यपि चीना अधिकारियों को बहुत अच्छा नहीं लगाथा परन्तु जैसा समय उपस्थित होरहाथा उसको देखतेहुवे किसी अधिकारी ने कोई रोकटोक नहीं की ॥

अन्ततः यही " सहायक समुदाय " पीकिन लिगेशन, पादड़ी दल, व्यापारी, मंडल, दर्शकदल और चीना क्रिस्टानों का रक्षक हुआ ॥

महारानी का जन्मोत्सव २४ मई १६०० ई० ।

ब्रिटिश लिगेशन पीकिन में आज बड़ी शोभा का जातीय उत्सव है । बड़े बड़े मन्त्री तन्त्री लोग—साठ सत्तर स्त्री पुरुष—आमोद प्रमोद में मग्न होरहे हैं । भोजनान्तर नाच रंग में रत हुवे ।

सहनमें चीना छोकरों का " ब्रासबैंड " (एक वाद्य विशेष) अपने निरालेही राग अलाप रहा है ॥

सबही लोग बड़े आनन्द से उत्सव में मग्न होरहे थे ॥

आज की आनन्द रजनी में कौन जानताथा कि यह रागरंजनी लिगेशन विहार की अन्तिम रात्रि है ! आह ! यह प्रमोद रात्रि बहुतेरोंके लिये सचमुच अन्तिम रात्रिही हुई !

इस उत्सव रात्रिके बाद बिलकुलही रंग बदलगया ! लिगेशन-नाचघर-बाल रूम-भोजभवन आदि सभों की काया पलट होगई !

अवरोध का आरम्भ ।

मई महीने का अन्त होते होते अनेकों ऊधम सब ओरसे उठने लगे ! "लिगेशन" को भी बाक्सरों से धमकी मिली ! विदेशी बालबच्चे स्त्री पुरुष सब सिमटकर लिगेशन घेरे में पनाह के वास्ते रातें काटने लगे ! किन्तु अब तक यह किसी को भय भी नहीं हुवा था कि महाराजाधिराज चीन राजधानी में भी बाक्सरों का बलवा न रोक सकेंगे !

राजधानी से एक सरकारी फौज " माचियापू " रेलवे स्टेशन रक्षा (पीकिन दीवाल से बाहर तीन मील के फासिले पर यह गांव है) के लिये भेजी गई थी इससे लिगेशनके लोगों को और भी भरोसा हुवा कि बाक्सरलोग राजधानी में उत्पात नहीं कर सकेंगे ॥ परन्तु पीछेसे मालूम हुवा कि उक्त फौज बागी होकर बाक्सरों से मिलगई और टोनासिन की तरफ़ एडमिरल सीमोर के दल से मुक़ाबिला करने को चलीगई !

यह खबर उड़तेही विदेशियों में अधिक अधिक भय संचारित हुवा। ता० ९ जून को लोग यहांतक भयभीत होगये थे कि व्यापारी मंडल और कालिज के लोग जो नगर के कई महल्लों में रहा करतेथे सब अपने अपने घर छोड़ लड़के वालों को समेट कर इन्स्पेक्टर जनरल के हाते में जारहे॥

यहांपर अंग्रेज़, जापानी, आस्ट्रियन और फ्रेंच लोग सब मिलकर रात दिन बड़ी चौकसी से स्वयम् पहरा चौकी लगाकर ता० २० जून तक रहे॥

रक्षा का प्राथमिक प्रबन्ध।

जब विदेशियों ने देखा कि वाक्सरों का ज़ोर बढ़ता ही जाता है और राज प्रबंध भी शिथिल ही सा जान पड़ा तब उन लोगों ने तुरन्त अपने बचाव के सब प्रबंध अपने आप ही कर लिये॥

सम्पूर्ण लिगेशन महल्ला भर अपने अधिकार में लेकर किलाबंदी कर ली गई। एक अलँग रूसी, इटालियन, आस्ट्रियन और अंगरेज़ रक्षा के लिये नियत हुवे। सिटीवाल (चारदीवारी) पर अमेरिकन और जरमन लगाये गये। एक ओर तरफ जापानी और व्यापारी मंडल के लोग नियत किये गये। फ्रेंच लोग सब तरफ आवश्यकतानुसार मदद पहुँचाने के लिये रक्खे गये!

ताः ९ जून को यह सब प्रबंध कर लिये गये थे—सब लोग बारी २ से अपने अपने हिस्से के कामों पर रात दिन चाकचौवन्द रहने लगे–परन्तु वास्तविक मारे जाने या घेरे जाने का अधिक भय किसी को नहीं हुआ था क्योंकि अन्ततः बग़ावत तो वाक्सरों की ही कही जाती थी। राज प्रतिकूलता तो थी ही नहीं॥

इसी भांति दो दिन व्यतीत हुवे॥

ताः ११ जून से लिगेशन महल्ले पर हमले की धमकियां होने लगीं। और उपरोक्त "रक्षा प्रबंध मंडली" को वास्तविक "आत्मरक्षा युद्ध योग" (डिफेंस) में उतरना पड़ा!!!

"लिगेशन अवरुद्ध"

ताः ११ जून को जापानी लिगेशन के मंत्री (Mr. Sugiyama) मिस्टर

खुशामान् का वध हुवा । यूङ्गटिंग नामक फाटक पर चीना सिपाहियों ने उनका वध कर डाला ! और सब ओर बाक्सरों का बड़ा हल्ला पड़ गया ! एक बड़ा दल बड़ी बड़ी तलवारें घुमाता और जय जयकार का हल्ला उठाता हुवा तमाम नगर में घूमने लगा ॥

ता: १३ जून को उन्हों ने गिरजाघर में आग लगा दी । वहां से चल कर (Chinese Imperial Bank) चीना शाही बैंक फूंकने लगे थे कि आस्ट्रियन लोगों की गोली वर्षा से असमर्थ होकर दूसरी ओर को चले गये ॥ रात्रि होते होते नगर के सब ओर अग्नि की ऊंची ऊंची शिखायें दीख पड़ने लगीं !

लिगेशन का अवरोध तारीख ९ जून से आरम्भ होकर धीरे धीरे अब वह बिलकुल ही घेरे में पड़गया !

माचियापू स्टेशन से अन्तिम रेलगाड़ी ९ जून को रवाना हुई !

पीकिन से अन्तिम तार १० जूनको गया ! डाकका थैला जो १५ जून को टीनसिन पहुंचना चाहिये था वह बीचही रहा ! कहीं लूटफूंक दियागया ॥ अन्तिम डाक टीनसिन से १६ को चलकर १८ जून को पीकिन पहुंची ! इतने ही बीच में सब ओर बाक्सर ही बाक्सर होगये । रेलतार तोड़ डालेगये । बिना तलाशी के आनाजाना रुकगया !

पीकिन से एक मिस्टर एमेन्ट (Mr Ament) ता: ८ जून को टुङ्गचाव (पीकिन से १४-१५ मील) के गिरजा घरवाले पादड़ियों को बचालाने के वास्ते गये और उसी रात सब लोगों को बीबी बच्चों सहित सकुशल पीकिन लिगेशन में ले आये ॥ इन की वीरता और साहस वास्तविक सराहना योग्य हुई ॥

रेलवे के इंजीनियर और कर्मचारी लोग बचाव के लिये टीनसिन और पीकिन की ओर भागे । बहुतेरे मार्ग ही में मारे गये-शेष बचाव में पहुँच गये !

(Chang Hsing Thyen) चाङ्गसिंह त्यीन नामक स्टेशन के कारखाने में बहुत से रेल कर्मचारी रहते थे-उस सम्पूर्ण ग्राम को बाक्सरों ने घेरलिया । परन्तु एक फ्रेंच महाशय चामट (M. Chamot) और श्रीमती चामट ने अपने अधीन कुछ विदेशी सिपाहियों को लेकर अच्छी लड़ाई के बाद गांव में घिरे हुवे विदेशियों को निकाल लाये ॥

लिगेशन से टीनसिन को खबर भेजने के कई यतन किये गये। मीर वहर सीमोर को सहायता की प्रार्थना भेजने के लिये अनेक उद्योग सोचे गये परन्तु सब निष्फल रहे! लिगेशन अब बिलकुल कैदखाना बन गया॥

जून १० तारीख़ को लिगेशन से कन्टान के वाइसराय लीहङ्गचङ्ग को तार भेजा गया था कि वह चीन दरबार के बड़े प्राचीन हितैषी हैं सो कृपा करके तार द्वारा महाराणी दिवाकर (राजमाता) शशीको सूचित करदें कि यह बाक्सर विद्रोह यदि मंत्रि दल को त्रासित करैगा तो चीन राज्य एवं राज घराने के लिये अच्छा परिणाम नहीं होगा॥

साथ साथ ही एक पत्र भी विस्तार पूर्वक लिखकर भेज दिया गया था जो संभवतः दोनों पहुँच गये थे॥ – क्योंकि जुलाई के आरंभ ही में उक्त वाइसराय टीनसिन की वाइसरायलटी में बदल लिये गये थे॥

ता० २० जूनको चीन दरबार के वैदेशिक मंत्रणा भवन (Foreign office. *) से एक पत्र विदेशी मंत्रियों के नाम जारी हुवा कि चौबीस घंटे के बीच में सब विदेशी लोग पीकिन छोड़कर चले जावैं क्योंकि विदेशी जलसेना के अधिकारियों ने टाकू किलोंपर चढ़ाई करदी है और किले छीन लेने की अनाधिकार चेष्टा में हैं।

इसके उत्तर में विदेशी मंत्रियों की ओरसे निवेदन किया गया कि उनको टाकू किलों पर चढ़ाई की बाबत कुछ ज्ञात नहीं है। वह कार्य्य सरासर भूलका है। उसके लिये मंत्रिदल शोकित है। और थोड़े अवकाश में निकल जानेका प्रबंध क्योंकर किया जासकता है!!

सम्पूर्ण मंत्रिदलने दल बद्ध होकर चीन मन्त्रीमण्डलसे भेंट करने की प्रार्थना की परन्तु वह निश्चित नहीं हुई!

उसी दिन जरमनी के मन्त्री बैरन केटलर (Baron von Ketteler) ने स्वयम् अकेले जाकर परामर्श करने का निश्चय किया!

बहुत लोगों ने ऐसी अवस्था में जाने से निषेध भी किया था जब कि सम्पूर्ण नगर और मार्ग बाक्सरों से भरपूर थे परन्तु बैरन महाशय ने जाना उचितही समझा और अपने द्विभाषी मिस्टर फोर्ड को साथ लेकर रवाना होगये॥

* इसका ब्यौरा आगे चलके करेंगे॥

जाने के केवल दशही मिनट बाद उनके साथ के सवार चीनाने दौड़ते हुवे आकर खबरदी कि बैरन महाशय सड़क पर गोली से मारे गये और इन्टर प्रीटर (दोभाषिया) सख्त घायल हुवा ॥

पूर्व प्रबन्धानुसार लिगेशन रक्षाका यह निश्चय हुवाथा कि बाक्सरों का धावा होने पर यावत् शक्य सब विभागों की रक्षा कीजावे परन्तु उनके प्रबल होने पर सब जगहसे सिमट कर ब्रिटिश लिगेशन में आजाना होगा और वहां पर अन्त तक लड़ना होगा ॥

ब्रिटिश लिगेशन करीब दोहज़ारफुट लम्बा और छःसौ फुट चौड़ा विशाल महल है ॥

उपरोक्त मंत्री निपात घटना का समाचार पाकर सबको संदेह हुवा कि अवश्यही इस बाक्सर बलवे में राजसम्मति भी है । इस दशा में विदेशियों को निश्चिन्त नहीं रहना चाहिये ॥

इस खबर से आस्ट्रियन लिगेशन में बड़ी खलबली पड़गई और उन्हों ने व्यापारीमण्डल में खबर भेजी कि अपनी लिगेशन रक्षा उनके सामर्थ्य से बाहर है अतः वह लोग फ्रेंचलिगेशन में चले जावेंगे ।

इस विचार से पूर्व प्रबन्ध में कुछ उलट फेर होगई । व्यापारी मंडल को भी अपना स्थान त्यागना पड़ा ॥

तीन बजे सायंकाल के समय आस्ट्रियन और अंग्रेज व्यापारीमण्डल ने दल बद्ध होकर फ्रेंच और ब्रिटिश लिगेशनों को कूच किया !

मार्ग बाक्सरों से भरपूर ! दनादन दोनों तरफ से गोलियां सन्नाने लगीं परन्तु सैनिक चालों के अनुकूलही विदेशी लोगों की चाल होने के कारण बाक्सरोंकी एक न बसाई यह लोग विना हानि अपने अभीष्ट स्थानों को पहुँच गये ॥

इसी समय एक प्रोफेसर (Huberty James) हुबर्टीजेम्स भी बाहर से लिगेशन की ओर आते थे-परन्तु तनिक मार्ग भ्रम से एक गली की ओर निकल गये । फिर पता न लगा कि उनको बाक्सरों ने मारडाला या क़ैद कर लिया !

लिगेशन अब बिलकुल अवरुद्ध होगया ! घर बाहर हर तरफ दुश्मन-सब ओर गोली वर्षा ! सब भांति निराशा और प्राणसंकटही दीख पड़ने लगा !!!

—तुआन का करुण—

चीनके बाक्सर बलवाके साथ साथ शाहज़ादा तुआनका नामभी अब किसी से छिपा नहीं है॥ यह भूत पूर्व महाराजा चीन नरेश (टुङ्गची) तुङ्गजय और वर्तमान महाराजा काङ्गसू के भतीजे और भावी भूपति (युवराज) के पिता हैं। अर्थात् चीन महारानी दिवाकर शशीने इन्हींके पुत्रको युवराज नियत कियाहै॥

बाक्सरों का ज़ोर जब बहुत ही अधिक बढ़ता गया! और शाहज़ादा तुआन उनके सरदार बन गये तब चीन दरबार पर बड़ा आतङ्क सा छा गया! जो महारानी बड़ी विचक्षणता से सब काम करने में बड़ी कुशल समझी जाती थीं वही आज इस उलट फेर से नितान्त कर्तव्य मूढ़ होगई॥

विदेशी महाशक्तियों से विरोध करके सामना करना महा कठिन काम है। इधर बाक्सर भी बड़े प्रबलहो उठेहैं बाक्सरों के कामभी तो अनुचित नहीं जान पड़ते? परन्तु इन "धार्मिक शान्ति संयोजकों" की तरफ़दारी करने से समस्त संसार का विरोधी बनना होता है॥

महारानी शशी चालीस करोड़ नर मुंडों की जगद्धात्री देवी हैं, इस महा संकट में भी उनको एक बात सूझ पड़ी! उन्हों ने वही करने में कल्याण विचारा॥

महारानी जीने प्रिंसतुआन को सिंहासन सन्मुख बुलाया और वात्सल्य स्नेह पूर्वक उनको सब ऊंचनीच समझाकर कहा कि देखो वत्स! इस विशाल राज्य में आज अपनेही दोदल उपस्थित होगये हैं! घरही में मत भेद होने से कल्याण का क्या भरोसा? विदेशी मंत्रणाभवन चीन (Chinese foreign office) के प्रधान प्रिंस चिङ्ग विदेशियों के पक्ष में होकर एक तरफ खींचते हैं। और तुम बाक्सरों के तरफ़दार होकर दूसरी ओर को झुकते हो! इस खींचा तानी में क्या भला होसकता है?

हमको विश्वास है कि तुम्हारा बाक्सर दल खूब प्रबल अवश्य है, परन्तु विचारकर देखो तो क्या तुम समस्त संसार का मुक़ाबला करने की सामर्थ्य रखते हो? सोचना चाहिये कि एकबार उलझ पड़ने से फिर सुल-

झना असंभव होगा! तुम्हारा सहस्रों वर्षों का सुरक्षित पैतृक राज सिंहासन संकट में पड़जायगा! सो तुम को बहुत समझ बूझकर काम करना चाहिये! सो राज्य की ओर से तुमको हम "विदेशी मंत्रणाभवन चीन" का सभापति नियत करती हैं। समस्त अधिकार तुम्हारे हैं। देश तुम्हारा राज्य तुम्हारा और यह सिंहासन भी तुम्हारेही प्रिय राजकुमार का है। सो तुम से जैसे जिसभांति होसके अपने पैतृक सिंहासन की रक्षा करनी चाहिये और ऐसे वर्ताव करना उचित है जिससे तुम्हारे राजकुमार के मुकुट मणि में झाईं न पड़ने पावै॥

यही सब समझा बुझाकर महाराणी दिवाकर (Dowager) ने प्रिंस तुआन को फारेन आफिस का प्रधान नियत किया॥

इस नवीन अधिकार प्रदान से महाराणी जीको विश्वास था कि शाहज़ादा तुआन ठीक रास्ते पर आजायंगे! क्योंकि इस में उन्हीं का निजभला था। और समस्त बाक्सर समुदाय उनके आज्ञाधीन था। सो वहसब इनकी गति परिवर्तन से अनायासही शान्त होजायँगे!॥

यद्यपि इस परिवर्तन से विदेशी दल बिलकुल असन्तुष्ट हुवा था और इसको राज्य की ओर से बाक्सरों का समर्थन समझा था परन्तु तौभी मान्यवर सर राबर्टहार्ट जैसे निष्पक्ष लोगों ने इसकाम को अच्छा स्वीकार किया। उनको वैसाही भरोसा हुवा था जिस आशापर श्री महाराणी ने यह अधिकार प्रदान किया था!

शोक! कि आशानुरूप फल सदा नहीं मिला करते! इस वेर भी आशाफलवती नहीं हुई!!!

आशा विफल होने का एक कारण भी उपस्थित होगया था:—

समुद्रीय सैन्य सामन्तने टाकू क़िलों पर विदेशी दख़ल जमा लेने की घोषणा प्रचारित कर दी!

बाक्सरों का रुधिर इससे खौल उठा!

शरीर में रक्त रहते हुवे क्या वह लोग अपना घर दूसरों के हवाले करके आप मैदान में शान्ति शयन करना पसन्द कर सकते थे?

संभव था कि उपरोक्त शिक्षा दीक्षा के अनुसार प्रिंस तुआन अपनी गति परिवर्तन कर देते और बाक्सर दल भी शान्त हो जाता परन्तु इस घटना के कारण सब प्रबन्ध उलट गये। आशा विफल होगई!

" आतशबाज़ी "

तारीख १३ जून को मिशन गिरजाघर में आग लगाने के बाद बाक्सरोंने अपनी अग्निलोला फिर बन्द नहीं की । आज इस महल्ले में कल उसमें इसी तरह जितनी दूकानों में विदेशी माल का कारबार होता था और जितनी विदेशियों की निज दूकानें थीं वह सब फूंक कर भस्मीभूत कर दी गई !

अवश्यही विदेशियों से मिली दूकानों या कारखानों के जलाने में अन्यान्य निकटवर्ती मकानात भी स्वाहा होगये जो बाक्सरों को बहुत अभीष्ट नहीं था परन्तु लाचार उन्होंने यही कहकर सभों को भस्म होने दिया :—

को न कुसंगति पाय नसाई ॥

इसीतरह आस्ट्रियन—इटालियन-डच-और फ्रेंच लिगेशन-व्यापार इन्स्पेक्टरी महल—डाक विभाग और कालिज के मकानात-और* मिशनरी पादड़ियों के सिया सुन्नी—टेंगसी कोढ़—अनार्य्य अढ़तिया—और जंगसेनी गिरजे तथा रूसी चीना और चीनाशाही बैंक इत्यादि इत्यादि सब फूंक कर चापट कर दिये गये !

विदेशी मंत्रिदल जिन मकानों में रहकर उनको सुरक्षित रखने के उपाय में था उनके आसपास का लगाव जुदा करने के लिये खुदही दीवालों को खोदकर गिरा गिरा के आग लगादेना पड़ा था ॥

सो सब ओर पीकिन में आगही आग होरही थी !

इस प्रलयकारी आग ने बड़े बड़े धनी मानी महलों और बस्तियों को जिन में एक समय भीड़भाड़ से देह छिलतीथी आज खाक सियाह वीरान और भस्म की ढेर बना दिया !!!

लिगेशन दल के लिये तो प्रत्येक घंटा प्रलय और प्रत्येक रात्रि महाप्रलय की सूचना देती थी ।

यह लोग कैसी विपत्ति और संकट में थे पाठक गण बिना कहेही जान सकते हैं ॥

---

* Missionary primises Hsiao shun, Tengshih, kourh, yen, erh, Erhtiao, Junghsien, Etc Etc.

बचाव का प्रबन्ध ॥

तारीख २० जून को जब लिगेशन दल, विदेशी व्यापारी, पादरी दल, चीना क्रिष्टान, आदि सब भाग भाग कर एकठौर होकर सब ओर से घिरगये तब मन्त्रिभवन में ही सब के रहने का यों प्रबन्ध हुवाः—

अलग अलग मकानात अमेरिकन, फ्रैंच, और रशियन वज़ीरों को तथा इन्स्पेक्टरी महकमे को दियेगये। इन्हीं में बेलजियन, इटालियन, और जापानी वज़ीरों के लिये भी स्थान निकाले गये ! स्पेनिश और डच वज़ीर लोग दूसरे निवासियों के घरोंमें हिस्सेदार हुवे ! जरमन वज़ीर अपनेही मकानमें रहे और उन्हींके साथ आस्ट्रियन वज़ीर भी जारहे ॥

पादरी लोगों ने लिगेशन के गिरजे में शरण ली उसीके सन्मुख दो बड़े बड़े दोमंजिले मकानथे उनमें देशी पादड़ी अर्थात् बेधरम चीना लोग भरेगये।

विद्यार्थियों की कोठरियों में अन्यान्य सब विदेशियों को यथाक्रम स्थान दिये गये !

विदेशी आश्रितों की संख्या छःसौ से कम न होगी। और चीना क्रिष्टानों की संख्या एक हज़ार ॥

कुछ चीना परिवारों की भी रक्षा की गईथी उनकी संख्या बालबच्चों समेत दोहज़ार के लगभग होगी।

बाक्सरों ने सर्व प्रथम अपने इन्हीं " बेधरम " भाइयोंको परमधाम पठाना चाहाथा इसीसे वह सब मन्त्रियों की शरण आये और रक्षा पाई थी।

श्रीमती मेडेमचामट (चामुण्डा देवी ?) ने कुछ चीना परिवारों को बड़े जोखिम से बचायाथा वह सबभी रक्षामें लियेगये !

ता० १५ जून को, एक युवक " डूप्रे " सत्रह वर्षकी अवस्था का लड़का बाहर से आता था कि मार्ग में एक मन्दिर के निकट इसने कुछ गुलगपाड़ा सुना। युवक निर्भयरूप से मंदिर में गया और देखा कि कई बाक्सर लोग तलवार लिये कुछ चीना ईसाई परिवारों को जो संख्या में २०-२५ होंगे बलिप्रदान करने को उद्यत होरहें हैं !

इसने तुरन्त वीर रूपसे गर्जकर बाक्सरों को डांटा और तत्काल अपनी रिवालवर (पेशतौल) से तीनचार फायर विना क्षणेक विलम्बके दागदीं जिससे दो तीन बाक्सर गिरपड़े और उनमें खलबली पड़गई !

सब भाग निकले! बीसियों वाक्सरों से एक वीर वालक डूब्रे का पकड़ना न बनपड़ा! सच है हिम्मतवर के आगे कम हिम्मतों की एक नहीं बिसाती। अन्ततः डूब्रे ने उन दोदर्जन चीना क्रिष्टानों को बचा लिया और अपने साथही लिगेशन भवन में ले आयाथा॥

इन लोगों को भी यहीं पनाह दीगई॥

सब आश्रितों ने मिल जुलकर समयानुकूल बचाव का सब प्रबन्ध करलिया, यद्यपि स्थान की संकीर्णता–आदमियों की अधिकता–आराम का अभाव और खाने पीने, सोने बैठने, की तकलीफ़—आदि सभी तरह की बेआरामी थी तथापि सुनियम से इसतरह का प्रबन्ध करलिया गयाथा। कि सब का उसी में सुविधा के साथ कालक्षेप होने लगा। और सब लोग दृढ़ संकल्प होगये कि प्राण रहते इस स्थान को सुरक्षित रखकर बराबर लड़ते रहेंगे। चाहे जिसको जितनी तकलीफ और वे आरामी थी परन्तु सभी एकही नौका के आरोही और एकही मार्ग के यात्री बन रहे थे इस कारण सभों में इतनी प्रीति–सहानुभूति–सहिष्णुता–वीरता–कार्य परायणता और साहस आगया था कि आशातीत योग्यता से सब कार्य्य होने लगे!

लेडी लोग (स्त्रियां) स्वयं खुले आंगनों की जलती धूप में खाना पकाने का कुल काम अपने आप करती थीं॥

लिगेशन के आसपास की कई दूकानों से खाने पीने के सब सामान पहिलेही ढोढोकर इकट्ठा कर लिये गये थे। आटा, चावल, मक्खन, मांस, वगैरः बहुतायत से इकट्ठे होगये थे॥ और लूट लूटकर कपड़ों के थान भी बहुत से रेशमी साटन वगैरः भर लिये गये थे जो पीछे शिश्त की आड़ बनाने को बालू के बोरे* बनने के काम आये थे॥ इसप्रकार खाने पीने का सामान करीब छः सात हफ्तों के वास्ते और कपड़े "सैंड बैग" "बारीकेड" बनाने और घायलों और बीमारों के इस्तेमाल के वास्ते पर्य्याप्त इकट्ठे हो गये थे॥

बहुत से खच्चर—टट्टू और भेड़े भी जमा कर लिये गये थे॥

* छोटे बोरों में बालू भर कर एक दूसरे पर धर कर दीवारों पर जमाते हैं उनके बीच में रन्ध्र रखते हैं इन्हीं रन्ध्रों में से गोली चलाते हैं। इसी को सैंडबैग और बारीकेड के मोरचे कहते हैं॥

एक मिस्टर डेयरिङ्ग ने टट्टुओं आदि के वास्ते दाना दलिया भी बटोर लिया था॥

पाठक आश्चर्य न करें जबतक दाना रहा तबतक तो दाना को टट्टुओं ने खाया और जब दाना चुक गया तब टट्टुओं को आदमियों ने खाया॥ यों खाते पीते परस्पर सहानुभूति करते हुवे-छुटकारा मिलने के दिनतक न दाना चारा ही शेष रहा था और न टट्टू खच्चरही बच रहे थे!!!

सबसे अधिक खटका गोली बारूद के कमी की थी! सो अम्युनीशन खर्च करने में सब बातों की अपेक्षा अधिक किफायत करनी पड़ी थी!

लिगेशन पर हजारों गोले गोलियों की वर्षा होती रहती थी परंतु इधर से उनको शान्त करने के लिये एक भी गोली नहीं भेजी जासकती थी जबतक कि कोई व्यक्ति प्रत्यक्षही दीख न पड़ जाय और फायरकारी को "गुलज़री" मारने का विश्वास न हो! क्योंकि एक वेर गोली चुक जाने पर फिर तो प्राणों की रक्षा असंभव हो जायगी? अन्न जल और टट्टू खच्चर रहते हुवे भी "भरी बन्दूक" के विना प्राण कौन बचावैगा?

हमारे हिन्दुस्तान के पंडित लोग जो कहते हैं कि कलियुग में प्राण "अन्न" में रहते हैं सो बिलकुल झूठी बात है॥

हम अपनी आंखों देखी बात कहते हैं कि कलियुग में "प्राण" "भरी बन्दूक" में है। और "महाप्राणता" है "मानलिचर" में॥

कौन नहीं जानता कि एशियाखंड में अन्न बहुत उपजता है?

फिर भी क्या किसी एशियाई में प्राण है? हाय सारा भूखंड ही जब निर्जीव हो रहा है तब कैसे कहें कि अन्न में प्राण बसता है?

और उधर इंग्लिस्तान आदि विलायतों की तरफ देखिये? बरफ के ढेरों पर जहां अन्न तो क्या कांटेदार दरख्त भी बहुतायत से नहीं होते वहां प्राण-दीर्घप्राण-महाप्राण सभी कुछ जो जीव-जीवन-और ज्वलन्त जीवन के लक्षण हैं मौजूद हैं! वहां तो अन्न नहीं किन्तु अन्न के उत्पादक "महापुरुष" मानलिचर "क्रुप" और "मेटफर्ड" विद्यमान हैं!

इसी से कहते हैं-"प्राण" अन्न में नहीं किन्तु "भरी बन्दूक" में रहते हैं!

सो बन्दूक भरी रखने के लिये लिगेशन आश्रितों को बड़ी चिन्ता करनी पड़ी थी॥

गोलियों और गोलों की मार से दीवालों के अनेक भागभग्न प्राय होगये. आवाजों से सभों के कान ऐसे भर गये थे कि कभी कभी जब दो चार घंटे का अवकाश होजाता तो वह सन्नाटा कबर के अन्दरकासा निसलापन जान पड़ता था ! (कबर के भीतर की बात अंग्रेज़ों के ज़बानी सुनी गई है-हमारे सामने किसी कबर से लौटे हुवे ने बयान नहीं कियाहै) ऐसे समय में दीवालों और मोरचों की रक्षा के लिये "संत्री काम" कैसा कठिन और खतरे का है सो विना कहे भी जान सकते हैं !

ब्रिटिश लिगेशन में ७५ जहाजी सिपाही थे दस पंद्रह आदमी लिगेशन के और पचीस व्यापारी दल के और सत्तर अस्सी पादरी लोग सब हथियार बन्द । सैनिकडिफेंस (रक्षा) की रीति से सब मोरचोंपर नियत होगये थे। सपोर्ट* और रिज़र्व आदि भी यथा नियम बँटे हुवे थे ॥ इन में बहुधाजन बड़े बड़े अमीर उमराव, ज्ञानी विज्ञानी, लाट वजीर. थे, सब लोग साधारण सैनिकों की भांति पहरा चौकी, लड़ाई भिड़ाई, मोरचाबन्दी आदि कामों में बड़े उत्साह और अनथक मेहनत के साथ लगे हुवेथे ! कभी कभी जब पानी बरसता था और जब धूप बहुतही तेजहोजाती थी उस अवस्था में इनलोगोंकी तकलीफ़ोंका वर्णन करना कठिन बात है ।

अमेरिकन और जरमन लोगों को दक्खिनी दीवाल रक्षाका भार दियागया क्योंकि वह पार्श्वदृढ़ रखना आवश्यक था ॥

ब्रिटिश लिगेशन रक्षा के लिये नहर किनारे की इमारतों का बचावभी आवश्यक था । सो यह काम जापानी करनल शिवा (Sheba) और उनके आदमियों ने बड़ी खूबी के साथ किया ॥

जरमन लोगोंने जब देखा कि दीवाल रक्षा में दनादन पतन होरहा है तब उन्होंने जगह छोड़दी ! उनकी देखा देखी अमेरिकन-लोग भी हटनेलगे थे किन्तु ब्रिटिश दलसे मदद भेजकर सहायता कीगई और स्थान पुनः मज़बूत कियागया ॥

आस्ट्रियन, डच, और इटालियन मंत्रिभवन भी धीरे धीरे हाथसे छूटगये और अन्ततः भस्मढेरी में परिणत हुवे !

फ्रेंचलिगेशन का बाह्य भाग अधिकांश बाक्सरों ने लड़ते लड़ते छीनलिया था परन्तु मध्यभागकी रक्षा फ्रेंचलोगोंने उत्तमता और दृढ़तापूर्वक अन्तपर्य्यन्तकी !

* सपोर्ट = कुमक । रिज़र्व = रक्षित दल ।

ब्रिटिश लिगेशन में "जुबिलीव्यल" नामसे एक घंटा लटकता था। जब जब कठिन समयकी सूचना—दुश्मनोंका धावा—या अग्नि प्रकोप—की सूचना सबको देनी होतीथी तब यही घंटा बजाया जाता था ॥ सबलोग अपने अपने प्राणोंको हाथों में लेकर तय्यार होजाते थे ॥

—अनन्तर—

Contimed.

ज्यों ज्यों समय अधिक व्यतीत होता जाता था त्यों त्यों यहां उत्कंठा बढ़ती थी ! लोग सोचनेलगे कि यदि टाकू किलोंपर कब्जा करलिया गया होगा तो अब हमारे उद्धार के लिये एक विशाल दलके पीकिन पहुँचने में अधिक विलम्ब नहीं है !

ता० २० और २५ जून के बीचमें लिगेशनोंपर फायर बड़े ज़ोर शोरसे हुई थी ॥ २५ तारीखको उत्तरी पुलके मीनार परएक सफेद तख्ता खड़ा कियागया जिसपर शाही फरमानके नामसे एक विज्ञापन प्रकाशितहुवा। फरमानका तात्पर्य्य यहथा कि लिगेशनों की रक्षाकीजावै । फायर बन्द करदीजावै और चिट्ठी पत्री का लेनदेन बराबर जारी कियाजावै ॥

फायर बन्द होगई ! लोग सोचनेलगे कि शायद यह लीहंग चंगकी सलाह से हुआ होगा। कोई कोई कहते थे कि विदेशी शक्तियों के सैन्य निकट आगये होंगे उन्हीं के डरसे राजदरबारने यह फरमान निकाला है॥ इसीतरह कल्पनायें होतीथीं ॥

फरमानके मुताबिक लिगेशन की तरफ से प्रार्थना कीगई कि खतपत्र जो कुछ हमारेहों हमको मिलने चाहिये। परन्तु कुछ मिला नहीं !!

"फायर" सिर्फ तीन दिनतक तातील मनासकी। फिर नवीन बलके साथ आरम्भहोगई ! इसबार तोपके बड़े बड़े गोले भी सहायता देनेलगे ! अनेक प्रकार से बचाव और रक्षाके प्रबंध रखतेहुये भी जुलाई के अन्ततक प्रायः ६० हत और सौ से ऊपर घायल हुवे !!!

लिगेशनके सब ओर ऐसा सख्त विकट लगा हुवाथा कि अनेकों यत्न करते रहनेपर भी कोई खबर लिगेशन से टीनसिन या अन्यत्र को खैरियत से निकल नहीं सकती थी !

ता० १८ जुलाई से फायर फिर वन्द होगई ! और २४ जुलाई तक वन्दरही! इन्हीं दिनों ख़बर मिली थी कि करीव तीस वत्तीस हज़ार संयुक्त विदेशी सैन्य दोही चार दिनके अन्तर में पीकिनपर चढ़ाई करनेवाली है॥

संभवतः इसी खबर ने गोली वर्षा वन्द कराई हो !

परन्तु जव कई दिन वीतगये और पीकिन चढ़ाई की कोई और ख़बर नहीं मिली तव शायद वाक्सरोंने चढ़ाई की वातको गप्प समझकर अपनी कारर-वाई फिरसे आरंभ करदी ! इसवेर सिर्फ गोलीकी फायर होतीथी॥

इन्हीं दिनों "पीटाङ्ग गिरजाघर" भी बाक्सरों के घेरे में पड़गया ! और गोली गोळासे उनकी भी भरपूर खबर लीजानेलगी॥

इस अवसर में चीना मंत्रीभवन से कई पत्र आये कि विदेशी मंत्रीलोग चीना भवन में आकर शरनलें परन्तु प्रत्येक के साथ दस आदमी से अधिक न हों और कोई भी हथियारबन्द न हो॥

इन पत्रों पर किसीने विश्वास नहीं किया क्योंकि शरतें भुलावे के प्रकार की थीं॥

एक और पत्र आया कि अब भी सव विदेशी लोग पीकिन छोड़ कर टीन-सिन जाना चाहें तो पहुँचा दिये जा सकते हैं॥

इस पर भी कुछ परवाह नहीं की गई क्योंकि संभव था कि इस वहाने सव को वाहर विवश करके एक तरफ़ से कतल कर डालते !!

ता० २६ जुलाई को सचमुच सच्ची खवर मिली। यह खवर टीनसिन से आई थी। खबर थी कि अगस्त के आरम्भ ही में संयुक्त दल पीकिन पर चढ़ाई करैगा। चढ़ाई किसी भांति रुकनेवाली नहीं है॥

इस खबर से लिगेशन में वहुत कुछ सन्तोष फैला। परन्तु वहुतेरी आशं-कायें भी मनमें उठती वैठती रहीं ! वर्षा आरंभ होनेही चाहती है—यदि जल्द ही वर्षा शुरू होगई, तो फिर विदेशी आक्रमण असंभव हो जायगा ! इधर यदि चिढ़कर चीन सरकारने लिगेशन पर सचमुच धावा करवा दिया तो सब कुछ एक दमही समाप्त हो जायगा ! यही सब विचार मन को वारम्वार अ-धीर करते थे॥

अवरोध के दिनों में जो जो खत पत्र लिगेशन में पहुँचे थे वह यही थे—

१९—जून को-पीकिन त्याग कर चले ज़ाने का नोटिस॥

२१ जुलाई को नानकिंग् वाइसराय का पत्र व्यापार प्रबंध में सलाह की बाबत॥

२५ जुलाई को शांहाई कस्टम् कमिश्नर का पत्र॥

२७-३० जुलाई और ७-१० अगस्त को कुशलक्षेम के पत्र जिन के साथ कुछ सबजी तरकारी भी डाली रूप में शामिल आई थी॥ साथ ही यह प्रस्ताव आया था कि अपने अपने देशों को "सब कुशल" का तार बनाकर हस्ताक्षर सहित भेजदें तो रवाना कर दिये जावेंगे॥

लिगेशन पर फायर का उतार चढ़ाव इस प्रकार रहा किः—

२० जून से २५ जून तक बाहरी मकानों और दीवालों से फायर होते रहे। तीन दिन मोहलत के बाद २८ से फिर फायर आरंभ होकर १८ जुलाई तक बराबर जारी रही। इस बेर बहुतेरे मोरचे भी बन गये थे और दीवारों पर तोपें भी चढ़ा दीगई थीं॥

२८ जुलाई से २ अगस्त तक रायफल फायर हुई॥ फिर तारीख ४ अगस्त से १४ अगस्त तक बराबर रात दिन गोला, गोली, तोप, मशीन, कैनन बालक्रुप शेल-सभी कुछ बरसते रहे!

खास शाही शहर की दीवालों पर से तोपें दगती थीं। आस पास की मीनारों पर तोपें चढ़ी थीं। बड़े बड़े महल्ले मकानात शहर उजाड़ कर मैदान करके मोरचे बनाये गये थे॥

यह सब कुछ होता रहा। सब ओर चीना शाही फौजों के सिपाही बाक्सरों के साथ साथ काम करते दीख पड़ते रहे। तिस पर भी कहा जाता है कि विदेशियों का अवरोध शाही सलाह से नहीं हुवा था!

बात एक प्रकार सच भी हैः-

खास राजधानी में-मुट्ठी भर विदेशी आदमी-सब तरफ से घिरे हुवे-क्योंकर विना वध के बच सकते थे यदि राजाशाही इसके विरुद्ध न होती?

इतने प्रबल विद्रोह पर भी विदेशियों के केवल ६० हत और सौ आहत तथा बीच बीच में मोहलत मिलना-इत्यादि बातें बतलाती हैं कि चीन दरबार विदेशियों को बहुत सताना नहीं चाहता था॥ यदि एक बारगी धावे का

हुक्म इंगित मात्र भी मिला होता तो क्या अवरुद्ध लिगेशन का क्षण भरके लिये भी बच रहना संभव होता?

अनन्तर

Continued.

बड़ी संख्या के शत्रु दल के मुक़ाबिले में थोड़े लोग भी अपनी हिम्मत से कामयाब हो सकते हैं—इसका तो "अवरुद्ध लिगेशन" ने उत्तम प्रमाण दिखलाया॥

घिरे हुवे आदमियों के मध्यमेंही सब प्रकार की प्रबंध कमेटियां नियत कर ली गई थीं यथाः—मोरचाबंदी—सफाई—कमसरियट—जल-मेहनत फटीग-डाक्टरी—इत्यादि सब आवश्यक विभाग अलग अलग नियत कर दिये गये थे। इनमें पुरुष और स्त्रियोंने बराबर भाग लिया था॥

हस्पताल के कामों को स्त्रियोंने जिस उत्तमता के साथ किया वह नियमित चिकित्सालयों से किसी भांति कम न था। जो कपड़े आदि लूट कर भर लिये गये थे वह घायलों के लिये पट्टी और तौलियों के काम आये॥ इस के सिवाय स्त्रियोंने मोरचों के वास्ते सैंडबैग भी तय्यार किये थे। लोग आश्चर्य करते थे कि ऐसे समय में सुई कहां से मिली!

इस अवसर की प्रत्येक जनकी तत्परता-शान्ति-हिम्मत-फुरती-और सहानुभूति सराहने योग्य थी॥

यहां सबके भाग्य एक दूसरे से मिले हुवे थे। सब लोग मानो एकही नौका के समुद्र यात्री थे। अलग अलग अपनी अपनी जानकी रक्षा का भूखा कोई एक भी नहीं था। "सब के भले में अपना भला" प्रत्येक जनका सिद्धान्त था॥

वास्तव में यदि एक एक आदमी अपनी अपनी जान को ही लुकाये हुवे बचता फिरता तो एक एक करके क़तल होगये होते। कोई भी बच न रहता! कारण यह कि अपनी जान के डरसे न कोई मोरचों में लड़ने जाता न दीवालों पर रातों पहरा देने निकलता। न कोई किसी के लिये रोटी पकाता न पानी

भरता ! सब कोई अलग अलग अपना अपना चौका बनाता बस बाक्सर लोग योहीं एक एक को मारलेते !!!

जैसी दशा हिन्दुस्तान की हुई थी !

परन्तु सौभाग्य वश अवरुद्ध लोग हिन्दू नहीं थे !

एक दिन ता० १६ जुलाई को—जहाजी कप्तान स्ट्राउट्स (Capt. Stroutes) और जापानी करनैल शिवा और अखबार नवीस डाक्टर मारिसन मोरचों के प्रबन्ध के वास्ते कुछ खुले स्थान में निकलेही थे कि दुश्मनों की एक गोली करनैल साहब का कोट काटकर निकल गई ! एक दूसरी गोलीने उसी समय डाक्टर मारिसन के जंघाको सख्त घायल किया ! और तत्कालही एक तीसरी गोली ने कप्तान स्ट्राउट्स का बिलकुल कामही तमाम कर दिया !

अंग्रेज़ों के सुपरिचित अख़बार नवीस डाक्टर गिलवर्ट रीड भी घायल होगये थे। परन्तु जल्द अच्छे होगये थे ॥

इसीतरह ज्यों त्यों कर यह विपत्ति के दिन व्यतीत होने लगे !

सब को पक्की आशा बँधगई कि उद्धारक दल अवश्यमेव आताही है। चाहै जल्द आवे अथवा देरको !

ता० ४ अगस्त से १२ अगस्त तक का समय लिगेशन आश्रितों के लिये बड़ाही कठिन था। कई नये मोरचे भी लिगेशन दीवाल के नीचे बनाये गये और नई चीना फौजें भी पहुँच गईं ! यह फ़ौजें शांसी सूबेसे आई थीं !

ता० ९ अगस्त को फायर ऐसी तेजी से होनेलगी कि सब आश्रितों को प्राणों से बिलकुल निर्भय होकर दुश्मन का निशाना बनने के लिये प्रस्तुत होजाना पड़ा ! रह रहकर हर तरफ की भीषणता बढ़तीही जाती थी। बड़ी मुशकिल से सब तरफ की रक्षा में आदमी बांटे गये। दुश्मन के फायर में क्षण क्षण तेजी बढ़ती थी परन्तु यहां पर ज्यों ज्यों दस बीस फायर के बाद अम्यूनीशन की कमी पर निगाह जाती त्यों त्यों निराशा बढ़ती थी ! बड़े संकट का सामना था !

ता० १२ अगस्त को नगर में प्रलय का सा गुलगपाड़ा सुनाई पड़ने लगा। जिन मोरचोंको चीनियोंने बड़ी दृढ़तासे रक्षा कियाथा-इसदिन अनायासही उनमें शिथिलता दीखने लगी !

यह देखकर लिगेशन से कई फायर की वारें की गई जिनका बहुत अच्छा असर हुवा। बहुतेरे आदमी मारेगये ! पीछे ज्ञात हुवा कि स्वयम् शांसी फौजों के जरनैल भी मारेगये !

जरनैल साहब अपने आदमियों को हताश होते देखकर स्वयम् उत्तेजना देने आयेथे—परन्तु फ्रंटलाइन के आदमी तितरबितर होजाने के कारण उनको स्वयं मोरचा छोड़ना पड़ा और उसी अवसर में लिगेशन की गोली से मारे गये !

१२ तारीख की रात को दोबेर ज़ुबिलीब्यल में गोलियां आ टकराईं जिससे तमाम लिगेशनदल में गड़बड़ पड़गया था !

और चीना लोग दल के दल इधर उधर दौड़ धूप कररहे थे जिससे भय होरहाथा कि अवश्यही यह लोग दलवद्ध होकर लिगेशन पर धावा कर देंगे क्योंकि संख्या दिनोंदिन बढ़तीही जाती थी ! यह डर सबपर बहुतही व्याप गयाथा। और सभों में बड़ी बेचैनी छारही थी। रात भर सब लोग स्त्री पुरुष बड़ी शंका और निराशा से जागते और प्रबन्ध विषय कथोपकथन करते एवं पहरा देतेरहे !

अवरोध का अन्त।

बड़ी उद्विग्नता में रात व्यतीत हुई ! रात बीतनेही से क्या ! महाप्रलय का अनुमान तो सवेरेही को था ! सब आश्रित बड़ी दृढ़ता के साथ धावे का प्रतिरोध करने को प्रस्तुत होगये ॥

तोपों की आवाजें बड़े वेगसे सुनाई देने लगीं ! ऐं ! यह आवाजें तो कुछ नई नई जान पड़ती हैं ! क्या उद्धारक दल पहुँच गया ?

सचमुच् ऐसाही है। थोड़ी ही देर में ज्ञातहुवा कि विदेशी संयुक्त सेनाओं ने पीकिन को घेर लिया—तत्कालही खबर मिली कि सेनाओं ने बाहरी फाटक तोड़ लिये !

शहर में खलबली पड़रही है। और लिगेशन आश्रितों के प्राण फूले अंगों नहीं समा रहे हैं !

सचमुच दो महीने का मूसा बिल्लीवाला खेल आज शेष हुवा चाहता है॥

दीवालों पर लगे हुवे पहरे के लोगों ने अंग्रेजी (हिन्दुस्तानी) फौज के कुछ भाग को पूर्वी फाटककी ओर देख पाया। तत्काल सम्पूर्ण लिगेशन भरमें खबर फैल गई!

एक पार्टी ऊपर झंडा खड़ा करने को भेज दीगई और कई फटीग पार्टियां (खोदनेवाले दल) पानी दरवाजे की खाई गिराने के लिये नियत हुई जिसमें अन्दर आने में सुविधा हो॥

समय क़रीब तीन बजे दिन का था कि ब्रिटिश जनरल गेसली तथा अन्यान्य अफसरलोग (मेजर व्हान राजपूत के-तथा अन्य कतिपय अफसर और सैनिक) उपरोक्त मार्ग से लिगेशन में प्रविष्ट होगये!

उस समय का आनन्द वर्णनातीत है॥

दुख रजनी शेष हुई! आनन्द का प्रभात है। सब कष्ट सब दुख बीत गये! खुशी का कहां तक बखान हो!

लिगेशन के सभी आबाल वृद्ध स्त्री पुरुष प्रेम पुलकित होकर सैनिकों से मिलते भेंटते नहीं अघाते थे॥

After sorrows night forlorn.
Brightly breaks a joyful morn.
For our soldiers duty done.
For our triumph nobly won.
Lift your hearts with one accord.
Lift your hearts and praise the Lord.

दुख मयी विषम नैराश्य निशा अब बीती,
है प्रगट प्रभामय प्रात कियो मन चीती।
इत सब सुभटन कर्तव्य जौन निज पाल्यो,
युत धरम समर महि माह शत्रु दल घाल्यो।
तेहि हेत उठहु सब बीर एक चित होई,
करि हृदय प्रफुल्लित भजहु प्रभुहिं सब कोई॥

—संक्षिप्त इतिहास—

चीन वहुत प्राचीन देश है। आधुनिक इतिहास वेत्ता गण ठीक पता नहीं लगा सके हैं कि कव से यह देश स्थित है॥

मसीह के जन्म समय से हजारों वरस पहिले की वात याद कीजिये। ग्रीस और रोम के उन्नत दिनों की वात एवं मिश्र–असीरिया–और वाविलन के शक्ति शाली समय स्मरण कीजिये!

यह सभी उतार चढ़ाव चीनदेश की आँखों के आगे की वातें हैं॥

चीन उससे भी पहिले जमाने से उन्नति और सभ्यता में युवावस्था को प्राप्त था॥

—आवादी—

चीन की आवादी चालीस करोड़ कही जाती है॥

जन संख्या के हिसाव से सन् १८१३ ईस्वी में आवादी छत्तीस करोड़ दो लाख उनासी हजार आठ सौ सत्तानवे थी।

सन् १८४२ ई० में इकतालीस करोड़ छत्तीस लाख छियासी हजार नौसौ चौरानवे हुई॥

और अव अड़तीस करोड़ वत्तीस लाख तिरपन हजार है॥

खास चीन (China proper) के अठारह सूवों की जुदी जुदी आवादी इस प्रकार है:—यथा—

चिहली	...	१,७९,३७,०००	हूनन	...	२,१०,००,०००
शान्तन	...	३,६२,४७,०००	शेनसी	...	८४,३२,०००
शान्सी	...	१,२२,११,०००	कान्सू	...	९२,८५,०००
होनन	...	२,२१,१५,०००	ज़ी चुवान	...	६,७७,१२,०००
क्याङ्गसू	...	२,०९,०५,०००	कानटन	...	२,२७,०६,०००
अन्हुई	...	२,०५,९६,०००	क्वान्हसी	...	५१,५१,०००
क्याङ्गसी	...	२,४५,३४,०००	क्वीचूव	...	७६,६९,०००
चेह क्याङ्ग	...	१,१५,८०,०००	यूनन	...	१,१७,२१,०००
फू क्यीन	...	२,२१,९०,०००			
हुये	...	२,२१,९०,०००	कुल		३८,३२,५३,०००

लगे हाथों दूसरे देशोंकी आवादी भी सुन लीजिये :—

इंगलैंड की आवादी	कोई		तीन करोड़ अस्सीलाख
आयलैंडकी	,,	,,	चवालीस लाख छप्पन हज़ार
स्काटलैंडकी	,,	,,	चवालीस लाख बहत्तर हज़ार
इटाली	,,	,,	तीन करोड़ अट्ठाईसलाख उनचासहज़ार७१४
जरमनी की	,,	,,	पांच करोड़ तिरसठलाख पैंतालीस हज़ार
अमरीका	,,	,,	सात करोड़
जापान	,,	,,	चार करोड़
रूस की	आवादी	कोई	तेरह करोड़ सातलाख
फ्रांस	,,	,,	चार करोड़
हिन्दुस्तान	,,	,,	उनतीस करोड़ छियालीसलाख छासठ हज़ार सात सौ छः ॥

सो आवादी की तरफ देखते हुवे । दूसरे प्रायः सभी देश चीन के सूवों के बरावर जान पड़ते हैं ।

अंग्रेज लोग कहते हैं कि यदि तमाम दुनियां के आदमी एक में मिलाकर खड़े किये जावें तो प्रत्येक तीसरा आदमी पीतवर्ण वाला अर्थात् चीना हिस्से में आवैगा । और यदि दुनियां की सब काली काली नसलें जिनके गिनाने में भी ऊभ आती है अलग निकाल फेंकी जावें तो तीन हिस्सा पीले और दो हिस्सा सफ़ैद आदमी होंगे ॥

आईन ॥

चीना तातारी दंड संग्रह के विषय में एक विज्ञ अंग्रेजने लिखा है:-

Tartar Chinese Penal Code:-When we turn from the ravings of the Zendavesta to the tone of sense and of business of this Chines collection, we seem to be passing from darkness to light; from the drivellings of dotage to the exercise of an improved understanding; and redundant and minute as these laws are in many particulars. We scarcely know any European

Code that is at once so copious and so consistent or that is nearly so free from inticacy, bigotry and fiction. अर्थात्:—

जब हम ज़न्दावस्ता के प्रमत्त प्रलाप से हट कर चीनियों के इस युक्ति और दक्षता पूर्ण गुटके की तरफ झुकते हैं तो मानो अंधकार से प्रकाश की ओर जाते हैं। और सठियाली कहावतों से हटकर समझदारी के मैदान में आते हैं। यह गुटका सब तरह से मुनासिब-और अधिक है। यूरोप की किताबों में ऐसा परिपूर्ण, उलझनों और बनावटों से खाली, निष्पक्ष, धर्म द्वेशातीत ग्रन्थ कदाचित ही कहीं जानने में आया हो॥

—

—इतिहास—

कहते हैं कि चीन का आदि पुरुष एक (प्वांकू) पुण्याक्षु नामक हुवा है। उसके हजारों वर्ष पीछे एक महापुरुष फोही हुये।

इनके बाद और मसीह से तीन हजार बरस पहिले राजाधिराज (वाङ्गती) वाणऋषी हुवे। इन्होंने देश में मानुषीय सभ्यता-पहिये की गाड़ी—व्यापारी गमनागम-गन्धर्व विद्या और गणित का प्रचार किया।

पृथ्वी का रंग पीत वर्ण कहा जाता है सो पृथ्वीपति का परिच्छद भी पीले रंग का नियत हुवा॥ तब से अब तक बराबर राज पताका और राज वसन पीत वर्ण ही के चले आते हैं॥

इनके बहुत दिनों बाद एक बड़े महाराजा (शान) शान्त नामक हुवे॥ चीन का क्रमाबद्ध इतिहास महाराजा (Chow) च्यव से चला है। यह मसीह से ११०० ग्यारह सौ बरस पहिले हुवे॥

इन्हीं महाराजा के समय में महापुरुष कानफ्यूशस हुवे और विद्याग्रन्थ लिखे थे॥

च्यव घराने में ८०० वर्ष राज्य रहा। तिस पीछे साम्राज्य कई भागों में बट कर मांडलिक बन गया था।

तब एक घराना (त्सिन) सिंह नामक प्रबल हुवा और पुनरपि साम्राज्य स्थापित किया॥

इसी खानदान के आदि पुरुषने कहकहा दीवार बनवाई थी॥

और इसी घराने के एक राजाने तमाम पुस्तकालय जलवा दिये थे। जिस से प्राचीन विषयों की आलोचना आजकल और भी कठिन होगई है!

हिन्दुस्तानी राजाओं में भी अपने नाम के संवत् चलाने की धुनने न जानै कितने ववन्डर चला दिये हैं कि प्राचीन इतिहास का क्रम ही ठीक नहीं मिलता!

सन् ९५० ईस्वी में (सूङ्ग) "सुअङ्ग" नामक राजघराना चीन में राज्य करता था। सुअङ्ग महाराजों के समय में ही छापे की विद्या प्रचारित हुई॥

इसके एक सौ वर्ष पीछे इंग्लिस्तान में राज्य स्थापना का ज्ञान हुवा था और पूरे पांच सौ बरस बाद छापे की विद्या इंग्लिस्तान में जानी गई!

ईसाई बारहवीं शताब्दी में चीन का राज्य माङ्गल वंशों में गया। उन्हीं दिनों यूरोप के प्रसिद्ध प्रवासी "मार्को पोलो" ने चीन में यात्रा की थी॥

सन् १३६६ ईस्वी में चीना (Ming) मिङ्ग घराने में राज्य आया। मिङ्ग महाराजोंने राजधानी नानकिङ्ग में नियत की।

सन् १६४४ ईस्वी तक इसी घराने में राज्य रहा।

इस वंश के अन्तिम राजाने कुछ देशी विवाद दबाने के लिये मंचू तातारियों को बुलाया। उन लोगोंने विवाद को दबाया परन्तु राज्य को अपने लिये जयकर लिया!

यही राजवंश अब तक बराबर राज्य करता है। राजधानी फिर भी पीकिन नियत हुई थी जो बराबर अब तक कायम है॥

इस घराने का नाम (Ta Tsing) ता सिंह है॥

—विदेशी बैपारी—

दूर दूर देशों में जाने आने का तारतम्य मुख्य कर व्यापार के हेतु से हुवा करता है। चीन में भी विदेशी लोग इसी मिस से आये।

सन् १५१७ ईस्वी में सर्व प्रथम पोर्टुगीज (पुर्तगाल वाले) लोग व्यापार के लिये चीन में आये। उन दिनों चीन सभ्यता और सौन्दर्य्य में अपनी युवावस्था में था और यूरोप के देशों में आविर्भाविनी शक्ति का प्रायः आरम्भही था सो यहां का व्यापार खूब चमका!

उन्होंने मकाओ नामक स्थान में जोकि कन्टान महानद के मुहाने पर है अपनी कोठी बनाई।

फिर सन् १६२५ ईस्वी में हमारी सुपरिचित ईस्टइंडिया कम्पनी चीन में पधारी और अम्वाय नामक नगर में अपनी आढ़त कायम की ॥

कोई पचास वरस तक यह लोग अपना कारवार वे रोक टोक करते रहे । परन्तु पीछे प्रजा में इनके कारण कुछ ऐसा असन्तोष फैला कि मंचू महाराजों को इन से विरोध करना पड़ा ! और सन् १६८१ ईस्वी में राजाज्ञा से ईस्टइन्डिया कम्पनी की कोठी जला दीगई ! और सब कारवारी लोग देश से निकाल दियेगये !

व्यापार के वड़े वड़े लाभों और उद्योग के स्वर्णोपम परिणामों को जानने वाली ईस्टइन्डिया कम्पनी क्या एक वेर निकाली जाने पर चुप चाप वैठ रह सकती थी ? कदापि नहीं !

सन् १७०२ ईस्वी में ज्यों त्यों करके इसने अपना कारवार फिर भी आरंभ कर दिया ! इस वेर चीन सरकार के हुक्म से विदेशों से आनेवाले जहाजों और मालों पर खूब वड़े वड़े कर लगाये गये ! और निरीक्षण करते रहने के वास्ते एक वड़ा अफसर भी नियत हुवा ॥

विदेशियों के लिये चीन सरकार से वातचीत का यह अफसर विचवानी था और सब तरहकी आज्ञायेंभी उन लोगों को इसी अफसरके द्वारा मिलती थीं ॥

परन्तु यह प्रवंध वहुत दिनों तक नहीं चल सका । एक अफसर दलकेदल विदेशियों और जहाजों का निरीक्षण करने के लिये काफी नहीं समझा गया ॥ सो सन् १७२० ईस्वी में विदेशियों से कारवार करने के वास्ते चीना व्यापारियों की एक सभा संगठित कीगई !

इस के सभ्यों की ज़मानत हुवे विना कोई विदेशी व्यापारी चीन में कारवार नहीं करने पाता था ॥

सन् १७५९ ईस्वी में अंग्रेजोंने चीन सरकार की सेवा में महसूल की अधिकता और उसके घटाने के विषय में अरजी भेजी ।

यह प्रार्थनापत्र लेकर जो दूत दल आया था उसको कन्टान के गवर्नर के हुक्म से टीनसिन में क़ैद कर दिया गया था ॥

सन् १७७१ ईस्वी में महाराजा चीन को ज्ञात हुवा कि विदेशी व्यापार से देश को वड़ी हानि पहुंच रही है । क्योंकि विदेशी लोग चाय और रेशम की खरीद करते हैं और अफीम की विक्री करते हैं–सो जितना धन यह लोग देश

को दे जाते हैं उससे बहुत ही अधिक धन अफीम की बिक्री करके ले जाते हैं॥ सो विदेशी व्यापार की चीजों पर महसूल और भी अधिक बढ़ा दिया गया। व्यापारी सभा अनावश्यक समझ कर तोड़ दी गई! और चांदी की रफ़तनी भी रोक दीगई॥

सन् १७९३ ईस्वी तथा १८१६ ईस्वी में इंग्लिस्तान से चीन दरबार में भेंट नज़राना भेजा गया था। जिसको शाहंशाह चीन ने अपना "करद्राज भेंट" की भांति स्वीकार किया था॥

अंग्रेज लेखक नेविल एडवर्डस (Neville Edwards) अपनी पोथी में लिखते हैं:—

"It makes the blood boil to think that our countrymen were only allowed to trade and did trade on the express understanding that they belong to a subject suppliant state."

इस बात को सोचते हुवे शरीर का रक्त खौल उठता है कि हमारे देशी लोग चीन में केवल व्यापार करने पाते थे और केवल व्यापार करते थे और साफ़ तौर पर यह बात स्वीकार कराये गये थे कि वह एक अधीन करद्राज की प्रजा मेंसे हैं॥

हमारे बाबा तुलसीदासजीने भी तो लिखा है:-

यद्यपि जग दारुण दुख नाना!
सब ते अधिक जाति अपमाना!!

सो जातीय अपमान अंग्रेज लोग अधिक दिनों तक सहन कैसे करते रहते!

सन् १८३४ ईस्वी में ईस्टइन्डिया कम्पनी इंग्लिस्तान की राज व्यवस्था में सम्मिलित होकर "चीन में अंग्रेजी व्यापार" नाम से जारी हुई! और इसके प्रबंध और स्वत्व रक्षा के लिये लाट नेपियर भेजे गये!

चीना व्यापारियों और साधारण प्रजाने उनको भी साधारण वणिक से कुछ अधिक नहीं समझा! और न व्यापार भिन्न कोई स्वत्व उनको प्रदान किया। कितनेही यत्न करनेपर भी लाटसाहब न तो राज दरबारही में समादृत हुवे और न प्रान्तिक गवर्नरों ने उनके लिये कुछ स्वत्व देना स्वीकार किया॥

जातीय अपमान की मर्म वेदना कैसी असह्य होती है यह बात सहृदय पाठक

इसी बात से अनुभव करलें कि लार्ड नेपियर अन्ततः सब भांति अकृत कार्य होने पर बीमार पड़ गये और मकाओ में उनका देहान्त होगया !!!

चीना लोगों का यह विश्वास रहा है कि जैसे सारे भूमंडल को प्रकाश देने वाला केवल एक सूर्य है उसी भांति स्वर्ग के नीचे पृथ्वी पर सारे संसार का केवल एक महाराजाधिराज है। समस्त देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर के राजा लोग सब एकही महाराज के आधीन हैं। चीन सब से बड़ा महादेश है सो चीन के महाराजाही सर्व श्रेष्ठ सम्राट् हैं॥

सन् १८४१ ईस्वी में चीन सरकार की तरफ से एक फरमान अंग्रेज़ी वजीर सर हेनरी पाटिञ्जर को भेजा गया था उसमें लिखा था॥

The Celestial Dynasty, in governing all foreigners without its pale, looks upon them with the same feeling of universal benevolence with which she looks upon her own children".

अर्थात्

सब विदेशियों का समानभाव से शासन करने में चीन महाराज दरबार किसी प्रकार वर्ण भेद नहीं रखते! वह जिस भांति अपने निज सन्तान को कृपा दृष्टि से देखते हैं उसी भांति सब विदेशी जातियों को भी समझते हैं॥

इस फरमान को पाकर सर हेनरी ने उत्तरमें लिखाथा कि:—

The Queen of England acknowledges no superior governor but God and that the dignity, the power, and the universal benevolence of Her Majesty are known to be second to none on Earth.

अर्थात्

इंग्लिस्तान की रानी सिवाय परमेश्वर के अन्य किसी को सर्वाधिराज नहीं स्वीकार करतीं! उनकी शक्ति, महत्त्व, और कृपादृष्टि भी पृथ्वीपर किसी से कम दरजे की नहीं है॥

———

अफीम का झगड़ा !

Opium war.

सन् १८४० ईस्वी में अफ़ीम का बड़ाभारी झगड़ा उठा !

विदेशियों की आमद्रफ्त के साथ साथ चीन में अफीम की आमदनी भी इतनी अधिक बढ़गई कि चीनदरबार को उसके रोकने का शाही हुक्म जारी करना पड़ा ! परन्तु परिणाम ऐसा हुवा जैसा कि किसी बड़ी नदी की प्रबल धार को दीवाल बनाकर रोकने से होता है ॥ नदी की प्रबल जलधारा कहीं न कहीं से अपना मार्ग तो अवश्यही निकाललेगी-चाहै उसके मार्ग में कैसेही बड़े रुकाव क्यों न डाले जावैं ॥

जबतक पानी को निकल जाने के लिये कुछ न कुछ उपाय न किया जावै तबतक दीवालों या रुकावटों से नदी का वेग रोकना असंभव है ॥

सो यही दशा चीन सरकार के अफीम रोकनेवाले हुक्म की हुई !

अफीम की आमदनी चीन में अंग्रेज़ों की मार्फत इसप्रकार हुई—

सन् १७५० ईस्वी में	२०० बकस अफीम आई और बिकी।
,, १७९६ ,, ,,	४००० ,, ,, ,, ,, ,,
,, १८३६ ,, ,,	२०००० ,, ,, ,, ,, ,,

यह सब अफीम प्रजा वर्गों में बिकतीथी। और धीरे धीरे सारी चीनी प्रजा अफीमची बनगई थी। सो अफीम की आमदनी एक नदी की प्रबल धारासे किसी भांति कम नहींथी ! प्रजा अपने दुर्व्यसनों के कारण अफीम के विना रह नहीं सकती थी ! सो एक ओरसे रोकी जाने पर दूसरे अनुचित मार्गसे यह प्रजा के हाथों में पहुंचती थी !

विदेशी अफीम की आमदनी रोकने का उचित उपाय तो शायद यह होता कि चीन सरकार अपने देशही में अफीम की खेती जारी करवा देती अथवा उसके स्थानापन्न कोई अच्छी माजून या शराब निकाली जाती जो विदेशी मालसे दामों में सस्ती और स्वाद में बढ़िया होती तब अवश्यही प्रजाकी रुचि पलट सकती थी। जो हो—

सन् १८४० ईस्वी में जब चीन सर्कार ने देखा कि विदेशी व्यापारी लोग

अफीम जैसी अनावश्यक और विषैली वस्तु बेंचकर देशका तमाम धन खींचेलिये जाते हैं तब राजाज्ञा हुई कि कन्टानमें अफीमके सब विदेशी व्यापारी क़ैद कर लिये जावें और उनकी सब अफीम छीन ली जावे ॥ ऐसाही किया गया। दोकरोड़ चालीस लाख तायल (तायल दो रुपये के बराबर है,) की अफीम छीन लीगई।

अंग्रेज़ महाजनोंने अपनी सरकारको खबर दी और सहायता मांगी। तदनुसार अंग्रेज़ी सरकार ने दो युद्ध जहाज लेकर समुद्री सेनापति को चिट्ठी सहित कन्टान महानद में भेजा।

धूमपोत बे रोक टोक चले आये ! पोर्ट कमिश्नरों ने माल की जांच करने के वास्ते उन को रोका था परन्तु कुछ व्यापार का माल न देख कर और केवल पत्र वाहक समझ कर कोई छेड़छाड़ नहीं कीगई !

सेनापति ने कन्टान के गवर्नर को पत्र भेजा कि जो सौदागरों की अफीम जब्त करलीगई है वह फेर दीजावे और उनको निकाल देनेका हुक्म खारिज किया जावै।

कई दिनतक उत्तर नहीं मिला ! उत्तर के बदले २९ चीना युद्ध जहाज उन दो विदेशी जहाजों को निकाल देने के वास्ते भेजेगये ! अंग्रेज़ लोग भी तय्यार थेही। तुरन्त १७ समरपोत और चारहज़ार फौज कन्टान में पहुँच गई ॥—

युद्ध ठन गया। खूब अग्नि लीला हुई ! परन्तु चीनियों को मैदान त्यागना पड़ा ! सभी जहाज पीछे हटगये ! बड़ी क्षति उठाकर उन्हें हताश होना पड़ा !

अन्ततः सुलह के पैग़ाम चले ! परन्तु अब सुलह की रीतिही बदल गईथी ! जो अंग्रेज़ पहिले केवल अफीम फेर पाने मात्रकी प्रार्थना करतेथे अब चीनियों की कमज़ोरी निश्चय करलेने पर अपने व्यापार का चिरस्थायी प्रबन्ध करालेने की ज़िद करने लगे !

बहुत उलट फेर और खण्ड युद्धों के पश्चात् सुलहनामे की शर्तें तय हुईं— चीन सरकार ने लूटी हुई अफीम का दाम अंग्रेज़ महाजनों को दोकरोड़ तायल अदा किये। व्यापार का पक्का अड्डा बनालेने के वास्ते जनवरी सन् १८४१ ई० में सम्पूर्ण हाङ्काङ्ग अंग्रेज़ों के हवाले करदिया ! और निम्न लिखित बन्दरगाहों में व्यापार के लिये जाना आना खोल दिया गया :—

कन्टान—अम्वाय—फ़ूचाव—निङ्गपो—शांहाई॥

पाठक गण उपरोक्त घटनाओं को अन्तर्दृष्टि से विचार कर देखें—प्रजा की एक तुच्छ कुटेव बुरी आदत से सारे देश के अकल्याण का फाटक किसभांति खुल जाता है कन्टान करतूत उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है॥

जो अफीम राजाज्ञा से छीन लीगई थी उसको समुद्र में फेंक देने की आज्ञा हुईथी परन्तु गवर्नर महाप्रभु ने उस को छिपा कर रख छोड़ाथा और पीछे से अपने देशी व्यापारियों के हाथ वेंचकर करोड़ों रुपये अपने घर में धरेथे॥ इसी से कहते हैं कि सरकार ने एक ओर अफीम की आमदनी रोकने का हुक्म दिया परन्तु दूसरी तरफ राजप्रतिनिधि गणों द्वारा अनुचित रीति से उसका प्रचार होता था॥

उपरोक्त युद्ध में चीन की पराजय क्यों हुईथी इसका भी साफ उत्तर इसी घटना से मिल जाता है। जिस देशके राजकर्मचारी लोग ऐसे अविश्वासी और स्वार्थी हों उसकी युद्ध में विजय कैसे होसकती है?

विद्रोह "महाशान्ति"।

सन् १८४९ ईस्वी में बादशाह (सिङ्फुंग) सैन्य पुंगव गद्दी पर बैठे। इन्हीं दिनों चीन में घरेलू बलवा फैला जोकि सन् १८५० से १८६४ ईस्वी तक जारी रहाथा। इस बलवे का नाम Taeping-the Great Peace अर्थात् महाशान्ति सम्पादक समाज था॥ इस महाशान्ति का चक्कर चौदह वर्षोंतक चलकर छःसौ से ऊपर नगरों और बीसलाख से ऊपर प्राणों का निर्वाणदायक हुवा था॥

सन् १८५० ईस्वी में एक व्यक्ति (हुंसिन चुवान) हंसू चौहान नामक उठ खड़ा हुवा और अपने को समस्त देश में ईश्वरी शक्ति सम्पन्न शाहज़ादा विख्यात किया।

इसने प्रकट किया कि परमेश्वर की आज्ञा से उसका जन्म हुवा है और चीन देशके प्राचीन राजवंश मिङ्ग का उद्धार एवं वर्तमान मंचू वंशका विनाश इसके उत्थान का महाउद्देश्य है। किसी देश वा जाति को वास्तविक सुख और शांति तबतक नहीं प्राप्त होसकती जबतक अपना और अपनी जातिका

राज्य न हो ! मंचू असली चीन राजवंशी नहीं हैं अतएव उनका राज्य भी देश के लिये शान्तिदायक नहीं होसकता। सो परमेश्वर का आदेश है कि प्राचीन मिङ्ग वंशका राज्य पुनरपि स्थापित किया जावे। मिङ्ग वंशों ने चीन की राजधानी नानकिङ्ग नियत की थी सो शाहज़ादा हंसू चौहान ने भी अपना मुख्य स्थान नानकिङ्गको ही नियत किया और धीरे धीरे तमाम देशमें विद्रोह फैला दिया॥

तमाम उत्तरी और दक्षिणी चीन में अनेकों नगर और गांव हंसू चौहान के अनुयायी होगये। अनेकों जिन्होंने मंचू भक्ति दिखाकर हंसू विरोध किया वह सव मटिया मेट करदिये गये॥

जिन दिनों हंसू चौहान का वलवा देश में व्यापरहाथा उन्हीं दिनों विदेशियों की आमदरफ़्त और व्यापार एवं धर्म प्रचार के पचड़े भी चल रहे थे। विना छेद के किसी पोले पदार्थ में हवा पानी कैसे प्रवेश होसक्ता है। सो चीन महादेश की आन्तरिक दशा दर्शाने में यह हंसू हंगामा प्रेत प्रवेश का छिद्ररूप होगया !

सन् १८५४ ईस्वी के जून महीने में अंग्रेज़ी व्यापार के कमिश्नर वावरिंग साहव ने कन्टान के गवर्नर (Yeh) येहसाहव से भेंट करने की अरज़ी भेजी प्रथम तो गवर्नर महाप्रभु ने महीने भरतक अरज़ी पर कुछ हुक्मही नहीं दिया वाद इसके भेंट करने और वातचीत करने से इन्कार लिख भेजा !

दुर्भाग्य वश इस मामले के पांचही महीने वाद टायपिङ्ग वलवा कन्टान में भी पहुँचा। और गवर्नर येह साहव विद्रोहियों से ऐसे भयभीत होगये कि सिवाय वावरिंग साहव से मदद मांगने के और कुछ उपायही न सोच सके।

अंग्रेज़ लोग तो अवसर की ताकही में थे। तुरन्त मदद देनेको हामी भरली परन्तु पलटे में गवर्नर साहव से कन्टान में विदेशी व्यापार की स्वतन्त्रता और वसनेकी आज्ञा चाही ! गवर्नर साहव ऐसे घवराये हुवे थे कि इन सभी शर्तों को उन्होंने स्वीकार करलिया॥

निदान अंग्रेज़ी फौजें कन्टान में उतरीं—वलवाइयों का मुक़ाविला हुवा और वे निकाल दिये गये ! वलवा शान्त होगया॥

अंग्रेज़ी फौजें लौट गईं। गवर्नर येह महाशय ने अंग्रेज़ों के साथ वादा पूरा नहीं किया—वह वादा पूरा करना वास्तव में गवर्नर के आधीन नहीं था।

महाराजाधिराजकी विना आज्ञा विदेशोंके साथ ऐसा प्रवन्ध करना कर्मचारी के लिये अनुचित कार्य्यथा ॥

सन् १८५७ ईस्वी में वलवाइयों ने सैकड़ों अंग्रेज़ और फ्रेंच पादड़ियों को काट कर फेंक दिया था ॥

इन दिनों में चीन के राजदरवार पर दोहरे विरोधियों के दवाव पड़रहे थे! एक ओर हंसू चौहान का टायपिङ्ग (महाशांति) वलवा दूसरी ओर विदेशी व्यापारियों और पादड़ियों के कारण विवाद!

इन बातों से चीन सरकार बहुतही तंग होरहीथी ॥

सन् १८५६ ईस्वी में खास पीकिन राजधानीमें भी विरोधके खत पत्र फैलने लगेथे! तमाम प्रजा में हलचल मचगईथी!

हाङ्काङ्ग की प्रजा में इतना जोश फैलगया था। कि केवल एकदिन ता० ६ जनवरी १८५७ ईस्वीको सिर्फ रोटी बेंचनेवालों ने बिष मिलीहुई रोटीसे करीब चारसौ विदेशियों को विषाक्त कियाथा!

इन सब बातों को ध्यान में धरकर और गृह विवाद के समय को अच्छा अवसर विचार कर अंग्रेज़ों ने चढ़ाई करके लड़ाई करनेही का निश्चय ठान लिया ॥

फ्रांसीसियों के पादड़ी भी पीटे गयेथे सो वह भी अंग्रेज़ों के साथ "अली" (संयुक्त) होगये!

दिसम्बर १८५७ ईस्वी में पांच हज़ार अंग्रेज़ी और एक हजार फ्रेंच फ़ौजें कन्टान पर चढ़ीं!

जो गवर्नर येह-अपनेही वलवाइयों से भयभीत होकर अंग्रेज़ों की शरण दौड़े थे भला वह अब अंग्रेज़ों का सामना करने में कैसे समर्थ होसकते थे?

यत् किञ्चित् युद्ध हुवा। फौजें कटीं—गवर्नर साहव भाग निकले! परन्तु मार्गही में घेरकर पकड़ लिये गये!

अंग्रेज़ों ने उनको कैद करके कलकत्ते भेज दिया! अभागे का वहीं प्राणान्त होगया!!!

दक्षिण चीन का मामला इस प्रकार तय होजाने पर जहाज और फौज लेकर लाट एलगिन साहव उत्तर चीन को भेजे गये! और वह मई १८५८ ईस्वी में "टाकू" किलों को परास्त करते हुवे "टीनसिन" में दाखिल होगये!

यथापूर्व, यहां भी कुछ मारकाट हुई ! अन्ततः सुलह के पैगाम चले ! लाट साहब अपनी फ़ौज शाङ्हाई को हटा लेगये !

बहुत कुछ वाद विवाद के पश्चात् चीन सरकार ने अंग्रेज़ों की शर्तों को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया क्योंकि उन शर्तों के अनुसार कार्यवाही होने में चीन दरबार ने अपने देश की हानि समझी थी !

अंग्रेज़ों ने चिढ़कर फिर दोबारा चढ़ाई की। इस बेर टाकू में बहुत बड़ी लड़ाई हुई ! परन्तु अंग्रेज़ी फौज़ विजय करती हुई फिर भी टीनसिन में दाखिल होगई !

इस बेर महाराजा चीन ने सुलह की शर्तों पर बात चीत करने के वास्ते अंग्रेज़ वज़ीरों को राजधानी पीकिन में बुलाया !

तदनुसार लार्ड एलगिन के सिकत्तर लाट लाक और सरहेरी पार्क अंग्रेजी विज़ारत का कलम्दान लेकर पीकिन को गये !

चीना लोग अंग्रेज़ों के कौशल से इतना चिढ़ रहे थे कि कर्मचारी लोगों ने कर्तव्य मूढ़ होकर धोखाबाज़ी से इन वज़ीरों को क़ैद कर लिया और गले में लोहे के तखते और पैरों में मोटी जंजीरें पहिना कर काल कोठरी में डाल दिया।

हुकुम हो चुका था कि इन के सिर काट दिये जावें परन्तु भाग्य से टीनसिन में खबर पहुंच गई और फोजों ने तत्काल धावा करके तारीख ३० अकतूबर १८६० ईस्वी को पीकिन प्रवेश किया !

राजमहल घेर लिया गया ! लाट लाक और सरपार्क बचालिये गये ! पीकिन विजय स्मरणार्थ अंग्रेज़ी फौजों ने महाराजा का ग्रीष्म भवन जला कर खाक करदिया !

अब बड़ीविचक्षणता और मजबूती के साथ नूतन संधिपत्र बना। टीनसिन सुलह नामे पर राज मोहर हुई ! सभी शर्तें स्वीकार कराई गईं। यहां तक कि खास पीकिन में विदेशियों का मंत्री भवन बनाने और सदा के लिये उनके निरापद रहने का पक्का प्रबंध हुवा ॥

पाठक ! यही संधि भवन सन् १९०० ई० के जून जुलाई महीनों में बाक्सरों द्वारा त्रासित हुवा था ॥

चीन के इतिहासलेखकों ने लिखा है कि यहां प्रायः सदाही समर जारी

रहा कियाहै परन्तु सव कुछ आपुलही की प्रजा में ! एक गांव वाला दूसरे के विरुद्ध—एक नगरवाला दूसरे नगर के विरुद्ध ! और वहुधा लड़ाइयां ऐसी होती रही हैं जिनमें अपनेही किसी राजकर्मचारी के विरुद्ध महाराजा को लड़ाई करना पड़ा है।

किसी सूबे का गवर्नर अपनी प्रबलता के घमंड में आकर महाराजा से विरोधी हो वैठा—उसीपर राज्य की ओर से चढ़ाई करनी पड़ी ! इन लड़ाइयों की गिनती करना मुश्किल है।

इन का दमन या तो नगर के नगर काट डालने से या यदि बलवाई लोग या विरोधीदल प्रबल हुवे तो उनको बड़े बड़े उत्कोच और जागीरें देकर किया जाता था !!!

पाठकगण स्वयम् विचार सकते हैं कि इसप्रकार की कार्यवाहियों से राजा का गौरव कहांतक रक्षित रह सकता है ?

इसी से चीन राज्य दिन दिन दुर्बल होता गया !!!

"टायपिङ्ग बलवा" का उद्देश्य चाहै जैसा रहा हो परन्तु देश के सत्यानाश का वीजारोप उसी से हुवा—इसमें कुछ सन्देह नहीं !

चीन सरकार ने एक राजकीय सेना तय्यार कराई थी जोकि अंग्रेज़ युद्ध विशारद शिक्षकों के आधीन थी।

जुलाई सन् १८६४ ईस्वी में इसी फौजने जब राजकुमार हंसू चौहान से नानकिङ्ग प्रदेश छीन लिया और राजधानी नानकिङ्ग पर वादशाही क़ब्ज़ा होगया तब टायपिङ्ग प्रधान हंसू चौहानने आतमघात करलिया ! और यों धीरे धीरे महाशान्ति का वलवा भी शान्त होगया॥

आधुनिक समाचार।

—*—

(सिङ्ग पुङ्ग)

सम्राट सैन्यपुङ्गव का अगस्त सन् १८६१ ईस्वी में देहान्त होगया ! उनके वाद राजकुमार (टुङ्गची) तुङ्गजय राजाधिराज हुवे। इनकी अवस्था इस समय केवल चारवर्ष की थी !

सैन्य पुङ्गव महाराज के दो रानियां थीं। युवराज तुङ्गजय का जन्म छोटी महारानी से था॥

महाराजा तुङ्गजय की बाल्यावस्थाके कारण (उनकी विमाता) बड़ी महाराणी दिवाकर (Dowager) ने संरक्षणरूपसे राजकाज अपने हाथमें लिया॥

चीनकी पितर पूजा बड़ी कठिन और धर्मानुसार अलंघनीय है। उसी प्रथा के वशवर्ती होकर बालक महाराज और महाराणियों को भी वर्षोंतक व्रत और उपवास करने पड़े! इससे उनके स्वास्थ्य में बहुत बिगाड़ होगया था!

सन् १८७३ ईस्वीमें सोलहवर्षकी वय प्राप्त होनेपर महाराज तुङ्गजय विवाहित हुवे। परन्तु स्वास्थ्य तो पहिलेही से बिगड़ चुकाथा दोहीवर्ष बाद सन् १८७५ ईस्वीमें उनका भी देहान्त होगया! इनकी धर्मपत्नीने भी वैधव्य दुःखको असह्य जान आत्मघात करलिया और कुछही दिन पीछे राजमाता (छोटी महाराणी) ने भी प्राण त्याग किया!!!

महाराज सैन्यपुङ्गवकी बड़ी महाराणी, महाराज तुङ्गजयकी विमाता-श्री महाराणी शशी अब राज्यकी एकमात्र अधीश्वरी रहगई! सो आवश्यकता हुई कि कोई सहगोत्री बालक गोद लेकर सिंहासनपर बैठायाजावै॥

तदनुसार महाराणी ने (Prince Tsai tien) कुंवर शयातीनको गोद लिया। इनकी अवस्था भी इससमय केवल चारही वर्षकीथी! राजगद्दी होनेपर इनका नाम महाराजा कंसू (कान्सू) हुवा॥

गद्दीपर तो महाराज आसीन करायेगये परन्तु वास्तव में चीन देशको अब भी राजाहीन ही रहना पड़ा क्योंकि यह महाराज भी तो बालकही थे! राज काज सब महाराणी दिवाकरके ही हाथ में रहा॥

सन् १८८९ ईस्वी में वयप्राप्त होनेपर महाराज कंसूको सब अधिकार मिले परन्तु प्राचीन प्रथाके अनुसार चलने से फिरभी उनको महल भीतरही की बादशाहत करना कह सकते हैं! क्योंकि पूर्वजोंकी चालके अनुसार चीनके महाराजा बिना विशेष घोषणा के महलों से बाहर नहीं पधार सकते थे। और बाहर निकलनेकी घोषणा होनेपर समस्त प्रजाके लोग अपने अपने घरोंमें बन्द होजाते-न होकि किसीकी दृष्टि महाराजापर पड़जावै!

महाराजाको बाहर निकलने की आवश्यकता केवल वार्षिक श्राद्धकर्म और कई मंदिरों में जाकर पूजा अर्चा करनेही के लिये होतीथी। अन्यथा मंत्रीलोग

राज महल में ही जाकर काम काज की आज्ञा प्राप्त करते थे॥

राजमहल आमोद प्रमोद के सामान और अनेकों स्त्रियादिकों से भरपूर रहता था॥

यह सब सनातन धर्मकी बातें महाराज कंसूके लिये भी सर्वाङ्ग सम्पादित हुई थीं परन्तु इनका मन इनमें कभी नहीं लगता था! यह स्त्रियों में कभी नहीं रतहुवे, सदा राजकाजकी चिन्ताही में व्यस्त रहनेलगे!

पुराने मंत्रीलोगोंने जब देखा कि यह तो विलक्षण प्रकृतिके राजा हैं साधारण वकीलकी भांति हरएक बातकी छान बीन करते हैं तब वहलोग बड़े चिन्तितहुवे और राजमाता शशी के पास जाकर कहा कि महाराजका चित्त ठिकाने नहीं है वह सदा न जानैं किस चिन्तामें रहा करते हैं। न आमोद प्रमोद में मन देते हैं न नाचरंग से प्रसन्न होते हैं। सो उनके चित्त विनोदका उपाय करना उचित है॥

माताकी प्रीति सन्तानपर कितनी अधिक होती है सो कहने की आवश्यकता नहीं है। महाराणी दिवाकरने मंत्रियों को हुक्म दिया कि समस्त देशभर में तलाशकरके सुन्दर सुन्दर स्त्रियां और नर्तकीयां राजमहल में लाईजावैं॥

यह स्वार्थी मंत्रियों के मनही की हुई। ऐसाही कियागया। परन्तु :—

जाको मन बीनकी प्रबीन धुनि लीनभयो,
सो न सुनि कींगिरी की धुनि हरषावई !!

अजान राज माता को यह नहीं ज्ञातथा कि मन्त्री लोग स्वार्थ वश अनर्थ की सलाह देरहे हैं—महाराजा के विचार महत्व सम्पादन की ओर झुक रहे हैं तुच्छ आमोद प्रमोद क्या उनके मन को बहला सकते थे?

एक विद्वान् व्यक्ति (काङ्यूवाई) कन्हाई नामक जो यूरोपीय देशों में रहकर पश्चिमी राजनीतिका पूर्ण पण्डित बन आयाथा महाराजा कंसू का विशेष प्रीतिपात्र हुवा। महाराजा इसकी सलाहको सर्वोपरि मानने लगे। यहां तक कि राज्य में बहुत कुछ उलट फेर करने का महाराजा ने निश्चय करलिया॥

पुरानी प्रान्तिक गवर्नरी प्रथा, ज़िले की मांडरिन रूपी हकूमत प्रथा, और राजकाज परीक्षाके प्राचीन नियम, आदि आदि सभोंको उठाकर नवीन प्रणाली जारी करने के नियम विचारने लगे!

कन्हाई पण्डित की एक सलाह "चायना मेल" के लेखानुसार नीचे उद्धृत है!

" You, the Emperor, I would ask you to remove yourself from the seclusion inwhich you are. Come boldly forward and employ young and intelligent officials. Your present Government is just like a building with a leaky roof, the joints are rotten, and have been eaten by white ants.

It is absolutely dangerous to remain longer in the building. Not only must you take off the roof but you must take down the whole building and even raze the foundations.

How could you expect your present old ministers to reform? They have never had any western education. They have never studied anything thoroughly about civilisation of the present world, and they could not study now if you asked them, they have no erergy left.

To instruct them to carry out reforms is like asking your cook to become your tailor, your tailor to become your cook.

The chief education of china, the study of the classics is useless. The first thing the Emperor must do is to abolish these examinations and establish a system of education on the lines of western countries.

तात्पर्य्य यह है:-

पंडित कन्हाई ने कहा :—

पुरुषा वहवो राजन् सततं प्रियवादिनः।
अप्रियस्यतु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः॥

हे राजन्! आप वड़े भारी देशके महाराजाधिराज हैं! आपको परदानशीनी से वाहर निकलना योग्य है! वीरभाव से अग्रसर होइये और राजकाज में सुयोग्य युवकों को नियत कीजिये!

आप के वर्त्तमान राज्य की दशा उस टपकती हुई छत की भांति है जिसके समस्त जोड़ सड़गये हों और दीमकों ने खालिया हो ! ऐसे मकान के भीतर अधिक देर तक रहना बहुत बड़े भय से खाली नहीं है !

सो आपको न केवल ऐसे मकान की छतही उधेड़ डालना उचित है वरन समस्त घर द्वार एवं नीव पर्य्यंत निकाल फेंकना चाहिये !

इन पुराने मन्त्रियों से नवीन सुधार की आशा क्योंकर की जासक्ती है? उन लोगोंने कभी कोई पाश्चात्य सभ्यता नहीं सीखीहै ! उन्हों ने आधुनिक शिक्षा और नये ज़माने की चालैं बिलकुल नहीं जानी हैं ! नवीन संसार से वह लोग नितान्त अनभिज्ञ हैं !

यदि महाराज उनको यह सब सिखाना चाहैं तो वह सीख भी नहीं सकते ! उनमें शिक्षा ग्रहण की शक्तिही शेष नहीं रही है ॥ उनको नवीन नियम सिखलाना वैसाही होगा जैसा कि आप अपने रसोइया को चाहैं कि दरज़ी बनजाय। और दरज़ी को रसोइया बनाना चाहैं !

चीन की प्रधान शिक्षा प्राचीन शास्त्रों में होती है। यह साम्प्रत अनावश्यक वा अपर्य्याप्त है !

सो महाराजाधिराज को प्रथम कार्य्य यह करना चाहिये कि परीक्षा की प्राचीन प्रथा उठा कर पश्चिमी रीति नीति से नवीन शिक्षा प्रणाली प्रचारित करैं ॥

प्रिय पाठक वृन्द ! ऊपर की शिक्षा को कृपाकर दुबारा पढ़ जाइये ! और अपनी सम्मति स्थिर कीजिये !

कहिये तो चीन नरेश को क्या कर्तव्य था ?

प्राचीन मंत्रियों की रायपर चलकर महलों में चुहल करना उचितथा अथवा इस नये पंडितकी बात मानकर तमाम पुराने रस्म रवाजों और रीति नीतों में उलट फेर करना उचित था ?

प्रत्यक्ष देखने में तो यही आया है कि संसार के साथ साथ नये नियमोंपर चलकर जापानदेशने पूर्ण उन्नति सम्पादन को और पुराने ठूंठपर लटकते रहने के कारण चीन देश सब प्रकार हीन होकर ऐसा कुचलगया कि सँभलना दुःसाध्यसा होगया है !!!

सो शायद आपकी सम्मति भी महाराज, कन्सूको नवीन नियम स्वीकार करने के पक्षमें हो !

यदि हमारा यह अनुमान सत्य निकलै और चीनका कल्याण नवीन उन्नायक नियमों के स्वीकार करने में आप मानते हों तो एकवात मुझको और कहने दीजिये !

जिस वातसे आप तमाम दुनियांकी उन्नति मानते हैं उसको स्वयम् भी स्वीकार करने में क्यों आगा पीछा करते हैं ?

यदि विचार दृष्टिसे देखिये तो आपके निज देशके व्यौहार वर्तावों की और रीत रस्मोंकी (चाहै उनको धर्म नामसे कह लीजिये) नीव और छत भी वैसी ही खोखली होगई है जैसी कि चीन राजप्रबंधकी ! आपके देशपर वड़े वड़े ववन्डर वीत चुके हैं—वड़े वड़े परिवर्तन—राज्य परिवर्तन—धर्म परिवर्तन—और अनेक भांतिके उलट फेर होचुके हैं जिनके कारण आपके धर्म विश्वास और संस्कार कुछ ऐसे अस्तव्यस्त होगये हैं कि जिन्हें सचमुच न तो आप प्राचीन ही कह सकते हैं और न नवीन !

यदि आप अपने प्राचीन वैदिक समय की शिक्षाओं को सामने धरकर एवं आजकलकी नीतियों को पड़ताल कर अपने धर्म कर्म की जांचकरें तो पावेंगे कि वास्तव में आप वर्तमान समय के वहुतही पिछाड़ी पड़े हुवे हैं !!!

क्या पीछे पड़े रहना आप जैसे विचारवान् सज्जनों को उचित है ?

सृष्टिके आरम्भ (चाहै जव हुवाहो वा मानाजाताहो) समयके शिक्षकों की शिक्षाका आधार प्रकृति और सृष्टिक्रमहीपर था। सो उसमें परिवर्तन कभी होही नहीं सकता ! प्राकृतिक नियम क्या कभी परिवर्तित होसकते हैं ? उनमें उलट फेर नहीं होती ! सो यदि आप अपने धर्म विश्वास और सामाजिक रीतियों का भी आधार उन्हीं शिक्षाओं को वनावैं तो वेशक समयके साथ साथ चलने में कोई भी कठिनाई नहीं होगी ! परन्तु जो धर्म वा जो कर्तव्य व्यौहारादि समय समयपर आवश्यकतानुसार वनाये और वर्तेजाते हैं उनको समयान्तर में वदलने वा घटाने वढ़ाने की आवश्यकता हुवाही करती है। वुद्धिमान् लोग समय के अनुकूल अपने और, अपनी जाति वा देशके व्यौहार वर्तावों को वनाकर सदा उन्नत मस्तक सुखभोग करते हैं। किन्तु जो लो। लकीर के फकीर वनकर वाप दादोंकी लीक पीटते रहते हैं वह खंदकमें

पड़े पड़े सर्द आहैं भरने के सिवाय और कुछ भी नहीं करसकते !

लीक लीक गाड़ी चलै, लीकै चलै कपूत।
लीक छांड़ि कै चलत हैं, सायर शूर सपूत ॥

कन्हाई पंडितने जो कुछ महाराजाधिराज कन्सूसे कहा उसको महाराजाने सब भांति अनुमोदन करनेपर भी सशोक कहाथा कि :—

"यद्यपि यह सब नितान्त सत्य है-किन्तु बड़े मंत्री वा अधिकारी लोगों को कार्य्य च्युत करनेका अधिकार महाराणी दिवाकर शशी अपनेही हाथ में रखना चाहती हैं सो उसमें हस्तक्षेप करना मुझको उचित नहीं है" ॥

महाराजा कन्सूने तिसपरभी परिवर्तन के बड़े बड़े प्रबन्ध कन्हाई की सम्मति अनुसार आरम्भ करदिये ! सन् १८९८ ईस्वी में ॥

सिविल सरविस परीक्षा,—विश्वविद्यालय शिक्षाके क़ायदे—और पाठ्य पुस्तकादिकों के नियम स्कीमें बदल दियीं !

फौजों में पश्चिमी रीतिपर क़वायद परेड जारी करनेकी विशेष आज्ञा दी गई। विदेश से नवीन विज्ञान सम्मत हथियार मँगवाये । और कृषिविद्या के स्कूल खोलवादिये ॥

पेटेन्ट और कापीराइट (स्वत्व रक्षण) के कानून बनाये। कारीगरों, आविर्भावकों, और ग्रन्थकारों के लिये पारितोषिक नियत किये ॥

व्यापार में राज्यकी ओरसे सहायता देने के नवीन नियम और कोष स्थापित किये ॥

देशके विद्वान् लोगोंको समाचारपत्र निकालनेकी आज्ञाहुई और राजनैतिक विषयोंपर वादानुवाद करनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता दीगई ॥

महाराजा की उत्कंठा को इतनेही में सन्तोष नहीं हुवा !

सितम्बर १८९८ ईस्वी में " सुंगली यामिन " अर्थात् वैदेशिक मन्त्रणा सभा (इस सभा का विशेष वृत्तान्त अन्यत्र दिया गया है) के दो बड़े बड़े ओहदे तोड़ दिये । सुप्रसिद्ध लीहंगचङ्ग और मान्यवर चिङ्ग सिंघ ही इस कमी में पड़गये ! इसके अतिरिक्त तीन सूबों की गवर्नरियां तोड़ देने का भी हुक्म दे दिया !

बोर्ड आफ राइट्स (Board of rites) अर्थात् संस्कार सभा (वा कर्मकांड सभा अथवा सूत्रपद्धति ? सभा) के दो प्रधान और चार उपप्रधान महा महो-

पाध्याय पंडितों के बड़ी बड़ी तनखाहों और जागीरों वाले ओहदे भी तोड़ देने की आज्ञा दी !

इन सब परिवर्तनों का हुक्म तो महाराजाधिराजने जारी करदिया परन्तु विना लाठी के भेड़ों का चराना क्या संभव है ? महाराजा की फौजें तो सब उन्हीं प्रान्तिक गवर्नरों के हाथ में थीं !

और प्रजा थी सब जिलेदार मंदारिनों के हाथ में !!

हुक्मों की तामील तत्काल क्योंकर होती ?

तुरन्त महारानी दिवाकर के पास खबरें पहुँचीं ! सभी बड़े बड़े कर्मचारी (जिनके पेट रूपी कबरों में चीन की सब आमदनी सनातन से दफ़न हुवा करती थीं) महाराणी के पास जा पुकारे ! हाय हाय ! बाप दादों का धरम टूटता है ! सनातन धरम रसातल को जा रहा है ! कन्हाई ईसाई के बहकाने से महाराजा पागल होगये हैं ! सचमुच महाराजा का मग़ज विगड़ गया है। रक्षा करो ! रक्षा करो !! नहीं तो राज्य का सत्यानाश हुवा चाहता है !!!

यह सब पुकार-एक स्वर की हाय हाय-सुनकर महाराणी दिवाकर घबरा उठीं ! वह तो नितान्त कर्तव्य मूढ़ हो गईं !

बड़े बड़े अमात्य लोग जो सदा से शुभचिन्तकता के साथ राज काज करते आये हैं क्या वे कुछ छल करके बनावट कर सकते हैं ? महाराणी के हृदय में इन स्वार्थसाधकों की बातोंने विश्वास करा दिया ! उन्होंने मान लिया कि कन्हाईने सच मुच कुछ विदेशी जादू से महाराज का मस्तिष्क फेर दिया है ! नहीं तो विना क़सूर वह क्यों इन बड़े बड़े कर्मचारियों को निकाल देने का हुक्म देते ?

सो उन्होंने आज्ञा देदिया कि महाराजा कन्सू को महलों में कैद करदिया जावै और कन्हाई को पकड़ कर तुरन्त क़तल करडाला जावे !!!

बस फिर क्या था ! कंस कन्हाई तो एकत्रित थे ही, लगी कंस कढ़ेलन होने ! महल पर पहरा बैठ गया ! महाराजाधिराज बन्दीगृह में क़ैद होगये !

पाठक ! इस वृत्तान्त को कहते हुये हमारा तो रक्त खौलने लगता है, पापी पेटार्थी-स्वार्थी कर्मचारियों की कुकरतूत का बदला लेने की हिंसा वृत्ति रोके नहीं रुकती ! और के मन की परमेश्वर जानै !!!

हाय ! इन स्वार्थियों की बनावटी बातों ने माता का मन भी सन्तान की

ओर से फेर दिया! और समस्त देश के सत्यानाश का यहीं से बीजारोप हुवा !!!

हम इस में महाराणी दिवाकर का दोष कैसे दे सकते हैं? वह तो अन्तःपुरमात्र की स्थिर देवी हैं! जब चीन के महाराजा ही सर्वसाधारण में बाहर नहीं निकल पाते थे तब महाराणी की कथा ही क्या? उनका अपने पुराने कर्मचारियों की बातों में आजाना स्वाभाविक ही था!

धिक्कार और शोक तो इन स्वार्थी कर्मचारियों की कपट करतूत पर है!!!

कन्हाई एक विचक्षण व्यक्ति थे! उन्होंने इस गोलमाल का रङ्ग देखतेही देश त्याग दिया और भाग कर प्राण बचाये! परन्तु उन के हतभाग्य कुटुम्ब के छः प्राणी काट डाले गये!!!

महाराजा के दरबारियों में से चौदह आदमी जो नवीन सुधार के पक्ष करने वाले थे सभी कतल करदिये गये!!!

शाही फरमान निकाला गया कि महाराजा कन्सू की कठिन बीमारी के कारण महाराणी दिवाकर ने फिर से समस्त राजकाज अपने हाथमें ले लिया॥ नये क़ानून क़ायदे वगैरः जो महाराज की बीमारी हालत में जारी हुवे हैं सब खारिज समझे जावें॥

महाराणी के हुक्मसे कई पत्र सम्पादकों को प्राण दण्ड दिया गया! विज्ञान ग्रन्थकारों और संग्रहीताओं की तथा शिक्षकों की भी सत्यानाशी की गई! बाप दादों का सनातनधरम फिर से उद्धार हुवा। पण्डितों के पितर फिर भी शीरनी उड़ाने लगे! गवर्नरी और मण्डारिन प्रथा पूर्ववत् जारी करदी गई!

यही सब राज्य रक्षा और सनातनधर्म रक्षा के उपाय मंत्री लोगोंने बतलाये थे जिन्हें करके महाराणीजी ने अपनी समझ में राज्य और राजवंश को निरापद करदिया! परन्तु वास्तव में यही सब सत्यानाशी के कारण हुवे!!!

महाराजा कन्सू बराबर क़ैदही में पड़े रहे। उन्होंने राज्य प्रबन्ध की नवीन वासनाओं को नहीं बदला अतः राजमाता को भी सन्तुष्ट नहीं करसके!

अन्ततः महाराणी जी ने यह निश्चय करलिया कि इनका मानसिक रोग असाध्य है सो कोई नवीन व्यक्ति राजसिंहासन के लिये गोद लियाजावे॥ तदनुसार उन्होंने महाराज कन्सू से सन् १९०० में एक विज्ञापन प्रकाशित कर-

वाया ॥ महाराज ने प्रगट किया कि सालभर के ऊपर से वीमारी के कारण हमने राजकाज महाराणी के हाथ में देरक्खा है। अवतक सेहत नहीं हुई और आशा भी नहीं है । हमारे वीमारी के सवव सन्तान होनेकी भी आशा नहीं है ! इस से हमने महारानी दिवाकर को अधिकार दियाथा कि कोई राजकुमार सिंहासन के लिये युवराज चुनलें ! पूज्य महारानी ने कृपा करके हमारा निवेदन स्वीकार किया और प्रिंसतुआन के पुत्र को युवराज वनाने की अनुमतिदी है । इस विज्ञापन द्वारा हम वड़ी प्रसन्नतापूर्वक उक्त प्रिन्सतुआन के पुत्र को युवराज और महाराजा तुंगजय (Tung chih) का वंशज राज्याधिकारी नियत करते हैं ॥

कहना नहीं पड़ेगा कि यह वही शाहज़ादा तुआन हैं जिन्होंने विदेशी मन्त्रिदल को क़ैद कराके आप वर्तमान तूफ़ान के कारण वने !!!

चीनमें विदेशी शक्तियां ।

चीन में अन्यान्य विदेशी अधिकारों की संक्षेप कथा भी कहदेना यहां उचित जानपड़ता है ॥

सन् १८८३—८५ ईस्वीमें फ्रांस से गड़वड़गठी ! दाक्षिणात्य चीन में "अनाम" की राजधानी टांकिन में फ्रेंच लोग नैतिक और व्यापारिक शक्ति सम्पादन के यत्न में वहुत दिनोंसे थे । " अनाम " चीन नरेशाही के साम्राज्य (Suzerainty) में था ॥

एक वार फ्रेंच सेना टांकिन में गई परन्तु चीनी सरकार की मददसे अनाम नरेश ने उसको पराजित किया था ।

थोड़े दिनों वाद दुर्भाग्यवश अनाम में घरेलू झगड़ा उठा ! और राजा गद्दी से उतार दियेगये !

ऐसे समय को अच्छा अवसर जानकर फ्रांसने राजा की रक्षा की और पुरस्कार में अनाम को अपने साम्राज्य (Suzerainty, में सम्मिलित करलिया ! चीन को इस मामले की कोई ख़वर नहीं दीगई और न चीन ने स्वयम् कुछ ख़वरली !!!

उसी सन् १८८३ ईस्वी के दिसम्वर महीने में फ्रेंच फौज ने (Sontai) सोंटाई

नामक नगर पर चढ़ाई की। यहां चीना फ़ौज से सामना हुवा ॥ इस लड़ाई में जब चीनियों की पराजय हुई और एक (Bac ninh) बकनीह अन्य नगर भी छूटगया तब चीन सरकार ने अपने मंत्री लीहंगचंग को संधि प्रस्तावार्थ भेजा!

फ्रांस ने चीन से एक करोड़ पाउंड हरजा मांगा और क्षमा प्रार्थी होने को कहा॥

यह चीन की ओर से अस्वीकृत हुआ।

फिर लड़ाई हुई! इस बार प्रसिद्ध नगर फूचो (Foochow) का भी पतन हुवा!

परिणाम यह हुवा कि चीन को (Tonquin) टाङ्किन का अधिकार त्याग कर अनाम पर फ्रांस का साम्राज्य स्वीकार करना पड़ा!!!

जिन दिनों फ्रांस से लड़ाई ठन रहीथी उन्हीं दिनों कोरिया में भी गड़बड़ उठी थी! कोरिया भी चीन के साम्राज्य में था॥

कोरिया में जापानी स्वत्व रक्षा के लिये जापान ने सेना भेजी। चीन सरकार ने रोक टोक की। परन्तु पीछे मित्रता पूर्वक यह संधि हुई कि जब कभी आवश्यकता हो तब दोनों देशों की सम्मति से सम्मिलित सेना भेजी जावें।

सन् १८९४ ईस्वी में जापानी व्यापारियों के साथ कोरिया में कुछ अन्याय हुवा। जापान ने चीन से मदद चाही! परन्तु चीन में कुछ सुनवाई नहीं हुई! संधिपत्र पर भी कुछ ध्यान न हुआ! वरन यह कहागया कि जापानी लोग देश त्यागकर निकल जावें!!

इस समय जापान में दल की संख्या इसप्रकार थीः—

अग्रगामी ६०,००० साठहजार

सुरक्षितदल १,१३,००० एक लाख तेरह हजार

अन्यान्य " ८०,००० अस्सीहजार॥

और चीना फौज़ों की तादादः—तीनलाख अग्रगामी दल,

और दशलाख सुरक्षित दल थी॥

जापान को चीन का फरमान मिला कि २० जुलाई १८९४ ई० के दिनतक उनके कोरिया खाली न करने से युद्ध होगा।

जापान ने कुछ परवाह नहीं किया॥

चीन की बारहहज़ार फौज लड़ाई के वास्ते रवाना हुई ।

ता० २३ जुलाई सन् १८९४ ईस्वीको कोरियाकी राजधानी (Seoul) सिवोल तक बीस हजार फौज पहुंचकर गोला गोली बरसाने लगी ! कोरिया के पश्चिम (Chemulpo) चेमलपू नामक नगर के समीप भी अनेकानेक पहुंच गई ॥ खूब घमासान युद्ध हुवा ॥

अगले महीने में (Ping yang) पिङ्गयाङ्ग नामक नगर में भी बड़ी लड़ाई हुई ॥ अन्ततः चीनियों की हार हुई ! समस्त माल रसद् गोली बारूद तोप इत्यादि छोड़ कर चीना फौज भाग निकली !!!

ऐसीही दशा जलयुद्ध की भी हुई थी ! (Yulu river) यूलू नद में जापान ने जो युद्ध कौशल दिखाया था उसे देख सुनकर यूरोपवाले भी दङ्ग रहगये थे ॥

इस लड़ाई के बाद नवम्बर महीने में (Liaotung) लियावतुङ्गनामक टापू भी जीत लिया !

जनवरी १८९५ ई० में जापान ने (Wei hai wei) वईहाईवाई जीत लिया ॥

पंचायती सलाह से कोरिया को स्वतन्त्रता देदीगई ॥

इतनी दुर्दशा उठाकर चीन ने फिर सुलहकी सोची, वही पुराने लीहङ्गचङ्ग सुलहका कलमदान लेकर पहुंच गये !

अप्रैल १८९५ ईस्वी में संधि हुई । शर्तें यह हुईः—

हरजा की पूर्ति के लिये चीन तीनकरोड़ पाउंड जापान को देवै

कोरिया को स्वतन्त्र करदिया जावै ॥

फारमोसा भी अलग करदिया जावै ॥

लियावतुङ्ग जज़ीरा और पोर्टआर्थर पर जापानी अधिकार रहै ॥

सुलह तो इसप्रकार होगई, परन्तु पंचों को यह बहुत अच्छा नहीं लगा क्योंकि जापान की शक्ति बढ़ी जाती थी, पंचायत में यूरोप के सभी पंच शामिल हुवे ।

सब लोग बेचारे चीन की हीनता पर आंसू बहाने लगे ! पाठक ! आप भी तनिक इन सब पंचों को सराह दीजिये ॥

पंचों ने कहा कि लियावतुङ्ग और पोर्ट आर्थर छूट जाने से चीनकी बड़ी हानि होगी ! सो जापान कृपा करके पचास लाख पाउंड लेकर इनको छोड़ दे ।

शुद्ध मानस और चीन के सच्चे हितैषी जापान ने यह बात स्वीकार करली ॥

अब सरपंच महाराजाधिराज रूस ने चीन को हरजा चुकाने के लिये ऋण देकर पोर्टआर्थर को स्वयम् हथिया लिया ॥ और इसप्रकार चीन का हित साधन किया ॥

तदनंतर अंग्रेजी सरकारने जापान की मित्रताके लिये धन देकर "वईहाईवाई" का टापू खरीद लिया ॥ यह भी अंग्रेजी सरकार ने केवल परोपकार दृष्टि से जापान को जहाजी मदद पहुंचाने की इच्छा से किया था ॥

जरमनी के दो पादड़ियों को चीन के किसी गांव में उत्पाती छोकरों ने मार डाला था। सो उसके बदलेमें (Kiaochao) क्याव चाव नामक टापूको जरमनी ने ले लिया ॥

इसप्रकार इस महापंचायत द्वारा चीन में थोड़ी थोड़ी पट्टी दारी के मालिक प्रायः सभी लोग बन गये ॥

जल सेनाधिपति सीमोर ॥

ADMIRAL SEYMOUR.

ता० १७ मई १९०० को विलायत में खबर पहुँची कि चीन के बाक्सरों ने पीकिन से ९० मील की दूरी पर तीन गांव जिनमें चीना किरष्टान रहते थे फूंक कर जलादिया। साठ देशी क्रिष्टान मारे गये और दो हजार प्राण लेकर इधर उधर भाग गये।

दूसरे दिन सम्बाद मिला कि वहां से चालीस मील पर कुङ्गसून नामक एक गांव पादरी और चेलों समेत फूंक दिया गया ॥

अन्ततः अंग्रेजी वज़ीर (Sir Claude MacDonald) मेकडानल साहब ने विलायत को तार भेजा कि मदद के लिये फौज भेजी जावै ॥

तार पहुंचतेही तुरन्त दो जंगी जहाज (Algerine) अलजरीन और (Orlando) अरलन्दो भेजे गये जो मई तारीख २७ को टाकू बन्दर में पहुंच गये ॥

इन्ही जहाजों के आदमी पीकिन में लिगेशन की मदद के वास्ते सर्व प्रथम पहुंच गये थे। जो सब शक्तियों के मिलजुल कुल करीब चारसौ के हो गये थे ॥

विलायतके सिकत्तरने जल सेनाधिपति सरसीमोर को तार द्वारा आज्ञा भेजी कि पीकिन लिगेशन की आवश्यकतानुसार मदद करैं और हाङ्काङ्ग वईहाईवाई-और सिंगापूर से प्रयोजनानुकूल फौज मंगवालें ॥

इसीतरह की खवर अमात्य मेकडानल्ड साहव को भी भेज दी गई।

मेकडानल्ड साहब ने जलसेनाधिपति सरसीमोर को यह तार भेजाः—

"Situation extremely grave. Unless arrangements are made for immediate advance to Peking it will be too late."

अर्थात्

यहां दशा अत्यन्त भयदायक है। यदि तुरन्त पीकिन पर चढ़ाई का प्रबंध न हुवा तो समय जाता रहैगा ॥

जहाजी सेनापति एडमिरल सीमोर ने जव पीकिन से खवर पाई कि मंत्रिदल वड़े संकट में है। यदि शीघ्र उद्धारक दल न पहुंचैगा तो कुशल नहीं है! तव तुरन्त ही उन्होंने कुल फौज इकट्ठी की जो संख्या में दो हजार चवालीस थी। जिस में नौ सौ पंद्रह अंग्रेज और शेष अन्यान्य शक्तियों के थे ॥

ता० १० जून को यह दल टीनसिन में था—उसीदिन पीकिन को रवाना हुवा। विश्वास था कि दूसरे दिन पीकिन में पहुँच कर मंत्रिमंडल की रक्षा करैगी ॥ परंतु रेल लाइन वाक्सरों ने ऐसी तोड़ दी थी कि मरम्मत करतेहुये रेलगाड़ी चलाना पड़ा जिससे दूसरे दिन संध्या को केवल आधे मार्ग तक पहुंच सके! इतने वीच में सड़क मरम्मत के सिवाय वाक्सरों से युद्ध भी करना पड़ा था जिसमें विदेशी ३५ आदमी मारे गये !!

आगे रेलमार्ग विलकुल टूटा था। यात्रा असंभव हो गई!

आगे वढ़ना तो एक ओर रहा अव ऐसा जान पड़ने लगा कि कहीं यह उद्धारक दल ही अवरुद्ध न हो जाय और "पीकिन" उद्धार के पहिले "उद्धारक" उद्धार की आवश्यकता पड़ जाय!

क्योंकि ज्ञात हुवा कि आगे दश हजार चीना फौज जनरल (Tung Pu Siang) तुङ्गपुण्य सिंह के अधिकार में सामना करने को मौजूद है ॥

यह भी सुना गया कि पीछे टीनसिन की ओर से भी वाक्सर लोग पीछा करके घेरने को तय्यार हैं ॥

तार काट डाले गये थे जिस से इधर या उधर खबर पहुंचाना भी असंभव था॥

ता० १३ जून से २३ जून तक यह दल ऐसी दशा में अलग पड़ गया था कि उतने दिनों किसी को कुछ खबर ही नहीं मिली कि वह कहां पर और किस दशा में है॥

वास्तविक समाचार न पाने के कारण भांति भांति की गप्पें उड़ती रहीं॥

कभी सुनाई देता कि वह दल पीकिन पहुंच कर लिगेशन उद्धार में सफली भूत हुवा। फिर यह खबर उड़ती कि वह कठिन घेरे में पड़गया है और गोली बारूद तथा रसद सामान सब चुक गया है॥

पीछे यह भी खबर बड़ेजोर से उड़ी कि बाक्सरों ने घेर कर सम्पूर्ण दल को काट डाला, कोई एक जन भी खबर कहने को नहीं बचा॥

इधर यह उद्धारक दल भी घेरे में था और उधर पीकिन में भी भयानक उपद्रव मचा हुवा था!

इसी अवसर में ज्ञात हुवा कि चीना फौजें सरकारी हुक्म से टीनसिन घेरने को आती हैं। और टाकू के किलों को दृढ़ करेंगी॥

जब जहाजी अफसरों (Naval commanders) को यहबात ज्ञातहुई कि एडमिरल सीमोर को घेरकर यह सब प्रबंध ऐसा रचा जारहा है कि जिसमें उनको किसीप्रकार कहीं से सहायता न पहुँचने पावै तब उन्होंने विज्ञापन दिया कि यदि टाकूके ओर की सब फौजें हटाकर अलग न करदीजायँगी तो चौबीस घंटे बाद टाकू किलोंपर गोला वृष्टि कीजायगी और सर्वनाश होगा॥

चौबीसघंटे बीतने नहीं पाये थे कि ठीक आधीरात तारीख १७ जून १९०० ईस्वी को टाकू किलों से चीनियोंने तोपकी मार आरंभकरदी। सब किलोंसे अनेकों तोपोंकी लगातार फायर से जहाजों को ज्वालमालाच्छादित करने का प्रबंध कियागया!

विदेशी सम्पूर्ण शक्तियों के मिलाकर इससमय बारह सौ आदमी लड़ने को प्राप्त होसके थे॥

सो विदेशी "सांग्रामिक जलयानों" (Men of war) ने भी दनादन झोंकना प्रारंभ करदिया! इससमय आकाश पाताल—दलदल ताल सभी अग्निमय होरहे थे॥

एक अंगरेज़ी और दो रूसी जहाज काम आगये !!!

अन्ततः बड़े कौशलसे यह समुद्रीदल किनारे उतर पड़ा और किलों के पीछे से धावा करादिया !

दो किले उड़ादिये गये और सौसे ऊपर चीनी सैनिक मारेगये ! इसके सिवाय चीनियों की कई जंगी नौकायें (Torpedo boats and cruisers) छीन लीगईं ॥

टाकू युद्धके बाद आशा कीगई थी कि कदाचित चीना लोग समझ जायँगे कि संयुक्त यूरोपसे विरोधकरके सफलता पाना असंभव बात है परन्तु आशा विफलहुई ! चीनियों ने टीनसिन के विदेशी मुहाल को भी घेरलिया जिससे वहांसे कोई मदद आगे को न भेजी जासकै ॥

तारीख २२ जून १९०० ईस्वीको टीनसिन के अंग्रेज दूत (Consul) ने विलायतको तार भेजा कि मदद की बहुत जल्द आवश्यकता है। विदेशी वस्ती पर सब तरफसे चीनालोग शतघ्नी द्वारा अग्नि वर्षा कर रहे हैं ॥

टीनसिन रक्षाके लिये तीन हजार सम्मिलित दल गयाथा परन्तु उसको कठिन युद्ध करनेपर भी २२ जून की लड़ाई में हार उठानी पड़ी थी ! परन्तु दूसरे दिन वही सेना बड़ी शूरता से कड़ी लड़ाई करके शिविर भंगकर सकीथी॥

अब खबर आई कि सीमोर दलके प्रायः दो हजार आदमियों में से ६२ मारे गये—दोसौ घायलहुये—सैकड़ों असमर्थ होगये हैं !

रसद और गोली गट्ठा कम पड़गया है सो वह दल नतो आगेही बढ़ सकता है और न टीनसिन को लौट आनेकी शक्ति रखता है ॥

खबर पातेही तत्काल टीनसिन से मददके लिये सेना रवाना कीगई। और उसकी सहायता से जलसेनेश सीमोर अपने दल समेत दूसरे दिन टीनसिन में वापिस आगये ॥

युद्ध की सच्ची सच्ची बातें अब प्रकट हुई :—

वास्तव में इसदलको बहुत घोर लड़ाइयां करनी पड़ी थीं !

ता० १४ जून को जब आगे पीछे दोनों ओरका मार्ग अवरुद्ध होगया और रेलसे पीकिन यात्रा असंभव होगई तब जल सेनापति विचारने लगे कि अब क्या करना चाहिये ! इतनेही में इनपर वाक्सरों ने आक्रमण करदिया ! एकही दिन

में दो युद्धहुवे ! जिनमें अपना नुक़सान छः हत और अड़तालीस आहत-तथा चीनियों के भी प्रायः सौ आदमियों के मारेगये !

रियरगार्ड (पृष्ठरक्षकसेना) को भी एक भलाचंगा युद्ध करना पड़ा था जिसमें वहुत आदमी घायल होगये थे ॥

इस दशामें एडमिरल सीमोर सिवाय लौटने के और क्या निश्चय करसकते थे ! परन्तु पीछे टीनसिन की ओर भी तो वाक्सर दल मौजूद था ! उधर भी अवस्था भयसे विमुक्त न थी सो जलसेनेशने बड़े धैर्य्य के साथ वहां से निकट टीनसिन जिले के एक शस्त्रागार पर धावा करदिया । और युद्धकरके उसपर अपना अधिकार जमाया ॥

इस शस्त्रागार में नवीन तोप वन्दूक आदि वहुत सामान था ॥ सो इसपर अधिकार करके सम्पूर्ण सीमोर दल ने इसी में शरण ली ।

अन्ततः तारीख २६ जून को टीनसिन से मदद आने पर शस्त्रागार को जलादिया और उसका सब सामान अपने साथ लेकर ३० जून को टीनसिन में वापिस आगये ॥

—टीनसिन वृत्तान्त—

टीनसिन की दशा भी इन दिनों ऐसी होगई थी कि सब विदेशी लोग सोचने लगे थे कि पीकिन उद्धार तो कठिन बात है—यदि वाक्सरों ने अधिक जोर बांधा तो टीनसिन भी खाली करके भागना पड़ैगा—स्यात् टाकू पार टापुओं में कहीं शरण मिल सके ॥

उधर विलायत में कैसी हड़बड़ी पड़रही थी सो एक साहब का कथन सुनियेः—

It was felt that we were abandoning all the bravemen and women who represented Europe in China to their fate—a fate so dark as to be too awful to contemplate.

That the allied forces of all civilised Europe had been forced to the conclusion that it was hopeless to attempt an advance at present and that therefore our flesh and blood in Peking must be abandoned to the remorseless.

Cruelties and outrages of the Chinese without one single effort to save them, seemed too humiliating and dreadful....

अर्थात्

समाचार ऐसे भयावन थे कि ज्ञात होता था अपने सब महावीर और वीराङ्गणाओं को जो समस्त यूरोप के प्रतिनिधि स्वरूप चीन में रहते हैं उनके भाग्य भरोसेही छोड़ देना पड़ैगा! भाग्य भी ऐसा मंद कि सोचते सहम हो !!

समस्त सभ्य यूरोप की फौजी शक्तियों को विवश विश्वास दिलाया जाता था कि ऐसे अवसर में चढ़ाई करना व्यर्थ है!

जिसका परिणाम यह था कि हमको अपने पीकिनस्थ निज रक्तमांस पर चीनियों के सब अत्याचार और निर्दयता के छूरे चलने देना पड़ैगा! और चूं तक न की जायगी !!!

दशा बड़ी भयावनी और पस्ती की थी !!!

पाठक! जिस जाति के लोगों में इस दरजे का स्वजाति प्रेम हो, हजारों कोस दूर के कतिपय व्यापारियों के लिये जो प्रजा इतना व्यस्त और चिन्तित रहती हो—दूर देशस्थ स्वजाति के लोगों पर कष्ट का तनिक ध्यान भी आने से अपने ही निज शरीर पर कष्ट पड़ना अनुभव करते हों उन के स्वजनों पर वा उस जाति पर क्या कभी भयानक दशा आ सकती है?

कदापि नहीं!

टीनसिन की विदेशी बस्ती बिलकुल घेर ली गई थी अनुमान से अस्सी हजार बाक्सर विद्रोही इकट्ठे हो गये थे। सो तीन हजार विदेशी सामना करने को तो क्या निकल भागने को भी समर्थ न थे!

इस अवरोध के समय एक चार वाकट साहब को एक पुरानी कहानी याद आगई थी—वह यह है:—

साहब कहते हैं:—

In a war we had with the Tartars an Irishman, who had one night wandered from his comrades, called out—

"O! I say, O, 've caught a Tartar."

"Well done, bring him along" was shouted back through the darkness.

"Yes, but he won't come!"

"Well then come along yourself" called his comrade.

"So Oi wud" was the Irishman's reply "but he won't let me!"

अर्थात्:—

एक दफै जब तातारियों के साथ हमारा युद्ध हुवाथा तब एकदिन रात्रि के समय एक आयरिश सिपाही अपने साथियों से अलग होकर एक तरफ़ को चला गया॥

वहां से उसने पुकार कर कहाः—

आयरिश सिपाही-अरे सुनो, मैंने एक तातारी पकड़ा है!

साथियों में से एक ने अँधेरे में से उत्तर दियाः-

शाबाश! उसको लेआओ!

आयरिश सिपाही—हां-हां-पर वह तो आताही नहीं!

साथी—अच्छा तो तुमहीं अकेले चले आओ!

आयरिश-अरे! मैं चला तो आऊं पर जब वह आने देय!

सो ठीक इसी कहानी की तरह टीनसिन में विदेशियों की दशाथी!!!

टाकू में थोड़ेही समय में अंग्रेज़ी फ्लीट (जहाजी बेड़े) के और भी जहाज पहुँच गये और उनमें से (Terrible) टेरीबुल नामक जहाजसे दो तोपें और बहुत से सिपाही टीनसिन पहुँच गये॥

सो अब सब विदेशियों की संख्या भी दसहज़ार से कम नहीं रही॥

जिस कौशल से यह सैनिक लोग टीनसिन पहुँचेथे वह सराहने योग्यथा॥

कहते हैं कि चीना फौजोंके सिपाही तो बहुत अच्छेथे। परन्तु उनके जरनैल लोग युद्ध विद्या से बिल्कुल अनजान थे!

सिपाही लोग नवीन नमूने की तोप बन्दूक वग़ैरह के सब काम बखूबी जानते थे परन्तु जरनैल लोग न तो उनको ठीक २ हुक्मही देना जानते थे और न लड़ाई के दावपेंच और ढंगही समझते थे यदि जरनैल लोग भी वैसेही शिक्षित होते जैसे कि उनके सिपाही लोग थे तो लड़ाई निस्सन्देह बहुत कठिन होती। बचाव असाध्य होजाता!!!

तारीख १२ जुलाई को आठहज़ार से संयुक्त दलने टीनसिन चतुर्वेष्टित नगर पर (विदेशियों की वस्ती चीना नगर से वाहर है) धावा किया॥ आशा कीगई थी कि इस धमकी से चीना और वाक्सर लोग डरकर तावेदार वनजायँगे। परन्तु अडवांस (धावा) करतेही मालूम हुवा कि प्राकार पर सहस्रों हथियारबन्द सैनिक भरे पड़े हैं॥

वह लोग अडवांस की आहट पातेही मेघ की भांति गोलागोली वरसाने लगे! जिसको देखकर विदेशियों को भवचकसा होगया!

एक साहव कहते हैं:-

The marksmanship and military qualities displayed by the Chinese on that occasion were a positive revelation.

चीनियों की उस समयकी लक्ष्य दक्षता (निशानेवाज़ी) और युद्ध पटुता वास्तवमें ईश्वरीय थी॥

१३ तारीख को सवेरे दोवजे से रात के आठ वजेतक लड़ाई रही थी। और संयुक्त दल को हार खाकर लौट आना पड़ाथा!!!

चीनियों ने भग्गुलों का पीछा नहीं किया—नहीं तो टीनसिन में दम लेना भी कठिन होजाता!

दूसरे दिन फिर "अटाक" हुवा और जापानी वीरों ने नगर विजय करके "उदयभानु"* पताका नगर शिखर पर गाड़ दिया॥

इस दिन की लूट में ६२ तोपें और पंद्रहलाख तायल चांदी हाथ लगी॥

अंग्रेज़ी फौजोंके वीस मारेगये और तिरासी घायल हुवे। सवसंयुक्त दलके मिलाकर कुल ७७५ आदमी हताहत हुवे॥

टीनसिन में यूरोपियनों की

गुप्त रक्षा॥

जरमन सम्राट् ने अपने राजदूत द्वारा विज्ञापन दिलाया था कि जो चीना आदमी विदेशियों की रक्षा करेंगे उनको प्रत्येक यूरोपीय व्यक्ति की

* उदयभानु = जापानियों की राज पताका॥

रक्षा के लिये एक हजार तायल (अर्थात् १६६ पाउंड) इनाम दिया जायगा॥ तदनुसार टीनसिन में चीनियों ने अपने घरों में छिपाकर आठ सौ विदेशियों को बचाया था। सो जरमन नरेश को एक लाख तैंतीस हजार पाउंड इनाम में देने पड़े थे॥

पाठक! तनिक महाराजाधिराज जरमन नरेश की स्वजन हितैषिता पर ध्यान दें और चीनियों की दशा पर भी टुक निहार लें!

टीनसिन में जापानी करनल अवाया॥

टीनसिन शहर पर हमला के समय जापानी पल्टन के कमांडिंग अफसर करनल कान्ह अवाया ने जिस वीरता और धीरता के साथ अपनी सेना को चलाया और साहस पूर्वक खेत जीता सो सराहने योग्य है॥

शहर पर आक्रमण के पहिले कठिन लड़ाई हो चुकी थी! रात्रि में जापानी फौज शहरपनाह के दक्षिणी फाटक के सामने मोरचा बना कर रही थी॥

यहां तक पहुँचने में पहिले दिन प्रत्येक तोप से २४० गोले फायर हो चुके थे जिसके कारण उस पर हाथ लगाना अग्नि स्पर्श के तुल्य हो रहा था॥

पैदल पल्टनें भी ऐसी ही कठिनाई झेल चुकी थीं। प्रत्येक बन्दूक से दो सौ वीस गोलियों से भी अधिक फायर हो चुकी थीं। सो अब गोली गट्ठा (ammunition) भी बिलकुल कम पड़ गया था! परन्तु ऐसी कठिन अवस्था में भी फौज ने फायर जारी रक्खा। हिम्मत नहीं हारी। और न गोली गट्ठा की कमी से विचलित हुई। यह क्या कम धीरता का काम है?

क्षण क्षण में फायरिंग लाइन के आदमी भूपतित होते थे-उन्हीं के पास की गोलियां ले लेकर साथ के लोग फायर जारी रखते थे॥

(आर्य्यगण! धर्म के पहिले लक्षण "धृति" का सजीव नमूना यही है। स्वजाति और स्वदेश का अटल और अचल प्रेम न होने से क्या ऐसी धीरता किसी में आ सकती है?)

जब शत्रु की फायर का सामना असह्य हो गया तब जापानियों ने अपनी

संगीनों और तलवारों से उसी स्थान पर तत्काल मोरचे वनालिये और निडर भाव से जम गये ॥

अब करनल अवाया की बहादुरी देखना चाहिये ॥

करनल साहब ने अपने आदमियों से कहा—कुछ डर नहीं है—हम लोग विलकुल वचाव में हैं—गोली गोला सव ऊपर से निकल जायँगे । भय त्याग कर हम लोगों को हमला करना चाहिये ॥

इस समय देखा गया कि उन के मन को कोई भी भय वाधा विचलित नहीं कर सकती। क्षण क्षण में अनेकों आदमियों का भूपतन, कप्तान योशी जावा और अन्य अफसरों एवं सिपाहियों का खेत रहना एक ओर और करनल साहब के उत्तेजना वाक्य तथा धीर भाव दूसरी ओर ॥

जब करनल अवाया ने देखा कि अधिक अपेक्षा करने में हानि ही हानि है—विलम्ब में अपनी ही क्षति होती है तब पुकारकर अपनी फौज को कहाः—

चलौ! क्षत्री की मौत मरैं! अपने देश की और जाति की नामवरी के लिये झंडा के नीचे शयन करैं!

और अम्यूनीशन (गोली) नहीं है तो चलो संगीन से शत्रु का सन्मान करैं ॥

इन वचनों ने सिपाहियों की वीरता को दुगना कर दिया और उन में नवीन प्राण संचारित हुवे। सब लोग एक साथ ही प्राण पण से टूट पड़े। और दुश्मन के पावँ उखड़ गये ॥

समरभूमि जापानियों के हाथ रही ॥

सब विदेशी दलपतिगण जापानी करनल अवाया और उनके फौजकी वीरता देखकर चकित रहगये। और बराबर उनकी श्लाघा सराहना करते हैं ॥

टीनसिन विजय

तारीख़ १४ जुलाई प्रातःकाल चारवजे टीनसिन चतुर्वेष्ठित नगरपर हमलाहुवा॥

जापानी पैदल पल्टन—अंग्रेजी मरीन और ब्लूजाकट—और अमेरिकन इन्फेन्ट्री—यही धावा करनेवाली फौजें थीं। शहर पनाह का फाटक दृढ़ प्रतिबन्धों (Obstacles) से सुरक्षित था। दीवाल की ऊँचाई पचास साठ फुट। सो ऊपर चढ़ जाना असंभव था ॥

भीतर प्रवेशका अकेला मार्ग उपरोक्त अटकाव के द्वाराही था ॥

इसद्वार तक पहुँचने में एक छोटा पुल पड़ता था और पुलतक जाने में एक चारसौ गजका खुला मैदान था जहां किसी तरहकी आड़ पनाह मोरचा वगैरः कुछभी नहीं था॥

शहर की दीवालोंपर से चीना लोग बराबर गोला गोली चला रहे थे॥

ऐसेही कठिन समय में जापानी सफरमैना (Sappers) की एकपार्टी आगे बढ़कर अटकाव (Keep) के फाटकतक पहुँचगई। और फाटक को उड़ा देनेके लिये गनकाटन* फैलादिया॥

इस महाकठिन कामको इनलोगोंने जिस स्थिरता और सुघरता से किया वह सर्वथा सराहने योग्य है॥

उड़ानेकी बत्ती को चीनियोंकी फायर ने तीनवार जुदा करदिया। चौथी वेर फिरभी वैसाही हुवा॥

जापानी सिपाहीने यह देखकर सोचा कि इसतरह तो सब परिश्रम वृथाही जा रहा है। इतनी क्षति उठानेपर भी यदि कृतकार्य्य न हुवे तो इस सब कार्य्य वाही का परिणामही कुछ न निकलैगा॥ जल्दी कीगई थी जिसमें चीनियों की गोलियों से अपना अधिक नुक़सान न होता रहै सो तो सब व्यर्थ होता दीख पड़ता है॥

यह सोचकर जापानी सिपाही निर्भय मनसे एक और बड़ेभारी काम के लिये प्रस्तुत होगया!

उसने अपने अन्यान्य साथियों से कहाकि देखो भाइयो ज्यों ज्यों देर होती है त्यों त्यों हमारी हताहत संख्याभी अधिक अधिक बढ़ती जाती है सो अब मैं विलम्ब नहीं होनेदूंगा॥ मुझको आज्ञादो कि मैं स्वयम् अपने हाथों बारूद में जाकर आग लगादूं॥ साथियोंसे उत्तरकी अपेक्षा भी न करके वह वीरवर जापान तुरन्त दौड़गया और दीवासलाई से अपने हाथों बारूदमें आगदेदी। और फाटकको अपने साथ साथही जान बूझ कर उड़ा लेगया॥

अटकाव का फाटक टूटगया। फाटक का पतानहीं। सिपाही के शरीरका भी पतानहीं है॥ परन्तु उसके वीर कार्य्यकी पुनीत कथा जापानका नाम दुनिया में कायम रहते तक क्या कभी भूली जासकती है?

धन्य आत्म समर्पण! सच्चा त्याग और पूरा वैराग्य इसका नाम है॥

---

*गन काटनः—बारूद का मसाला जो सुरंग उड़ाने के काम आता है॥

हमारे वीर शिरोमणि पितामह भीष्मजीने भी ऐसाही कहा है :—

त्यागं श्रेष्ठं मुनयो वैवदन्ति,

सर्वश्रेष्ठं यच्छरीरं त्यजेत् ।

परन्तु आर्य्य सन्तान में आज कौनहै जो ऐसे त्यागका एक अंशभी चरितार्थ कर दिखावै ?

शरीर त्याग—तो बड़ीबात है—हाय हाय आज तो हमसे तुच्छ स्वार्थ का भी त्याग नहीं कियाजाता !

परमेश्वर हमको भी जापान की बुद्धि देते !

गायत्री रटते २ मुंह थकाजाताहै पर हाय ! बुद्धिका अभी कोसों पता नहीं!!!

आजकल बुद्धि समुद्रपार भागगई है । जाकरले आये बिना कैसे आवैगी ?

फाटक टूटतेही फौज़ों ने हमला कर दिया ॥

परन्तु आगे जाकर शहरपनाह का फाटक जड़ा हुवा मिला ॥

अब दूसरी मुश्किल का सामना हुवा !

इस मुश्किल को भी जापानी सिपाही नेही हल किया ॥

भीतर के मकानों से फायर हो रही है । परन्तु जापानी छोटे छोटे सिपाही दीवारों पर चढ़े जा रहे हैं—मानों गोली नहीं कंकरी बरस रही हैं !

क्याही आश्चर्य्य दृश्य !

जलती हुई अग्नि में प्रसन्न मन से कूद पड़ना इसे कहते हैं ॥

इन लोगों ने भीतर कूदकर फाटक खोल दिया ॥ और फौजें अन्दर प्रविष्ट होगईं ॥

हमला करनेवालों की इस प्रकार अचिन्त्य बहादुरी देखकर चीना लोगों के पांव उखड़ गये । और सब भाग निकले ॥

कुछ घंटों बाद रूसी फौज भी उत्तरीफाटक से भीतर पहुँच गई और नगर पर विदेशियों का क़ब्जा होगया ॥

जितनी विदेशी फौजें इस संग्राम में साथ थीं सभी लोग ऊंचे स्वर से जापानियों की प्रशंसा करते थे ॥

इस दिन चार सौ जापानी वीर खेत रहे थे ! जो स्वयम् युद्ध की भीषणता और अवस्था की भयानकता का प्रत्यक्ष प्रमाण है ॥

संगीन की लड़ाई में भी जापानी बड़े श्रेष्ठ हैं। नगर की लड़ाई के पहिले रेलवे स्टेशन की लड़ाई में जापानियों ने सन्मुख समर करके संगीनों से शत्रुदलको सातसौ गजतक खदेड़ा था॥

जापानी सिपाही ने जिस भांति टीनसिन नगर का फाटक उड़ाने में प्राण समर्पण किया उसी भांति सन १८९४ ईस्वी की लड़ाई में किञ्चो (Kinchow) नगर का फाटक उड़ाने में भी किया था॥

इन दोनों में इतना अन्तर अवश्य था कि उस वेर केवल अपनेही देश का स्वार्थ था और इस वेर मसीही मुमुक्षुओं को मुक्ति दिलाने का उद्योग था॥

टीनसिन में जापानियों की विकट वहादुरी देखकर विदेशी फौजी लोग कहने लगे थे कि यूरोपियन शक्तियां संसार में चाहे जिससे युद्ध ठान ले सकती हैं परन्तु जापान से ठान लेना तनिक टेढ़ी खीर होगी॥

पाठक! विचार कर देखो—निर्भय जन क्या नहीं करसकते?

—o—

—टीनसिन जहाजी बारिक पर विदेशी दखल—

टीनसिन शहर के उत्तरी भाग स्थित जहाजी बारिक का किला हाथ में न आने तक आंख के तिनका की भांति खटकने लगा॥

इस किले में अड़तालीस बड़ी तोपें—बहुतेरी पुरानी तोपें और नये नमूने की अनेकों तोपें भी चढ़ी हुई थीं॥

इनकी अविराम फायर से आस पास के विदेशीदल बहुतही तंग हो रहे थे। और मकानों तथा हातों का सत्यानाश हो रहा था॥

जुलाई १४ तारीख के प्रातःकालही ज्ञात हुवा कि शहर पनाह के भीतर से दुश्मन उत्तर की ओर बढ़ रहे हैं॥

जापानी बारहवीं पल्टन की एक कम्पनी उस तरफ के पहरे में थी। उस को ज्ञात था कि रूसी फौज बारिक पर अवश्य धावा करैगी॥ परन्तु थोड़ी देर अपेक्षा करने पर भी जब कुछ पता न चला तब कम्पनी कमांडर लेफ्टिनेंट इन्दु का चित्त चंचल हो उठा। क्यों न होता! जापानी अफसर का मन अवसर को हाथ से जाता हुवा देखकर कैसे स्थिर रह सकता था?

समय की आवश्यकता ने इस भांति आ दवाया कि लेफ्टिनेण्ट इन्दु को

अपने बड़े अफ़सर की सलाह लेने का भी अवसर न रहा ॥ उन्होंने अपनीही ज़िम्मेदारी पर हमला करने का निश्चय करलिया ॥

प्रबन्ध ऐसा किया कि कम्पनी के आधे आदमी पीहो नदी के दूसरे पार भेज दिये जावें जो किले पर संगीन से धावा करें और आधे आदमी इसपार से रैफल फायर करते रहें कि जिसमें धावा करनेवाली पार्टी को सुविधा हो ॥

पीहोपार होने के लिये किश्तियां तलाश की गई पर सिर्फ एकही मिल सकी ॥

इसपर दो तीन आदमी नदी में कूदे कि देखें धार को सहार सकते हैं वा नहीं ? परन्तु निष्फल ! धारा तीव्र और गहिराई अधिक थी ॥

सारजंट आकागेन और कापरल ईश्वरा फिर किश्ती तलाश करने दौड़े । अन्ततः एक चौकोर किश्ती और मिली । दुश्मन के तोप और बन्दूक की अग्नि वर्षा बराबर जारी है । इधर जापानी वीर उसकी तनिक भी परवाह न करके अपने काम में दौड़ धूप कर रहे हैं ॥

ध्यान दो पाठक ! कठिन अंगार वर्षा में जापानी लोग कैसे कूद कूद कर प्रसन्न मन से मानो (आग में) स्नान कर रहे थे । अपने कर्तव्य कर्म में इतना व्यस्त कि आगकी बौछाड़ उनको पानी के छींटे जान पड़ते थे ॥

इससे बढ़कर स्थिरता (Presence of mind) और क्या होगी ?——

एक किश्ती से कुछ लोग आगे पार होगये थे । यह दोनों आदमी किश्ती तलाश के कारण कुछ पीछे रहगये थे ॥

एक क़िश्ती तो इन्हों ने पाई परन्तु न बांस है न थहाने की बल्ली ! कापरल ईश्वराने कहा कि मैं तो खूब तैरना जानताहूं । कहते कहतेही उसने किश्तीकी रस्सी अपनी कमरसे बांधी और बन्दूक गले में डालकर नदी में कूदपड़ा ॥

सारजंट आकागेन तैरना न जानने के कारण किश्ती में सवार होगया और दोनों पारको चलदिये ॥

समय करीब ९ बजे दिनका था । किलेसे फायर खूब साफ़ साफ होतीथी । नदी का जलभी गोलियां गिरने से मानो आग होना चाहता था ॥

नदी के आधे दूरतक पहुँचे थे कि यकायक कमर से बँधी हुई रस्सी टूट गई । और किश्ती बह निकली !!!

यह देखकर आकागेनभी वरदी कसे हुवेही बन्दूक गले में डाल.नदी में कूद पड़ा । और दोनों एक दूसरे के सहारे बड़ी कठिनता से किनारे पहुँचसके ॥

क्षण विलम्बभी न करके यह लोग वायुवेगसे किले के फाटकपर पहुँचगये ॥

कहना पिष्टपेषण होगा कि फाटक भीतरसे बन्दथा और कोई दूसरा मार्ग भी अन्दर जाने का न था ॥

तनिक इधर उधर देखते हुवे इन दोनों वीरोंने देखा कि मट्टीके धुस्समें गोलों से बड़े बड़े दरार होगये हैं । बस फिर क्याथा–उन्हींपर हाथ पांव बढ़ा बढ़ाकर तुरन्त वे दोनों दीवालपर चढ़गये ॥

चीनालोग जोकि पहिलेही भागनेका बन्दोबस्त करचुके थे यह लीला देख कर अत्यन्त भयभीत होगये और भाग निकले !

रणक्षेत्र के यही दोनों वीर मालिक हुवे ॥

इनलोगोंने तुरन्त भीतर उतरकर बलपूर्वक फाटक खोलदिया और इनकी कम्पनीके दूसरे सब लोग भी किलेमें प्रविष्ट होगये । और "उदयभानु पताका" तत्काल किलेपर दोलायमान होनेलगी ॥

इसभांति जहाजी बारिकका किला जिसने विदेशी दलोंको बहुत तंग किया था लेफ्टिनेंट इन्दुकी कम्पनी और सारजंट आकागेन तथा कापरल ईश्वरा के वीरत्वसे जापान के नामपर जयहुवा ॥



जापानी सारजंट नागानिशी ॥

टीनसिन नगर की शहरपनाह पर जब धावा किया गया था उस दिन सारजंट नागानिशी की बहादुरी सराहने योग्य हुई ।

करनल अवाया अपनी पल्टन के साथ अग्रसर हुवे थे कि दीवाल से करीब डेढ़ सौ गज़ पर किले की खाई मिली जिसमें पानी कमर भर था ॥

वहां पहुंचते पहुंचते चीना लोगों ने भी फायर जारी करदी थी ॥ इतने में एक गोली आकर सारजंट हयाशी के कमर पर लगी ॥ फायर की तेजी देख कर करनल साहब ने चाहा कि दुश्मन पर सब तरफ से एकबारगी गोली चलाना आरंभ कर दिया जाय । जिसमें दुश्मन तितर बितर होजावे और अपना बचाव हो ।

परन्तु पल्टन इतनी दूरी में फैली हुई थी कि सब तरफ के लोग हुक्म को

अच्छी तरह से समझ नहीं सकते थे। करनल साहव ने हुक्म सुना दिया परन्तु नदी के दूसरी तरफवाली पार्टी ने उसको समझ नहीं पाया।

उसी पार्टी के एक सारजंट नागानिशी यह देखकर कि करनल साहब के दिये हुवे हुक्मों की तामील बे समझी के कारण लोग पूरी पूरी नहीं कर सकते जिसके सवब वहुत हरज और उलट फेर का डर है। तुरन्तही नदी में कूदपड़ा और पार होके साहव के पास पहुंचा और हुक्म को समझा देने की प्रार्थना की॥

करनल साहव ने उसकी मुस्तैदी और कारगुज़ारी की बड़ी प्रशंसा की और हुक्मों को समझाने के बाद कहा कि यदि तुम्हारे अधीन की पार्टी धावा में कामयाव होगी तो अवश्यही तुमको बहादुरी का तग़मा और वहुत इनाम दिलावेंगे॥

नागानिशी प्रसन्न मुख मुस्कुराता हुवा कर्नल साहव को धन्यवाद देकर अपने पार्टी की ओर लौटा॥ नदी को आधी से अधिक पार कर गया था कि उसी समय दुश्मन की गोली उसकी कुक्षी से पार होगई!!!

धन्य नागानिशी! तिसपर भी वह ज्यों त्यों कर नदी पार हुवा। कसकर पेट बांधा कि खून कम वहै—हुक्म बताने के पहिले कहीं दम न निकल जाय। वड़े वेग से दौड़ता भागता हुवा अपनी कम्पनी में पहुंच गया॥

पहुंचकर बड़ी सावधानी से करनल साहव के सारे हुक्मों को अपने सव साथियों को समझाया। फिर मूर्च्छित होकर गिरपड़ा! प्राण पखेरू उसीसमय सुरधाम को पयान करगया!!!

धन्य वहादुरी। धन्य दिलेरी। और धन्य स्थिर भाव॥

धर्म का सुन्दर सच्चा उपदेश कोई नागानिशी के कर्तव्य से सीखले!!!

शत्रु सन्मुख निद्राराम॥

(A SLEEP IN THE PRESENCE OF THE FOE)

तारीख ३ जुलाई १९०० ईस्वी के दिन जब कि संयुक्त दल ने शत्रु पर हमला करने का विचार स्थिर किया था उस दिन एक विचित्र घटना संघटित हुई!

उस दिन का कार्य्य भार अपने ऊपर लेकर जापानी कप्तान "कौमी नामी"

अपनी कम्पनी सहित एक स्थान में अस्थायी शिविर निर्माण करके थकावट दूर कर रहे थे कि यकायक न जाने किधर से एक गोला कैम्प में गिरा और तत्काल कप्तान साहब को घात किया !!!

कम्पनी के सब आदमियों को इस दुर्घटना से बहुत दुख हुवा और वे शत्रु से कठिन बदला लेने के लिये चटपटाने लगे।

अगले दिन यह कम्पनी नगर के पार्श्ववर्ती मैदान की रक्षा के लिये बांटी गई। परन्तु कठिन आज्ञा दीगई कि बिना अपने फौजी कमांडिंग अफसर के हुक्म पाये हुवे न तो आगे बढ़ें और न फायर करें॥

इस आज्ञा से सैनिक लोग बहुत संतुष्ट तो नहीं हुवे क्योंकि अपने प्यारे कप्तान के मारे जाने का बदला चुकाने की इन के मन में कठिन ज्वाला जल रही थी, परन्तु विवश हुक्म मानना ही पड़ा।

पहरा पिकट आदि द्वारा सब तरफ से रक्षा का पूरा प्रबंध कर चुकने के बाद बाकी आदमियों ने जब तत्काल कुछ काम करने को नहीं पाया तब सब के सब उसी मैदान में पावँ फैला कर सुख की नींद सोने लगे। मानो भविष्यत् के कठिन धावा के लिये शारीरिक स्वास्थ्य की तय्यारी करने लगे॥

यह लोग खूब सो रहे थे तब दूर से पट्रोल (गश्त) करती हुई रूसी फौज के सिगनेलर लोग उधर से निकले।

उन्हों ने तमाम कम्पनी को बे खबर पड़ी हुई और केवल थोड़े से पहरे वालों को इधर उधर लगा हुवा देख कर इन सभों को मरा हुआ अनुमान किया।

समझे कि शायद दुश्मन लोग इन सभों को मार कर भाग गये हैं॥

सिगनेलरों ने तत्काल जापानी कमांडिंग अफसर को इस बात की खबर भेजी॥

बटालियन कमांडर मेजर सुझोरा यह खबर पाकर बड़े चिंतित हुवे और उसी समय सवार होकर अनुसंधान के लिये चल दिये॥

वहां आकर जो देखा सो विचित्र पाया॥

पहरे वालों को चाक चौबन्द और सब आदमियों को जीता जागता परन्तु निश्चिन्त और नींद से जागे हुवे स्वस्थ पाकर मेजर साहब का हृदय आनंद से गद्गद हो गया॥

"सैनिको ! इतना निश्चिन्त भाव ? दुश्मन की तनिक भी परवाह नहीं ? शाबाश ! ऐसे ही निश्चिन्त बने रहो। दुश्मन तुम्हारा कुछ नहीं कर सकैगा" मेजर साहब ने सिर्फ यही बातें सैनिकों को सम्बोधन करके कहीं॥

फ्रेंच वीर नेपोलियन बोनापार्ट दो चार मिनट का भी सावकाश मिलने पर नींद लेता और तुरन्त नवीन कार्य्यों के लिये नवीन मन से तय्यार हो जाता था॥

सो मेजर सुशोरा का मन कितना अधिक सन्तुष्ट और आनंदित न हुवा होगा जब कि उनकी पूरी कम्पनी भर नेपोलियन की ही भांति निश्चिन्त निडर अवस्था में मिली॥

इस बात की खबर जब रूसी अफसरों ने सुनी तब दंग रह गये॥

रूसियों में बड़े ज़ोर से यह चर्चा होती थीः—

Though Japanese are small in stature, they possess a vast amount of pluck and have perhaps no equals in the world. They must never be regarded with contempt.

यद्यपि जापानी लोग शरीर के छोटे हैं तथापि हिम्मत और दिलेरी के भंडार हैं। और शायद संसार में इन के बराबरी का कोई नहीं है। उनका किसी दशा में भी तिरस्कार नहीं करना चाहिये॥

जापानी रिपोर्टर कहते हैं कि रूसी अफसर लोग अपने सिपाहियों को उत्तेजना देने के लिये जापानी सिपाहियों का नमूना देते थे॥

जो रूसी सिपाही लोग पहिले पहिल जापानी सिपाहियों की उपेक्षा करते थे वह इन घटनाओं के बाद उन से बड़े आदर और पूज्य बुद्धि के साथ वर्तने लगे थे॥

सत्य है "वीरभोग्या वसुन्धरा" नरसिंह का आदर कहां न होगा ! हमारे हिन्दुस्तानी लोग जो बात बात पर अपने मान की मरम्मत कराने अदालतों में दौड़े जाते हैं उन लोगों को इस रिमार्क पर ध्यान देना चाहिये॥

जापानी अखबार (जापान टाइम्स टोक्यो) इन बड़ाइयों को सुनकर लिखता है।

We must not become too self-satisfied with the praise of other nationalities. Their praise may be sincere, but remem-

ber that a nation that which is little else than a mutual admiration society is doomed to decline. अर्थात् हमको दूसरी जातियों से अपनी प्रशंसा सुनकर बहुत सन्तुष्ट नहीं होजाना चाहिये। वह प्रशंसा उनकी सच्चे मनसेही क्यों न हो। परन्तु याद रखना चाहिये कि प्रशंसा तभीतक अच्छी है जबतक कि शुभचिन्तकता की दृष्टिसे परस्पर समानभावमें हो। तनिकभी अन्यथा होने से समाज उसकी उपेक्षा करेगा॥

हर्षका विषय है कि जापानी लोगोंकी निगाह सदा सब तरफको बनी रहती है। तभी तो वह आजकलके प्राकृत ज़माने में उन्नति के सोपान पर चढ़रहे हैं॥

हिन्दुस्तानी लोग तेली के से बैल बनकर जिधरको जोतदिये गये उधरही चलते गये—खाई हो या खंदक, आकाशहो वा पाताल! चकनाचूर होगये!!!

कहां है आज तुम्हारा "पृथिव्यां सर्वमानवाः—चरित्रं शिक्षेरन्" (तमाम दुनियांको सभ्यता सिखाने) की विद्या!

हाय! आज तो तुम अपने घमंड के कारण सीखने के योग्य भी नहीं रहगये, सिखाना पाताल पड़ा!!!

शत्रु सन्मुख निद्राराम—हमने अपने पंडितों के "धरम" (धर्म) सम्बन्धी शास्त्रार्थों में "नतस्य प्रतिमास्ति" का अर्थ दोप्रकार से सुना है—एक पक्षवाले कहते हैं कि "नतस्यप्रतिमास्ति" अर्थात् "उस परमेश्वरकी प्रतिमा वा मूर्ति नहीं है"॥

दूसरे कहते हैं-नहीं नहीं ऐसा अर्थ कदापि नहीं है—"नतस्य प्रतिमास्ति?" अर्थात् "क्या उसकी प्रतिमा नहीं है? तात्पर्य्य यह कि है"॥

हमारे हिन्दू भाई इस दूसरेही अर्थ को "पक्का" बताते हैं कहतेहैं कि यह अर्थ काकुन्याय? संगत है॥

सो अपने भाइयों की खातिर से हम भी इससमय यही अर्थ मानलेते हैं:—

और "शत्रुके सामने शयन" के अर्थ भी इसी काकुन्याय के अनुसार करें तो शायद ऐसा होगा कि:-

"क्या हिन्दूलोग शत्रुके सामने शयन नहीं करते? अर्थात् अवश्य करते हैं"॥

सचमुच हिन्दू जातिके भिन्न इस महाप्रशंसाकी पात्र संसार भरमें कोई दूसरी जाति है ही नहीं॥

हिन्दू भिन्न और कौन है जो—आलस्य-निद्रा-अविद्या-कलह-विवाद-और

विरोध-अविश्वास-अंधविश्वास—स्वार्थ-दम्भ-मिथ्याभिमान-मद मात्सर्य्य-इत्यादि दलके दल आर्मी कोरों (army corps) के शिरपर सवार रहते भी वे फ़िक्री की नींद सो रहेहों !

सो हिन्दू ! तुम सचमुच संसार भरसे निराले हो !

परन्तु विदेशी लोग तुम्हारे इस निरालेपनको जंगलीपन कहते हैं ॥

क्या ही होता यदि तुम जापानियों कीसी नींद लेते ?

टाकू दुर्ग की किञ्चित् कथा ॥

चीन देशके वर्तमान उपद्रव के सम्बन्ध में टाकूके किलोंकी लड़ाई और उन का पतन विदेशी संयुक्त फौजोंका आरंभ कार्य्य था ॥

तारीख़ १७ जून १९०० ईस्वी के सवेरे-सवेरे-क्या रात्रि साढ़े तीनवजे संयुक्त दलने उत्तरी किलेपर धावा आरंभ किया :—

Van " वान् " अर्थात् अग्रभाग में	रूसी	२०० सैन्य
2nd line "सेकेंडलाइन" = दूसरी पंक्ति में	अंग्रेज़	२०० ,,
	जरमन	१०० ,,
Rear " रियर " = पृष्ठभाग में	जापानी	२८० ,,

जापानी सेनाके लोग इस प्रबंध से बहुत सन्तुष्ट तो न हुवे क्योंकि उनकी इच्छा संसारभरको अपना वीरत्व हरबात में दिखानेकी प्रबल थी, तिसपर भी विना किसी प्रकारकी आपत्ति प्रगट कियेहुवे प्रसन्न मनसे वे उपरोक्त प्रबंध के अनुकूल कार्य्य में तत्पर हुवे ॥

जापानियों के साथ केवल एक तोप (Field piece) थी।

समस्तदल आगे बढ़ा ॥ आगे बढ़ते बढ़ते सुयोग युक्तिसे जापानी दल "अग्रभाग (Van) " के करीब १०० गज फ़ासिले तक पहुंच गया। उस समय दुश्मन पर तोप फायर की आवश्यकता हुई ॥ फ़ायर किया गया परन्तु कुछ पेंच बिगड़ जाने से फील्डपीस (तोप) नाकाम होगई !

तोभी अडवांस जारी रहा ॥

जिस समय " रूसीवान् " दुश्मन के मोरचों से करीव पांच सौ गज फ़ासिले

पर पहुंचा तब जापानी "रियरगार्ड" उनके साथ साथ मिल गया था ॥ (क्योंकि रियर में आवश्यकता न थी)

किले के ज्यों ज्यों निकट पहुंचते थे त्यों त्यों दुश्मन की तोप और बन्दूक के फ़ायर अधिक अधिक तेज़ होते गये ॥

फ़ायर की तेजी ऐसी अधिक होगई कि किलेपर धावा करने में विलम्ब होने लगा। अधिकन्तु जब निकट पहुंचकर किले का खंदक दीख पड़ा !! निर्विराम फ़ायर जारी है। रूसीवान् आगे बढ़ने का मार्ग नहीं पाता। हताहत संख्या बढ़ रही है।

किले की परिखा अग्निमय हो रही है। इस समय रूसी अग्रगामीदल असमंजस में पड़ गया!

वीर वर जापानी कप्तान हतौरी इस रुकावट को सहन न करसका। तुरन्त निर्भयता से अपने अधीन सैनिकों को "Form into Skirmishing order" युद्धाग्रसर होने का हुक्म दिया। और अपने सब आदमियों सहित गोला गोलियों की अविराम वर्षा में कूद पड़ा। यह वीरभाव देखकर अन्यान्य संयुक्त दल भी पीछे न रह सके ॥

किले से करीब सत्तरगज़ के फ़ासिले पर पहुंचे थे कि कप्तान हतौरी के पेट पर गोली लगी! वीर केशरी का उसी के साथ साथ अन्त होगया !!! परन्तु गिरते गिरते उसने जो कहा सो प्रत्येक साफ़ हृदय पर अमिट अक्षरों में लिखने योग्य है।

कप्तान साहब को गोली लगी देखकर कई आदमी उसकी ओर सहायता के लिये झुके—परन्तु वीर शिरोमणि ने पुकार कर कहा—परवाह नहीं—परवाह नहीं—कुछ नहीं है। अपना काम देखो—पीछे मत फिरो—हर एक आदमी अपना काम करो ॥

(सहृदय आर्य्यपाठक! क्या इस जापानी कप्तान की वसीयतपर तुमभी कुछ ध्यान दोगे—और अपने कर्तव्यकी ओर लगकर झूठे मानापमान और आपुसकी छेदखोदौवल त्याग दोगे?)

जापानी लोग तनिकभी विचलित नहीं हुवे ॥ किलेकी खाईपर एक तंग पुल था जिसपर मूशलाधार गोला गोली की वृष्टि जारी थी। उसी अग्नि में सर्व प्रथम लेफ्टिनेंट श्रेयसी कूदपड़े और फाटक के निकट जा पहुंचे ॥

फाटक बड़ी दृढ़ता पूर्वक अन्दर की ओर से बन्दथा और बाहर पत्थरों से ढका हुवा था॥ लेफ्टिनेंट श्रेयसी तनिक विचारनेलगे कि भीतर जाने का क्या उपाय कियाजाय कि यकायक उनकी तीव्रदृष्टि एकओर दीवालके भग्नभाग पर पड़ी जो जहाजी गोलों से खसित हुई थी। फिर क्या देरथी इसीपर से दीवाल के ऊपर चढ़कर बुर्जपर जा विराजे। और वहीं से पुकारकर कहा "किलेपर सर्वाग्र जापानका दखल हुवा"

इतना कहकर वह किले के भीतर रौनियोंपर से उतरगये। अन्दरसे बहुतेरे चीनालोगोंकी फायर के कारण मकानों की आड़ में अपनी फौजके आने तक ठहरना पड़ा!!

थोड़ीही देरमें फौजें भी पहुंचगईं। और बड़े बलसे फाटक खोल दिया गया। और अंग्रेज़ी फौजका कुछ भाग जापानियों के साथ साथही उस जगह पर पहुंच गया जहां कि श्रेयसी ठहरे हुवे थे॥

चीनियोंने गोला गोली से खूब आदर किया परन्तु श्रेयसीकी फौज के उत्तर प्रत्युत्तरों के कारण सभों को किला त्यागकर भाग जाना अथवा मृत्युशय्या पर शयन करना पड़ा!!!

तत्पश्चात् श्रेयसी साहब अपनी पार्टीसहित तथा अंग्रेज़ी फौजकी सेक्शन जो अब आगई थी साथ साथ किले के मध्यभाग (Central citadal) की ओर गये॥

वहां पहुँचे तब एक ब्रिटिश अफसर ने अंग्रेज़ी झंडा (Union jack) उड़ाना चाहा (यह झंडी वह अपने पाकट में लिये था)। परन्तु जापानी लेफ्टिनेंटने आपत्ति की, किले में सर्व प्रथम जापानी दखल हुवा है सो झंडा उड़ानेका हक़ केवल जापानकाही है॥

यह बहस होही रही थी कि किले के दूसरी ओर से उठता हुवा सूर्य्य (Rising sun जापानी उदयभानु) दीख पड़ा और तीसरी ओर एक यूनियन जैक (अंग्रेजी झंडा) भी दिखाई दिया॥

बस फिर श्रेयसी का झगड़ा भी शेष होगया। अधिक वार्ता की आवश्यकता ही नहीं रह गई॥

दूसरी ओर के बालारुण पताका उठने के साथ साथ दिनमणि सूर्य्य भग-

वान् ने भी योग दिया। मानो जापान की विजय को मशाल लेकर दुनियां को दिखला दिया॥

दूसरी ओर उदयभानु पताका उड़ानेवाला जापानी तोपखाने का अफसर मसूदा था॥

झंडा खड़ा करने के बाद मसूदा की दौड़ने वाली निगाह एक तोप पर पड़ी जो कि सजी सजाई एक ओर लगी थी। शायद वैसी ही लगी हुई छोड़ कर दुश्मन लोग भाग गये थे !!!

उसने अच्छी तरह जांचकर देखा कि सब कील पुरजे ठीक ठाक हैं। तत्काल जाकर उस पर क़ब्जा किया और उसी से दक्षिणी किले पर भयानक अग्नि वर्षाने लगा॥

यह विचित्र चरित्र देखकर जो कोई वहां मौजूद थे सभी बेतहाशा धन्य धन्य करने लगे॥

शाबासी और चियर्स (Cheers) की ध्वनि गूंज उठी॥

टाकू के जगत् प्रसिद्ध किलों पर विदेशियों का दखल होगया !!!



स्फुट वृत्तान्त ।

चिहली प्रान्त

चीन वहुत बड़ा देश है । इसमें १८ सूबे हैं । सम्पूर्ण देश का वृत्तान्त लिखना मेरे लिये दुःसाध्यहै । लिखना आवश्यक भी नहीं है । आप तो सिर्फ मेरी ही कहानी सुनेंगे । फिर सारेदेश में मैं देश वृत्तान्तके लिये क्यों टकराता फिरूं?

"चिहली" चीन का उत्तरी भाग है । राजधानी पीकिन इसी प्रान्त में है । हम लोगों की समुद्र यात्रा चीन चढ़ाई के लिये "टाकू वन्दर" में समाप्त हुई । सो टाकू पीकिन के वीच का आकाश ही हमारे आवागमन का संसार है ॥

"टाकू" पीहो नदी का मुहाना है । समुद्रगामी जहाज किनारे नहीं आसकते ! इस दल दल में "टग और लाइटरों" (धुवांकश और किश्तियों) द्वारा सम्पूर्ण माल असवाव टाकू किनारे को पहुंचाया जाता है ॥

"टाकू" से "टीनसिन" "पीहो" नदी द्वारा पचास मील है । परन्तु पैदल मार्ग से केवल पैंतीस मील ॥

"टीनसिन" से "पीकिन" नदी मार्ग से १३० मील है और पैदल मार्ग से अस्सी मील ॥

टाकू से वाईं ओर एक गांव टंकू है वहीं रेलवे स्टेशन है । टंकू से पीकिन को रेल वनी हुई थी और सौदागरी के माल असवाव रेलद्वारा भी जाया आया करते थे ॥ परन्तु जून १९०० ई० में वाक्सरोंने रेल लाइन और स्टेशन वगैरः सव विध्वंस कर दिये थे ॥

दिसम्वर १९०० ई० से फिर भी रेल वरावर चलने लगी है । और अन्यत्र भी वनती जाती है ॥

व्यापार संवन्ध से एवं अन्यान्य कार्य्यों के हेतु भी टीनसिन चिहली सूवे का एक प्रधान नगर है ॥

पीहो यद्यपि एक छोटी ही नदी है तथापि पीकिन जाने आने की वह प्रधान मार्ग है ॥ स्टीमर और नौकाओं द्वारा समुद्र से पीकिन को इसी नदी के राह से जाना आना होता है ॥

इस नदी में वहुतेरीं छोटी नदियां उत्तर पश्चिम और दक्षिण की ओर से मिलती हैं। और वहुधा नहरें भी काटी गई हैं। सो उनके कारण देश में इधर उधर जाना आना विशेषतः फौजों के लिये और वर्षाऋतु में प्रायः असंभव सा हो जाता है॥

टीनसिन में दो शस्त्रागार भी थे जिनमें हर तरह के अम्यूनीशन गोला गोली और हथियार वगैरः बनते थे॥ पर अब कुछ नहीं है॥

"टीनसिन-शानहाई क्वान रेलवे" करीव १८० मील की है॥ बाक्सरोंने इसको भी तोड़ दिया था पर अव फिर चलती है॥

टाकू के चार किले ऐसे मौके पर बने थे यदि सुशिक्षित सेना के हाथ में होते तो उस मार्ग से विदेशियों का उतरना असंभव होता॥ छः या आठ मील से निकट कोई जहाज आही नहीं सकते थे॥ किले के सब ओर तोप चढ़ाने के योग्य मार्ग वने थे॥

सर्चलाइट (Search light) अर्थात् निरीक्षण यन्त्र भी इन किलों में मौजूद थे॥ जिनसे अंधेरी रात और तूफानी दिनों में भी आने जाने वालों को सुगमता से देख सकते थे॥

नदी का मुहाना रोकने के लिये लौहमय सामान भी किलों में मौजूद था॥ सुरंग के वैद्युत सामान, और अन्यान्य समर प्रयोजनीय यन्त्र भी सुरक्षित थे॥

चारों किलों में बड़ी बड़ी छत्तीस तोपें थीं और छोटी तोपें भी बहुतेरी थीं॥

शानहाई क्वान भी एक वन्दर गाह है। यहां पर जो खाड़ी है उसकी धारा तेज होने के कारण शरदृऋतु में जमकर वरफ नहीं बनती सो वह रास्ता टाकू की अपेक्षा प्रशस्त है॥

टाकू मार्ग प्रायः दिसम्बर से फरवरी महीने तक वरफ के कारण वन्द रहता है॥ परन्तु शानहाई क्वान में वह आपत्ति नहीं है॥

इस वन्दर में पांच किले हैं। एक दीवार कहकहा (Great wall) के छोर में है जिस पर पांच बड़ी तोपें और वहुतेरी छोटी तोपें चढ़ी थीं।

दूसरे किले पर चार तोपें थीं॥ तीसरा किला दूसरे के उत्तर पश्चिम ओर प्रायः तीनसौ गज़ पर है। इस पर तीन तोपों के बुर्ज हैं॥

चौथा किला भी कहकहा दीवार ही पर दूसरे किले से एक मील की दूरी पर बना है। और पांचवां चौथे से एक मील पूर्व की तरफ है। उस पर चार

तोपें चढ़ी थीं ॥ यह किले मार्ग रक्षा वा समुद्र मार्गावरोध के लिये बने थे ॥

सुनने में आया है कि टाकू किलों की रक्षा में छः हजार और शानहाई कान में आठ हजार फौज रखने का चीन सरकार का हुक्म था। परन्तु इतनी फौज कभी रक्खी गई नहीं प्रतीत होती ॥

टीनसिन की भांति "नानकिङ्ग" स्थान में भी अस्त्रागार थे और तोपें हथियार आदि बनते थे ॥

——*——

—ऋतु—

उत्तरी चीन में ऋतु मध्य नवम्बर से मध्य मार्च तक बहुत ही शीत होताहै इन महीनों में पृथ्वी हिमरूपी श्वेताम्बर धारण करके चन्द्रज्योत्स्ना को भी लज्जित करती रहती है ॥

अवश्य ही जैसे शुभ्र चन्द्रमा में कालिमा रेखा है–

धरतीके दुग्धफेन निभ वसनोंकी कालिमा पत्र पुष्प पत्रविहीन वृक्षावली हैं ॥

जिस समय तुषार रूपी शुभ्र वसनों से पृथ्वी पर पड़ेहुवे सभी पदार्थ–कूड़ा करकट–ईंट पत्थर–कोयला राख–गड्ढा खंदक सब ढँक कर श्वेतवर्ण हो जाते हैं और सूर्य्यनारायण अपनी स्वर्णोपम किरण द्वारा मीठी मंद मुसक्यान से दृष्टि डालते हैं तब चकाचौंध से नेत्र स्थिर नहीं रह सकते। पृथ्वी मृदुहास हँसने लग जाती है। सूर्य्य भगवान् को लजाना पड़ता है। उनके नेत्र झँप जाते हैं तेजी न जानै कहां विलीनसी हो जाती है ॥

परन्तु आक्षेपकीय "नुकताचीन" लोग जब ऐब खोजने की कोशिश करते हुवे इधर उधर निहारने लगते हैं तो तुरन्तही अस्थि पंजर ऐसे पेड़ दिखाई पड़ने लगते हैं। न पल्लव है न पत्ती न झाड़ है न फल फूल !! हैं केवल उनके हाड़ चाम रूपी काठ और छाल, कैसे बदसूरत दीख पड़ते हैं जैसे सफेद चादर पर कूड़ा !!! धरती की सुन्दरता और सूर्य्य की मंद मुसक्यान देख कर जो मनमें उल्लास उठा था सो यह कुरूपता देखकर तनिक मलीन सा पड़ने लगा ॥

परन्तु फिर सोचा कि नाहक मन मलीन करें! सचमुच संसार में निर्दोष कोई भी नहीं है। दोषातीत परमेश्वर के सिवाय और कौन हो सकता है? फिर क्यों किसी के अवगुण खोज कर अपना मन मलीन किया जाय ॥ क्यों न

सभों के सौन्दर्य्य और मनमोदकारी गुणों की ही ओर निरन्तर ध्यान देकर प्रसन्नता लाभ किई जाय ?

—o—

असल गरमी के दिन यहां पर जून, जुलाई और अगस्त के महीने हैं। यही दिन बरसात के भी हैं ॥

इन महीनों में ऋतुमापकयन्त्र का पारा प्रायः ९० डिगरी और कभी कभी १०५ डिगरी तक रहता है ॥

शीत के महीनों में पारा हमेशा "फ्रीज़" वीस के नीचे रहता है। अधिक शरदी में "शून्य" के नीचे हो जाता है ॥

मार्च और अप्रैल की वसन्त ऋतु बहुत सुहावनी होती है ॥

सितम्बर अकतूबर में जाड़े की बधाई बजने लगती है ॥

क्या गरमी क्या शरदी सभी ऋतुओं में गरद गुब्बार से भरी हुई आंधी प्रायः चला करती है ॥

गरमी के दिनों में जब आकाश बादल से खाली हो जाता है तब धूप की कठिनता और भी बढ़ जाती है ॥

जनवरी में हवा उत्तरी चला करती है जो प्रायः बरफ बरसाकर ऋतु को अतिशीत कर देती है ॥ चार पांच दिन तक बरफ गिरना और हवा चलना जारी रह कर थमता है ॥ और इसी तरह प्रायः हुआ करता है ॥

फरवरी का महीना भी खूब शीत है परन्तु वायु पुरवाई चलती है ॥ मार्च और अप्रैल में हवा शीतल मंद पर अत्यन्त शीत रहती है आगे जुलाई तक हवा का रुख घटता बढ़ता रहता है ॥

—पीकिन—*

पीकिन नगर चीनदेशकी राजधानी है। शहर दो भागों में विभक्त है—तातार शहर और चीना शहर ॥

---

* इस पुस्तक में जो नाम व्यवहार कियेगये हैं वह चीना शब्दों का अंग्रेजी अनुवाद अथवा अंग्रेज़ों के नियत किये हुवे नाम हैं ॥

तातार शहर नगर के उत्तरी भाग का नाम है। शाही शहर, शाही महल, वैदेशिक मन्त्रि निवास, इत्यादि प्रधान प्रधान स्थान इसी भाग में हैं॥

तातार सिटी चौकोर सा है परन्तु चीना शहर लम्बान में बसा है। प्रलम्ब पूर्व और पश्चिम की ओर है॥

दोनों भाग प्राकार वेष्ठित हैं। तातार शहर का प्राकार ऊँचा और चौड़ा है चीना शहर का उसकी अपेक्षा कम॥ चतुर्वेष्ठन सत्ताईस मीलहै॥ शहर पनाह की सब दीवारें प्रायः आपुस में मिलत् हैं॥

वेष्ठन दीवारों की नींव पक्की इटों की, चौंसठ फुट चौड़ी और पचास फुट ऊँची हैं, परन्तु बनावट ऐसी खोखली है जैसे प्रायः हम हिन्दुस्तानी लोगों के हृदय! अर्थात् दोनों किनारों पर तो पक्की ईंटें गढ़ी चुनीहुई हैं परन्तु बीच में मट्टी भरदी गई है। सो भी बिना दबाई भूसा सी भरी हुई है, बहुतेरी जगहों पर दीवारें गिराई जाने के कारण भीतरी पोल प्रत्यक्ष होगया है॥

इसीतरह हमारे भीतरी ढंग भी संसार पर विदित होगये हैं। सब हमारे पोलापन पर हँसने और अँगुलियाने लगेहैं! सो अब अपना सुधार और भीतर ऊपर एकसां बनने का समय आन उपस्थित हुवा है, विचारवानों को भीतरी आंख खोलना चाहिये॥

चीना शहर की दीवार तीस फीट ऊँची और २० फीट चौड़ी है। परन्तु गढ़न्त उसकी भी वैसेही खोखली॥

दीवार पर चढ़ने और शतघ्नी आदि चढ़ाने के लिये सीनियां अन्दर से बनी हैं। हरएक कोने पर और प्रायः प्रत्येक तीन तीन सौ गज़ के फ़ासिले पर बुर्ज़ियां बनी हैं। फाटकों के ऊपर भी बड़े बड़े बुर्ज बने हैं॥

तातार सिटी के बीचोंबीच शाही शहरहै सम्पूर्ण तातार सिटी का पंचमांश इस शाही शहर के नाम से प्राकार वेष्ठित है॥

दीवार का फैलाव क़रीब सात मील के है॥

इस चौक में बड़े बड़े अमीर उमरा और दरबारी कारबारी अफसरों के मकानात और कार्य्यालय हैं॥

मन्दिर पूजास्थान दूकानें और रहने के मकानात भी हैं॥

सभों के बीचोंबीच राजमहल प्रतिष्ठित है॥

शाही नगर में सर्व साधारण का प्रवेश विवर्ज़ित है।

राजमहल के उत्तर भाग में एक मैदान है जिसमें एक कृत्रिम पर्वत बनाया गया है। यह पत्थरी कोयलों का बड़ा भारी ढेर है। शहर के अन्दर पर्वत नामसे यह एक ऊँची जगह है॥

ढेर तो कोयले का है परन्तु इसपर पर्वतीय सभी लक्षण मौजूद हैं॥ ऊपर एक गुमटी भी बनीहुई है॥

चीनी कहते हैं कि जिन लोगों के दिमाग में किसी सीधी सच्ची बात के समझने की शक्ति नहीं होती उनके दिमागों में भरने के वास्ते खुदा के हुक्म से याजूज़ और माजूज़ ने यहां यह कोयला जमा किया है।

सो जिसको इस परिभाषा के अनुरूप पाओ बस जानलो कि उसका मग़ज कोलहिल के कोयलों से भरा हुवा है॥

महल के पश्चिम पार्श्व में कई कृत्रिम झील झरने भी बनाये हैं सड़कें प्रायः-सभी पत्थर की बनी हैं जो वेमरम्मत पुरानी होने के सबब बड़ी दुर्गम हैं। परन्तु चौड़ी खूबही हैं। दोनों ओर कुछ नीची बीच का पत्थरी भाग ऊँचा। बरसात में दोनों ओर पानी भर जाता है। कीचड़ से चलना असम्भव होजाता है॥

शहर भीतर की गलियां तंग और बहुत मैली हैं। चीना लोग घर का मैला कुचैला गलियों में फेंक देतेहैं और अक्सर जाज़रूर का भी काम गलियों से लेते हैं॥

सुनते थे कि प्लेग रोग की आदि पैदायश चीनदेश है। सो सचही यहां से चाहे जो बीमारी पैदा होसकती है। क्योंकि मैलापनही तो बीमारी की जन्मभूमि है! और क्यों न हो अफ़ीमियों का निवासस्थान ही तो है!

मकानात ईंट और लकड़ी के बनेहैं। बहुत कम दोमंज़िले होंगे। सभी प्रायः छोलदारी की भांति ढलवां छतों के बने हैं। द्वार देश की दीवारें अधिकांश काठही की बनी हैं। बड़ी सुन्दर सुनहरे आदि रंगोंसे चित्रित हैं॥ अफसरों और महाजनों के भवन बहुतही सुन्दर हैं। बड़ी सड़कों पर के सभी मकानात मनमोहन रूप में बनेहुये हैं॥

शोक! कि हमने उजाड़ पीकिन देखा है! जिन्हें शाही पीकिन देखने का सौभाग्यहुवाहो वही नगर निरीक्षण का सर्वाङ्ग वर्णन करसकते!

तातार सिटी के उत्तरी मैदानकी ओर लामा मंदिर है और उससे पश्चिम की ओर बड़ा घंटाघर ॥

पश्चिम ओर करीब तीनमील पर घोड़दौड़का स्थान है ॥

दक्षिण की ओर तीन चार मील चलकर शाही शिकारगाहका बड़ा मैदान है। यह करीब चालीस पचास मीलका घेरा है। चारों ओर चतुर्वेष्ठन-झीलें-चरागाह-वन उपवन-जंगल चौगान पर्वत झरने इसमें सभी कुछ है॥ झुंडके झुंड हरिण इतस्ततः वन विहार करते हैं ॥

शहर पनाह के चारों ओर और उसके इर्द गिर्द बहुतेरी बस्तियां हैं ॥

पूर्वभाग में बहुत बड़े बड़े अन्न जमा करने के खत्ते हैं ॥

तातार सिटी के बीचवाला शाही महल शारदीय भवन है। कोलहिल के समीप एक ग्रीष्म भवन है। परन्तु बड़ा ग्रीष्मभवन शहरसे बाहर करीब बारह मीलपर है ॥ राज निवास के कारण वहांभी एक नगर बसगया है ॥

चीन के मकानात और हाते तो बहुत बड़े बड़े हैं परन्तु भीतर कमरे कोठरियां बहुत छोटी छोटी बनाते हैं ॥

प्रबंध और सुघरई इतनी है कि प्रत्येक कार्य्य के लिये जुदे जुदे स्थान नियत रहते हैं ॥

शयन के लिये प्रत्येक जन की अलग अलग कोठरी होती है। बैठक अलग-कर्य्यालय-भोजनालय-दूकान सब अलग अलग॥ एक कुटुम्ब में पांच सात जन होंगे तो रहेंगे तो सब साथही संयुक्त परिवार (Joint family system) की रीतिसे परन्तु प्रत्येक व्यक्ति के लिये अलग अलग कमरा नियत रहैगा जहां वह स्वतन्त्रता पूर्वक निवास करता है ॥

हिन्दुस्तान के परिवारों में प्रायः संयुक्त निवास की प्रथा है। मेरी समझ में वह अनेक अंशों में अच्छी नहीं है ॥

चीना निवास नियम अंग्रेज़ों के पृथक् निवास के कायदे की अपेक्षा बहुत अच्छा जान पड़ता है ॥

मकानों के बनाने में लकड़ीही का अधिकतर काम पड़ता है ॥ भीतों को सहारा देनेके लिये-छानको संभालने और छत साजने के लिये एवं बहुधा भीतें बनाने के लिये भी लकड़ीही काम में आती है ॥

दीवारें कुछ ऐसी बनाते हैं कि झझरीदार लकड़ी की जालियां बनाकर

दीवार की जगह जड़ते हैं और उनपर सुंदर चित्र विचित्र काग़ज़ मढ़ देते हैं। यही दीवार होगई ॥

अतिथियों के लिये प्रत्येक भले आदमी के घर में अलग नियत कमरा रहता है। जोकि बहुत सुन्दर रीतिपर सजाया हुवा होता है ॥ आगन्तुकको उसी कमरे में विठाते और चाय तम्बाकू अफीम आदि का आदर सत्कार करते हैं। और निवासभी देते हैं ॥

चाय पीने पिलानेका यह नियम है कि एक एक छोटी मेज के पास दो ओर दो चौकियां धरते हैं और चायकी पियालियां मेजपर सजाय देते हैं ॥ अधिक जन होनेसे अधिक मेज कुरसियां बिछाते हैं ॥

भीतर मकानों की भीतें सुन्दर सुन्दर काग़ज़ों, चित्रकारियों और मनोहर सुनहरे अक्षरों में लिखे हुवे शास्त्रीय वचनों की तखतियों से सँवारते हैं ॥

प्रत्येक घर श्लोकों की तखतियों से अवश्यही सुसज्जित पाओगे ॥ परन्तु अश्लील वा सुन्दर स्त्री आदि की तस्वीरों से सजा हुवा मकान बिरल ही देख सकोगे ॥

शयन भवन में और अन्तःपुर में कोई कोई लोग मानवी सौन्दर्य्य के चित्र लगाते हैं परन्तु यदि तुम्हारी निगाह उन पर पड़जाय तो वह बहुत लज्जित होते हैं कि इससे कदाचित् तुम्हारे मनमें उनके चरित्र पर शंका न उत्पन्न हो जाय ॥

उधर हमारे हिन्दुस्तानी जेन्टिलमेन की प्राइवेट रूम नहीं बैठक स्थान ही की सजावट देखिये! वाजिदअलीशाह के परिवार दृश्य से कोई ही शायद कम हो ॥

मन भी हमारे इस प्रकार धृष्ट होगये हैं कि ऐसी ऐसी तस्वीरें अपने घरों में लटका कर उन्हीं में सभ्य बनकर बैठते बिठाते और ऊंची ऊंची बातें करते हैं! और धर्म कथा भी छांटते हैं! तनिक भी लज्जा नहीं बोध करते!!!

हम लोग उन्हीं ऋषियों के सन्तान कहाते हैं जो अपने धर्मग्रन्थों को सम्पूर्ण कंठाग्र रखते थे। शोक है कि आज कंठस्थ करना पढ़ना पढ़ाना तो दूर रहा घर सजाने के काम में भी अपने नीति वा शास्त्र वचनों को नहीं लाते!

यदि हम लोग अपने शास्त्रों के उत्तमोत्तम उपदेश तस्वीर रूप में सजाकर

अपने बैठक और कार्य्यालयों में लटकावें तो अवश्यही सुन्दर सजावट के साथ साथ दर्शकों औ पाठकों में कुछ भलेभाव भी उत्पन्न करेंगे। एवं यह भी प्रकट होगा कि हमारे हृदय में उन वचनों का आदर मान भी है॥

पीकिन की लालटैनें संसारभरमें विख्यात हैं। हमने बहुत प्रकार की लालटैनें यहां देखीं। जो बहुत सुंदर रीति से बनी हुई होती हैं।

काठ-हाड़-सींग-वा कागज़ की बड़ीही सुघरई और कारीगरी से काट काट कर बनाते हैं और कांच के शीशों पर प्राकृतिक दृश्य फूल पत्तियों-और पक्षियों-तितलियों आदि के रूप उन पर चित्रित करके उपरोक्त चौकठों पर जड़ देते हैं॥

रेशमी वस्त्र भी नानारूप में काढ़ कर लालटैन बनाने के काम में लाते हैं॥ इन लालटैनों में मोमबत्ती जलाते हैं। मकानों में बहुधा यही लालटैनें लटकती हैं जो उनके सौन्दर्य्य को वृद्धि देती हैं॥

चीना लोग प्राकृतिक दृश्य के बड़े प्रेमी बोध होते हैं। फूल पत्ती बाग बगीचे इन को बड़े प्रिय होते हैं॥

मैंने देखा है कि मकान के बड़े आंगन में थोड़े से छोटे छोटे पेड़ पल्लव हैं। एक बड़ी सी चट्टान काटकर पर्वत की प्रतिमा बनी है। कहीं ऊंची नीची कहीं खुरदुरी नारंगी के छिकले की भांति और कहीं खोहें कहीं दर्रे। कहीं झरने कटे हुवे हैं॥ उन्हीं में से नदी निकाली हुई है। झील तालाब भी बने हुवे हैं। घूम घुमावदार मार्ग काटा है। नदी पर नन्हा सा पुल भी बांध दियाहै॥

पहाड़ी झाड़ियों की भांति सचमुच वनस्पतियां भी तरह तरह की उगी हुई हैं। सम्पूर्ण पर्वती दृश्य को लाकर घरके आंगन में धर देना चीना कारीगरोंने प्रत्यक्ष कर दिखाया है॥

घरों में अनार और नारंगी के वृक्ष बहुधा लगाते हैं॥

दूकानों के द्वारों पर प्रायः एक लम्बा तखता लटका देते हैं जिस पर नाम और विक्रेय सौदा का चिह्न विज्ञापन की भांति बना होता है॥

मोजा बेचने वाले के द्वार पर एक बड़ा भारी मोजा और जूता बेंचने वाले के दूकान पर एक बहुत ही बड़ा (कोई डेढ़ दो गज़ का) जूता लटका देख कर मुझ को सन्देह हुवा कि क्या यह मोजा और जूता कहीं हमारे महाभारत

वाले भीमसेन जी जब चीन में अपने साम्राज्य संबन्ध से आये थे तभी यहां छोड़ तो नहीं गये थे ?

परन्तु वह बात अब किसी को याद नहीं है ॥ चीनियों को तो केवल मंचू राजवंश ही का हाल मालूम है ॥

जैसे हमारे देश के लड़कों को सिर्फ महमूदगज़नवी के हल्ले और लार्ड क्लाइव के जहाज भर भर कर घर ले जाना ही मात्र ज्ञात है ?

वह बेचारे अर्जुन का रूस और अमरीका विजय—नकुल का हरिवर्ष और भीमसेन का भूमंडल विजय क्या जानें !!!

बड़े दुख की बात है कि हमारे हिन्दुस्तानी विद्वान् कहाने वाले लोग भी अपनी सन्तान की हीनावस्था पर ध्यान नहीं देते !!!

मैंने उपरोक्त प्राकृतिक दृश्य चीना मकानों में देखकर सोचा कि यह लोग इतना प्रकृतिप्रिय क्यों हैं ?

तो मन से उत्तर मिला कि इन के पूर्वज उपदेष्टा लोग बड़े शान्तिप्रिय-उदासीन-किन्तु प्रकृति में लीन थे। जैसे महापुरुष कान्फ्यूशस, मानश्युवस, बुध देव, इत्यादि—

सो उन्ही के शान्तिमय उपदेशों के कारण इन लोगों की रुचि प्राकृतिक पदार्थों पर अधिक तर आकृष्ट है ॥

और कुछ मिलान करने के लिये जब मैं अपने देश की ओर मन फेरता हूं और सोचता हूं कि हम लोगों की रुचि कौन सी बात में है ? तो एक अपूर्व भ्रम-जाल में पड़ जाता हूं ! कुछ उत्तर ही ठीक नहीं मिलता !!

आप लोग हँसेंगे और मेरी निरी मूर्खता पर सचमुच धिक्कार देंगे कि दो दिन चीन में रह कर तो मैंने चीना की रुचि पर मत प्रकाश कर दिया परन्तु जिस देश में जन्म लिया—पाला पोसा गया—अन्न पान ग्रहण किया—लिखना पढ़ना सीखा—मनुष्य बना, उसी देश और देशियों के रुचि विषय निज मत प्रकट करने में भ्रमजाल में पड़ना कहता हूं कैसे आश्चर्य की बात है !

परन्तु महाशय बात तो सचमुच ऐसी ही है ॥

आप ही कृपा करके बतावें कि आप की रुचि किस बात में है ?

जन्म से मरण तक के सभी व्यौहारों पर टुक निगाह दौड़ा जाइये ?

क्या सन्तानोत्पत्ति में आप की रुचि है ?

यदि रुचि होती तो क्या अपनी इच्छानुसार उत्तम सन्तान आप में से कोई भी उत्पन्न न कर सकता !

मसीह के पूर्वज जेकब जब अपनी भेड़ों के बच्चों को अपने मनमाने रंग का पैदा करा सके थे तो क्या हम विद्वान् और शूर वीर सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकते ?

देखियेगा कि जिनकी रुचि इस विषय में है वह अब भी शूर वीर सन्तान उत्पन्न करते हैं ॥

क्या आप की रुचि शिक्षा की ओर है ? यदि होती तो आप की सन्तान में अवश्य ही कुछ न कुछ आत्म गौरव (self respect) देखा जाता !

एम० ए० आदि बड़ी बड़ी डिगरियां प्राप्त करने के बाद भी तो देखते हैं कि वह लोग परमुखापेक्षी रहते हैं !

क्यों ?—पाटी पुजाई (विद्यारम्भ संस्कार) के दिन से लेकर एम० ए० पास करने पर्य्यन्त वही म्लेच्छों की चढ़ाइयां अंग्रेजों के विजय-विलायतियों की रीति नीति और गौरव बड़ाई के गीत अलापते रहे ! आत्म गौरव कहां से उत्पन्न होता ? माना कि हमारा डिगरीधर बड़े बड़े ज्ञान विज्ञान का भी भंडार बन गया है । परन्तु खुली आंखों देख कर सच सच कहिये क्या उस भंडार के अनेक अस्त्र शस्त्रोंपर कादरता, दुराग्रह और अविश्वास का कठिन मुरचा नहीं चढ़ा हुवा है ?

हमने बड़े दुःख और मर्मान्त पीड़ा के साथ अपने आधुनिक बड़े से बड़े विद्वान् के मुंह की और कलम की बात सुनी है कि "वेद किसानों के गीत हैं, हमारे पूर्वज जंगली असभ्य थे" ॥ परंतु न देखा कि वही मान्यवर एक अक्षर भी बायबिल के असलीयत की बाबत मुख से निकालने का साहस करते !

सच है लड़िकाई अवस्था के संस्कार जो कोमल मनपर अंकित होजाते वा करदिये जाते हैं वह क्या कभी निकल सकते हैं ?

इन्हीं संस्कारों के लिये हमारे शास्त्रों में गर्भाधान ही से लेकर अच्छे अच्छे प्रभाव, भावी सन्तान पर डालने की आज्ञा है ॥ गर्भाधान-सीमन्त-पुंसवन इत्यादि ॥

यह सब तो हो-वा होता भी है। परन्तु मुख्य बात और प्रत्यक्ष कुसंस्कारों की स्थापना की तरफ आप देखते हुवे भी आंख मूंद लेते हैं!

आप की सन्तान आरंभ ही से अच्छी शिक्षा नहीं पाती है॥

मदरसों—स्कूलों और कालिजों में भी ऐसी ही पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं जिन से हृदय पर भीरुता, कातरता, परमुखापेक्षित्व, और दासत्व के कुसंस्कार जम जाते हैं जो समयान्तर में उन बच्चों को किसी योग्य बनने के पात्र नहीं छोड़ते॥

आपने अपने पुरुषार्थ से बीसियों क्या सैकड़ों मदरसे और स्कूल स्थापित किये हैं परन्तु उनमें भी आप अपनी सन्तान को क्या उपरोक्त शिक्षावली के कुछभी भिन्न पढ़ाते लिखातेहैं? आपका स्कूल या कालिज अमुक विश्वविद्यालय में शामिल होजाय विद्यार्थी लोग डिगरी पास करके नौकरी (गुलामी) पा सकें बस यही अभीष्ट रहता है!!!

क्या कभी आपने अपने सन्ततिगण की शिक्षाप्रणाली और-पाठ्य पुस्तकों पर ध्यान दिया है?

आप का ध्यानही क्योंकर जाता! क्योंकि शिक्षा की ओर आप की रुचिही नहीं है!!!

(टीपः--(नोट) मैं उपरोक्त विषय साधारण दृष्टि से लिखताहूं-इसमें विशेषण (exception) अवश्यही हैं और जो महानुभाव इस विषय का अनुभव किये और अन्यों को कराते हैं एवं सुधार का उद्योग भी करते हैं मैं उनके शुभ नाम बड़े गौरव से उच्चारण करताहूं)

फिर क्या आपकी रुचि वेष भूषण वनाव शृँगार में है? देखते हैं कि तनिक भी नहीं!!!

यदि वास्तव में आप की रुचि होती तो अपनी इच्छा पूर्ति के लिये आप स्वयम् अनेकविधि यत्न करते और नानाप्रकार के वस्त्राभूषण रेशमी सूती अनेकप्रकार के उत्तमोत्तम सजावट के सामान रंग विरंगे-चित्र विचित्र पदार्थ फूलों की भांति कृत्रिम वस्तुवें इत्यादि वना सकते॥

आवश्यकताही आविर्भाव की जननी है "Necessity is the mother of invention." यह मसल मैंने आपही से सुनी है।

तब कौनसे पदार्थ का आविर्भाव वा निर्माण आपने अपनी आवश्यकता वा रुचि पूर्ति के लिये किया है ?

हम तो देखते हैं कि आजकल जितने पदार्थ, जितनी वस्तुवैं जितनी चीज़ैं चाहे जिस किसी प्रकार की क्यों न हों—हमारे पास तो सभी विदेशी हैं !!!

हम आपको विलास प्रिय भी तो नहीं कह सकते ! क्योंकि जो कुछ विलास वस्तुवैं आपके पासहैं जिन्हें आप अपने आमोद प्रमोद की चीज़ बताते हैं और जिनके बिना आप के कथनानुसार कार्य्यही नहीं चल सकता वह सब भी तो विदेशी आविर्भाव विदेशी निर्माण और विदेशियों की दीहुई वा त्यागी हुई हैं ।

दूसरे देशवालोंने सभ्यता की चढ़ती हुई बाढ़में नये नये पदार्थों के निर्माण की आवश्यकता बोध की और तत्काल उपस्थित करदिया । आप को भी देखने की साध लगी और अपनी गाढ़ी गुलामी की कमाई उनके चरणोंमें अर्पण करने लगे ॥

क्या इसे हम आप की "वेष भूषण में रुचि" विलास प्रियता कहैं अथवा नक़ाली का नामदें ?

नृत्य गान-राग रंगही आप को प्रिय होते ! पर देखते हैं उस विषय में भी आप पैर घसीटतेही रहे !!!

तबला मंजीरा से आगे आप का क़दम तबतक न बढ़सका जब तक कि विदेशियों ने आप के सामने बड़े बड़े बकस पियानो और हरमोनियम के न धर दिये ।

फिर क्या था—चुल्लू में उल्लू बनाकर विदेशियों ने दिन दिहाड़े लूट लिया !!!

नोट—(दिन दिहाड़े लूटनेमें विदेशियों का कोई क़सूर नहींहै क्योंकि सुनाहै उनके राज्य में सूर्य अस्तही नहीं होते । तब वह बेचारे अंधेरे में लूट करही कैसे पाते ? इसीकारण उन को दिन में लूटने का उपाय करने की रुचि पैदा हुई और रुचि के अनुसार उन्होंने लूट के सामान भी बनालिये ॥)

आप से न होसका कि एक तुनतुनी भी अपने कारीगरों से बनवाकर अपनी

महफ़िल सजाते और उन वेचारों को आप की क़दरदानी से तनिक उत्साह मिलता !!!

आप में यदि धर्मभाव वा धर्मप्रचार की रुचि होती तो आज भारत सन्तान इतनी धर्महीन कदापि न दीख पड़ती !!!

दुनियां के वड़े भारी शक्तिमान् भागों में सभी ओर ईसाई मतका फैलाव देखते हुवे आप में क्या तनिक भी शुद्ध ईर्षा न उपजती ?

हम एक देशी-एकही पूर्वजों की सन्तान और प्रायः एकही भाषा बोलने वाले एक धर्मावलम्बी न होते ?

माना कि मतभेद और रुचिभेद स्वाभाविक और प्राकृतिक हैं । परन्तु मत भेदसे धर्मभेद क्यों होना चाहिये ?

ईसाइयों में भी तो मतभेद सैकड़ोंहीं हैं । परन्तु धर्मभेद नहीं ॥ इसीभांति बौद्ध धर्मावलम्बियों में मतभेद हैं पर धर्मभेद कदापि नहीं ॥

सो हमारे आर्य्य सन्तान गण में भी मतभेद वने रहैं पर धर्मभेद क्यों होना चाहिये ? परस्पर एक धर्मावलम्बी कहलाकर प्रेमपूर्वक वर्ताव क्यों न करैं ?

यही नहीं होता-क्योंकि धर्म में वास्तव रुचिही नहीं है ! हममें तो घमंड हठ और धर्म संकीर्णता भरी पड़ी है !!!

क्षत्रित्व में रुचि तो हमारी होही नहीं सकती !

गुलामी की सन्तान—गुलामी में परवरिश पाई हुई-गुलामी की शिक्षा दीक्षा प्राप्त कीहुई और अपनी शारीरिक आवश्यकताओं में भी परवश सन्तान क्षत्रित्व औ वीरत्व में क्या धूलि रुचि रखैगी ?

हाय ! हमैं वीरत्व के स्वप्न भी तो नहीं आते ॥ ख़्वाब में भी हमैं चुड़ैल और भूत धर दवाते हैं—हम किसी पर नहीं धर कूदते !

हा कष्ट ! हा विडम्बना !!!

"लख संहारी जिनके वान थे उनके कुलमें हमी तोहैं !
"चूहे का नहिं कटै कान ऐसी सन्तान भी हमी तो हैं !!"

फिर आप की रुचि व्यापार में भी नहीं देखी जाती !

वही नोन—तेल—लकड़ी !!!

सोभी तो अपना नहीं ! रुई हम उपजावैं परन्तु वस्त्र हमारे नहीं ! अन्न हम उपजावैं परन्तु (गेहूं) हमें खाने को नहीं !

हाय ! हमारा कुछ भी नहीं है !

वास्तव में हमारे हिन्दुस्तानी भाइयों की रुचि काहे में है सो मैं तो निश्चय नहीं जान सका ! भ्रमजालही में पड़ा रहा !

परन्तु यह बात तो अवश्यही निश्चय होगइ कि जैसे महात्मा कान्फ्यूशस आदि के उपदेशों के कारण चीना लोग प्रकृति प्रिय बने हैं उसी भांति आजकल की शिक्षा प्रणाली के बिलकुल अनुरूप हम लोग नितान्त रुचि हीन—नकल प्रिय—वा दासत्व प्रिय होगये हैं !!!

परमेश्वर हमें भी क्या कभी सुरुचि सम्पन्न करेंगे ?

परन्तु वह भी तो आलसी के सहायक नहीं हैं ! (God helps those who help themselves) (उद्योगिनंपुरुषसिंहमुपैतिलक्ष्मीर्दैवेनदेयमितिकापुरुषा वदन्ति)॥

चाहे जो हो ! कालचक्र चलताही रहता है । सोः—

> यही आश अटक्यो रहै, अलि गुलाब के मूल ।
> ऐहैं बहुरि वसन्तऋतु, इन डारिन वै फूल !!

--पीकिन के प्रसिद्ध स्थान--

पीकिन में पांच बड़े देव मंदिर हैंः—यथा—

Tien tan = स्वर्ग मंदिर

Ti tan = भूमि मंदिर

Ji tan = सूर्य्य मंदिर

Yueh tan = चन्द्र मंदिर

Hsin Nung tan = कृषि मंदिर

चार बड़े शिक्षालय हैं:—

फऊ टिन चिन् = कानूफ्यूशस शिक्षा भवन
वान् शऊ शू = बौद्ध ,, ,,
पोयुन् कान् = तौऊ धर्म ,, ,,
युङ्ग हो कुङ्ग पइटा शू = लामा गुरुकुल

निम्न लिखित विश्व विद्यालय हैं:—

कुङ्ग युवान् = विश्व विद्यालय-परीक्षा भवन.
कुवान् स्याङ्ग टाई = ,, ,, मानमंदिर.
हान लिन युवान् = ,, ,, हानलिन अकाडमी.

राजमहल आदि.

शारदीय राजभवन.
ग्रीष्म राजभवन.
"चीयफू" राजभवन.
वैदेशिक मंत्रणाभवन. (Tsung liyamen.)
ग्रीष्म निवास. (Summer palace.)
रथालय अश्वशाला
पर्वत विहार (Coal hill.)
घंटा घर.
आखेट क्षेत्र (शिकारगाह)
पितर प्रासाद (Hall of ancestors.)

इत्यादि.

पीकिन यद्यपि वहुत प्राचीन नगर है तथापि राजधानी रूप में ईस्वी सन् १२६४ में प्रतिष्ठित हुआ था ॥

महाराजा के निवास भवन को (चीना भाषा के शब्द का अंग्रेज़ी तरज़ुमा) "स्वर्ण भवन" और महाराणी के निवास को "पृथिवी विश्राम भवन" एवं राज सभा स्थानको "स्वर्ग सर्पभवन" के नामसे कहते हैं ॥

—स्वर्ग मंदिर—

यह पीकिन अथवा समस्त चीन देशका महामंदिर है । इसमें साधारण

प्रजाका प्रवेश नहीं था॥ केवल महाराजाही अपने राजकुमारों और मंत्रियों सहित साल में तीनवेर और विशेष अवसरों परभी वहां पधारकर समस्त प्रजाके कल्याणार्थ उपासना करते थे॥

उपासनाकी नियत तिथिसे एक दिन पूर्व महाराजा वहां पधारकर वलि चढ़ाता और समस्त रात्रि आराधना करता। वड़े सवेरे उठकर स्वर्ग सीढ़ियों पर अकेला चढ़ता था।

मंदिर के अन्दर एक पार्श्व में दीवार से सटाहुआ एक संगमरमर का तीन सीढ़ियों का वहुत सुंदर बृहत् सिंहासन वनाहुआ है। यही स्वर्ग स्थान है। मंदिरपर जाने के लिये वहुत सीढ़ियों पर चढ़कर जाना होता है॥

महाराज उपासना के दिन प्रजाकी भलाई के लिये अपने इष्टदेव से प्रार्थना करते हैं॥

यह स्वर्ग मंदिर आजकल (१९००-१९०१ ईस्वी में) सिपाही वारिक वन गया है॥

महाराजा स्वर्ग मंदिर में प्रजाके कल्याणार्थ आराधना करते थे। आजभी वह स्वर्ग मंदिर प्रजा रक्षाही का काम देरहा है—चीनकी प्रजाके नहीं तो यूरोपकी ही प्रजाके लिये सही!

प्रजाकी रक्षा किसवातपर निर्भर है यही विचार करना राजाका वड़ा औचित्य है। सो महाराजा चीन विचार सकेहों या नहीं परन्तु यूरोपियन शक्तियों ने तो उनको प्रत्यक्ष प्रमाण दिखादिया॥

सेना-विश्वस्त सेना-सुशिक्षित सेना- स्वदेश स्वजाति प्रेमिक सेना-और स्वगौरवा कांक्षी सेनाही प्रजाकी रक्षाका वड़ा साधन है॥

हमारे शक्तिमान् अंग्रेज़ लोगोंने क्या जानै यही दिखलाने के लिये कि "वास्तविक प्रजा कल्याणार्थ उपासना का अर्थ सैन्य योग करनाही है" इसस्वर्ग मंदिर को अपनी वारिक वनाडाली हो।

इसमंदिर का चतुर्वेष्टन चार पांच मीलसे कम न होगा।

इसमें तीन वड़े वड़े मंदिर हैं। एक वड़े चतुर्वेष्टन के वीचों वीच खूव ऊंचा प्रशस्त मंदिर है उसमें एक ऊंचा चवूतरा वनाहुवा है। पीछे एक और मंदिर है जिसमें अनेकों वड़ी वड़ी भारी मूर्तियां प्रतिष्ठित थीं

सामने वाला मकान मूर्त्ति रहित वड़े व्याख्यानालय की तरहका है। यह

वह स्थान होगा जिसमें बैठकर महाराजा रात्रिभर आराधना करते होंगे ॥

दूसरा एक और हाता है जिसमें दो मंदिर हैं एक बड़ा और दूसरा उससे कुछ छोटा। दोनों को प्रशस्त प्रस्तर मार्ग से संयुक्त कियागया है ॥ पत्थर के कामकी सुघरई दर्शनीय है।

ऊपर चढ़ने की सीढ़ियोंपर भांति भांतिके सर्प मयूर आदिके चित्र खोदेहुवे हैं। दोनों मंदिरों को मिलानेवाली सड़क को तीन पार्श्व में विभक्त करके अनुपम शोभामय करदिया है मन्दिरके सामने एक खूब ऊँचा सैकड़ों सीढ़ियों और तीन खंडों से प्रासव्य एक संगमर्मर का चबूतरा है। इसको "दुनियांका बीच" कहतेहैं। बड़ाही रमणीक शोभायमान हृदय को शीतल करनेवाला ॥ परन्तु आज तो हृदय को रुलाने वालाही दीख पड़ा !!!

गरमी के दिनों में सायंकाल के समय इस चबूतरे के ऊपर मन्द सुगन्ध शीतल पवन दोलायमान होती हुई आगन्तुक जनो का आदर सन्मान करती है ॥

स्वर्ग मन्दिर के इस स्वर्ग स्थान में किसीसमय सचतुच स्वर्गीय सुख प्राप्त होते होंगे। प्रकृति देवी की सर्वांग सौन्दर्य पूरित मूर्त्ति अनेक प्रकार के वन पुष्प लता पत्रादि आभरण धारिता जब दृष्टि पथ गामिनी होती होगी तब दर्शक निःसन्देह तन्मय होही जाता होगा ॥ हृदय पर "शान्ति" अपना राज्य अवश्यमेव जमा लेती होगी। परन्तु हाय !

नीरद सुखद समीर युत बरसत कंचन नीर !
सोसिर छत्र दरिद्र को बूंद न लगत शरीर !!

मैं अनेकों बार इस स्थान पर उसी ग्रीष्म सन्ध्या के समय गया हूं। सुन्दर शीतल पवन रूपी स्वर्ग राज्य कर्मचारिवृन्दने आदर सत्कार भी अपनी पूर्व परिपाटी के अनुसार किया ! परन्तु हाय ! उनके आदरने मुझे और भी अधीर किया और मैं बिसूर बिसूर कर हृदयाश्रुपान करता रहा !!!

जो स्थान—जो सौन्दर्य्य-जो मनमोहन प्रकृति मूर्त्ति और जो सुगन्ध सनी वायु राजाधिराज चीन देशाधिपति का मनमोहन करतीथी। वही सब सौन्दर्य्य मयी रचना आज एक साधारण विदेशी सिपाही को मर्मान्त दुख से अधीर बनाय रुदन करारहीहै !!!

योग शास्त्रकारने सुन्दर स्थान घन वाटिकामय सरिता तट और स्वच्छ

शीतल वायु आदिकों को योग के उपयोगी पदार्थों में गिनायाहै । और शृङ्गार रस रसिक कविने इन्हीं पदार्थों को भोगोपयोगी पाया है। सो देखा जाता है कि अवस्था काल और पात्र भेद से सभी पदार्थ सभी विषयों में उपयुक्त होसकते हैं॥

सो महाराजा के उपासना स्थान स्वर्गमन्दिर की वेदिका को अपने रक्त रंजित पाँवों से मलीन होता देखकर यदि सिपाहीका तुच्छ और संकीर्ण हृदय रुदन करने लगै तो आश्चर्यही क्या है?

स्वर्ग के प्रत्येक मन्दिर में चहुँओर परिक्रमायें वनी हुई हैं, और वड़े वड़े अग्निकुण्ड भी वने हैं॥

दीपावली और हरियाली के प्रस्तर मय वर्तनों से सब पार्श्व सजेहुवे हैं॥

मालूम होता था कि कुछ दिनोंसे मन्दिरों की देखभाल छोड़दी गईथी। सभी ओर वनैले कांटे और वैर की झाड़ियां उत्पन्न होगईथीं।

देखा कि वैर यहां भी खूब हिन्दुस्तानही की भांति उत्पन्न हुवा है!!!

सहन के पत्थर भी कहीं कहीं उखड़े पुखड़े वेमरम्मत से और खसे हुवे जान पड़ते थे॥

स्वर्ग मन्दिर के प्रवेश फाटक खूब वड़े वड़े हैं। प्रायः सभों में तीन द्वार हैं दोनों पार्श्व के दो छोटे और वीच का एक वड़ा!

सड़कें भी खूब चौड़ी पत्थर की वनी हैं॥

महाराजा साहव यहां हाथी की सवारी पर पधारतेथे॥

स्वर्ग सिंह द्वार पर वड़े वड़े झंडे और वड़े वड़े प्रस्तर मय सिंह भी खड़ेहैं। हाता के भीतर परन्तु मन्दिरों के वाहर वहुत से मकानात भी हैं। सुना है कि इनमें पुजारी लोग सपरिवार और राज्यकी ओरसे औषधि वितरण करनेवाले वैद्य लोग रहतेथे॥

हाता के भीतरही कई ऊँचे ऊँचे घण्टाघर वनेहैं जिनमें वड़े वड़े घण्टे पीतल के क़रीव चौदह पंद्रह हाथ गोलाई के लटकते हैं॥

स्वर्ग पार्श्व में एक छोटा सा हाता और वना है। इसके भीतर वड़े वड़े तीन मकान वने हैं। यह पाक शालायें हैं॥

इनमें वहुतही वड़े वड़े लोहे के वर्तन गड़े हैं और नीचे भट्ठे की भांति तन्दूर हैं। मनों चावल आदि भोजन तत्काल वन सकता है॥

उतारने निकालने परोसने आदिके लिये उपयुक्त सीढ़ियां आदि बनी हैं॥ जलाशय (कूवें) भी इसहाते में कई बनेहुवे हैं॥

स्वर्ग चतुर्वेष्ठन में तरुपल्लव परिपूरित जंगलभी इतना घना है कि उसके मध्य खड़े होकर देखने से वन भिन्न और कुछ मालूमही नहीं होता॥

पेड़ोंकी पंक्तियां ऐसी सुघरई से लगाई गई हैं कि मानों रेखा गणितकी शकलें बनादी हैं—चाहे जिधरसे देखिये सभी ओरसे " राइटलैन्स " (सीधी रेखा) का मामला है॥

अनेक शोभा समूहसे भरपूर स्वर्ग मंदिर आज अपने महाराज के न होनेसे श्री हीन प्रभा विहीन होरहा है !!!

जैसे हमारा हिन्दुस्तान आर्य्य सन्तानकी सुषुप्ति के कारण तन छीन मन मलीन काला और अशिक्षित बनगया है !!!

भूमि मंदिर—सूर्य्य मंदिर—चन्द्र मंदिर।

यहभी अच्छे अच्छे चतुर्वेष्ठित मंदिर हैं। सोनहरे रंगसे सम्पूर्ण रंगी हुई दीवारें और सुन्दर सुन्दर कांचकी जालीदार खिड़कियां और दरवाजे मनमोहन रूपके बनेहुवे हैं॥

कहते हैं इन मंदिरों में नामके अनुरूपही उन्हीं देवताओं की पूजा होतीथी॥

इनमें मूर्त्तियां नहीं हैं तख्तियोंपर सुन्दर सुन्दर अक्षरों में लिखे हुवे शास्त्र वचन अवश्यही सर्वत्र टंगे हुवे हैं। सो हमें तो ज्ञात होता है कि जिस समय यह सब मन्दिर बनाये गये होंगे तब अवश्यही सूर्य्य चन्द्र और पृथ्वी सम्बन्धिनी विद्या के शिक्षालय रहे होंगे। जो समयान्तर में अविद्या और स्वार्थ के कारण केवल पूजास्थानही रहगये !!!

जैसे हमारे पवित्र नगर काशी के अनेकों प्राचीन विद्याभवन आज केवल पूजा भवन रहगये हैं !!!

—कृषि मन्दिर—

यह भी एक बड़ासा हातादार स्थान है। ठीक स्वर्ग मन्दिर के सन्मुखही है। फाटक—मार्ग—मन्दिर आदि सब स्वर्गही की भांति हैं परन्तु भीतर विशेष साजबाज कुछ नहीं है ॥

धरती खेतों की तरह जोती हुई है। सड़कें-रविशें-मेड़ें सब हैं।

कहते हैं महाराजा साल में एकवार वसन्त ऋतुमें यहां पधार कर स्वयम् हल ग्रहण करते थे।

कृषि सम्बन्ध में महाराजा का यह कार्य्य अवश्यही प्रशंसा के योग्यथा। प्रजा को कार्य्य परायण होने की इससे अधिक और क्या उत्तेजना वह देते ?

सो इस वार्षिक त्यौहार में यह नियमथा कि एक बहुत सुन्दर हल महाराजा अपने हाथ में लेते और उससे तीन कुड़ बनाते थे। प्रत्येक राजकुमार पांच कुड़ और बड़े बड़े राजमंत्री लोग नौ कुड़ बनाते थे ॥

उस स्थानपर एक बड़ीसी मट्टी की गो मूर्त्ति बनाकर रखते और उसकी पूजा करते थे।

आस पास और भी अनेकों माटी की मूर्तें बैल और बछड़ोंकी बनाते धरते थे ॥ जब पूजा समाप्त होचुकती और खेतकी जोताई होजाती तब मेला में उपस्थित भीड़के लोग दौड़ दौड़कर एक एक मूर्ति बैल बछड़ों की लूट लेते और अपने अपने खेतों में जा धरते थे ॥ विश्वास यहथा कि जिन खेतों में यह मूर्तियां धरी रहैंगी उन में अन्न बहुतायत से उपजैगा ॥

यह बात सुनकर अंग्रेज़ लोग बड़ी हँसी उड़ाते थे। और चीनियों को बहुत मूर्ख कहते थे ॥

पर भाई हिन्दू कृषिकार! आप भी तो पण्डितजी से शुभ मुहूर्त्त पूंछकर हल उठाते हो! इसी आशा पर तो कि खेतों में अन्न अधिक उपजै!

परन्तु फल तो बराबर प्रत्यक्षही उलटा पाते हो!!!

सो चीनियों के इस मिथ्या विश्वास पर तुम हँस नहीं सकोगे जब तक कि

स्वयं वैसेही मिथ्या विश्वासों को त्याग कर सचमुच अपने बाहुबल और निज कर्तव्य पर भरोसा न करो।

ईश्वर तुम्हारे सहायक हों!!!

—धर्म—

चीन देशमें तीनधर्म प्रचलित हैं। महात्मा कान्फ्यूशस, महात्मा बुद्धदेव, और महात्मा तौऊकेनिर्दिष्ट धर्म॥

अवश्यही मुसलमान और क्रिष्टान भी हैं परन्तु इनकी गिनती चीन धर्म सम्प्रदायों में नहीं होसकती!

सो इन्हीं महात्माओं के धर्म शिक्षालय उपरोक्त चार धर्म मंदिर पीकिन में विद्यमान हैं॥

यह तीनों धर्म तौऊ कान्फूत्सी और बौद्ध इसप्रकार मिले जुले हैं कि अधिक भेद भाव जान नहीं पड़ता॥

जैसे हमारे हिन्दुस्तान में शैव वैष्णव इत्यादि में सचमुच भेद भाव नहीं है॥

कान्फूत्सी धर्म "ज्ञानियों का धर्म" कहाता है॥ अर्थात् भली भांति विचार पूर्वक जो काम संसार के भलेका सिद्ध हो उसीको मानना उक्त महात्माके उपदेशानुसार धर्म है॥

महात्मा "लाओत्सी" जिनका चलाया धर्म "तौऊ धर्म" (तत्त्व धर्म) नाम से प्रसिद्ध है उनके विश्वासी मानते हैं कि ध्रुव नक्षत्र हमारी सदा रक्षा करैगा॥ (संभवतः तात्पर्य्य यह ज्ञात होता है कि ध्रुव की भांति धर्म में अटल रहने से धर्म हमारी सदा रक्षा करैगा "धर्मोरक्षति रक्षितः")

सन्तान कामनावाले लोग "दयादेवी" की उपासना करते हैं। कहते हैं कि यह उपासना महात्मा बुधदेव की बताई हुई है॥

(अवश्यही दयादेवी की उपासना का तात्पर्य्य दयावान् होना ही होगा) सो देखा जाता है कि समय समय पर तीनों सम्प्रदाय के लोग एक दूसरे के मन्तव्यों को मानते पूजते हैं॥

शान्ति देवी का भजन करना चीन की अत्यन्त प्राचीन पूजा प्रणाली है॥

यही जापान की भी प्राचीन आराधना है॥

शान्ति देवी की उपासना इस प्रकार कीजाती है:—

"हे शान्ति! तूने स्वर्ग को बनाया। तूने पृथिवी बनाई। तूने मनुष्य को बनाया। तुझही से सारी ऐसी वस्तु उत्पन्न हुई जैसी कि हम देखते हैं"।

कहते हैं प्राचीन समय में एक महाराजाका नामभी "शाङ्गती" था उसी महाराजाने उपासना के लिये एक मंदिर बनवायाथा। वही मंदिर हमारा उपरोक्त स्वर्ग मंदिर है॥



—महात्मा कान्फ्यूशस—

मसीह से ११०० बरस पहिले महात्मा कान्फ्यूशस का समय था॥ कहते हैं कि बचपनही से इनका मन विद्याभ्यास और रीति व्यौहारों के सीखने की ओर अधिकतर रहता था॥

बीसवर्ष की अवस्था में वह "भूमिकर" विभाग के एक राजकर्मचारी नियत हुये (शायद ज़िलाके कलेक्टर)॥

तेईस वर्षकी अवस्था थी तब उनकी पूज्य माताका देहान्त हुवा। सो लोक रीत्यानुसार उन्होंने राजकाज त्यागकर माताकी अन्त्येष्टि क्रिया बड़ी भक्तिसे की॥

और तदुपरि वह तीन वर्ष पर्य्यंत एकान्त सेवन करते रहे!

इस अवसर में इन्होने ज्ञान विज्ञान विषयक उत्तमोत्तम विचार और आलोचनायें कीं॥

कान्फ्यूशस ने मृतकों के आदर सन्मान अर्थात् श्राद्ध कर्म पर बहुत बल दियाथा उनका उपदेश था कि अपने पूर्वज माता पितादि मृतकों के आदरार्थ बारम्बार रीति व्यौहार करना उचित है॥ यह रीतें चाहे समाधियों पर जाकर कीजावैं चाहे अपने मकानों में एक स्थान नियत किया जावै॥

उक्त शिक्षा के अनुसार समस्त चीन देशमें आजकल यह रीति है कि प्रत्येक घर में एक एक कोठरी "पितरों की कोठरी" के नामसे नियत होती है। और यथा सम्भव उसमें मृत माता पितादि के चित्र वा मूर्त्तें धरी जाती हैं।

महात्मा का उपदेश पितरों का आदर विशेष करनेकेही अभिप्राय से था

यह नहीं कि वह सब पूजा मृत पितरों को कहीं जाकर पहुँचतीहो! जैसे हमारे आर्य्यावर्त्त देश में जीवित माता पिता आदि पितरों का श्राद्ध तर्पण करना विधान किया गया है॥

मृत पितरों के लिये भी (ही) श्राद्ध हमारे यहां खूबही की जाती है सो भी कुछ बुरा न कहा जाता यदि इस बहाने अनगिनती आदमी निरुद्यम होकर केवल श्राद्ध तर्पणों के ही भरोसे आलसी बने बैठे न रहते! इतनाही नहीं बरन हमारे यहां तो एक महाब्राह्मण की जातिही निराली उठ खड़ी हुईहै। जिनका व्यवसायही मुर्दों का दान खाना है!

वह मनाया करते हैं कि—कब कोई बड़ा आदमी मरै और हमारा घर भरै॥

इस कारण आर्य्य समाज चाहता है कि शास्त्र के आदेशानुसार जीवितोंही का श्राद्ध किया जाय॥

मृतकों के नाम पर हज़ारों आदमी जो खा खा कर निरुद्यमी बनेहुवे हैं और देश की कंगाली का कारण बन रहे हैं सो उनको विहित और उचित व्यापार में लगाया जावै॥

जबतक हम मृतकों के नाम पर श्राद्ध करते जायँगे तबतक यह लोग अन्यान्य व्यापारों की ओर कभी मन न देंगे। क्योंकि जबतक बिना मेहनत रोटी मिलै तबतक पसीना निकालना उनको क्यों पसन्द होगा!

सो आशा की जाती है कि विचारवान् सज्जन लोग इन विषयों पर अधिक ध्यान देंगे। क्योंकि यह खण्डन मण्डन की बात नहीं केवल देश दशा की सच्ची बात है॥

महात्मा कान्फ्यूशस ने यह चाहाथा कि अपने लोगों को नीति विद्या सिखावें। ईश्वर ज्ञान की ओर उनका लक्ष्य नहीं था। महात्मा ने यह तो कभी नहीं कहा कि ईश्वर कोई नहीं है। परन्तु उपदेश में मानों अपने को अनजान प्रकट करते रहे॥

उनकी इच्छा और शिक्षा केवल यही थी कि मनुष्य आपुस में कैसी चाल चलें। वह कहते थे कि जो भाइयों से न्याय और हित करता है सो अपनी भलाई और देश का हित करता है। उसका सौभाग्य होगा। उनका कथन है कि मनुष्य पवित्र और धर्मी उत्पन्न होता है। उसमें ऐसे अच्छे गुणहैं कि यदि उन्हें औगुणों से न बदल डालै तो उसका जीवन सिद्धार्थ होगा॥

चाहिये कि मनुष्य बड़ी चौकसी करै। और सदा अपनी कुइच्छाओं को रोका करे। और यदि उसमें कृत कार्य्य हो तो वह देवता, ज्ञानी और धार्मिक होसकता है॥

उनके उपदेश का संक्षेप यह है कि हरएक मनुष्य को यह उचित है कि शास्त्रों की शिक्षा के अनुसार अपने जीवन को वितावै-तब उचित है कि उन्हीं शिक्षाओं के समान अपने घराने को चलावै। और तब यह समझकर कि जैसा मैं अपने पुत्रों से यह चाहताहूं कि मेरी सेवा टहल करैं-वैसाही यह जानकर कि महाराजा अपने सब लोगोंका पिता है मैं वैसीही रीति से उसकी सेवा करूं और जैसा मैं अपने पितरों का आदर सन्मान करताहूं वैसाही राजा का करूं॥ क्योंकि ऐसा करने से देश की शांति और विश्राम और रक्षा होगी॥

माताकी क्रिया तीन सालतक समाप्त करने के पश्चात् महात्मा कान्फ्यूशस चीनके प्रायः सभी भागों में मनुष्यों को भलाई का उपदेश करते रहे॥

कई ठिकानों में अपनी सरकारकी ओरसे शिक्षकभी नियत रहे॥

पश्चात् एक सूवे के गवर्नर-नियत हुवे। इनके सुप्रबंध और सुशिक्षाओं एवं न्यायसे वहांकी प्रजाके ऐसे उत्तम संस्कार होगये और वह प्रान्त ऐसा सुसम्पन्न औ समृद्धिवान् होगया कि अन्यान्य गवर्नर लोग ईर्षा करनेलगे॥ और यत्न करने लगे कि किसी भांति महाराजा का मन इनसे फिरायाजावै॥

वह लोग अपने षडयन्त्र में कृतकार्य्य भी हुवे। और गवर्नर कान्फ्यूशस अपने पदसे पृथक् करादिये गये॥

तबसे बराबर तेरह बरसलों वह इतस्ततः भ्रमण करते रहे। और चाहते रहे कि कोई गवर्नर उन्हें अपना नायब बनालेता और उनकी शिक्षा औ सम्मति अनुसार कार्य्यकरके देशकी दशा उन्नत करता॥

परन्तु कहीं भी उनको स्थान न मिला !!!

सच है ! रतन पारखी विरलेही हुवा करते हैं ! अनमोल रत्न को पाकर भी उसके गुण न जान उसे गँवाकर पीछे हाथ मलमलकर रोते हैं !!!

पर अवरोये का भयो !

चिड़ियां चुगगईं खेत !!

इसीतरह ऋषि दयानन्दको भी हमारा देश हिन्दुस्तान नहीं पहिचान सका !!!

सभी अध्यक्ष लोग महात्मा कान्फ्यूशस के वैरी निकले ! बहुतेरों ने उनको बहुत प्रकारसे सताया ! एकने तो इतनी कठोरताकी कि उन्हें विद्रोही कहकर वन्दीगृह में डालदिया !!! जहां उन्होंने क्षुधा पिपासाके भी क्लेश सहन किये !!!

निदान महात्माका मन प्रत्यक्ष शिक्षाकी ओरसे निराश हुवा । और उन्होने निश्चय करलिया कि पुस्तकें रचकर अपने देशकी भाविनी सन्तान का शिक्षा करूंगा जो कि समयपर अवश्यमेव सन्मान करेंगे और लाभ उठावेंगे ॥

चीनके चार प्रसिद्ध धर्मशास्त्र हैं । जिनका नामकरण हम अपनी बोली में इसप्रकार करते हैं :—

१ महाविद्या

२ मध्यस्थ शिक्षा

३ कान्फ्यूशी शिक्षासार

४ मानशियसके उपदेश ॥

सो इन शास्त्रों और अनेकों और भी विद्या शिक्षाके ग्रन्थोंको रचकर महात्मा ने अपने देशका अपूर्व उपकार साधनकिया और अनन्त कीर्त्तिपाई ॥

महात्मा कान्फ्यूशसने इसप्रकार अपनी अन्तिम जीवनी में शास्त्र सम्पादन करते हुवे सत्तर बरस की अवस्था में जीवनलीला सम्बरण की !

उनके मरणान्तर लोगोंने उनकी शिक्षावली पढ़ी ! और सम्पूर्णरूप से उपयोगी पाकर महात्मा के गुण जाननेलगे ॥

तबसे आजलों एक बड़ाभारी ज़माना व्यतीत होगया ! तीन हज़ार वर्ष बीते कि महापुरुष इस पृथ्वीपर विराजमान थे ।

सन्मुखीन उपदेश देतेथे । और लोगोंसे अनेकों भांति सताये जाते थे ! उपकार के बदले अपकार पाते थे । आदर के बदले अनादर, मान के बदले अपमान पाते थे !

हाय ! स्वर्गीय अमृत वचन सुनाते हुवे महात्माको दुर्वचन सुनना पड़ते थे ! और आज दिन है कि उन्हीं महापुरुष के नामकी प्रतिष्ठा न केवल सम्पूर्ण देश वरन महाराजाधिराज भी कैसी भक्तिसे करते हैं !



–कान्फ्यूत्सी धर्ममंदिर–

महापुरुष कान्फ्यूशस के नामपर पीकिन में एक सुविशाल धर्म मंदिर प्रतिष्ठित है ॥ खूब लम्बा चौड़ा हाता जिसमें चारोंओर प्रलम्ब में वारिकें सी वनी हुई हैं। मध्य में खूब ऊंचा रमणीक परम सुन्दर व्याख्यान भवन है ॥ द्वारों पर वड़े वड़े पत्थरों पर खुदे हुवे शास्त्र वचन लगे हुवे हैं। हाता में अनेकों स्तम्भ गड़े हुवे हैं जिनपर चारोंओर कुछ लिखा हुवा है ॥ किनारों की वारिकें सौसौ गज की लम्वाई से कम न होंगी ॥ इनमें छियत्तर सिंहासन हैं। सिंहासनों में एक एक पट्टिका स्वर्णाक्षराङ्कित प्रतिष्ठित है ॥ कहते थे कि यह उक्तधर्म के वड़े विद्वानों के नाम हैं जोकि स्मारक की भांति रक्खे गये हैं ॥

सहन में वड़े वड़े ऊंचे छत्रों की छाया में वारह प्रस्तरमय स्तम्भ हैं जो महात्मा कान्फ्यूशस के वारह प्रधान शिष्यों के नाम पर यादगार की भांति स्थापित किये गये हैं ॥

वीच के प्रधान व्याख्यान भवन के भीतर का 'हाल' पचासगज लम्वा और तीस गज चौड़ा है ॥

सव ओर की दीवालें प्रस्तरमय–स्वर्णाङ्कित शास्त्र वचनों से भरी हुई हैं ॥

मध्य भाग में दीवाल पर एकवड़ा तखता वड़े ऊंचे पर लगा है जिसमें चीना अक्षरों में वड़े चमक दमक से लिखा है:—

"महा प्रभु पवित्रात्मा संसार शिक्षक कान्फूत्सी"

इस तखते के पार्श्व में पांच और तखते लगे हैं—जिनपर यह लेख हैं:—

(१) आदि विद्वान् महापुरुष
(२) संसार में ऐसा सर्वज्ञानी कभी नहीं उपजा।
(३) संसार शिक्षक जगद्गुरु
(४) पृथिवी और स्वर्ग के राज्यों का सम्मेलन कराने हारा ॥
(५) विशुद्ध और परिपूर्ण ज्ञानी महापुरुष ॥

भवन में सन्मुख चार सिंहासन धरे हैं जिनमें चार पट्टिकायें प्रतिष्ठित हैं। दोनों पार्श्वों में छः छः सिंहासन और हैं इनमें भी तखतियां हैं। यह सव प्रधान प्रधान शिष्यों के नाम हैं ॥—

मंदिर के मध्य भाग में सर्वोच्च सिंहासन पर एक तखती प्रतिष्ठित है यही महर्षि के उपदेश का मूलमंत्र है—इसमें पांच अक्षर वा शब्द हैं.——यथा:

त्यिन	=	Tyin	=	Heaven	स्वर्ग.	天
ते	=	Te	=	Earth	पृथिवी	地
च्यू	=	Chweu=		Emperor	महाराजा	君
चिन्	=	Chin	=	Parent	पितर(माता पिता)	親
श्रि	=	Shir	=	Teacher	आचार्य्य	師

यही शायद पंचदेव पूजा होगी॥

(१) स्वर्ग अर्थात् स्वर्ग स्वामी परमेश्वर की उपासना। अथवा स्वर्ग=सुख विशेष की प्राप्ति के उद्योग में लगना॥

(२) पृथिवी अर्थात् पृथिवीस्थ सब लोगों से प्रीति पूर्वक यथायोग्य वर्ताव करना। अथवा पृथिवीस्थ अनेकों आवश्यकीय वस्तुओं का उत्पन्न वा आविर्भाव करना। अथवा पृथिवी के धारण गुण विशेष को अपने में धारण करना॥

(३) महाराजा=राजभक्ति से तात्पर्य्य है। सदा राज भक्त रहकर राज सेवा को ईमानदारी और विश्वास के साथ करना॥

(४) पितर=माता पिता की सेवा करना॥

(५) आचार्य्य=आचार्य्य सेवा अर्थात् गुरु के उपदेशों को अपने जीवन में चरितार्थ करना। अपने आचरणों और स्वभावों को शास्त्रों के आदेशानुकूल बनाना॥

—राजकीय पूजा—

साल में दो वेर महाराजाधिराज उपरोक्त कान्फूशियन मंदिर में जाया करते हैं और दो वार घुटना टेक कर छः वार भूमि तक शिर नवाते और प्रार्थना करते हैं:—

"हे पूर्ण ज्ञानी तेरी महिमा वड़ी है! तेरी पूरी पवित्रता है। तेरी शिक्षा सम्पूर्ण है। मनुष्य वंश में तेरे वरावर कोई नहीं हुवा। सव राजा तेरा पूर्ण आदर करते हैं। तेरी व्यवस्थायें महाप्रताप से हमारे पास आई हैं। तू राज्य का प्रतिपालक है। और प्रजा का संरक्षक है। सो हे महापुरुष तू सकल राजकाज और प्रजा के रीति व्यौहारों में सहायक हो"

इसीप्रकार समस्त देश में हर कहीं के अध्यक्ष लोग अपने; अपने नगर के मंदिरों पर जाकर कान्फ्यूसंसी की उपासना करते हैं॥

सब स्कूलों पाठ शालाओं, कालिजों और विद्या एवं नीति शिक्षालयों में महात्मा के नाम की तखतियां लटकती रहती हैं जिनको सभी लोग बड़े भक्ति भाव से प्रणाम करते हैं॥

एक समय था कि जब कान्फ्यूशस को बन्दी गृहमें डाला गयाथा! और एक समय आज है कि घरघर वही महापुरुष परमेश्वर का स्थान अधिकार किये हैं॥

महात्मा ईसामसीह के जीवन समय में उनका भी यही हालथा! हाय हाय! लोगोंने उस बड़े शिक्षक को शूली तक देडाली!!! परन्तु आज वही महापुरुष परमेश्वर के गोदका एकलौता प्यारा बेटा कहला कर समस्तयूरोप देश पर राज्य कररहा है॥

इटाली के महापुरुष मेज़ीनी का भी आदर उनके जीवन काल में कुछ नहीं हुवा परन्तु आज दिन न केवल इटाली वरन समस्त यूरोप उनके नामका गुण गायन करता है॥

सो क्याजानैं संसारकी लीलाही कुछ इसी ढंगकी है। सीधी सच्चीवात और सबके भले कीही वात ठीक समय पर लोग मानने को तय्यारही नहीं हुवा करते!!!

अन्ततः मानना पड़ता है। परन्तु प्रत्यक्षतः नहीं मानेंगे!

ऐसी दशा में जबकि सृष्टि प्रवाहही का यही लेखा देखाजाता है तो यदि हमारे देशने महर्षि दयानन्द सरस्वती का उचित आदर नहीं किया तो कोई आश्चर्य्य की वातनहीं है॥

आश्चर्य्य चाहे न हो। पर दुःख अवश्यही है!!!

दुःख इसलिये कि संसार के अन्यान्य देशोंने जिनके उन्नतिका समय अब आया है—अर्थात् "जन्म दरिद्र मनहुँनिधिपाई" जन्मके नीचों को ऊंचा बनने के विचार और शिक्षायें विलम्ब से समझाई पड़ना स्वाभाविकही है। सो यदि उनलोगोंने अपने शिक्षकों की वात तत्काल न मानी तो बड़े अचरज की वात नहीं है। परन्तु—

आर्य्यावर्त देश जो विद्या शिक्षा, नीति शिक्षा और सभ्यता शिक्षा में समस्त

संसार का आदि गुरूथा, यदि वह भी अपने सच्चे शिक्षक का आदर करने और शिक्षा—वही प्राचीन शिक्षा, सर्वादि शिक्षा-ग्रहण करने में आगा पीछा और टालमटोल करे। इतनाही नहीं, वरन शिक्षक का अनादर भी करे तो आपही वताइये ! प्रिय पाठक ! इससे अधिक और दुःख की बात ही क्या होसकती है ?

परन्तु प्रियवर ! स्मरण रखिये-

आवैंगे वौर रसालन में-
अरु कोकिल डारन में विहरैंगे-
एक दिना नतु एक दिना।
यहि भारत के दिन फेरि फिरैंगे॥

क्या हुवा-यदि जीवन काल में ऋषि दयानन्द का आपने आदर नहींकिया! उसके सुधा समान व्याख्यान भी सुनना गवारा नहीं किया ! आज भी उसकी अनमोल शिक्षायें—हां-वही शिक्षायें जिनके कारण आप एक समय में जगद्गुरु जगत् राजाधिराज-परिव्राट् और साम्राट् वने हुवे थे उन्हें पसन्द नहीं करते ! परन्तु समय आवेगा कि आप और आपकी सन्तान उन्हीं ऋषिराज के लिये विसूर विसूर कर रुदन करैंगे !

अतीत कालके लिये पश्चात्ताप करैंगे ! कि क्यों अनमोल समय खोदिया। क्यों न समयपर उस महाशिक्षककी चितावनीपर ध्यान दिया !

आप चाहैंगे, और निःसन्देह चाहैंगे कि फिरभी एकवार ऋषिराज पधार कर हमारी जन्मभूमिको पवित्र करता !

हम में से प्रत्येक जनका हृदय महर्षि के उपदेशों के संग्रहीत करनेका भंडार वनैगा। और सभी लोग वैदिक शिक्षाओं के प्रकाश करनेके कारण ऋषि दयानन्दका नाम परमभक्तिके साथ स्मरण करैंगे॥

सो हे प्यारे मित्रो ! देशके सच्चे शुभचिन्तको और देश दशाके अभिज्ञ सज्जनो ! जिन शिक्षाओंको हमारे परमपूर्वज मानते रहे हैं और जिनके कारण हमारा देश संसार शिरोमणि वनाथा उन्हीं शिक्षाओंको वर्तमान अवस्थानुकूल मानने में हम सभों को क्यों आगा पीछा करना चाहिये ?

समय हमको वता रहा है कि हमारी वर्तमान आवश्यकतायें क्या हैं ? और स्वामी दयानन्द की शिक्षायें (जो वास्तविक एकमात्र वेद की शिक्षायें हैं)

वता रही हैं कि उन आवश्यकताओं की पूर्ति किस भांति होसकती है।

सोजव इन्ही दोनों बड़े प्रश्नों का समाधान होजाय तो आपको अधिक चाहियेही क्या?

सो प्रत्यक्ष देखते हुवे तो हिन्दू समाज इन शिक्षाओं के ग्रहण करने में जितनीही विलम्ब करती है मानों समयानुकूल सम्प्रत उन्नति पथगामी होनेमें उतनीही अधिक देर होती है॥

याद रहै—हमारे आजकल के चरित्र इतिहास रूप में हमारी भावी सन्तान के सन्मुख उपस्थित होंगे। तनिक अन्तरात्मा से विचार तो कीजिये कि हमारी उपेक्षा और निरादर वा सच्ची वात का अपमान करना और उन्नति पथ से दूर दूर भागना भावी संसार के सन्मुख हमें किस रूप में उपस्थित करैगा?

वह आयन्दा दुनियां (जिसके हम पूर्वज कहावैंगे) हमको क्या सुनाम देगी?

यही सव चिन्तायें और अपने हिन्दू समाज की उपेक्षा जव हृदय चक्षु के सन्मुख आन खड़ी होती हैं तव दुःख का मानो दावानल दहकने लगता है!!!

भगवान् कव शान्ति प्रदान करैंगे?

—महात्मा लाओत्सी—

कृष्टीय पादरियों के कथनानुसार महात्मा ला-ओ-त्सी का जन्म मसीह से छः सौ वरस पहिले चीन देश में हुवा था॥

परन्तु चीना लोगों के मतानुसार यह महापुरुष महात्मा कान्फ्यूशस के सम कालीन थे॥

इस नाम का शब्दार्थ "वूढ़ा वालक" है। जन श्रुति है, कि जव उनका जन्म हुवा था तभी वह वूढ़े थे॥

शायद हमारे श्रीमद्भागवत के श्रीशुकदेव स्वामी के अनुरूप ही इनका भी वृत्तान्त होगा॥

इनकी शिक्षा विशेषतः योगशास्त्र और उपनिषदों की शिक्षाओं के भांति थीं॥

प्राचीन चीना विद्वानों का यह भी मत है कि यह आर्य्यावर्त से शिक्षा पाकर आये थे॥

इनके उपदेश ग्रन्थ भी सम्भवतः प्राचीन आर्य्यावर्तीय (कदाचित् पाली) भाषा में हैं॥

इनकी शिक्षा थी कि तपस्या करके "तौऊ" (शायद तत्त्वमसि) में लीन हो जावैं ॥ "तौऊ" सनातन मार्ग है। उसी में लीन होना मुक्ति है। वह सब कुछ है। उसके भिन्न और कुछ भी नहीं है ॥ वह सब कुछ का कारण और सब कुछ का फल है ॥

"तौऊ" से सब वस्तु उत्पन्न हुईं, उसी की ओर सब कुछ फिरता है और अन्त को उसी में सब कुछ लीन हो जायगा ॥

महात्मा "ला-ओ-त्सी" का उपदेश यह था कि समस्त मनुष्य अन्त को समस्तेश्वरी माता में लीन होजावैं। और उसी की प्रस्तुतियां जीवन काल में करते रहैं ॥

परन्तु यह बात प्रत्यक्ष है कि ऐसी बड़ी विज्ञान शिक्षाओं को सर्व साधारण लोग जान वा मान नहीं सकते!

प्रत्यक्ष प्रमाण के लिये हिन्दुस्तान ही को देख लीजिये! जहां ज्ञान विज्ञान की पराकाष्ठा—चरम सीमा होगई थी तहां आज कैसी कैसी तुच्छ और नीच रीतैं और कुमति प्रस्तुत हो गई हैं जिनका उल्लेख करना भी सभ्य समुदाय में हास्यास्पद होना है!!!

सो चीन में भी इन महापुरुष के विषय कहानियां गढ़ी गईं!

कहते हैं कि 'ला-ओ-त्सी' ने मन्त्र बलसे अमृत जल लाकर पीलिया था सो उसी के कारण अमर होगया ॥

चेलोंने भी चाहा कि हम भी वैसाही करैं। सो सब लोग मन्त्रौं के साधन के पीछे पड़गये! जहां ढूंढ़नेवाले बहुत होते हैं तहां भुलानेवाले भी कम नहीं होते! सो "तौऊ" का विज्ञान मय धर्म शीघ्रही टोना जादू और जन्तर मन्तर के भ्रम सागर में डूब गया!!!

सब पहाड़ों में लोग उन बूटियों के खोज में फिरने लगे कि जिनकें खाने से अमर हों। और सब सागरों में खोजनेलगे कि वह टापू कहां है कि जहां अमर मनुष्य सदा के सुख में जीते हैं ॥

जितनी लाभदायक शिक्षायें महात्मा 'लाओत्सी' के मुख से निकली थीं सभी अनर्थ में परिवर्तित होगईं! और टोना टनमन यहांतक प्रबलहुवा कि महाराजा के दरबार में भी उत्तम समझा जानेलगा!!!

महात्मा 'लाओत्सी' के धर्मप्रचारका यह फल देख सुनकर हमको अपने देशकी दशाभी विना ननुनच वैसीही दीख पड़नेलगी!

योगशास्त्रकी सिद्धियों कोही लेकर शायद हमारे मारण, मोहन और सावर मंत्रादि अनेकों प्रकारके तन्त्र संगठित हुवे होंगे!

जितने मिथ्या विश्वास और ऊटपटांग बातें हमारे यहां आजकल प्रचलित हैं वह सभी स्यात् मूल में ज्ञान विज्ञानकी ही मट्टी खराबकर रहे हैं!

सच है—वहुत गूढ़बातें सबके समझने की नहीं होतीं! इनमें अवश्यही साधारण लोगोंको भ्रान्ति उत्पन्न होगी!!

सो योग और वेदान्त आदि शास्त्रों में कहे ब्रह्मज्ञानका उपदेश गलियों में खड़े होकर सुनाने की चीज़ नहीं प्रतीत होती!

सर्व साधारण को तो निम्न लिखित वेदाज्ञा के अनुसार उनके कल्याणार्थ प्राकृतिक धर्म-का ज्ञानही सिखाना कर्तव्य है:—

कल्याणी मावदानि जनेभ्यः ब्रह्मराजन्यां शूद्राय
चार्य्याय स्वाय चारणाय ॥ यजु० ॥

वेदका सीधा सच्चा सनातन निर्भ्रान्त और प्राकृत धर्मही सबको शिक्षा करने और मानने योग्य है॥

सचाई ऐसी साफ साफ जैसा कि प्रत्यक्ष जगत् आंखों के सामने।

सो इसीका उपदेश चारोंओर फैलानेसे सुख शान्ति स्थापित होसकती है॥

—महात्मा बुधदेव—

हमारे आर्य्यावर्त देशमें कौनहै जो महात्मा बुधदेवके नामसे परिचित न हो विद्यानुरागी सभी लोग इनमहापुरुषके नाम, काम, उद्देश्य, उपदेश, जीवन, मरण सभी बातों को भली भांति जानते हैं। सो उनके विशेष परिचय का इस जगहपर उल्लेख करना अवश्यही पिष्ठ पेषण होगा।

मसीही सन्‌से ४०० वरस पहिले इनका समय था।

वह समय भारतवर्ष में वड़े धर्म विप्लवका था!

वेदार्थ में मन गढ़न्तों के कारण उन्हीं दिनों लोगोंके मन वेद विमुख होने लगे थे!

प्रजामें बड़ी अशान्ति और परस्परकी द्वेषाग्नि उमड़ रहीथी। ऐसेही समय में इन महापुरुषका जन्महुवा था॥ और देशकी आवश्यकतानुसार उन्होंने अपने उपदेशों का सर्वसार "जीवनकी भलाई" को बताया॥

लगभग आठसौ वर्षौंतक समस्त आर्य्यावर्त में बौद्ध धर्मका पूर्ण प्रचार रहा! राजा प्रजा प्रायः सभीका यह प्रधान धर्म बनगया था।

चीनदेश आर्य्यावर्तका पड़ोसी सहधर्मी और भाई सदासेही है सो उस समय भी आर्य्यावर्तीय राजाओंने चीनको भुलाया नहीं था।

मसीहसे २१६ वर्ष पहिले बौद्ध धर्मोपदेशक लोग चीनदेशको पहिले पहिल भेजेगये। और प्रचार खूब उन्नति पातागया॥

मसीही संवत् ६० में चीनके महाराजाने आर्य्यावर्तको राजदूत भेजाथा जो ग्यारह वर्षतक काशीवास करके बौद्ध धर्म ग्रन्थोंका अध्ययन करता रहाथा। और स्वदेश के लौटनेपर बुधदेव प्रणीत "त्रिपतिका" आदि ग्रन्थ साथ लाया था॥

उसी समय काशीका एक आर्य्य पंडित भी चीनमें पधाराथा। और बहुत दिनोंतक वहां रहकर चीना भाषाका भली भांति अध्ययन करके त्रिपतिका ग्रन्थका उलथा उक्त भाषा में करके बड़ा यश प्राप्तकिया था॥

मसीही संवत् ६२९ में एक चीन देशीय बौद्ध विद्वान् जवानसिंह (यूवाङ्ग-सिंह) ने इसलिये विदेश यात्रा की थी कि महात्मा बुधदेव के जो ग्रन्थ चीन देश में नहीं मिलते उनको खोज खोज कर स्वदेश को लावैं और उनकी शिक्षा का प्रचार करैं॥

यह महाशय सत्रह वर्ष पर्य्यन्त तातार, तिब्बत, हिन्द और लङ्का आदि देशों में निरन्तर भ्रमण करते रहे। और अन्त को अपने साथ छःसौ सत्तावन जिल्दैं विद्या और धर्म्म सम्बन्धी पुस्तकों की एवं अन्यान्य अनेकोंप्रकार के पदार्थ स्वदेश को लेआये॥

चीन में लौटने पर इनका बड़ा भारी आदर सन्मान हुवाथा। विद्वान् चीना लोग अबतक उनका नाम बड़ी श्रद्धा और भक्ति से स्मरण करतेहैं॥

उस समय बौद्ध धर्म का प्रचार चीन देश में भी इतना अधिक बढ़ गयाथा कि अनेकों राजा लोग अपने राज्याधिकार परित्याग करके बौद्ध धर्म के आचार्य्य बन गयेथे॥

सत्य है:-सत्यश्रमाभ्यां सकलार्थसिद्धिः॥ ऐसा कौनसा काम है जो सच्चे उद्योग से सिद्ध नहीं होसकता ?

जवतक विद्या का यथार्थ प्रचार रहा लोग धर्मशास्त्रों को सार्थ अध्ययन करते रहे तवतक तो व्यवस्था अच्छी चली । परन्तु धीरे धीरे वही विज्ञान सम्मत बौद्धधर्म अनेकों प्रकार के मिथ्या विश्वासों का केन्द्र वनगया !!!

महात्मा बुधके समयकी जिन वस्तुओं को उपरोक्त यात्री पण्डित आर्य्यावर्त से लायाथा उन्हीं के स्थापनार्थ पीछे मन्दिर वनाये गये और वह वस्तुवें और पुस्तकें दर्शनीय और पवित्र समझी जाने लगीं ॥

बुध देव की ध्यानावस्थित सुन्दर सुन्दर शान्तरूप मूर्तियां भी वनीं स्थापनायें हुई और पुजा धूप दीप नैवेद्यादि से होनेलगी ॥

पीकिन बौद्ध मन्दिर और लामा गुरुकुल ।

लामा मन्दिर—पीकिन शाही शहर की चारदीवारी के वाहर परन्तु विल्कुल निकटही एक प्रशस्त चतुर्वेष्टन है ।

इसीका नाम लामा मन्दिर है। भीतर खूब ऊँचे सहन पर अच्छा लम्बा चौड़ा मन्दिर वनाहै। इमारत पक्की छत खपरैल-परन्तु खपड़े ऐसे मोटे और चमकीले कि कांच की वड़ी वड़ी ईंटों की भांति देखपड़ते हैं । उनपर रंगविरंगी फूल पत्तियां कढ़ी हुई दीवारों पर भी सुन्दर सुन्दर रंग चढ़ेहुवे दर्शकों का मनमोहन करते हैं ॥ सामने सहन में दो वड़े वड़े ऊँचे स्तम्भगड़े हैं । परन्तु आज उनपर पताका नहीं फहराती है ॥

इस वड़े सहन के दोनों पार्श्वों में दीवार के वाहर वहुत से मकानात वने हैं। इनमें लामा गुरू, शिक्षक और शिष्य गण रहतेथे ॥

वीचके मन्दिर में तीन वड़े वड़े "हाल" (आलय) हैं वीच के हाल में खूव ऊँचे आसन पर पित्तल की एक वहुत भारी (शायद सैकड़ों मन होगी) वुध देवकी ध्यानावस्थित शान्तमूर्ति स्थापित है। उसके पीछे तीन, और दोनों ओर दोदो, और मूर्तियां हैं ॥

सन्मुख दो द्वारपाल वा परिचारक मूर्तियां खड़ी हैं।

प्राङ्गण में उपासना की चौकियां (सैकड़ों) कतार से लगीहुई हैं ॥

दोनों ओरके दूसरे दोदालानोंमें बीसियों विचित्र विचित्र प्रकार की मूर्तियां स्थापित हैं कोई राक्षस की भांति, कोई ढाल तलवार लिये, कोई मनुष्य पर सवार, कोई चीते पर, कोई कूकुर पर। कई नग्न मूर्तियां और कई सस्त्रीक नग्न मूर्तियां भी हैं। एक पीतल की बड़ी भारी मूर्ति है जिसके हज़ारों हाथ पैर और हज़ारों शिर भी हैं। तीन शिर की तो कई मूर्तियां हैं ॥

हिन्दू मन्दिरों की भांति धूपदीप के सामान भी सब मौजूद हैं परन्तु पूजा मेजों पर कीजातीहै। देवताके सन्मुख मेज पर धूपदीप नैवेद्यादि रखकर स्तुति पाठ करते हैं ॥

दीवारों के किनारे किनारे बड़े बड़े अलमारों में पुस्तकें भरीहैं। यह पुस्तकें पत्रे पत्रे अलग और बस्तों में बांधी हुई हैं, हज़ारों पुस्तकें हैं बहुतेरी तिब्बती भाषा में हैं।

एक खूब बड़ा सा गोल गुम्बद है हज़ारों खिड़कियों की भांति काठ कटे हैं यह गुम्बद भूमि पर इस तरह बनाया गया है कि घुमाने से घूमने लगता है। सब ओर घंटियां लगी हुई हैं। रोशनी के लालटैन लटकाये जाते हैं। घुमाने से घंटियां बजने लगती हैं। यह गुम्बद भी एक बड़ा पुस्तकालय है। हज़ारों खिड़कियां जो बनी हैं वह सब पुस्तकें रखने के दराज़ हैं ॥

कई प्रकार के वाद्य यन्त्र इस मंदिर में हैं। बड़ी लम्बी लम्बी तुरहियां और आरती उतारने वाली घंटियां और बड़े बड़े घंटे भी हैं ॥

स्थान स्थानपर काठके पहरेदार सिपाही खड़े हैं जोकि लोहे के कवच पहिने हुये तरवार हाथ में लिये हैं ॥

दीवारों पर ठौर ठौर और दरवाज़ोंपर शास्त्रवचन वा उपदेशवाक्य सुन्दर सुनहरे अक्षरों में लिखे हुवे हैं ॥

यही सब लामा मंदिर की लालिमा और शोभा है।

आज कल यद्यपि बौद्ध पुजारी लोग इस मन्दिर में मौजूद नहीं हैं और न हमको उनकी उपासना और पूजा देखने का अवसर ही मिल सका तथापि सुन ने से यह विदित हुवा कि हिन्दुस्तान की भांति यहां (चीन में) भी प्रत्येक मनोकामना के लिये अलग अलग देवता की आराधना की जाती है ॥ यथा पुत्र

कामना वाले दयादेवी की उपासना करें इत्यादि-इसी कारणसे भांति भांति के देवताओं की स्थापना कीगई है॥

यह सब लीला देखने से हमारा यह विश्वास बिलकुल ही पक्का हो जाता है कि हमारा साम्प्रतिक हिन्दू धरम इसी बौद्ध धरम की ही सन्तान है।

यदि अधिक अन्वेषण पूर्वक हिन्दू धर्म के निकास वा उत्पत्ति का खोज करें तो साफ साफ ज्ञात होगा कि सचमुच आज कल का हमारा प्रचलित हिन्दूधर्म मूर्त्तिपूजा—श्राद्ध-तर्पण—तीर्थ उपचार आदि सभी कर्म शुद्ध बौद्ध धर्म का विगाड़ मात्रही है॥ और यह वैदिक धर्म का पूरा वैरी हुई है इसमें कुछ संदेह नहीं। फिर हम क्यों व्यर्थ की परेशानी उठाकर मूर्तिपूजा का विधान वेदों में तलाश करने की ज़िद करके दिलदिमाग दोनों बरबाद करते फिरें?

—लामा गुरुकुल—

गुरुकुल क्या यह तो एक सन्तों का अखाड़ा है जैसे अयोध्या मथुरा आदि में संड मुसंड सन्त लोग दल बांधकर "रघुनाथदास का अखाड़ा बावा बरधानन्द का अखाड़ा" आदि कहकर रहते हैं उसी प्रकार का एक अखाड़ा, यह "लामा गुरु कुल" भी है॥ इसमें चार पांच सौ मुंडे मुचंड लामा गुरू और चेले रहते हैं॥ यह मंदिर भी बहुत बड़ा कई मील के घेरे में है घेरों के भीतर घेरे और उनके भीतर घेरे-घेरे क्या भूल भुलैया हैं॥

बीसियों आङ्गन प्राङ्गन पार करके एक बहुत बड़ा सहन है। यहां पर एक खूब लम्बा चौड़ा ऊंचा मन्दिर बना हुवा है। इसमें एक बहुत बड़ी भारी ७५ फुट लम्बी और खूब मोटी ताज़ी चतुर्भुजी मूर्ति स्थापित है॥ हाथों में शङ्ख चक्र गदा पद्म शोभायमान हैं। हाथ वाले कमल फूल की जड़ नाभि में लगी हुई है॥

और तमाम बदन पर हज़ारों छोटी छोटी ध्यानावस्थित मूर्तियां बनी हुई हैं यह मूर्त्ति काष्ठमय है परन्तु रंगों से ऐसी शोभायमान बनी है कि काठ बिलकुल मालूम नहीं होता। सब अंग प्रत्यंग आभूषणों से विभूषित हैं॥

इमारत दो मंजिली है। सो मूर्त्ति के ऊपर का भाग अटारी पर से देखने से अच्छी तरह दिखलाई पड़ता है॥

इस बड़ी मूर्त्ति के सिवाय और भी हजारों मूर्त्तियां ठौर ठौर पर स्थापित की हुई हैं। और सभों के सन्मुख मेजोंपर पूजाके सब सामान मौजूद हैं।

हिन्दुस्तान के सभी प्रान्तों और समुदायों की मिला जुला कर कुल जितने रकम की मूर्त्तियां आपने देखी वा पूजी होंगी अथवा सुनीही होंगी वह सब तो यहां प्रस्तुत हुई हैं—उनके अतिरिक्त और भी न जानें कितने प्रकार की मूर्त्तें हैं—हमतो नहीं गिन सके!

तीन सिर छः हाथ पैर—तीन नेत्र—हज़ार हाथ पांव हज़ार सिर—चार सिर दो पैर—हाथी का सिर मनुष्य का धड़—मनुष्य का सिर—सर्प का धड़—बैल का धड़—मनुष्य का सिर—मुंडमाल पहिने—बाघम्बर बिछाये—

मनुष्य की खाल सिर पैर समेत बिछाये, शेरकी खाल बिछाये, मनुष्यको पांवों तले दबाये—इत्यादि न जाने क्या क्या विचित्र मूर्तियां स्थापित हैं॥

बीसियों प्राङ्गण और मंदिर हैं, सभों में बड़े बड़े "हाल" हैं उनमें लम्बी लम्बी कतारों से चौकियां और आसन बिछेहुवे हैं और पुस्तकों के बड़े बड़े अलमारे सजे हुवे हैं।

प्रत्येक मंदिर में पूजाकी सामग्री नैवेद्य, जव धूपबत्तियां और दीप तय्यार रहती हैं जोकि पंडा लोग दामपर यात्रियों को देते हैं॥

प्रत्येक दीवार द्वार और पट्टियोंपर शास्त्र वचन स्वर्णाक्षरों में लिखेहुवे हैं। छत ऐसी सुन्दर रूपमें चित्र विचित्र रंगोंसे सजी है जिनके बीचमें बड़ी खूबसूरती से मंत्रलिखेहुवे हैं कि चाहे जिसतरफ से उनको पढ़िये सुन्दर रीतिसे शब्द बनजाते हैं॥ "ओमानीपद्माहवं"

यह वचन ठौर ठौरपर असंख्य बार लिखा हुवाहै॥ प्रत्येक हवन कुंडपर—चौकीपर—घंटा घंटियों पर पुस्तकपर द्वार दीवारपर यहांतक कि परदे के कपड़ों पर सर्वत्र यह वचन लिखाहुवा है॥

एक पत्थर का विशाल पर्वत मंदिर के भीतरही बनाहुवा है। ऐसा विचित्र रूपसे काटकाटकर खोह कन्दरा—नदी झरना झाड़ झंखाड़—इत्यादि पार्वतीय दृश्य बनाये हैं कि देखकर मानवी कारीगरी को प्रकृतिकी बराबरी देनेको मन चलायमान होजाता है॥

इसके कन्दराओं में सैकड़ों ध्यानावस्थित मूर्तियां विराजमान हैं॥

कहते थे कि यह कैलास पर्वत है और कन्दराओं में पांच सौ बौद्ध साधु लोग तपस्या करते हैं॥

हमने एक पंडा से साधारण पूजा की रीति पूछी तो उसने तीन बेर घुटने टेक कर मूर्त्ति के सन्मुख दण्डवत् प्रणाम करते हुवे यह शब्द उच्चारण कियेः–

नमो महते–नमो शान्ताय–नमो धर्माय॥

उच्चारण अस्पष्ट था परन्तु हमारे कानों को उसके वचन कुछ ऐसे ही सुन पड़े थे॥

और भी तीन प्रणाम इन वचनों से करते हैं:—

नमोधर्माय

नमो बौद्धाय

नमो समुदाय

इन वाक्यों को चीना भाषा में उलथा करके जो उनलोगोंने बतलाया उस का तातपर्य्य कुछ ऐसा जान पड़ताथा:—

नमोधर्माय=बुधदेव प्रणीत पुस्तकों में वर्णित धर्मको और उपदेशों को नमस्कार।

नमो बौद्धाय=परम पुनीत आचार्य्य बुधदेव को नमस्कार।

नमोसमुदाय=महात्मा बुधदेव के शिष्यवर्गों वा धर्म प्रचारकों को नमस्कार॥

इसमंदिर में जो सैकड़ों पुजारी वा सन्त रहते हैं उनकी संख्या इनदिनों लगभग तीन चारसौ के कहते थे। इनमें थोड़ी अवस्था के बालकों से लेकर बूढ़े पुरुषोंतक हैं॥

इनके बड़े महन्त और लामा गुरू तिब्बती हैं।

उनसे भेंटकरके हमको बड़ी प्रसन्नता हुई॥

लामा गुरु तिब्बती और उनके एक सहवर्ती जो चीन के निवासी हैं अच्छे विद्वान् जान पड़ते थे॥

दोनों महाशयों की पोशाक हिन्दुस्तानी अंगरखा और टोप तथा चुस्त पायजामा और ऊनी जूताथा॥

इन महाशयोंने हम लोगों की चाय पान से खातिरदारी की ॥

इन से बहुत सी बातें हुईं। अनेकों पुस्तकें भी उन्होंने हमको दिखलाईं धर्म सम्बन्धी बहुत सी बातें कही सुनी। परन्तु दुर्भाग्य वश न तो मैं तिब्बती वा चीनी भाषा ही समझ सकता था और न हमारे साथ का इन्टर प्रिटर (दुभाषिया) धर्म सम्बन्धी बातों को अंग्रेजी में अच्छी तरह समझा ही सकता था! इस कारण उनकी बातों से हमारा यथोचित उपकार न हो सका॥

ज्ञात हुवा कि जिस घराने के यह लामा गुरू हैं उसके आदि पुरुष दो सौ वर्ष हुवे तिब्बत से चीन में आये थे॥

और यह सदा तिब्बत के प्रधान लामा के पास जाया आया करते हैं और वहीं से दीक्षा प्राप्त करते हैं॥

हमारा परिचय जिज्ञासा करनेके उपरांत उन्होंने स्वामी दयानन्द सरस्वती की प्रशंसा करके कहा कि "उस महा गुरू के नामसे तो हमभी परिचित हैं और उनके उपदेशों की चर्चा भी सुनी है परन्तु आर्य्यावर्त में जाकर उनके दर्शन प्राप्त करने की लालसाही रहगई"! उन्होंने और भी कहा कि "हमें ज्ञात है कि आर्य्यावर्त में आजकल मूर्तिपूजा निषेध की बड़ी चर्चा चल रही है और हम भी चाहते हैं कि बौद्ध धर्म के बीचसे मूर्तिपूजा निकाल दीजाय परन्तु ऐसे उपदेश का अबतक अवसर नहीं मिला है"।

बात चीत के बीच में उन्होंने यह भी कहा कि "आप लोग हिन्दुस्तानी होने से हमारे भाईही हैं फिर क्या हमारी सहायता नहीं करेंगे?"

हमने सहानुभूति प्रगट करते हुवे जिज्ञासा की कि किसप्रकार की सहायता उन्हें अभीष्ट है? तब गुरू ने हँसकर गम्भीर भावसे कहा कि "धर्म स्वीकार करनाही सहायता है"— तात्पर्य्य बौद्ध धर्मसे था॥

इसीप्रकार बात चीत होने के पश्चात् हम लोग दक्षिणादि से गुरु सेवा कर के "लामा गुरु कुल" से वापिस आये॥

—दैवी बुध मूर्ति—

जन श्रुति है कि बुध भगवान् की पूजा मनुष्य की स्थापना नहीं है वरन ईश्वर का आदेश है। ईश्वर का आदेश केवल शास्त्रों में ही नहीं वरन सृष्टि कर्म द्वारा भी प्रगट है।

परमेश्वर जैसे मनुष्यादि प्राणियों को सृजन करते हैं वैसेही मनुष्यों के पूजा अर्चा के लिये बुध भगवान् की प्रतिमायें भी रचते हैं। अथवा उन मूर्तियों में स्वयम् परमेश्वरही विद्यमान हैं॥ अस्तुः—

यह मूर्तियां अत्यन्त छोटी छोटी धातु निर्मित आंख कान नाक हाथ पांव पेट सभी अवयवों के साहित मोती जैसे सुन्दर चमकीले पदार्थ के गर्भ में होती हैं। इनकी रचना वास्तविक अलौकिक और मानवी रचनासे भिन्नप्रकार की होती है॥ (मैंने इन मूर्तों को देखा नहीं केवल सुनाही है)

इसी से लोग कहने लगे कि इनका पूजाविधान परमेश्वर के आदेश से है। ऐसेही ऐसे विचार देश में दृढ़ता पाते गये और अनेकानेक मंदिर मूर्तियों के स्थापनार्थ निर्मित हुवे। सहस्रों पुरोहित बढ़े-पूजा अर्चा का रोज़गार जारी होगया॥ और मूर्तियों में प्रजा का विश्वास निरंतर बढ़ता गया॥

आज महापुरुष कान्फ्यूशस का जन्मस्थान चीन देश बौद्धधर्म समावेश से मूर्ति पूजा के गर्त में डूबा हुवा है !!!

हमारे देश आर्य्यावर्त में भी ऐसे अनेकों अलौकिक कार्य्य दिखाये जाते हैं।

कालिया कन्त का हुक्का-शालिग्राम के गर्भ में सुवर्ण-नर्मदा के रेतसे शिव मूर्तों की उत्पत्ति—जगन्नाथ में भात पकना इत्यादि—

परन्तु इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि यह सब अलौकिक वा आश्चर्य्य कार्य्य देखे आंख मूंदकरही जाते हैं!

जिन लोगों ने आंख उघार कर देखा है उन्हें कुछ औरही दीख पड़ा है! हिन्दुस्तान के आश्चर्य्य कार्य्यों को किसने किस आंख से वा किस भांतिसे देखा है सो कहने की यहां पर विशेष आवश्यकता नहीं है। यहां मैं केवल चीन की ही बात कहूंगा।

"परमेश्वर रचित बुधमूर्ति" को एक अंगरेज पादरी ने खुली हुई आंखों से देखा तो क्या पाया कि मूर्ति तो वास्तविक पित्तल की ढाली हुई है परन्तु उस पर मोती की एक चादर सी चढ़ी हुई है॥

यह लिफाफा किस भांति चढ़ाया जा सकता है? इसका अन्वेषण करते हुवे उक्त पादरी को मालूम हुवा कि यह निःसन्देह मनुष्य कार्य्य नहीं है। तब वह समुद्रकी सीपियों में खोज करने लगा।

जिन खोजा तिन पाइया गहिरे पानी पैठि !

उसको ज्ञात होगया कि लोग मूर्त्तियों को ढाल ढालकर उन सीपियोंमें धर देते हैं जिन में मोती का कस्तूरा रहता है।

कस्तूरों को इस धातु मय कठिन पदार्थ के साथ रहने में कष्ट होता है सो वह मोती के नरम द्रव पदार्थ को उसपर फेर देते हैं॥

इन्हीं मूर्त्तों को निकाल निकाल सर्व साधारण में प्रस्तुत करते हैं और परमेश्वरीय रचना कहकर पूजा कराते हैं॥

देखिये पाठक! दुनियां को ठगने के लिये स्वार्थी लोग कैसे कैसे उपाय रचते हैं?

एक वह महापुरुष होते हैं जो संसार के उपकारार्थ तन मन धन सर्वस्व अर्पण करदेते हैं, और उन्हीं के "नाम लेवा" पीछे ऐसे ऐसे लोग भी उत्पन्न होते हैं जो असली उद्देश्यों और उपदेशों को कुछ का कुछही करडालते हैं!

क्या आप नहीं देखते—हिन्दुस्तान की भी ठीक यही गति हुई है?

इस सम्बन्ध में मन में तो बहुतसी बातें कहने को थीं परन्तु शायद आपको अरोचक हों इसी भय से अधिक न कहकर आप से केवल इतनी ही प्रार्थना करता हूं कि अपने देशकी धर्म सम्बन्धी सभी बातों को आप एक बार निरीक्षण दृष्टि से देख जाइये. सभी भेद आपपर अनायास प्रगट होजायँगे॥

फिर न तो मूर्त्ति पूजा-श्राद्ध कर्म-नियोग-विधवा विवाह-इत्यादि विषयों पर आप को शास्त्रार्थ ही कराने की आवश्यकता रहजायगी और न आर्य्यसमाज और हिन्दूसमाज के बीच का झगड़ाही शेष रहजायगा॥

नित्य के झगड़े ठानते रहने—अनेकों शास्त्रार्थ के नोटिस देने—और व्यर्थ की झंझट रोज रोज उठाते रहने की अपेक्षा क्या आप एकबारही सदा के लिये निबटेरा करदेना अच्छा न समझेंगे?

मान्य पुरुषो! अब झगड़ा चलाते रहने का समय शेष नहीं है! बहुत हो चुकी! अब बस कीजिये। चाहे जिस भांति होसके सब झगड़ों को विहाय नीर क्षीर की भांति एक होजाइये॥

आर्य्यावर्त के शुभ्र चन्द्रानन में जो आज कल लोग अविद्या रूपी कलङ्कालिमा देखने लगे हैं इसे तत्काल दूर करने की चेष्टा कीजिये॥

आप संसार भरके शिक्षक जगत् गुरु थे—आप को अब कौन सिखाने आवैगा ?

आप संसार शिरोमणि थे कौन आप से बड़ा है जो आप को दो बात कहने आवैगा ? ॥

परन्तु हाय ! ! !

वह कौम कि आफ़ाक़ में
जो सर व फलक थी।
वह चाह में अफ़लास के
अवरू व क़ज़ा है !!
जिस क़स्र का था सर
व फलक गुम्बदे अक़्वाल।
अद बार की अब गूंज रही
उस में सदा है !!!

सो भाई ! कबतक हमें इस कलंक को धारन किये हुवे कलंकित कहलाने दोगे !!

अय ! देश के हमदर्द सज्जनो !

तुम्हारी प्यारी सन्तान-जगत् शिक्षकों की दुलारी सन्तान, आज विदेशियों द्वारा असभ्य और अशिक्षित-काली और जंगली कहलाने के अपमान से मर्मान्त दुःखी होकर तुम्हारे शरणापन्न होती है। विद्यादान से उद्धार करो-
उद्धार करो ॥

—शिक्षा विभाग के:—

—परीक्षा भवन—

—मान मंदिर—

—हानलिन अकाडमी—

इन स्थानों का परिचय तो नामही से मिल जाता है। शोक है कि हमको परीक्षा भवन के सिवाय अन्य दोनों स्थान लुटी हुई और भस्मप्राय दशा में देखने पड़े !!!

परीक्षा भवन में कई बड़े बड़े "हाल" और हज़ारों छोटी छोटी पत्थर की कोठरियां हैं ॥

परीक्षा चार शाखों और अनेकों उपशाखों में होती है। सरकारी सेवा इन्हीं परीक्षाओं में उत्तीर्ण व्यक्ति को मिलती है।

प्रवेशिका परीक्षा का नाम "गुण के फूल काढ़ना" है। इस परीक्षा में उत्तीर्ण होनेवाला ज़िले का छोटा हाकिम (मांडारिन=Assistant Magistrate) बनने के योग्य समझा जाता है ॥

परीक्षा देने के लिये हजारों अभिलाषी एकत्रित होते हैं जिन में १५ वर्ष के बालक से लेकर पचास वर्ष के बूढ़े तक होते हैं ॥

"गुण फूल काढ़ने" की परीक्षा में उत्तीर्ण हुवे लोग तीन वर्ष पश्चात् एक और परीक्षा के लिये तय्यार होते हैं जिस को "श्रेष्ठ पद विद्यार्थी की परीक्षा" कहते हैं।

यह बहुत कठिन परीक्षा होती है। और नौदिन में पूरी होती है ॥ परीक्षाका परिणाम ऐसा होता है कि प्रायः सौ अभिलाषियों में एक उत्तीर्ण होता है। और जो इस "श्रेष्ठ पद विद्यार्थी" की सनद पाता है वह अपने नगर में बड़ी मान प्रतिष्ठा के साथ लिया जाता है। लोग उस की बड़ी स्तुति करते हैं ॥

एक और तीसरी परीक्षा होती है जिसका नाम "अधिकारी" कहा जाता है।

एक और भी सर्वोच्च परीक्षा "लेखनी महावन" के नाम से प्रसिद्ध है ॥

यह दोनों परीक्षायें केवल पीकिन राजधानी में होती हैं।

इन्हीं परीक्षाओं के लिये हमारा उपरोक्त "परीक्षा भवन" पीकिन में बना हुवा है ॥

यह भवन बहुत सुन्दर प्रस्तरमय अत्यन्त रमणीय बना हुवा है। परीक्षार्थ पत्थर की कोठरी तो निःसन्देह बहुत ही छोटी-क्या-कालकोठरी है। शायद छः फ़ुट लम्बाई चौड़ाई से अधिक न होगी ॥

इन्हीं कोठरियों में एक एक विद्यार्थी बन्द कर दिया जाता है।

नियत समय (घंटों) तक वहीं रह कर वह परीक्षा सम्बन्धी काग़ज़ पत्र रचता बनाता रहता है। इसी भांति नौदिन वा अधिक दिनों तक भी इम्तहान होता रहता है ॥

जब कोई सरकारी बड़ा पद खाली होता है तो " अधिकारी " परीक्षा पास वालों में से किसी को दिया जाता है।

सब से बड़ी उपाधि " लेखनी महावन " की राजकीय विश्वविद्यालय के अध्यक्षों को मिलती है॥

इन में से विद्या में जो कोई बहुत विख्यात हुवा तो उसके मरणान्तर उसके नाम पर पत्थर का बहुत बड़ा स्तम्भ खड़ा किया जाता है, जिस पर उसके नाम गुण और बड़ाई आदि खोदे होते हैं। यह स्मारकचिह्न कहाता है॥

ऐसे स्तम्भ पीकिन में बहुत से देखने में आये॥

—मान मन्दिर—

(Peking Observatory.)

आज मान मन्दिर में कुछ भी शेष नहीं है !!! प्राचीन चीना विद्वानों की महाकीर्ति आज केवल काग़ज़ों ही में बच रही है।

इस मान मन्दिर के विषय में एक अंग्रेज़ यात्रीने यों लिखा है:—

This observatory proves the truth of the statement that what England speaks of as the "Dark ages" were days of real scientific advancement in China.

It was founded in 1279 A. D. by the famous Monghal Emperor Kublai Khan, to contain the instruments of the Great Chinese Astronomer Ko Chow Tsing.

Some of these Monghal instruments are still there after all these centuries. The most insteresting of them is a very curious water-clock, which marks the time by the rate at which water drips away.

The other instruments were erected in the time of the Ming dynasty nearly 250 years ago under the advice of the Jesuit fathers who had far greater power in Peking then, than any missionaries have had since.

जिस "समय" को अंग्रेज़ लोग "अन्धकार का ज़माना" कहते हैं वह वास्तव में चीन देश में वैज्ञानिक उन्नति का समयथा । पीकिन मानमन्दिर इस बात की प्रत्यक्ष साक्षी है ॥

यह मानमन्दिर मसीही सन् १२७९ में प्रसिद्ध माङ्गल महाराजा (मुगुल वादशाह?) कुवुलयी खान द्वारा निर्मित हुवा था चीना महाज्योतिषी "कवचसिंह" के वैज्ञानिक यन्त्रोंकी स्थापना के लियेही यह मन्दिर वनवाया गया था ॥

कई शताब्दियां व्यतीत होजाने के पश्चात् अव भी (सात आठ वर्ष पीछे की वात है) कई माङ्गल यन्त्र यहां मौजूदहैं ॥

यहां की जल घटिका जिसमें जल कणोंसे समय प्रत्यक्ष होता है आश्चर्य्य मय पदार्थ है ॥

चीना मिंग महाराजों के राजत्व काल में (मिंगवंश में चीन का राज्य ईस्वी सन् १३६८ से १६२८ तक रहा था) (शायद सत्रहवीं ईस्वी शताव्दी में) रूमा पादरी लोगों की ज्योतिष शिक्षा के अनुसार इस मानमन्दिर में अन्यान्य वैज्ञानिक यन्त्र भी निर्मित हुये थे ॥

पाठक! कालचक्र की गति कैसी विलक्षण है सो आपसे कहना नहीं पड़ैगा क्योंकि आप के भी तो अनेकानेक मानमन्दिर सन्मान मन्दिर टूट चुके हैं !!!

---o---

"हानलिन अकाडमी"

इस महा विद्यालय की स्थापना खृष्टीय आठवीं शताव्दी में महाराजा स्वाङ्ग सिंह (Hsuan Tsung) द्वारा हुईथी ॥

यह "साहित्य",—"इतिहास" और "न्याय शास्त्र" के आचार्य्यों का महा शिक्षालय है (वा था)

इस अकाडमी के सभ्यों का नियत कार्य्य यहथा कि राजवंश का इतिहास सिलसिलेवार लिखते रहैं और राज्य के भले कार्य्यों के विषय सुन्दर सुन्दर पद्य छन्द आदि रचना करके वा करवाके देश में प्रचारित करैं ॥

खुशामदीपना (तोषामोद) के कारण अव इसके सभ्य लोग केवल राजा

और रानी की बड़ाई और सुन्दरताई के ही कवित्व लिख कर सन्तुष्ट हो बैठते थे॥

राज घराने में मृत्यु होने पर इस अकाडमी के विद्वानों को नवीन प्रार्थना (उपासना) रचकर समाधिस्थान में जाकर शांति पाठ करना होताथा और शव शिला पर लिखने के लिये छन्द रचना पड़ताथा॥

हानलिन अकाडमी के सभ्य लोग राजसभा के भी सभ्य गिने जातेथे और प्रायः राजकीय परामर्शों में सम्मिलित होतेथे॥

आज इस विद्यालय में कुछ नहीं है—सब सामान असबाब लुटगया। पुस्तकालय ध्वंस होगया। केवल दीवारें नग्नावस्था में खड़ी हुई संसार की असारता बताय रही हैं!!!

—भाषा—

चीनी भाषा में शायद वर्णमाला नहीं है। यह एकाक्षरी भाषा है। चीना लोगों से जिज्ञासा करनेपर ज्ञात हुवा कि उनकी भाषा में २१४ धातुवें (roots) हैं। इन्हीं को चाहे अक्षर कहिये या शब्द। यही सब उलट फेर कर अनेक प्रकार के शब्दों के बनाने वा बोलने में काम आते हैं॥

पादरी लोग कहते हैं कि आदि में जब चीनदेशी लोगों ने लिखने की कल्पना की तब सृष्टि के पदार्थों को देखकर तदनुरूप अक्षरों की भी कल्पना की होगी। इसी से चीनी अक्षरों के स्वरूप पेड़ पल्लव, चांद सूरज, सर्प बिच्छू, इत्यादि की भांति बने हैं॥

कहते हैं कि लिङ्ग भेद में शब्द बदलते नहीं, वाक्यों के अर्थानुसार उनका तात्पर्य्य समझना पड़ता है॥

शब्दों की पहिचान कान से नहीं किन्तु आंख से की जाती है। क्योंकि एकही उच्चारण के पचासों शब्द होते हैं। परन्तु लिखने में स्वरूप भिन्न भिन्न होते हैं। यथा—

"च" एक शब्द है इसको अठारह प्रकार से लिखते हैं और अर्थ भी अठारह होंगे परन्तु उच्चारण सब का एकही है। बात चीत में सम्बन्ध और प्रकरण के अनुसार समझना होगा॥

सुना है कि उच्चारण पांच सौ प्रकारके हैं ॥ समस्त चीन देश में अक्षर एकही प्रकार के प्रचलित हैं परन्तु अन्यान्य प्रान्तों में उच्चारण भिन्न भिन्न प्रकार के हैं। बोली में प्रायः इतनाही अन्तर है जैसे हिन्दी और बंगला में ॥ साम्डारिन भाषा उसे कहते हैं जो हिन्दी या उर्दू बोली की भांति थोड़ी बहुत समस्त देश भर के लोग समझते बोलते हैं ॥ राज कर्मचारी लोग सब जगह वही भाषा बोलते हैं।

विदेशी शक्तियों ने पीकिनी और कन्टानी भाषा को चीन राज भाषा स्वीकार करके इन्हीं में विदेशी अफ़सरों को परीक्षा देने का परामर्श दिया है ॥

पाठक! देखिये तो कैसा भ्रमजाल है?

अच्छा हुआ कि हमारे देश में ऐसी दशा नहीं है!

धातुओं के तो अनेक अर्थ हमारी संस्कृत में भी हैं परन्तु इतना गोल माल नहीं है ॥

गोल माल न रहने पर भी तो आज कल शब्दार्थों में कितनी कलह मची रहती है?

कुछ ठिकाना है?

यह शब्दार्थों का झगड़ाही तो शायद आजकल हमारे बहुतेरे अनर्थों का कारण बन रहा है!!

जो हो। इस शब्द शास्त्र के सम्बन्ध में अज्ञ सिपाही की लेखनी अधिक लिखही क्या सकती है? परन्तु उसका अन्तरात्मा झगड़ों को देखकर अत्यन्त दुःखित हो उठता है। और अपने गण्य मान्य विद्वानों से झगड़ा मिटाने की "अपील" किये विना विश्राम नहीं ले सकता!!!

—पाठशाला—

स्कूल में लड़का पहिले दश बीस धातुओं को मुखाग्र सीखता है। तब उस को एक पुस्तक दी जाती है। जिसका नाम "त्रिगण पाठ" है। यह सार्थनामा पुस्तक तीन तीन शब्दों की लकीरों में लिखी होती है। शिक्षक तीन लकीरों को सुनाता और लड़का हाथ में पुस्तक उठाये हुवे दोहरा दोहरा कर कहता है ॥ तब जाकर बैठ जाता और ऊंचे स्वर से बोल बोल कर स्मरण करता रहता है ॥

पाठ सुनाते समय लड़का शिक्षक की ओर पीठ करके खड़ा होता है न हो कि पुस्तक देख लेवै। इसी हेतु से पाठ सुनाने को "पुस्तक को पीठ देना" कहते हैं॥

पहिला वचन जो लड़का सीखता है वह यह है:—

"मनुष्य स्वभाव से अच्छे हैं"

दूसरे वचन ये हैं:—

"विना ताड़ना के सिखाना शिक्षक को सुस्त प्रगट करता है"

"वह मूल्यवान् पत्थर है जो घिसने से सुन्दर हो जाता है"

इत्यादि—

लड़कों को पहिले कुछ अर्थ नहीं समझाया जाता वे केवल मुखाग्र याद करते रहते हैं॥

जब वे कुछ सीख गये तब शिक्षक कहीं कहीं शब्दों के अर्थ बताने लगता है। दो एक सालकी पढ़ाई के पीछे लड़का वाक्यों के अर्थ जानने लगता है॥ फिर वाक्यों को संयुक्त करना सीखता है। इसी भांति वाक्य रचना—नाम—क्रिया—विशेषण आदि का उपयोग और प्रबंध रचना सीखता है॥ तत्पश्चात् काव्य रचना सिखाई जाती है॥

"त्रिगण पाठ" के पश्चात् "सहस्राक्षराग्रन्थ" और इसके पीछे "चार शास्त्र" फिर "पांच शास्त्र" पढ़ते हैं॥

इन्हीं सभों को भलीभांति भाष्य भाष्यान्तरों सहित पढ़ चुकने पर "गुण फूल" परीक्षा के लिये विद्यार्थी तय्यार समझा जाता है॥

समस्त चीन देश भर में शिक्षा की यही प्रणाली सुनी है॥

ज्ञात हुवा है कि औसत से पुरुषों में दशांश पढ़ लिख सकते हैं परन्तु स्त्रियों में शायद दश हजार में एक भली भांति पढ़ लिख सकती है॥

स्त्री शिक्षा विषय में तो चीन शायद हमारे हिन्दुस्तान से भी गया बीता है!!!

—o—

—कुछ प्राचीन कथा—

चीन देश में तीन जाति के निवासी हैं। आदि वासी। चीना। और मंचू।

कास्पियन समुद्र दक्षिण ओर से एक जाति वाले इस देश पर चढ़े और

आदि वासियों को जय करके आप यहां के अधिपति बने। पीछे यही लोग चीना कहलाये॥

आदि वासी अब बहुत थोड़े कहीं कहीं पार्वतीय प्रान्तों में पाये जाते हैं॥

तातार देश से जो लोग इस देश में आये थे वही "मांचू" कहलाते हैं।

वर्तमान समय में (सन् १९०० ईस्वी) राज्य मांचू वंश का ही है॥

हिन्दुस्तान की भांति चीनियों के प्राचीन इतिहास में भी इतनी असंभव कहानियां भरी पड़ी हैं कि जिन से सत्य का निर्णय करना बहुत कठिन हो जाता है॥

यह लोग कहते हैं कि आदि काल में हमारा एक स्वर्गीय पिता था जिसके समय में स्वर्ग और पृथिवी अलग किये गये।

उसके पीछे तीन राज वंश चले जिन में बारह स्वर्ग वंशी, ग्यारह पृथिवी वंशी और नव मनुष्य वंशी राजा लोग पचासहजार वर्ष तक राज्य करते रहे॥

इनके बाद चीना राज वंश के राजा पुण्याक्षु हुवे तिस पीछे महा पुरुष "फोही" और उनके बाद अर्थात् मसीह के जन्म से तीन हजार वर्ष पहिले महाराजा " (Wang Ti) वाणत्रयी हुवे॥

—चीनाचोटी—

मसीही सन् १६४४ तक चीन वाले सिर के बाल सब लम्बे रखते थे और ऊपर गांठ देकर बांधते थे जैसे बरमा वाले अब तक भी करते हैं॥

तब मंचू महाराजों से यह आज्ञा निकली कि सब पुरुष अपने सिरों को मुंडाया करें केवल ऊपर एक चोटी रक्खें॥

(शायद हिन्दुआनी रीति जारी की गई हो)

बहुत दिनों तक प्रजा इस आज्ञा से नाराज रही। परन्तु पीछे समस्त देश में यही चाल अत्यन्त दृढ़ होगई और लोग इस लम्बी चोटी का बड़ा आदर सन्मान करने लगे॥ चोटी जितनी ही लम्बी हो उतना ही अच्छा समझते हैं॥

शिखा को रेशम की लच्छी डोरी आदि से बढ़ाते भी हैं, और उसके कटने को बड़ी आपद समझते हैं॥

एक दूसरे से क्रोधित होने पर "चोटी कटा" कहकर गाली देते हैं।

अम्वाय और स्वाटो जिलों के लोग अब तक चोटी रखना राजाज्ञा के कारण से गुलामी का चिह्न समझते हैं इस लिये चोटी सिर पर लपेट कर ऊपर पगड़ी बांधते हैं ॥

इस मसीही संवत् १९०० में चीनियों की ऐसी समादृत चोटीने विदेशियों के लिये रस्सी का काम दिया था !!!

हज़ारों चीना लोग एक दूसरे की चोटी से बांध कर इधर से उधर घसीटे जाते और अन्ततः पांत की पांत खड़े करके मानो चोटियों से बांधी हुई टट्टी बनाकर बंदूक की गोलियों के निशाना बना डाले जाते थे !!!

—·—*—·—

—राजमहल आदि इमारतें—

तातार शहर के बीचोंबीच शाही शहर नाम का चतुर्वेष्ठन है । इसीके मध्य में सब राजभवन बने हुवे हैं । चीन की सभी बड़ी बड़ी इमारतें प्रायः चक्रव्यूह का क़िला होती हैं सो राजमहल भी अनेकों आङ्गण प्राङ्गणों से घिरा हुवा है ॥ द्वार दीवार, ईंट, खपरा, खम्भ सतून सभी पीतरङ्ग से सुरंजित हैं ॥

द्वार के सन्मुख ऊँचे ऊँचे पताका स्तम्भ खड़े हैं । श्वेत प्रस्तर मय सहन के दोनों पार्श्वों पर दो स्वर्गीय अजगर दो मयूर और दो सिंह उठे खड़े हैं ।

स्वर्गीय सर्प और मयूर राज चिह्न समझे जाते हैं ।

हिन्दुस्तान में " बाघ बकरी का एक घाट पानी पीना " राजा के सुन्दर न्याय का परिचय देने को लिखा कहा करते हैं । सम्भव है कि चीना लोगों ने सर्प मयूर को एकत्रित स्थापित करने से भी वही तात्पर्य्य लिया हो ॥

शाहदीप राजभवन यद्यपि बहुत बड़ा और विशाल है परन्तु ऋतु की अनुकूलता के लिये भीतर की कोठरियां और बैठकें बिलकुल छोटे हैं ॥

अग्नि स्थान ठौर ठौर बने हैं सब अलंग रेशमी और सोनहरे वस्त्रों से सजे हैं—प्रत्येक वस्त्र वा परदे पर राजचिह्न स्वर्गीय सर्प खिंचा वा कढ़ा हुवा है ॥

सजावट बहुधा विदेशी निर्माण से है यथा घड़ी—वाद्ययन्त्र—दीपावली इत्यादि—इत्यादि सब विदेशी बनीहुई वस्तुवें हैं ॥

ग्रीष्म राजभवन भी इसी चतुर्वेष्ठन के भीतर ऊँचे स्थान में बना हुवा है। सुन्दर उपवन और वाटिका से सुभूषित है - उत्तमता पूर्वक काटे हुवे प्रस्तर मय झरने और वन्य झाड़ियां ठौर ठौर पर मन हरण करते हैं जल विहार बङ्गला, बनविहार बङ्गला, पर्वत विहार बङ्गला, सभी अत्यन्त मनोरंजक हैं॥

पितर प्रासाद-में पूर्वज महाराजाओं और महारणियों के चित्र स्तम्भ और स्मारक आदि की स्थापना है। इस राजमहल में वर्तमान राजपुरुष गण पितर पूजा और आराधना आदि किया करते हैं॥

---*---

—वैदेशिक मन्त्रणाभवन—

(Tsungli yamen)

मसीही संवत् १८६० के तारीख २५ अक्तूबर को लाट एलगिन द्वारा जो इंगलिस्तान चीन का सन्धिपत्र हस्तांकित हुवाथा उसी के अनुकूल " वैदेशिक मन्त्रणा भवन " की स्थापना चीन के सुदक्ष राजकुमार प्रिन्स कुङ्ग (Prinee kung) द्वारा सन् १८६१ ईस्वी में हुईथी॥

उक्त प्रिन्स कुङ्ग महाशयही इस भवन के " प्रधान " नियुक्त हुवेथे। और ईस्वी संवत् १८८४ तक समासीन रहे॥

इस भवन में सभापति के अतिरिक्त आठ अध्यक्ष, आठ मन्त्री, और तीस लेखक थे॥

इंगलिस्तान—फ्रांस—रूस—संयुक्त राज्य अमेरिका—व्यापारी मंडल और मंन्चू रजिस्टरी के अलग अलग विभाग थे॥

इस सभा के मकान में कई सन्मुखीन स्थानों एवं द्वार शिखरों पर नीचे लिखे हुवे वचन सुन्दर स्वर्णाक्षरित पट्टियों पर टंगे हुवे हैं॥:—

" विद्याभ्यास सर्वश्रेष्ठ गुण है "

" भलाई करना सर्व श्रेष्ठ आह्लाद है "

" स्वर्ग और भूमि पर सदा शांति विराजै "

" चीन में और बाहर सर्वत्र सदा शांति और प्रसन्नता विराजै "

इत्यादि—इत्यादि—

सन् १८६० ईस्वी के सुलहनामे के अनुसार चीन का यूरोप से एकप्रकार

सम्बन्ध स्थिर हुआथा और उसी सम्बन्ध रक्षाकी सुविधा के लिये इस मंत्रणा भवन की सृष्टि आवश्यक हुईथी ।

इंगलिस्तान का वैदेशिक भवन " (To reign office) जिन नियमों पर बना है शायद उसी तात्पर्य्य से चीन का "सुंगली यामन" भी बनाथा।

विदेशियों का यातायात और व्यापार सम्बन्ध जारी होने पर उनके अनेक प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने और सद्भाव स्थिर रखने के लिये आवश्यक था कि एक " वैदेशिक भवन " स्थापित किया जावै सो इसीहेतु यह भवन और सभा बनी थी ॥

परन्तु लगभग चालीस वर्षों तक संसार में रहकर भी यह सभा अपने उद्देश्य में कृत कार्य्य नहीं हुई ॥ अब यह सभा और इसके कार्य्यालय सब समाप्त और ध्वंस होगये हैं !!!

संसार में दो चीज़ें देखी सुनी जाती हैं । "वक्तव्य" और "कर्तव्य" =

" Theory and practice " । सो जहां जिन देशों में और जिन लोगों में यह दोनों समानभाव में रहते हैं ॥

" मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम् "

वहां सुख और शान्ति विराजमान रहती है ।

और जहां इसके विपरीत होता है वहां विपरीत फल भी अवश्य ही भोग पड़ता है ॥

परन्तु एशिया महाद्वीप के बड़े बड़े खंडों के भाग्य न जानें किस काली कन्दरा में जा धँसे हैं कि Theory और practice=वक्तव्य और कर्तव्य बिलकुल ही भिन्न भिन्न रूप धारण करके सन्मुख आते हैं ॥

जिस "सुंगली यामन" के मस्तक पर—

" चङ्ग-वाई-त्यी-फू "—

" Centre outside peace happiness. "

" बाह्याभ्यन्तरः शुचिः "

" स्वदेश परदेश भीतर बाहर सर्वत्र शान्ति और प्रसन्नता विराजै " लिखा हुवा था—जिस कार्य्य के लिये उसका जन्म ही हुवा था-वही " यामिन " (समाज) सदा इसके विरुद्ध कार्य्य करता रहा !!!

जिस जाति का मन्त्रोपदेश " विद्याभ्यास सर्वश्रेष्ठ गुण है " यह हो, वही

नवीन आविर्भावों और आविष्कारों की पूर्ण शत्रु बनी रहै। विचार तो कीजिये पाठक कैसी विचित्र दशा है !!!

यह विचित्रता केवल चीनही में नहीं वरन कई दर्जे चढ़ बढ़कर हमारे हिंदुस्तान में भी घुसी है !!!

मैं कलकत्ता में एक वार एक विद्वान् एम० ए० और अनुभवी (एक कालिज के प्रोफेसर) बंगाली महाशय से आर्य्यसमाज के मन्तव्यामन्तव्य विषय पर बात चीत करता था तब उक्त महाशय स्वामी दयानन्दके मन्तव्य और समाज के नियम सुन समझकर बहुत प्रसन्न हुये परन्तु साथही उन्हों ने यह प्रश्न भी किया कि "यह तो नियम अर्थात् (Theory) वक्तव्य है अब (practice अर्थात्) कर्तव्य वा व्यौहार बर्ताव कैसा है? सोभी यदि इन नियमों के अनुकूल हो तब तो यह समाज निःसन्देह सर्व श्रेष्ठ है॥

इत्यादि—

इससे प्रगटहै कि हमारे बड़े बड़े विद्वान् लोग भी (Theory और practice) वक्तव्य और कर्तव्य को भिन्न भिन्न देखरहे हैं॥

ऐसा तो हईहै !! उनका दृष्टिदोष नहीं हमारा कर्तव्य दोष है॥

हम कहते तो पुकारकर हैं कि हमारा धर्म वेदादिष्ट है।

परन्तु कर्तव्य से दिखला देते हैं कि नहीं नहीं हमारा धर्म कबरिस्तानी-पीरस्तानी—वा ईंट पत्थर है !!!

हम ने वास्तव में "आलस्य" का नाम "शान्ति" और "कायरता" का नाम "सन्तोष" रख छोड़ा है !!!

एक अंग्रेज राजनीतिज्ञ ने चीना जाति के विषयमें यह सम्मति प्रकाशित की थीः—

Every individual Chinaman is a mass of Contradictions, the Gulf between the theory of Chinese Government and its practical administration is not to be bridged. Th e Geographical differences of the country are greater even than those of the U. S. The variations of race are almost equal to those of India. To the Chinaman of the South the Chinaman of the North is

a foreigner, a person speaking a different language, and usually an enemy.

To the Chinaman of the far West the Central authority of the East is an alien and incomprehensible dominion, at any moment an army could be raised in one path of China to operate against another part; public feeling or Community of sentiment is unknown. In fact there is no such thing as "China."

अर्थात्—

प्रत्येक चीन निवासी खुद परस्पर विरोधों का ढेर है ॥ चीना राजनैतिक सिद्धान्त एवं प्रबन्ध जो कार्य में परिणत होता है उस खाढ़ी पर पुल नहीं बँध सकता ! (अर्थात् आईन कुछ औरही है परन्तु शासन दूसरेही प्रकार से होता है) ॥

देश के भौगोलिक विभेद अमरीका के संयुक्त राज्य की अपेक्षा भी अधिक हैं । जातिभेद लगभग हिन्दुस्तान के बराबर है ॥ दक्षिणी चीना, उत्तरी चीना के लिये विदेशी है—भाषा भी भिन्नहै ॥ और साधारणतः वह परस्पर शत्रु हैं ॥

पश्चिम चीना के लिये मध्य चीन की राज व्यवस्था विदेशी बोध होती है । और विश्वास योग्य वा मान्य नहीं होती ॥

चीन के चाहै किसी भाग में एक ठौर पर बड़ी फौज तय्यार हो सकती है जो अपनेही देश के दूसरे भाग पर चढ़ाई करै !

"सर्व सहानुभूति" वा "साधारण अनुराग" से चीना लोग बिलकुल अनजान हैं ! सचतो यह है कि "चीन" नामक कोई समुदाय पदार्थ ही नहीं है ॥

प्रिय पाठक ! इस राय को सुनकर आप अपने आर्य्यावर्त्त के विषय क्या सम्मति देंगे ?

हाय हाय ! हमें तो न जानै अपनी दृष्टि दोष से वा क्यों अपनी दशा इस से भी अधिक पतित दीख पड़ती है !!!

कहिये तो भला ! आप की Public feeling (सर्वसहानुभूति) और Community of sentiment (परस्पर अनुराग) में कितने दरजे की हरारत मौजूद है ?

आह! वह तो " नार्थ चायना " की भांति फ्रीज़ (बर्फ़) दशा में है !!!

परमेश्वर! क्या कभी मार्तंड की प्रचण्डता से यह हमारे दिलों पर जमा हुवा " हेवार " सीझ सकैगा ?

अखिल भुवनेश सहायता करैं !!!

" ग्रीष्म राजभवन "

पीकिन से बाहर करीब १२—१३ मील के ग्रीष्म भवन नामक राज महल है ॥ यद्यपि यह कई मीलों का हाता केवल राज मन्दिरही है तथापि आसपास बहुत सी बस्ती भी बस गई है सो वह एक जुदा नगरही मालूम होता है ॥ बहुत बड़ी लम्बी चौड़ी झील के किनारे पर पहाड़ियों में यह महल क्या नगर बना हुवा है ॥ छोटी छोटी और बड़ी बड़ी झाड़ियों की शोभा—अंगूर अनार—सेब आदि मेवों के झाड़, फूलों के पौधे, और सुन्दर सुन्दर कटे हुवे पत्थरों के छोटे २ स्तम्भ आदि देखनेही पर निर्भर करते हैं ॥

पत्थर की छोटी छोटी कृत्रिम पहाड़ियां और झरने बनाये गये हैं उनपर बनैले फूल और झाड़ैं इस सुघरई से उगाये हैं कि वह सब प्राकृतही जान पड़ते हैं ठौर ठौर पर सुन्दर श्वेत और नीले पत्थरों के पुल और क्यारियां मन मोहन करते हैं ॥

पर्वत के ऊपर आने के लिये घूम घुमाव से काटीहुई सड़क है जो घूमती हुई मीलों के फेर से ऊपरतक पहुंची है। कुल सड़क सुन्दर बंगलानुमा इमारतों से छायादार रंग बिरंगे पत्थरों की बनी हुई है दोनों ओर के दीवारों में बारहदरियां कटीहुई उनके बीच बीच में रोशनदान इस खूबसूरती से बने हुवे हैं कि दिन में उन के शीशों से सूर्य्य की सुन्दर रोशनी आती है और रात्रि में उन्हीं शीशों के बीच मोमबत्तियां जलाने से अपूर्व दीपावली सज जाती है ॥

इसके भिन्न पर्वत काटकाट कर एक भीतरी मार्ग भी बना है जो अनजान के लिये बिलकुल अज्ञात है—भीतरही भीतर पहाड़ोंदरों और खोहों में होते हुवे चाहे जिस जगह घूमते फिरते रहिये कोई कहीं पताही नहीं पा सकेगा ॥

इस पहाड़ी रास्ते में भी ठौर ठौर पर विश्राम भवन बने हैं जिन में प्रत्येक क्षण सुन्दर मन्द पवन शीतलता प्रदान करती रहती है ॥

कई राज महल बड़ी २ कतारों में बने हैं और कई अलग अलग ठौर ठौर पर बने हैं । इन के खपरैल ईंटे आदि सभी पीतवर्ण कांच की चादर से मढ़े हुवे अपूर्व झलक से जगमगाते हैं कि दर्शक का मन मुग्ध होजाता है ॥ दरवाजों खिड़कियों में शीशे इतने भारी भारी लगे हैं कि जिनसे समस्त भवन शीश-महलहीं बन रहे हैं ॥ पन्द्रह बीस फुटतक के लम्बे चौड़े हजारों शीशे महलों की शोभा बढ़ा रहे हैं ॥

यहां पूजा मंदिर भी अनेकोंही हैं—बौद्ध मूर्त्तियों के मंदिर—कान्फूशियस के उपदेश वचनों की स्थापनाके मंदिर—अग्नि स्थान हवन मंदिर आदि आदि सभी उपासना उपयोगी स्थान भी बने हैं ॥

वन विहार–जल विहार—पर्वत विहार—वाटिकाविहार सभी कुछ मौजूद हैं ॥

झीलके किनारे किनारे घाट और बंगले एवं पुष्पोद्यान कैसी सुन्दरतासे बने हैं कि जहां जाने से जेठकी जलती दुपहरी में भी मलय मारुतका आनन्द उप-लब्ध होता है ॥

एक अलँग समुद्री दृश्य बनाया हुवा है बन्दरगाह की रमणीयता—जहाजों का अड्डा—मरम्मती कारखाना–बजरोंकी बनावट और माल असबाब चढ़ाने उतारने की सीढ़ियां सचमुच असली बन्दरगाहको लजानेवाली बनी हैं ॥

झील के मध्यमें एकटापू भी बसाया है । टापू खूब घने जंगलमें प्रतीत होता है—वहां जाने को बड़ा सुन्दर पतला लम्बा पुलभी बना है और नौकायें भी प्रतिक्षण उपस्थित रहती हैं । इस टापू का राजमहल चन्दन की लकड़ियों का बना है । ऐसी सुगंधित वायु और शीतलता है कि ग्रीष्म ऋतुका मानों वहां पताही नहीं लगता ॥

यह सब नवीन निर्माण और नई सजावट है क्योंकि प्राचीन ग्रीष्मभवन को अंगरेजोंने सन् १८६० ईस्वी में भस्म करदिया था ॥

उसका भस्मावशेष अबभी कुछ मालूम होता है ॥ एक बहुतही बड़ा और प्राचीन बौद्ध मंदिर था जिसमें सहस्रों मनकी भारी और मोटी लम्बी चौड़ी पीतल की बुध मूर्ति थी–वह मंदिर भी जलादिया गया था परन्तु मूर्ति आज

दिनभी गिरी पड़ी है !!! प्राचीन राजमहलका मृत्तिका ढेरभी एक ओर पुराना ठौर बताने को पड़ाहुवा है !!!

एक कान्फूशियस उपासना मंदिर अष्टधातुका बनाहुवा है इसका चबूतरा स्तूप-मंडप-चतुर्वेष्ठन-द्वार-दीवार-और भीतरकी चौकी चौखट आदि सभी धातुमय हैं ॥ एक बड़ाभारी घंटाभी लटकरहा है ॥ दीवारें शास्त्र वचनों के लेखों से सुशोभित हैं ॥ यह भी बहुत प्राचीन निर्म्माण है और (1860) साठके हाथसे बचाहुवा अबतक विद्यमान है ॥

दोबड़े ऊंचे ऊंचे काष्ठमय बौद्ध मंदिर भी बचेहुवे हैं । जिनमें सैकड़ों हज़ारों देवी देवते ठौरठौरपर नीचेसे ऊपर तक जड़े पड़े हैं ॥ यह भी प्राचीन इमारतें हैं और सर्वनाशसे बचगये थे ॥

एक इन्द्रभवन अर्थात् नाचघर वा थियेटर है । इसकी भी शोभा और सजावट बड़ीही विचित्र है इसमें भूमिके भीतर कई तले और ऊपर कई कोठे हैं । धरती फोड़कर परियोंका निकलना वा समाजाना और एक लोकका प्रलय होकर पाताल लोकका प्रत्यक्ष होजाना तथा आकाश से गन्धर्व वा देव कन्याओं वा देवाङ्गणाओं का अवतीर्ण होना आदि आदि दृश्य दिखाने के उपयुक्त इमारतें बनीहुई हैं ॥ तारों के जाल इधर उधर ऐसे लगे हैं जिससे ज्ञात होता है कि विमानोंका आकाश मार्ग में उड़ना और प्रत्यक्ष वा अदृश्य होजाना आदि दिखलाया जाता होगा ॥

बेला चमेली गुलाब आदि के कृत्रिम फूल और पत्तियां तथा झाड़ियां ऐसी सुन्दरता से कांच और चीना मिट्टी के बर्तनों में बनाये लगाये हैं कि प्राकृतिक और कृत्रिम में कुछभी भेद नहीं रहगया है ॥

लकड़ी के कामकी भी अपूर्व छटा है ॥ ऐसी महीनकारी और लकड़ी पर सीपियों के तार बैठाना (पच्चीकारी) शायद हिन्दुस्तान में भी नहीं होतीथी ॥

यद्यपि इसबेर विदेशी सेनाओं ने ग्रीष्मभवन को जलाया उजाड़ा नहीं है तथापि सजावटकी सभी चीजें तोड़ फोड़ डाली हैं । बड़े बड़े आईने शीशे-फूलपत्तियों के कृत्रिम बर्तन और पच्चीकारीके सामान सब तोड़े मरोड़े पड़े हैं !!!

नाचघरका भी नाश करदिया गया है !!!

वास्तव में ग्रीष्मभवनकी पूर्व शोभा और सौन्दर्य्य अब शेष नहीं है ॥

–राज कर्मचारी–

"मांढरिन" शब्द से मैं पहिले परिचित नहीं था । अंगरेज़ों से इस नाम को सुन कर अनुमान किया था कि कदाचित् यह चीना भाषा का शब्द नगर के अधिकारी का राज पद होगा॥ परन्तु चीना लोगों से विदित हुवा कि यह शब्द अंगरेजोंहीं का व्यवहृत एक राज कर्म चारी का पद (ओहदा) है॥

विलायत (इंगलिस्तान) की सिविलसर्विस परीक्षा में उत्तीर्ण हुवे व्यक्ति को जो पद मिलते हैं वही इस "मांडरिन" नाम के काम भी समझ लीजिये॥ भेद इतनाही है कि इस नाम में सिविल और मिलिटरी दोनों संयुक्त हैं॥

सो मांडरिन दो प्रकार के होते हैं !–

सिविल–अर्थात् नीति सम्बन्धी । और

मिलिटरी–अर्थात् युद्ध सम्बन्धी ॥

पहिचान वस्त्रों से होती है—सिविलियनों के वस्त्रों पर छाती और पीठ पर पक्षियों के चित्र बेल बूटा काढ़े हुवे होते हैं । और टोपियों पर एक विशेष प्रकार की कलँगी लगी होती है॥

युद्ध विभाग (सैनिक) मांडरिन लोगों के वस्त्रों पर वन पशुओं के चित्र क़ढ़े हुवे होते हैं और टोपी की कलँगी दूसरे प्रकार की होती है॥

सिविल परीक्षा का वर्णन हो चुका है सो उसी परीक्षा में उत्तीर्ण व्यक्ति छोटे से लेकर बड़ा हाकिम तक बनता है॥

चीनके अठारह सूबों में से तीन में गवर्नर रहते हैं । और पंद्रह सूबों के आठ वायसराय (राज प्रतिनिधि) हैं॥

यह सूबे प्रायः सभी बातों में स्वतन्त्रता से काम करते हैं । तौभी महाराजा की आज्ञा मानना सबको आवश्यक है ।

किसी प्रकार की अव्यवस्था होने से महाराजा सुधार करसकते हैं ।

परन्तु प्रत्येक प्रान्त को अपने अपने अधीन विभाग के कर उगाहने, व्यवस्था बनाने, फौज रखने, और आयव्यय सम्बन्ध में पूरा पूरा अधिकार है॥

सो सभी प्रान्तीय गवर्नर लोग मानो अपने लिये राजा बने बैठे हैं॥

महाराजा के सभा में लिखा है कि अमुक प्रान्त में पचास हज़ार सेना रहती है । गवर्नर साहब सेनाके वेतन आदि में उतना व्यय भी प्रतिवर्ष के सरकारी

हिसाब में चढ़ाते रहते हैं। परन्तु वास्तव में वहांपर मौजूद पचास हजार की जगह पांचसौ सैनिक भी कदाचित् ही होते हैं !!!

प्रत्येक गवर्नर सब भांति से अपने अधीन कर्म्मचारियों का हर्ता कर्ता विधाता है॥

अधीन कर्मचारियों को तीन तीन वर्ष के लिये ही नौकरी मिलती है॥ कर्मचारियों को सरकारी वेतन प्रायः कमती मिलता है॥

सो इसी कारण उनमें यह बड़ी कुप्रथा होगई है कि प्रायः सभी अपने अधीन व्यक्तियों से बहुत कुछ उत्कोच (रिश्वत) प्राप्त करते हैं॥

हाङ्काङ्ग के एक पुराने अखबार में छपा था कि कन्टान प्रान्त में एक व्यक्ति जहाजी माल के आमद्रफ्त का कलक्टर था उसका वेतन केवल सातसौ रुपया मासिक था। परन्तु जब तीन वर्ष बाद उसने सरकारी नौकरी छोड़ी तब उसके पास दश लाख रुपये मौजूद थे! उसकी कचहरी और कार्य्यालय का मासिक व्यय राज्य से छब्बीस हजार रुपये स्वीकृत था जो वास्तव में किसी राजनियमके अनुकूल व्यय न होकर कलक्टर साहब के इच्छानुसार उन्हीं की निज पाकट में पहुँचते रहे थे !!!

इसी से अनुमान होता है कि चीन में सरकारी खजाने का अपव्यय और उत्कोच बहुत अनुचित रीति से जारी रहे हैं !!!

इसमें कोई सन्देह नहीं कि कमवेतन देकर भारी काम सुपुर्द करना मालिक की ओर से ही बेईमानी सिखलाना है!

कई अंशों में यह कुप्रथा राजा की ओर से ही लक्षित होती है॥

नगर प्रबन्ध के लिये पुलिस इत्यादि महकमे हैं। और पुलिस खूब रिश्वत खोर भी है!

सेना सम्बन्धी सम्पूर्ण भार भी एकही कर्मचारी (गवर्नर) के आधीन होने से फौजी व्यवस्था बहुत ही हीन है!

प्रथम तो पूरी संख्या में सेना रक्खी ही नहीं जाती, और जो थोड़ी बहुत फौज रहती भी है वह अधिकांश पुलिस के काम में और लगान के तहसील में लगा दी जाती है! सो सब सिपाहियाना धूलि में मिलाकर सिपाही लोग खासे भले रिश्वतखोर अफीमी आरामतलब नीच चाकर बनजाते हैं !!

सिविल परीक्षा के जो नियम वही सैन्य विभाग के भी हैं। परन्तु विशेषता

यह है कि शस्त्र चलाने की निपुणता अधिक देखी जाती है॥ अन्य विद्याओं की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता।

सो इस परीक्षा के लिये यह वात नियत है कि पहिले देश के प्रधानों के सन्मुख उपस्थित होकर पैदल चलके धनुष वाण चलाना दिखाते हैं। जब इस वात में निपुण सिद्ध होजायँ तो दौड़ते हुवे घोड़े पर सवार होकर धनुष चलाते हैं। इन परीक्षाओं के लिये तीन तीन वाण दिये जाते हैं। इन वाणों से यदि लक्ष्य भेद न कर सकै तो परिश्रम व्यर्थ होता है॥

भारी तलवार हाथ में देकर उसके चलाने और कठोर धनुष की प्रत्यञ्चा चढ़ाने इत्यादि द्वारा वल की जांच की जाती है।

वस यही युद्धविद्या सैन्य परिचालक जनरल वनने तक के लिये पर्य्याप्त समझी जाती है॥

असमर्थ निरे सादे चीना!

तुमने क्या इसी विद्या के भरोसे पर सारे संसार को युद्धामन्त्रित किया था?

तनिक उधर आंख उठाकर तो देख लिये होते कि कैसे कैसे रण कुशल व्यक्तियों का सामना करना पड़ैगा!

माना कि उस दिन तुमने नवीन आविष्कृत मानलिचर आदि वन्दूक भी उठा ली थी। परन्तु उससे क्या होता!

वह तो तुम्हारी सिंह की खाल ओढ़ी सचमुच लोमड़ी मूर्ति थी!

जो सच्चा सिपाही होगा वह क्या शत्रु के सन्मुख इतनी भीरुता दिखा सकता है जितनी तुमने दिखाई?

तुमने अपने मन की भीरुता ही से अपना खेत खोया!

यदि सचमुच तुम्हें अपने देश का भला करना अभीष्ट था—सच मुच यदि तुम्हारे हृदय पट पर "चीन चीनियों के लिये" (China for the chinese) लिख गया था, तो क्या तुम्हारा पहिला काम अपने देशियों को अपना उद्देश्य प्रगट रूप में समझाने का न था?

यदि तुम में इतना भी हार्दिक वल और विद्यावल न था कि जिससे तुम अपने स्वदेशियों को समझा सकते और समस्त देश की सहानुभूति एक कर सकते तो तुम्हारा वाहुवल—व्यक्ति गत वाहुवल मात्र क्या धूलि सहायक हो सकता था?

वह देखो-विलायत के खास लन्डन नगर की शोभा तो निहारो! ट्रान्सवाल की लड़ाई में सामयिक विजय लाभ करके कुछ सैनिक लोग स्वदेश को लौटे हैं। उनके स्वागत के लिये मानव समुद्र उमड़ पड़ा है। समुद्र में जैसे किसी एक ओर को धार न वह कर सब ओर से लहरें उठती हैं उसी भांति इस मानवी समुद्र की लहरें सब ओर से साइक्लोन (आंधी) की भांति उमड़ पड़ी हैं।

लंडन नगर निवासियों के पूर्णिमा प्राप्त समुद्र लहरों के बीच ट्रान्सवाल से लौटी हुई फौज रूपी नौका हिलोड़ें ले रही हैं॥

धन्य भ्रातृ प्रेम! धन्य जाति प्रेम! धन्य वीरत्व प्रेम! धन्य धन्य जननी जन्मभूमि प्रेम! ऐसे महा प्रेमिको! तुम्हें वारम्वार धन्य है। कि जिन्होंने सूखी धरती को प्रेम लहरी से भरपूर उत्थलित प्रेमसागर बना दिया!

तुम्हारा प्रेम धन्य है तुम्हारा आदर सत्कार धन्य है॥

तुम्हारे भाई तुम्हारे देश के गौरव के लिये रणभूमि में प्राणार्पण करने गये थे। जितने महावीरोंने रण शयन किया। एक दिन उससे भी अधिक संख्या में तुम प्रेमिकों ने प्रेमपयोधि में प्राण विसर्जन करके उनका सह गमन किया॥

वीर भाइयों की अगुवानी (पेशवाई) के लिये जल्दी जल्दी दौड़ते हुवे लोगों में से दो हजार आदमियोंने कुचल कर प्राण देदिये!!!

सो तनिक उनके भ्रातृ प्रेम की ओर देखो फिर अपनी पाशवी करतूत की ओर निहारो! वाक्सरो! क्या तुम्हींने अपने सहस्रों भाइयों का अबोध वध नहीं किया?

उत्तम तो यह होता कि तुम में इस कठोरता की अपेक्षा प्रेम मय सरलता स्थान पाती! और समस्त देश तुम्हें प्रेमदृष्टि से देख सकता!

इस दशा में तुमको स्वदेशियों का प्राणघातक नहीं वरन प्राणरक्षक का सुनाम मिलता और वह सभी लोग स्वयमेव तुम्हारे लिये सबठौर प्राण विसर्जन करने को प्रस्तुत मिलते॥

—कृषि कार्य्य—

किसनई के काम का चीन देश में अच्छा आदर है। जैसा वर्णन होचुका है,

महाराजा स्वयम् साल में एक वार हल ग्रहण करते हैं किसनई के हथियार प्रायः सब वैसेही हैं जैसे कि हिन्दुस्तान के ॥

याङ्गत्सी नदी के पार्श्व प्रदेश में अधिकतर धान की खेती होती है। उसकी रोपाई भी विलकुल हिन्दुस्तानी रीति की है पहिले खेत के एक भाग में वोदेते हैं और फिर वहीं से लेकर सर्वत्र रोप देते हैं।

उपज के विषय में सुनने में आया कि—प्रायः वीज का दशगुना उत्पन्न होता है॥

सिंचाई नदी नहर या कूओं से होती है। खाद भी वहुतायत से डालते हैं।

अन्न का काटना—माड़ना—ओसाना—इत्यादि सभी हिन्दुस्तान की भांति करते हैं।

उत्तर प्रदेश में गेहूं-मकाई—जुआर-वाजरा-इत्यादि की खेती अधिकतर होती है।

तरवूज—खरवूजे—फूट—ककरी—इत्यादि सभी कुछ होता है॥

सवज़ी तरकारी फल कन्दमूल आदि जो हिन्दुस्तान में सो सव चीन में भी उपजते हैं।

अंगूर—लीची—सेव—नासपाती-कसेरू-सिंघाड़ा सव कुछ पाया परन्तु आम्र देखने में नहीं आये!

तव तो कोयल भी वसन्त मंजरित अम्वा डार वैठने को न पाती होगी?

आह! आज तो वड़े वड़े अमीर-राजपरिवार भी सुखसे वैठ नहीं पाते तुच्छ पखेरू कोकिल की क्या कथा?

चाय की खेती में चीन वाले विख्यात थे! पर अव तो इनके चाय की वहुत कम चाह रहगई है॥

सच है! आविर्भावकों का एक दिन तिरोभाव भी होताहीहै जिस हिन्दुस्तान ने एकदिन दुनियां को कपड़ा पहिरना सिखाया था आज वही हिन्दुस्तान देखो विदेशियों से लंगोटी की मारकीन का मोहताज है!!!

सो चीना चाय की चाह का घटना कोई आश्चर्य्य की वात नहीं है॥

इसके पौधे क्यारियों में तीन तीन फुट दूरीपर लगाये जातेहैं वड़ी चौकसी से खेत की भूमि को साफ करते हैं॥

चाय का फूल श्वेत नारंगी के फूल सदृश होता है। पत्तियाँ साल में

तीन बार बीनी जातीहैं और सबसे छोटी पत्तियों की चाय उत्तम बनतीहै।

पत्तियां पहिले धूप में सुखाई जाती हैं तब कड़ाही में सेंकी जाती हैं पीछे हाथ में लेकर उसे मलते हैं।

चाय हरी और काली भी होती है। पत्तियां एकही पेड़ की हैं परन्तु बनाने में भेद है॥

चीना लोग भी इसे "चा" या "टी" कहते हैं जो हिन्दुस्तानी और अंग्रेजी नामों के सदृश ही है॥

विलायत वालों ने ईस्वी संवत् १६१५ में सर्व प्रथम चीन से चाय पाई थी तब वहां इसका भाव कहते हैं कि सौरुपये सेरसे कम न था।

हिन्दुस्तान में जब अंगरेज़ी अमलदारी बढ़ी और आसाम प्रदेश अंगरेजों के हाथ में आया तब १८३४ ईस्वी में चीन देश से बीज प्राप्त करके आसाम में इसकी खेती आरम्भ कीगई क्योंकि वहां की भूमि इसके उपयुक्त पाई गई॥

आज कल तो हिन्दुस्तान के कई पार्वतीय भागोंमें इसकी अधिक उपज होने लगी है। और यह यूरूपीय प्रदेशों में बहुतायत से बिकती है।

परन्तु इसका प्रायः कुल कारबार अंगरेज़ सौदागरोंकेही हाथ में है॥

सच है:—

कमाऊ कमाई पै चलते हुवे हैं।
मखट्टू पड़े हाथ मलते हुवे हैं॥

—कौषाम्बर वा रेशम—

कौषाम्बर बनाना चीनका प्राचीन उद्यम कहाजाता है।

जैसे महाराजाधिराज खेती के उत्तेजनार्थ हल ग्रहण करते हैं उसी भांति महाराणीजी कौषाम्बर की बढ़ती के लिये उत्सव करती हैं अर्थात् वह अपनी सहेलियों सहित वाटिका में पधार कर तूतकी पत्तियों को बटोरतीं और तन्तुकीटों को खिलाती हैं। कई कोयोंको खोलकर उनके सूत लपेटती हैं॥ सो इसका कारबार अबभी चीन देशमें होताही है॥

वह पतिङ्गा जिससे यह कीड़ा उत्पन्न होता है धवल रंगका होता है और

अंडे राई के बराबर दाने जैसे होते हैं। समयपर जब अंडे फूटते हैं तब उन में से कीड़े निकलकर तूत पत्तियों को खाने लगते हैं। वह शीघ्र बढ़ते और अपने चमड़े को बार बार बदलते हैं।

जब उनके बढ़नेका अन्त होता है तब खानेको भी छोड़ देते हैं। और अपने मुंह में से एकप्रकारका सूत निकालकर अपनी देह के ऊपर लपेटने लगते हैं। और यों एक पीले रंगका कोष बनजाता है। यदि वैसाही छोड़ दियाजाय तो एक महीने बाद कोषको काटकर कीड़ा निकल आता है। परन्तु कटेहुवे कोष कामके नहीं रहते सो कोषोंको खौलते बर्तन में डालकर कीड़ों का घात करना पड़ता है॥

तब इसतून को धीरे धीरे निकालते और स्वच्छ करते हैं। और उसीसे कौषाम्बर (वस्त्र) बनाये जाते हैं।

हिन्दुस्तान में कौषाम्बर और ऊनके वस्त्र एवं मृगचर्म और कस्तूरी आदि पवित्र मानेगये हैं! परन्तु यह सभी वस्तुयें बिना हिन्साके प्राप्तनहीं होसकतीं।

और शलजम, प्याज आदि कन्दमूल तथा सूती सिलेहुवे वस्त्रआदि अपवित्र कहेजाते हैं जिसमें हिन्सा से कोई प्रयोजनही नहीं है॥

सो हमारे समझमें नहीं आता कि छूत पाकवाले नियम किस आधार पर बनायेगये थे! ओहो! केवल हिन्साही तो कारण है नहीं!

पूर्वकाल में यह वस्त्र यूरोप के देशों में पहुंचाया जाता था तो वहांके लोग इसे बड़े आश्चर्य से देखते थे! यूरोपवालों को यह भी नहीं ज्ञात था कि यह सुचिक्कन सुन्दर पदार्थ कैसे बन सकता है!

सैकड़ों बरस तक वह इसे दैवकार्य्य ही समझते रहे थे। पीछे से मालूम हुवा कि यह एक कीड़े की करतूत है॥

क्या जाने समय निकट आता है कि भारतवासी भी अपनी लोक लीलाओं को–जिन्हें आज दैवकार्य्य वा स्वयम् भगवान् मान रहे हैं–इसी भांति बनावट समझने लग जायँ!

तब तो उस भविष्यत् दुनियां की निगाहों में आज की हमारी दुनियां बड़ी पोदी और बेसमझ जंचने लगेगी! जैसी आज हमारी निगाहों में पूर्वकाल की यूरोपीय दुनियां जंच रही है॥

आजकल इटाली और फ्रांस पाटम्बर वस्त्र के व्यापार में सर्व शिरोमणि बने हुवे हैं॥

हिन्दुस्तानी वाग् वीर लोग यदि इस ओर ध्यान देते तो करोड़ों रुपये अनायास इस उद्यमसे देश को लाभ हो सकते!

हिन्दुस्तान के जंगलों में तन्तुकीट बहुतायत से पाये जाते हैं और उनका पालना ऐसा साधारण काम है कि बालक बूढ़े सभी कर सकते हैं। परन्तु चाहिये तनिक भीतरी बल और साहस!

वकील बारिष्टरों की भांति केवल अदालती-वाचालता दश मिनटकरके अलग होजाना तो नहीं है? मुदई जहन्नम में जाय या मुद्आलेह!

अथवा दफतर की किरानीगीरी! लिखते लिखते कगज पच्ची करते रहे! शामको हाथ रही वही नियत मँजूरी!!! हा! भारत सन्तान तुम्हारी ऐसी हीन दशा!!! आज तुम्हारे धर्म के अगुआ भी तो भीमसेनी के यज्ञही में (आपुस के विरोध में) भस्म होना धर्मान्दोलन समझते हैं! आवश्यक बातों की ओर ध्यानही नहीं देते! तुम्हें अवनति कूपमें पड़े रहने के न जानें और कितने दिन शेष हैं?

चीना बर्तन॥

चीनके बर्तन संसार भरमें प्रख्यात हैं। वास्तव में बनते भी बहुत ही सुन्दर हैं। छोटी छोटी पियालियों से लेकर बड़ी बड़ी सुराहियां और नांदें तक बनती हैं। कैसी सुन्दर झलकदार पतली और मनभावन होती हैं कि जिन्हें देखतेही मन प्रसन्न होजाता है॥

यह सब मट्टी की सुघराई मात्र है। चीन में एक श्वेत मट्टी होती है उसी को साफ सुथरी करके बर्तन बनाते हैं॥ एक प्रकार का श्वेत पत्थर होता है जिस का चीना लोग ऐसा नाम बताते हैं जिसके अर्थ "कांचका हीरा" कह सकते हैं सो उस पत्थर को पीस कर उपरोक्त मट्टी में मिला देते हैं फिर बर्तन बनाकर एक बार पका देते हैं। तत्पश्चात् उनपर अनेक प्रकार के भिन्न खींचकर रंग चढ़ाते हैं सब के ऊपर फिर कांचका गला हुवा पानी चढ़ाते हैं तब उन्हें फिर एक भट्ठे में रखकर पका देते हैं॥

राजमहलों में खपड़े भी इसी भांति के कांच चढ़े हुवे चमकदार लगे हुवे हैं॥ इसी प्रकार भांति भांति के वर्तन पियाले चाय दानी सुराहियां, इत्यादि इस देश से सर्वत्र को जाता हैं॥ मोल भी इनके सैकड़ों रुपये होते हैं॥

—कुम्हारों का देवता—

चीन की जन संख्या चालीस करोड़ बताते हैं—और हिन्दुस्तान की आबादी प्रायः पचीस करोड़ होगी—

पचीस करोड़ आबादी में तेंतीस करोड़ देवते कहे जाते हैं तो इस हिसाब से चीन में यदि आधी अरब देव संख्या कही जाय तो भी देवाधिक्य नहीं होगा॥

चीन में जहां अनेक प्रकार के देवता जैसे द्वारपाल देवता—पानी के देवता—खेतों के देवता—सवारी के देवता—कलम दावात के देवता—रसोई घर के देवता कवरिस्तान के देवता इत्यादि अनेकों हैं तहां कुम्हार लोग विना देवता के कैसे रहते ? सो उनके देवता की उत्पत्ति भी तनिक सुन लीजिये—

कहते हैं कि प्राचीन काल में एक बहुत उत्तम कुम्हार था जो अपने महाराजा के लिये उत्तमोत्तम बर्तन बनाता था। एक बार उसने कुछ नवीन प्रकार के वर्त्तन बनाने चाहे परन्तु बन न सके!

सो उसने अपने आपही को जलते हुवे भट्ठे में झोंक दिया। सो उस आवा में से बहुतही सुन्दर और उत्कृष्ट वर्तन निकले। तब से वह देवत्व को प्राप्त हो गया। और कुम्हारों का इष्टदेव बना॥ अब सभी कुम्हार लोग उसकी पूजा करते और उसके हेतु बलि चढ़ाते हैं॥ इस तरह के बातों की तो हमारे हिन्दुस्तान में भी बिलकुल कमी नहीं है॥ कमी केवल यह है कि हिन्दुस्तानी देवतों की उत्पत्ति को इसी तरह की जान बूझ कर भी लोग विदेशियों की हँसी के पात्र बने हुवे हैं॥

—सवारी शिकारी—

इस देशमें यात्रा करना कठिन है बहुत स्थानों में सड़कें नहीं हैं। हैंभी सो वे मरम्मत—जाड़ों में बरफ़ की बाधा—गरमी में धूप और गरद गुब्बार का डर और बरसात में पंक पयोनिधि! बस सब ऋतुओं में यात्रा करने का हाल आप

विना चले फिरे ही घर बैठे सुख से जान लीजिये ॥ घर बैठे विना परिश्रम-विना कौड़ी व्यय किये यदि आपको सब कुछ मिल सके तो इससे अधिक आप को चाहिये ही क्या ? इसी कारण ही शायद हमारे महात्मा तुलसीदास जी ने चार वेद छः शास्त्र अठारह पुराण और जो कुछ जहां हो सब का रस निचोड़ कर श्रीरामायण ग्रन्थ में भर दिया है जिसमें आप को विना पढ़े लिखे ही शास्त्री, वैदिक, और पौराणिक होने का फल मिलजाय ! दूसरे महापुरुष ने और भी सुगम करदिया-सब फल "सूरज पुरान" पढ़नेही से मिलने का प्रबन्ध कर दिया। अहा कैसा अच्छा हुआ ! मानो रेल क्या तार चला दिया ! तभी तो हिन्दुस्तान सब विद्यानिधान बनगया !!!

जो हो—धर्म और मुक्ति के लिये तो पंडितों से टेन्डर (Tender) (व्याख्या) तलब कीजिये हम तो केवल चीन देशके थोड़े बहुत हालका ठेका ले सकते हैं। और कुछ नहीं ॥

गाड़ियां और रथ हिन्दुस्तान की ही भांति इस देश में भी होते हैं। मालकी गाड़ियां खच्चरोंद्वारा खींची जाती हैं। सवारी की गाड़ियों में घोड़े खच्चर और आदमी भी लगते हैं॥ विन कमानी की खच्चर गाड़ियों में बैठनेवालों को बड़ी तकलीफ होती है। क्योंकि सड़कों की बेमरम्मती के सबब धक्के बहुत लगते हैं घोड़े यहां छोटी जातिही के देखने में आये—खच्चर बड़े मजबूत होते हैं॥

चीन वाले एक पहिये की गाड़ी को बहुत काम लाते हैं। इन गाड़ियों को एक आदमी ठेलता है और भारी भारी बोझ भी लाद सकते हैं। कभी कभी दो आदमी भी लगते हैं एक खींचता और दूसरा ढकेलता है॥ झप्पान भी बहुधा सवारी के काम आता है। एक प्रकार की बैठक दार चौकी जिनपर छत लगी होती है कोई रथ की भांति गोल भी होती हैं इन को आदमी कन्धों पर उठाते हैं॥ इन पर पालकी के समान लेटने की जगह नहीं वरन कुरसी के समान बैठने की जगह होती है॥

शहरों में छोटी छोटी हलकी गाड़ियां होती हैं जिनपर एकही आदमी बैठता और एकही आदमी उनको खींचता है॥ हिन्दुस्तान में भी यह गाड़ियां छोटा नागपुर रांची आदि शहरों में व्यवहार होती हैं॥ कहते हैं यह गाड़ियां पहिले पहिल अमेरिका में बनी थीं॥

इस देश में नदियां और बड़ी बड़ी नहरें भी हैं—सो उन में बड़ी बडी और

छोटी छोटी नाव नौकायें भी बहुतायत से चलती हैं ॥ चीन की याङ्गत्सी नदी करीब तीन हजार मीलके लम्बी है इसमें स्टीमर और कहीं कहीं बड़े बड़े जहाज भी चल सकते हैं । दक्षिण के कान्टन नगर से पीकिन को नदी से भी रास्ता है । कहते हैं यह रास्ता उस महानहर होकर है जिसे प्राचीन महाराजाओं ने छः सौ पचास मील लम्बी खोदवाई थी ॥

सो बहुत करके व्यापार सम्बन्धी यातायात नौकाओं द्वारा किया जाताहै ॥

———o———

धर्म विश्वास ।

चीन के साम्प्रदायिक धर्मों का वर्णन होचुका है । परन्तु उनके धर्मकार्यों की ओर ध्यान देकर जब निर्णय करने बैठिये तो ज्ञात होगा कि यह लोग माता पितादि बड़े जनों की पूजा करना जीवित अवस्था में और मरणान्तर भी अपना परमधर्म समझते हैं ॥

प्रत्येक घर में जो पितरों की कोठरी होती है उसमें पितरों के नाम की तखतियों के सन्मुख नित सायं प्रातः धूप जलाते और बड़ी भक्तिभाव से दंडवत् प्रणाम करते हैं ॥

जैसे हमारे हिन्दुस्तानियों का कथन है कि मृत पितरों को भोजन और जल हमारे दिये बिना प्राप्त नहीं होसकता उसी भांति चीनियों का भी विश्वास है कि मृत प्राणी खान पान सम्बन्ध में सन्तान का आश्रित रहता है ॥

नियम बड़ा ऊंचा है परन्तु कर्त्तव्य तो साम्प्रत नीचाही दीख पड़ता है ॥

तुम्हारे पितर अपनी बड़ी नामवरी के लिये निःसन्देह तुम्हारे आश्रित हैं परन्तु वह आसरा रोटी पानी मात्र में समाप्त नहीं होता !!!

पितरों को सन्तान से सदा यह चाहना रहती है कि वह वंशका सुनाम विशाल करै कभी अवनत मुख होकर पितरों की नाम धराई न करावै देश के उज्ज्वल कीर्ति की (जिसे उन पूर्वजों ने स्थापित की है) कालिमा न बनै । वरन नित नवीन उन्नति करके भले पुरुषों की सन्तान कहाने के उपयुक्त होवे—यही सब पितरों की तुमसे आसरे की वस्तुवें हैं । सो इनकी ओर तनिक भी ध्यान न देकर यदि तुम निरी धूप जलाकर वा उन के नाम पर अन्नजल का सत्कार मात्र करके औचित्यकी पूर्त्ति समझने लगो तो निःसन्देह तुम्हारी कर्तव्य हीनता है । आजकल तो यूरोप के देशोंकी जैसे सभी वस्तुयें और कार्य्य मन भावन

होते हैं और अगत्या अन्य लोगों को उनकी नकल करनाही पड़तीहै उसीभांति पितर श्राद्ध भी उन्हींसे सीखना उचित है। वह लोग किसभांति पितृ यज्ञ का विधान करते हैं और कैसे मृत पितरों की श्राद्ध करते हैं सो सब कुछ उनके इतिहास पढ़ने से आपही ज्ञात होजाता है॥

चीना लोगों का विश्वास है कि अग्नि में जो वस्तु जला दीजाय वह सब पितरों को पहुँच जाती है सो वह काग़ज़ के मेज़ कुरसी बरतन-खिलौने रुपये इत्यादि बनाकर पितरों की तख्तियों के आगे जलाते हैं जिसमें वह सब चीज़ें वहां पहुँच जायँ॥

लोगों का विचार है कि यदि पुरखों के भूत प्रेत सुखसे रहतेहैं और उनके पास भोजन वस्त्र हों तो वे वहां सन्तोषसे रहेंगे परन्तु यदि भूखे प्यासे नंगे धन हीन रहैं तो फिर हमारे पास आकर हमारी निर्दयता का ऐसा दण्ड देंगे जैसा माता पिता दुष्ट बालक को दण्ड देते हैं॥

जब मृतकों के कोई सन्तान न हो जो उनकी चिन्ता करैं तो उनके प्रेत भिखमंगे बनकर उन प्रेतों के संग मिलजाते हैं जो लड़ाइयों में मारे गये अथवा समुद्र में डूब मरे वा अन्य देशों में जाकर मरेहों—सो यह लोग सोचते हैं कि जब उन प्रेतोंकी उचित खबरदारी न कीजाय तो वह बीमारी आदि आपत्तियां भेज सकते हैं। क़बरों का बनाना और उन्हें विभूषित करना भी धर्म कार्य्य समझा जाता है हरएक घराने का अलग शवागार होता है और उनकी पूजा हर तीसरे महीने कीजाती है॥

घराने के सब छोटे बड़े लोग क़बर के पास जाते हैं और बहुत सामग्री साथ लेजाते हैं। काग़ज़ की पिटारियों में काग़ज़ के बने वस्त्र—पालकी-फूल-रुपये आदि भरे होते हैं। जब यह सब चढ़ावा चढ़ाते हैं तब घरका प्रधान मनुष्य नौबार शिर झुकाकर बन्दना करता है तब उसी भांति घर के सब लोग करते हैं॥ पूजा शेष होने पर बहुतसी आतशबाज़ी पड़ाका आदि छुटाते हैं॥

हिन्दुओं की भांति चीनियों का भी विश्वासहै कि संतानके श्राद्धके अनुसार ही पितरों को परलोक में सुख वा दुःख मिलता है परंतु इस में भूल अवश्य ही है हरएक को परलोक में सुख वा दुख अपनी करणी के अनुसारही होगा। उसमें दूसरे का साझा नहीं होता॥

चीना लोगों में बालिका सन्तान का आदर कम और बालक का अधिक

होता है । पुत्रकी कामना प्रत्येक दम्पति को होती है। जल्दी सन्तान न होने से देवी देवता मनाये जाते हैं ॥ स्त्रियां बहुत करके "दाया देवी" की पूजा करती हैं ॥

इन देवी का नाम जो चीनी भाषा में कहा जाता है उसका अर्थ "दाया देवी" वा पुत्रदा देवी" कुछ इसीभांति होता है साधारण लोगों में दायादेवी की पूजा इसी विश्वास से बहुत अधिक फैली हुई है कि यह सन्तान देनेवाली है ॥ स्त्रियां देवी की प्रार्थना इसभांति करती हैं कि हे दयालुदेवि ! तू दुखी जनों के कष्ट दूर करनेवाली है तू महादयालु और कृपालु है हमको दुखसे बचा । हम पर दया कर । तू महा सुखदायक "कानीन" देवी है ॥

स्त्रियां कहती हैं कि इस देवी की बहुत सहेलियां हैं जो बालक के जन्मकाल में सहायता करती हैं । कोई बालक जन्माती है कोई उसे दूध चूसना कोई हँसना सिखाती है इत्यादि—

चीनवाले बहुधा बड़े मिथ्या विश्वासी हैं-चोटी का कट जाना बड़ी आपदा समझते हैं ।

उनका विश्वास है कि हवा में काग़ज़ के मनुष्य जो प्रेत हैं वह घूमा करते हैं और रात्रि में बाल काट सकते हैं । सो इनके डर से प्रायः अमावस की रात को बहुत लोग इकट्ठे होकर रात्रि में ढोल बजाते और गलियों में मशालें लालटैनें जलाकर लिये डोलते रहते हैं । कभी अपने बैरियों पर यह दोषारोपण भी करते हैं कि वह काग़ज़ के प्रेतों का उड़ानेवाला वा पूजनेवाला है ॥

चीनियों के पंडे ऐसे यन्त्र लिख लिखकर देते हैं कि जिनके पास रखने से प्रेत का भय नहीं रहता इसके पलटे लोगों से बहुत धन लेते हैं ॥ यह सब बातें तो याथातथ्य हमारे हिन्दुस्तानमें भी हैं फिर मैं नहीं जानता कि केवल चीनियों को ही मिथ्या विश्वासी कहूं-वा अपने भाई स्वदेशियों को भी ?

परन्तु मुझको आर्य्यावर्तकी साम्प्रतिक चाल ढाल देखते हुवे निश्चय होता है कि यह सब मिथ्या विश्वास अब बहुत ही शीघ्र सम्पूर्ण रूप से उठ जायँगे ॥

समझदार और लज्जावान् लोग तो ऐसी बातों को सुनने मात्र से हँसी और लाज बोध करते हैं ॥

—धन का देवता—

बहुतेरे महाजनों के मकानों में एक शूर वीर मूर्ति जिसके पार्श्व में एक सिंह खड़ा है होती है ॥ कहते हैं कि यह धन का देवता है । इसकी पूजा करने से व्यापार में लाभ अधिक और अनायास ही धनकी प्राप्ति होती है ॥

लोग इस मूर्ति के आगे बहुत धूप दीप करके पूजा करते हैं ॥

इस देवता की उत्पत्ति के विषय में चीनियों की अद्भुत कहानी है ॥ कहते हैं कि पूर्वकाल में एक बड़ा शूर वीर योद्धा था और वह काले बाघ पर सवार हुवा करता था । वह जहां जाता तहां उसकी विजय होती थी । उसके पास मोती थे सो वह एक उछाल देता और सहस्रों उत्पन्न होजाते थे ॥ अन्त को उसके वैरियोंने जादू करके उस को जीत लिया और एक घास फूस का पुतला बनाकर उसकी छाती बरछों से छेद डाली । इस जादू से वह शूर वीर मारा गया । मरने के बाद वह देवता हो गया और जो कोई विना उसकी पूजा किये व्यापार में हाथ लगाता है उस को लाभ नहीं होता ॥

सो यह शूर वीर धन का प्रसिद्ध देवता है समझे प्रिय पाठक ! इस धन कुबेर की व्याख्या ?

चीना लोग अपने देवता की उत्पत्ति चाहे जैसी बतावें परन्तु हमारे समझ में तो आता है कि इस देवता की उत्पत्ति मन्त्र बल से हुई होगी और वह मन्त्र " उद्योगिनंपुरुषसिंहमुपैतिलक्ष्मीः " है ॥

संसार में कौन नहीं जानता कि उद्योगी " पुरुष सिंह " ही लक्ष्मी का उपार्जन करसकता है। समस्त संसारभरका सुख भोग शूर वीरहीके हिस्सेका है ॥

सो धन प्राप्ति के उपायों का उपदेश करते हुवे यदि प्राचीन काल के विद्वानोंने शूर वीरता का अवलम्बन कराने के लिये वीरता द्योतक मूर्त्ति की कल्पना की हो तो क्या आश्चर्य है ? परन्तु शोक कि अविद्वानता रूपी जादूने देवता का प्राणघात कर दिया तभी से देश में दरिद्रता का भी प्रादुर्भाव होने लगा !!!

हिन्दुस्तान पर तो इस जादूने और भी न जाने कैसा माया जाल फैला दिया है कि जिसके कारण लोग देखते सुनते हुवे भी " आपश्या ओजू " बने हुवे हैं !!!

हा ! भगवान् ! कब हमारी इस गाढ़ निद्रा का प्रभात होगा ?

—रसोई घर का देवता—

हर एक पाकशाला में एक देवता का चित्र भीत पर बना रहता है अथवा तखती पर बनाकर लटकाया जाता है। कहीं कहीं धातुमय मूर्त्ति भी होती हैं इस देवता की पूजा महीना में दो वेर-पूर्णमासी और अमावस को अथवा चाहे किसी दिन करते हैं, कहते हैं कि यह देवता घर के सब सत्कर्म और दुष्कर्म लिखता रहता है और घर तथा स्वर्ग के राज्य का मध्यस्थ है॥ साल में एक वेर वह स्वर्ग राज्य को जाता है और घराने की सब व्यवस्था वहां प्रगट करता है॥ सो उसे अच्छी रीति से बिदा करने के लिये बारहवें महीना के चौबीसवें दिन यात्रा की तय्यारियां की जाती हैं॥ कागज़ के घोड़े गाड़ियां इत्यादि देवता के सन्मुख जलाते हैं और अच्छे अच्छे भोजन उसके सन्मुख धरते हैं॥ घराने का हर एक जन उस को दण्डवत् करता है और प्रार्थना करता है जिससे वह स्वर्ग राज्य में घराने की बड़ाई करै॥

नये साल के पहिले दिन फिर बड़ी धूम धाम से उसकी अगवानी की जाती है कि वह स्वर्गधाम से अपना काम समाप्त करके लौट आया है॥

पाठक! घर में एक ऐसे देवता का रहना जो सबके भले बुरे कामों के लिखते रहने का दफतर रात दिन जारी रक्खै आवश्यक भी है॥ परन्तु उसके रोजनामचे में हमारे सुकर्म अधिक लिखेजाने का अवसर मिलैगा वा कुकर्म?

विचार इसी बात का तनिक कठिन है॥ चलिये अच्छाही हुवा कि हमारे घरों में ऐसे देवता की स्थापना नहीं है नहीं तो क्या जानै किसी का भी निस्तार न होता?

हा! हतभाग! हमें अपनी नित्यचर्य्या में भी इतनी आशंका!!!

—o—

—द्वारपाल देवता—

मैंने प्रत्येक घर के द्वारपर दो शूर वीरों के भयावने चित्र अंकित देखे। जिज्ञासा करने से ज्ञात हुवा कि यह द्वारपाल देवताओं के चित्र हैं॥ हर साल "वर्षारम्भ" के दिन नये चित्र लगाये जाते हैं॥

कहते हैं कि प्राचीन काल में महाराजाने देखा कि भूत प्रेत राजभवन में पैठने चाहते हैं। सो उनके भगाने के वास्ते उसने दो शूर वीरों को द्वारपर पहरा

देने के लिये नियुक्त करदिया उनके भय से भूत प्रेत भाग गये। और फिर कभी न आये। वह द्वारपाल जब मरगये तो देवता होगये उनके चित्रों से वही काम निकलने लगा। सो समस्त देश अपने घरों की रक्षा के निमित्त द्वारपाल देवताओं के चित्र दरवाजों पर लगाते हैं॥

बहुत से मन्दिरों के द्वारोंपर चार मूर्तैं रक्खी होती हैं। कहते हैं कि यह चारों भाई थे जो बड़े शूर वीर थे और उनके विषय में बड़ी कथायें कही जाती हैं। पहिले के हाथ में तलवार है-यदि वह उसे चलावै तो दश हजार बर्छियां मनुष्यों की देह में चुभ जायँ। दूसरे के हाथ में सितार है और जब वह उस को बजाता है तो पवन और आग उससे निकलती है॥ तीसरे के हाथ में छाता है जिस के फैलाने से सूर्य्य चन्द्रमा अंधियारे होजाते हैं। चौथे के हाथ में थैली है जिसमें श्वेत चूहा है जो खुलने पर श्वेत हाथी बन जाता है और शत्रु पर चढ़ाई करता है॥ यह चारों भाई जब मरगये तो पाताल के द्वारपाल बने सो मन्दिरों के भी वही रक्षक हैं॥

हमारे बहुधा मित्रगण चीनियों के इन मिथ्या विश्वासों पर अवश्यही हँसैंगे। परन्तु हँसी उचित तो तब होती जब कि आप स्वयम् उन विश्वासों से परे होते हमारे महापुराणों की कथाओं के आगे चीनियों की यह बातैं कुछ भी नहीं हैं॥

परन्तु विचार शील सज्जनो! यह सब बातैं हँसी उड़ाने की कदापि नहीं हैं। न तो चीना लोगही और न हमारे शास्त्र पुराणही किसी भांति हँसी के पात्र हैं। यह सभी बातैं बड़े बड़े अर्थों की प्रत्यक्ष मूर्तियां हैं॥

माता पितादि गुरुजनों की पूजा करना मरणान्तर उनके नाम की प्रतिष्ठा और श्राद्धादि करना-उनके नाम की तखतियां या फोटो चित्रादि मकानों में स्थापित करना सन्ततिगण के-हृदय पर कैसे सुन्दर भक्तिभाव और सरल श्रद्धा नितनित्य प्रादुर्भूत करते रहते होंगे-स्वजन-स्व कुटुम्ब-परिवार-और स्वदेश की भक्ति सन्तान के चित्तपर कैसी अटलभाव से अंकित होती होगी-सो सहृदय हिन्दू पाठक से कहना नहीं पड़ैगा। सत्य है:-जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी॥

परन्तु प्रियवर! आवश्यकता केवल इतनीही है कि समय के हेर फेर और कई राज्यादि परिवर्तनों के कारण यह जो हमारी रीतियों पर थोड़ीसी काई

जैसी लग गई है जो स्वाभाविक नहीं बल्कि बिलकुलही संसर्ग जात है उसको निकाल कर स्वच्छ स्वच्छन्द बना लिया जावै। जैसी कि हमारी सनातन की रीति थी ॥—

चीनियों के रसोई घरका देवता-मुसलमानों के याजूज़ माजूज़-हिन्दुओं के चित्रगुप्त-और विद्वानों का हार्दिक बल-यह सब एकही अर्थ के शब्द हैं तात्पर्य भी इन सभों का एकही है ॥ विचारवान् लोग हृदय के बलवान् होते हैं और अपनी शक्ति मानता से सारी कुवासनाओं और कुइच्छाओं पर प्रबल रहते हैं। परन्तु साधारण लोगों को सुचाल पर चलाने के लिये आवश्यक था कि उन्हें अकेला न छोड़ा जावै एक न एक साथी उनके संग अवश्य चाहिये था-न हो कि कुवासनाओं का भूत अकेला पाकर उनपर प्रभुत्व करले। इस लिये उनके साथ एक एक देवता लगादिये गये। जो सदा उनके कर्मों को देखते रहैं ॥

इस प्रकार से लोग दुराचारों से बचाये गये ॥

कहिये प्रिय पाठक! क्या यह हँसी की बात है? हां हँसी अवश्यही होगी जब कि असली तात्पर्य को बिना समझे अर्थ का अनर्थ किया जावै !!!

द्वारपाल देवताओं की सृष्टि और अर्थ तो प्रत्यक्षही है ॥

हमारे हिन्दू शास्त्रकारों ने दश फाटकोंवाले शरीर रूपी महा महल के रक्षार्थ दश लक्षण संयुक्त धर्म को स्थापित किया है न हो कि हमारे महल में कुवासना रूपी भूत किसी ओर से घुस जाय!

कौन नहीं जानता कि बिना रक्षक के कोई भी वस्तु स्थिर नहीं रहसकती हमने अपने निज शरीररूपी महल के रक्षकों का अनादर वा तिरस्कार किया तभी तो यह सम्पूर्ण रूपेण लुट लुटाय कर खाक सियाह होगया—सियाही (दागदिल) के कारण "काला" नाम पड़ा !!! कुटुम्ब परिवार का रक्षक द्वारपाल देवता है सो उन महापुरुष के प्रति भी हमने अपने कालिमा जन्य घमंड की धूंआंधार अंधेरी में उपेक्षा की और उसी के कारण—हमारे रक्षक ने भी हमें त्याग दिया और हमारा सारा कुटुम्ब बारह बाट कौड़ीकातीन बन गया!

और, देश का द्वारपाल रक्षक कौन है? इस का उत्तर किसी अंगरेजी कवि ने यों दिया है:—

Safety of a kingdom is not its treasure
nor its army but its friends!

अर्थात्—राज्य की रक्षा नतो-धन पर निर्भर है और न सेनापर—देश रक्षा केवल देश हितैषी मित्रों पर निर्भर है ॥

हमारे विज्ञ कवियों ने भी कहाहै कि "प्रेम एव परो धर्मः"!

परन्तु आज! दुःख से कहना पड़ताहै कि वास्तविक प्रेम-अपत्य प्रेम-भ्रातृ प्रेम-वातसल्य प्रेम-स्वदेश प्रेम-स्वजाति प्रेम और स्वधर्म प्रेम का हाटही विलकुल बंद होगया है ॥ इस जिनिस का देश में दुर्भिक्ष पड़गया! आह कैसा यह दुःखमय समय आया है!

"न यारों में रही यारी—
न भाइयों में वफादारी—
मोहव्बत उड़गई सारी—
अजब यह दौर आयाहै!!!

दशा देख धीरज छूट जाता है अधीर हो कहना पड़ता है ॥

नहीं है देश की ममता—किसी भारत निवासी को!!!

इस प्रकार जब सब ओर के सभी फाटक खोल दिये जायँ—द्वारपालों को जवाब दे दिया जाय—

शरीर महल से धर्म द्वारपाल परिवार नगर से-ऐक्य रक्षक और "जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपिगरीयसी" के अनुसार स्वर्ग राज्य का प्रेम "सेनापति—सभी एक एक करके निकाल दिये जायँ तो कहिये फिर भूतों का प्रवेश कौन रोक सकता?

सो इसी भांति अपने प्रत्येक जनको अपनी रक्षार्थ द्वारपालों की आवश्यकता वतलाने के लिये यदि चीनमें द्वारपाल देवताओं की सृष्टि की गई तो क्या कोई हँसी की वात है?—

परन्तु तातपर्य्य को न समझना वा सच्चे अर्थ का उपयोग न लेना अवश्यही सभ्य जगत् को हँसने का अवसर देगा!

लखनऊ का जिक्र है एक पादरी साहब कहने लगे कि हिन्दुओं का धर्म कैसा मिथ्या विश्वासी है कि महावीर हनूमान् की उत्पत्ति पवन से मानते हैं और उसको पवन सुत नाम भी देते हैं-कहते हुवे तनिक भी नहीं लजाते ?

पास खड़े हुवे एक आर्य्यसामाजिक महाशय ने भी हां में हां मिलादी और कहा कि निःसन्देह हिन्दू बड़े मिथ्या विश्वासी हैं-हम भी तो उनके धर्म का खंडन करते हैं। मुझ को यह सुनकर मर्मान्त दुःख हुवा और कहा कि भाई तुम किसका खंडन करने चले हो ? अपने सगे भाई की बात का ? तनिक पादरी-साहब से तो पूछिये—प्रभु मसीह की उत्पत्ति कुमारी कन्या से किस विज्ञान शास्त्र के मतानुसार हुई थी ? जारज संतान भलेही हुई हो-परन्तु उसको अमैथुनीय कैसे कहते हैं ? पादरीसाहब ज्ञानवान् थे-मनमें तो लज्जित हुवे होंगे परन्तु हम लोगों से मसीह की अनेक बड़ाइयों का बखान करते रहे-आरोपित दोष का कुछ भी निराकरण नहीं किया और नाहीं फिर वीर शिरोमणि हनूमान् जी के विषय कुछ अधिक बोल सके ?

जानना चाहिये कि धीर वीरता और महत्त्व के आगे कोई भी दोष शिर नहीं उठा सकते ! अवगुण भी गुणही दीख पड़ने लगते हैं।

जैसे प्रभुमसीह का जारज सन्तान होना भी उनके प्रभुत्व के आगे अलौकिक गुण कहागया ! आज समस्त यूरोपखंड उन्हीं महापुरुष का पन्थानुसरण कर रहा है॥

और हमारी आर्य्य सन्तान अपनी अनमोल प्रभुता और वीरता के गुणों को खोकर निरी निर्गुणी अवगुणों की खान दीख पड़ने लगी है !

महाराजा रामचन्द्रजी की सेना में श्री महावीर हनुमान्जी इन्टेलीजेन्स डिपार्टमेंट (Intelligence deptt) महकमा खबर रसानीके आला अफसर थे। जहां पवन की भी गम्य न थी। वहांसे समाचार सन्देश लाना और लंकापति रावण को अनेक कौशलसे छलना—अपनी सेना और सेना नायकों को युद्ध सम्बन्धी अनेकों मंत्रणायें देना क्या सामान्य बातें थीं ? ऐसी ऐसी वीरताओं और कौशलको देखकर महाराजा रामचन्द्र ने जो उनको "पवनसुत" की उपाधि दिया तो इसमें पादरी साहब को या हमारे आर्य्य भाइयों को आश्चर्य

की कौनसी बात जान पड़ी ? आश्चर्य्य केवल इन असली बातों के न समझने पर है ॥

आजकल चीन की हीन दशा भी इसी वीरता के अभाव के कारण हुई और वीरता का अभाव इसी बेसमझी के कारण हुवा है ॥

माता पितादिकों अथवा इष्ट मित्रों के फोटो चित्रादि सन्मुख रखनेसे उन व्यक्तियों से भेंट तो अवश्यही नहीं होसक़ती परन्तु स्मरण निःसन्देह होता रहेगा ।

इसीभांति द्वारपाल देवताओं के चित्र वा अन्यान्य देव मूर्तियां स्वयं कुछ कर तो नहीं सकतीं परंतु आवश्यकता का स्मरण अवश्य दिलाती रहैंगी सो इन बातोंको यथायोग्य समझ बूझकर उनसे उचित उपकार प्राप्त करना हमारी कथा का मुख्य तात्पर्य्य है ॥

—फलित ज्योतिष—

चीनवाले भी फलित ज्योतिष को बहुत मानते हैं इनकी ज्योतिष का एक अंग भूमि निरूपण कहाता है । यह भूमि निरूपण पितर पूजासे सम्बन्ध रखती है । वे समझते हैं कि यदि इस विषय में असावधानी होगी तो पुरखे अपनी क़बरों में क्लेशित होंगे और अपने वंश से कुपित होकर नानाप्रकार के रोग और विपद् भेजैंगे ।

ज्योतिषी लोग बताते हैं कि किस उपाय से पितरों को कबर में सुख मिलैगा और उनको सन्तुष्ट करने के लिये क्या क्या काम करना उचित है । ज्योतिषी कहते हैं कि पुरुषों के सुख के लिये पवन और जल का अच्छा प्रबन्ध करना चाहिये । वह पवन जो उत्तरसे चलती है ठंडी है और क्लेश देती है-और दक्षिणी वायु गरम है और जल बरसाती है सो चाहिये कि कबर दक्षिण की ओर हो । यदि कबर के समीप निचाई हो तो उसको अच्छा नहीं समझते क्योंकि उस निचान से हवा क़बरकी ओर बहैगी । और मृतकों को क्लेश देगी ॥

कबर के समीप यदि नदी बहती हो तो उसका भी विचार करते हैं क्योंकि अमुक ओर से बहती हो तो यह दशा होगी ॥ उचित ओर हो तो उस घराने में महिमा आदर और सम्पत्ति की धारा बराबर बहैगी ॥ उनकी " पृथ्वी ज्योतिष " के विचार में सीधी रेखायें आपड़ने से बड़ी जोखिम समझते हैं । कहते

हैं कि सारी बुराई की बातें जब सीधी चलने पाती हैं तब अधिक प्रबल हो जाती हैं ॥ इसी सबब से यहां की सड़कें नहरें—इत्यादि सीधी नहीं हैं । पीहो नदी भी बड़े घूमघुमाव से बही है ॥

रेल तारकोभी चीना लोग इसी लिये नापसन्द करते हैं कि, यह सीधे चलाये जाते हैं ॥

ज्योतिषी लोग जब धनवानों के लिये कबरस्थान खोजते हैं तब बड़ी देर करते हैं जिसे व्यय अधिक होवे । परन्तु कङ्गाल के लिये यह काम शीघ्रही हो जाता है ॥ चीन में कोयले की खानें बहुत हैं परन्तु यह लोग बहुधा इस विश्वास से खानें नहीं खोदते कि पृथ्वी शायी पितरों को उससे कष्ट पहुंचेगा चीना लोग भूत प्रेत पिशाच आदि का बड़ा भय करते हैं । और उनसे बचने के लिये अनेक प्रकार के टोटके टनमन और यन्त्र मन्त्र करते हैं ज्योतिषी लोग यन्त्र लिखकर देते हैं और बहुत धन कमाते हैं ॥

यहां शुभाशुभ फल कहनेवाले भी बहुत हैं । सड़कों के किनारों पर छोटी छोटी मेज कुरसियां बिछाये और पांसा कागज स्याही कुश लिये बैठे हुवे दिखाई देंगे । लोग भीड़ की भीड़ जमा होजाते हैं और नानाप्रकार के प्रश्न पूछते हैं । व्यापार में लाभ होगा वा नहीं ! चोरी का पता लगेगा वा नहीं—परीक्षा में पास होना न होना । खेतकी उपज—

यात्रा में डकैत मिलना न मिलना—यात्रा सफल होना—

बीमारी आरामी—दिशाशूल योगिनी इत्यादि यही सब बातें प्रश्नोत्तर की होती हैं ॥

यह सब हिन्दकी भांति चीन में भी हैं ॥ ज्योतिषियों का रोजगार यही है ॥

—सूर्य्य ग्रहण और चन्द्रग्रहण—

हमारे हिन्दुस्तान के ग्रामीण लोग—और ग्रामीणही क्यों प्रायः सभी हिन्दू लोग ग्रहण के विषय अद्भुत कथायें कहते हैं—हिन्दू विश्वास के अनुसार सूर्य वा चन्द्रमा पर ग्रहण का दिन बड़ी विपत्ति का होता है । दूसरे की विपत्ति देखकर साधु और सरल आत्माओं को द्रवीभूत होना स्वाभाविकही है जो पराये दुख में दुखी और सुख में सुखी न हो वह मनुष्यही नहीं कहा जासकता ! सो सूर्य्य चन्द्रादिकों के दुख से दुखी होना और स्नान दान आदि द्वारा उनके

दुःख निवृत्ति की चेष्टा करना जैसा हिन्दू का धर्म है चीना लोग भी उसी भांति मानते हैं॥

यह लोग समझते हैं कि भयंकर सर्प सूर्य्य वा चन्द्रमा को निगलना चाहता है। सो बड़ी भीड़ें इकट्ठी होकर ढोल घंटे तुरही इत्यादि बजाते हैं और शोर करते हैं। जिसमें सर्प डरकर भाग जावै॥ जब ग्रहण हो चुकता है तब यह लोग प्रसन्न होकर कहते हैं कि देखो हमारे यत्न सफल हुवे॥ जैसा हमारे हिन्दू शास्त्र कहते हैं कि "परोपकारायसतांहिजीवनम्" उसी भांति चीना लोगों के धर्माचार्य्य महात्मा कान्फ्यूशस के भी वचन हैं। परोपकार को हम दोनोंही जीवन का उद्देश्य मानने वाले हैं—पर न जानै क्यों मन्तव्य और कर्त्त-व्य हमारे कुछ भिन्नही होगये हैं॥

जो हिन्दू अपने से बहुत दूर चन्द्र और सूर्य्य की आपदा निवारणार्थ स्नान और दान का विधान करते थे आज वही हिन्दू अपने सगे भाई के साथ मुद्दई मुद्दआलेह बने अदालत की धूल फांक रहे हैं!

आज पर दुःख कातरता का गुणरत्न हिन्दू हाथ से न जानै कहां गिरपड़ा जो खोजने पर भी नहीं मिलता! चीना लोगों की भी वही दशा है॥ एक म-कान की दो कोठरियों में दो जन सोते हों—एक में यदि चोर घुसै तो दूसरा पड़ा पड़ा वा बैठा हुवा देखताही रहैगा। दूसरे के साथ सहानुभूति का लेशमात्र भी शेष नहीं रहा है!!!

दशा तो इतनी हीन होगई है परन्तु वह चन्द्र सूर्य्य की विपत् सहानुभूति अब भी बराबर जारी है॥

आर्य्य सन्तान! तुम्हें अब कौन समझाने आवैगा? जिस हृदय में चन्द्र सूर्य्य आदिकों तक के लिये दुःख सहानुभूति वर्तमान हो उस में परस्पर भाई भाइयों के साथ सहानुभूति की आवश्यकता क्या वाक्यों से बतलाना अच्छा दीख पड़ता है?॥

भाई आंख खोल कर निहारो तुम्हारे इन कामों पर मांद के गिद्दड़े भी हँसी उड़ाने लगे हैं!

जड़ पदार्थों के लिये दान दक्षिणा करना और चैतन्य भाइयों के साथ अदा-लत ठाने रहना क्या वैसीही बात नहीं होती कि:—

बाहर वाले खाय गये और घर के गावैं गीत तीन बुलाये तेरह आये देखो घरकी रीत ! जलियां खूब लडूंगी ॥

——०——

—रसम रवाजैं—

चीन की स्त्रियों के पांव छोटे करने का रिवाज तो सब जानतेही हैं ॥

कन्या की छोटी अवस्थाही से यह लोग पांवों की अंगुलियों को दवा दवा कर वांधते हैं और काठ की जूतियां डाल देते हैं। जिससे पैर बिलकुल छोटे नोकदार पंजों के बनजाते हैं इस काम में कन्याओं को बहुतही कठिन दुःख होता है और सयानी होने पर भी पांवों में सदा पीड़ा बनी रहती है। अधिक सरदी लगने वा गरम लगने से पांव प्रायः सूज जाते हैं—जिससे स्त्रियां बहुत कष्ट पाती हैं ॥ इतना अधिक कष्ट पाने पर भी स्त्रियां पांव छोटे करना पसन्द करती हैं। क्योंकि इसको सुन्दरता का प्रधान अङ्ग माना जाता है ॥

अमीरीकी तो वड़ीभारी पहिचान यही वतलाते हैं ॥ बड़े घरों की स्त्रियां विना किसी वालक वा सेवक के कांधे पर हाथ के सहारे अथवा लाठी के सहारे चलही नहीं सकतीं और इसका बड़ा गर्व करती हैं ॥

मुझे नहीं मालूम कि हमारी आर्य्या वहिनें यह वात सुनकर क्या सम्मति देंगी ? पर जहांतक अनुमान होता है कदाचित् वह इनकी चाल और विश्वास पर हँसैंगी अथवा इस मन्द दशा पर दुःख प्रकाश करैंगी ॥ और आश्चर्य्य करैंगी कि क्यों चीना स्त्रियां पंगुल दशा को सुन्दरता समझती हैं ? अनेक कष्ट सहन करके भी इस सुन्दरता को प्राप्त करने की अभिलाषा रखती हैं ॥

परन्तु वात यह है कि चीनियों की यह रीति कुछ पुरानी चली आरही है और लोग इसके अभ्यस्त होगये हैं।

हमारे ही यहां की भांति चीना लोग भी स्त्रियों की हंसगामिनी चाल को प्रशंसनीय समझते हैं परन्तु चाल के स्थान पर वे लोग स्त्रियों के पैर ही हंसों की भांति वना देते हैं ॥

सुन्दर मानवाङ्ग को पखेरू का अङ्ग वनाना जङ्गलीपन तो अवश्यही है और

देखने में भी भद्दाही सा है परन्तु पुरानी चाल और पुरानी रुचि के कारण अब भी वह रीति चलीही जारही है ॥

रुचिभेद से बहुतेरे कार्य्य बहुतेरे देशों में ऐसेही देखे सुने जाते हैं ॥ जङ्गली जातियों में ऐसेही बहुत से कार्य्य हैं जो शरीर की काट छांट ही से सम्बन्ध रखते हैं।

बरम्हा के लोग गर्दन के चमड़े को छेदकर उसके भीतर मूल्यवान् पत्थर भरते हैं—अङ्ग पर अनेक प्रकार के गोदना चित्र बनाते हैं—यह गोदना चित्र तो आज कल की सभ्य जाति अङ्गरेजों में भी देखे जाते हैं—परन्तु अधिकांश नीच लोगों में ॥ अफ्रीका के जङ्गलियों की चाल ही निराली है कान को फाड़कर बड़े बड़े छेद कर डालते हैं उन में मोटे मोटे पत्थर के बाले लटकाते हैं।

इसी भांति और अंगों की भी दुर्दशा करते हैं ॥

इन बातों के खोज में दूर न जाकर हम अपने देशही की रीतियों की ओर देखते हैं तो कुछ ऐसीही दशा दीख पड़ती है। हमारी बहिनें जो कान में अनेकों छिद्र बनाती हैं और गहनों के बोझ से कान को झुला देती हैं एवं नासिका को भी छेदकर बड़े बड़े नथ और अन्यान्य गहने पहिनती हैं—

यही क्या उपरोक्त बातों से कुछ कम है? नासिका और कान छिदाना अवश्यही कष्टकर है और कुछ दिन तक दुःख भी बहुत देता ही है परन्तु फिर भी गहना पहिनने की रुचिके कारण वह दुःख सहन किया जाताहै!

भारी भारी गहने पहिनने की रुचि हमारी बहिनों की बड़ी प्रबल होती है चाहे कितनाही बोझ क्यों न हो! फिर परदाके भीतर रहना भी तो एक प्रकार का दुःखही है ॥

परमेश्वर ने स्त्री पुरुष दोनों को संसार का प्रधान भूषण रचाहै—

सम्पूर्ण जगत् पुरुष और प्रकृति मय है—सारी रचना प्रकृति की अनुपम शोभा—और अपूर्व सौन्दर्य्य से विभूषित है।

सो वही प्रकृति स्वरूपिणी गृहदेवियां क्या प्रतिक्षण अन्तःपुर में लुक्कायित रहने की पात्री हैं?

प्रकृति देवी पुरुष की सब अवस्थाओं में एकमात्र सहायिका हैं सो उन्हें घर भीतर ही छोड़ कर पुरुष अकेला संसार यात्री बना हुआ क्या शोभा पाता है?

परन्तु देखते हैं कि हमारी वहिनों को बिलकुल घरके भीतर ही रहना पसन्द है। कारण इन सब बातों का वही रुचिभेद है॥ हमारी यह सब बातें भी कुछ पुरानी चली आ रही हैं इसी से इनका वर्ताव बुरा नहीं जान पड़ता। और त्यागने की सहसा हिम्मत नहीं पड़ती॥ रसम रिवाजों के विषय वर्णन करते हुवे भी हमको जापान की एक बात कहनी है-आज कल (१९००-१ ईस्वी में) जो जापान सम्राट् हैं उनका शुभनाम "मुत्सुहितु" और महाराणी का सुनाम "हर को" अथवा "हर कुंवरि" है॥

लग भग तीस वर्ष से यही महाराज सिंहासन पर विराज रहे हैं-

राज्यासीन होने के दो वर्ष पश्चात् महाराणी का शुभ पाणिग्रहण हुवा था। इस थोड़े से ही अवसर में महाराजने अपनी प्रजा और देश की जो चमत्कारिक उन्नति की है वह उनके सूर्य्य चिह्न पताका के प्रकाश से सम्पूर्ण संसार पर विदित है उसी भांति श्रीमहाराणीजीने भी अपने देश की स्त्री जाति का जो उपकार साधन किया है वह भी चन्द्र ज्योत्स्नावत् देश और प्रजा को शीतल करनेवाला है॥

जपानी स्त्रियों में सुन्दरता बढ़ाने की यह प्राचीन प्रथा थी कि दोनों भवों के बाल उखाड़ कर कम करतीं यहां तक कि रेखा मात्र रहने देती थीं और दांतों को रंगती थीं जैसे मिस्सी आदि से। सो यह प्रथा श्रीमहाराणीजी को असभ्य प्रतीत हुई औरवह इसके उठादेने की चेष्टा करने लगीं अब यह प्रथा बिलकुल देशभर से तिरोहित होगई। और स्त्रियां नवीन सभ्यता के अनुकूल वेश भूषण करने लगी हैं। न केवल वेषभूषण ही वरन व्यायाम (कसरत) की प्रथा भी स्त्रियों में श्रीमहाराणीजीने जारी कर दियी है श्रीमती के निज प्रासाद में भी व्यायाम शाला बनी है और राजकन्यायें और स्वयम् महाराणीजी भी अनेक शारीरिक परिश्रम करती हैं। श्रीमती के तीन कन्यायें और एक पुत्र सन्तान है (सं० १९०० मसीही में)॥

आज कल जापानी स्त्रियां विलायती चमकदार सभ्यता में किसी दरजे कम नहीं हैं। और न पुरुष ही किसी सद्गुण में पीछे हैं॥

महाराणी का उपदेश है कि जैसे समय परिवर्तन शील है उसी भांति मनुष्यों की रुचि भी बदलती रहती है। सो अपनी रीति रस्मों को समय के अनुकूल बनाना उन्नति का काम है जैसा कि संसार का चक्र बराबर चला जारहा

है इसी भांति प्रजा को भी उसके साथ ही साथ आगे बढ़ना चाहिये जिस जातिकी चाल धीमी पड़जाय वह निःसंदेह काल के चक्र में कुचली जायगी॥

सो हम देखते हैं कि महाराणीजी का उपदेश बहुत सत्य है॥

प्रत्येक भारतवासी को यह अनमोल उपदेश अपने हृदय पट पर लिख रखना चाहिये। हमारी तुच्छ समझ में पुरानी लकीर का फकीर बना रहना उन्नति का बड़ा भारी अवरोधक है॥ निःसन्देह कालचक्र के साथ साथ न चलने से धक्कम धक्का के कारण कुचल मरना पड़ता ही है॥

आश्चर्य्य नहीं हमारा भारतदेश इसी कारण से कुचल गया !!!

इसी सन् १९०० ईस्वी दिसम्बर महीने में कलकत्ता की एक प्रदर्शिनी में किसी परम पण्डित कुम्हारने एक गाय की मूर्ति दिखाई थी जिस को दो भाई अपनी अपनी ओर खींच रहे थे एक पूंछ और दूसरा सींग खींचता था—एक वकील साहब दूध दुहने लगे और जज साहब बैठकर पीने लगे॥

प्रिय हिन्दू सन्तान! क्या सचमुच कालचक्रने तुम्हारी यही दशा नहीं करदी है? कहते हौ कि पुरानी चाल चलौ प्राचीन रीति व्यौहारोंका वर्ताव करो! परन्तु देखते हैं कि तुमहीं नित नित्य अपनी पुरानी चालों को त्यागते चले जाते हौ! हम तुम्हें दोष नहीं देते क्योंकि काल की गति के कारण परिवर्तन स्वाभाविक ही है॥

प्राचीन रीति थी कि चकमक पथरी से आग उत्पन्न करके काम में लाते थे अथवा घर में आग मौजूद रखते थे। अब तुम उसका व्यौहार त्यागकर दियासलाई काम में लाने लगे हौ। दियासलाई वर्तने तो लगे परन्तु उसका बनाना नहीं सीखा! (यहीं पीछे पड़ना है।) पहिले मट्टी अथवा धातु के पात्रों में तेल वा घृत से दीपक जलाये जाते थे। अब तुम्हारे घर की रोशनी न केवल कांच के लैम्प और फानूसों से वरन गैस और बिजली से भी होने लगी है। तुम इन नई चीजों को काम में तो लानेलगे परन्तु तुमने उनका बनाना नहीं सीखा!!

आगे किलिक की कलमों से लिखते थे अब तुम अनेक प्रकार के लोहे आदि की कलम पेंसिलै आदि काम में लाते हौ।

कालपी के मोटे भद्दे काग़ज़ ही बड़े प्रसिद्ध थे पर अब खास विलायती बैंक नोटपेपर के विना पुरजा भी नहीं लिखते हौ।

पहिले हाथरस के चाकूही सर्वश्रेष्ठ गिने जाते थे-आज राजर्स के कलमतराश बिना पेंसिल ही नहीं कट सकती !

आगे लखनऊ की चिकन-ढाके की मलमल-नदिया की धोती और काश्मीर की शाल सर्वोपरि पोशाक की चीजें थीं अब तुम इन को बिलकुल त्याग कर मैनचिष्टर के भांति भांति के वस्त्रों से शरीर की शोभा बढ़ाते हो एक सूत भी तो तुम्हारे बदन पर वा समस्त घर बार में तुम्हारे निज का नहीं है ?

यह सब चालें तुमने नई सीख तो लीं-पुरानी चालों को छोड़ भी दिया परन्तु शोक कि नई रीतियों पर चलना तुमको फिर भी न आया !!!

वास्तव में नई चालों पर चलने में तुम बराबर आना कानी करते रहे हो। चलना चाहा नहीं परन्तु कालचक्र ने तुम को बरजोरी से अपनी चाल पर चलाया है। क्योंकि समयानुकूल चलना वा चलायाजाना स्वाभाविक है। चाहै कोई स्वयम् न चलै पर दूसरों से हठात् चलाया जावैगा॥

सो काल क्रमानुसार तुमको स्वभावतः इन सब बातों को वर्तना पड़ा है। वा साफ साफ कहैं तो यह कि कालचक्र ने तुमको अपने पहिये के पीछे बांध कर धर घसीटा है-उसी से तुम्हारा सारा शरीर क्षत विक्षत और मांस चाम उधिल गया है !

जानना चाहिये कि समय के परिवर्तन के साथ साथ मनुष्यों की रुचि भी परिवर्तित होती रहती है और सामयिक रुचि के अनुसार कालचक्र के चाल की बराबरी करने के लिये अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के उपाय अपने आप करलेना समय का अनुगामी होना कहलाता है। जो समय का अनुगमन नहीं करता वह हठात् दूसरों के द्वारा उस ओर चलाया जाता है। और ठोकरों से उसका लाल रुधिर भी काला बनाया जाता है॥

हम अपने देश में भी चारों ओर से उन्नति-उन्नति की पुकार सुनते तो हैं परन्तु यह नहीं मालूम होता कि उन्नति का अर्थ आगे बढ़ना है अथवा पीछे हटना यदि आगे बढ़ना अर्थ हो तो हमारे उपदेशक लोग हमको पीछे घसीटना क्यों चाहते हैं ? जो हो—इस विषय में मैं अधिक कहकर अनधिकार चेष्टा करना नहीं चाहता॥

वक्तव्य केवल इतना ही है कि जिन रस्म रिवाजों को सभ्यता के प्रतिकूल

देखें उनका शोधन और जिनकी ओर स्वाभाविक रुचि का झुकाव देखें उनका स्वीकार करना ही उचित है॥

बस सिपाही को तो केवल कहने भरका अधिकार है। अमन चैन के दिनों में गोली बन्दूक से तो काम लेही नहीं सकता!

पोशाक॥

चीना लोग तंग वस्त्र पहिनना पसन्द नहीं करते यहां तक कि फौज की वरदी भी ढीली ढाली ही होती है॥

साधारण लोग गरमी में सूती ढीले ढाले पायजामा और कुरता की भांति का वस्त्र पहिरते हैं और जाड़े में रुई दार पायजामा और पांव तक लटकता हुवा चुगा वा जामा और उसके ऊपर बहुत ढीली एक फतूही पहिनते हैं। सिरपर पोस्तीनी टोपी जो सम्पूर्ण गर्दन और कान गाल ढांक लेती है लगाते हैं॥ धनवान और अमीर लोग कौपाम्वरी और सनियां (सनके) पायजामें और चुगे तथा पोस्तीनें जो पांव तक लटकती हुई सम्पूर्ण शरीर को ढांक लेती हैं और उसके ऊपर पोस्तीनी अथवा रेशमी फतूही पहिनते हैं॥ टोपी इन की भी प्रायः पोस्तीनी होती है परन्तु ऊपर एक लाल घुंडी लगाई रहती है जो सभ्यता का चिह्न समझी जाती है॥ आस्तीनें इतनी लम्बी होती हैं कि हाथ बिलकुल छिप जाता है॥ कभी कभी उलट कर ऊपर भी कर देते हैं। गरमी की टोपी प्रायः घास की (Straw hat की भांति) होती है॥

स्त्रियों का पहिरावा कुछ कुछ पुरुषों कासा होता है। आस्तीनें स्त्रियों के अँगरखों की पुरुषों की अपेक्षा अधिक ढीली रहती हैं और उनपर फूल पत्ती अधिक काढ़े हुवे रहते हैं। पति की मूर्ति का चित्र अपने वस्त्रों पर काढ़ना स्त्रियां बहुत पसंद करती हैं। मांदरिन लोगों की स्त्रियां तो इसको अत्यन्त आवश्यकीय समझती हैं॥

सिर खुला रखती हैं—और बालों में सुन्दर सुन्दर रेशम आदि के बने हुवे फूल लगाती हैं। और कई प्रकार के छोटे छोटे आभूषण बालों में गूंथती हैं। पुरुष चोटी लटकाते हैं और आगे के बाल मुड़वाते हैं परन्तु स्त्रियां सिर के सम्पूर्ण बालों को गूंथ कर बांधती हैं—लटकाती नहीं॥ कभी कभी टोपियां

भी पुरुषों की भांति पहिनती हैं ॥ जैसा कि हिन्दुस्तान में स्त्रियां मुख पर केशर लगाकर रंग को सुनहला बनाना चाहती हैं उसी भांति चीन की स्त्रियां एक प्रकार का श्वेत रक्त मिश्रित रंग लगा स्वरूप को गुलाबी बनाना चाहती हैं। अंगरेज स्त्रियां भी गुलाबी रंग का पाउडर लगाती हैं। सो यह सब अपनी अपनी रुचि से सम्बन्धित बातें हैं ॥

बरसात में जिन लोगों को बाहर काम करना पड़ता है उनके वस्त्र सनियां और मोमजामा के ऐसे होते हैं और घास की बड़ी चौड़ी टोपियां पहिनते हैं जो छाता का भी काम देती हैं ॥

पहिनावा पोशाक की बातों में समस्त संसार में सदा समय समय पर अनेकों परिवर्तन होते रहे हैं ! यूरोप के प्राचीन बादशाहों की तस्वीरें जब हम देखते हैं तब हँसी आती है । आज कल वह पोशाक कोई पहिन कर निकले तो उसे कुत्ते चिथोड़ डालें। हमारी निगाह में तो वह शाही पोशाकें अफ्रीका के वहशियों के पहिनावे से कुछ कम नहीं दीखपड़ीं !

उस को आज कल की यूरोपियन चुस्त चालाक पोशाक से मिलाकर देखें तो आकाश पाताल का अन्तर दीख पड़ता है यदि यूरोप अपने बाप दादों की चाल पर चलने का हठ करके फिर भी वही पोशाक पहिनै तो न जानै कितने कूकर भूंक भूंक कर काट ही खायँ !!

परन्तु वह तो संसार चक्र के साथ साथ चलना खूब जान गये हैं हर साल हर बात में नई नई ईजादें निकालते और बर्तते हैं जिससे नित नूतन उत्साह कार्य्य क्षमता और परिश्रम की बानि बढ़ती रहती हैं एवं सभ्यता के गुरू बनने का अवसर निकल आता है ॥ सच है जब संसार को सिखाने के लिये कोई नई बात नई विद्या नये नियम नई सभ्यता आदि आदि नये नये सामान ही न हों तो शिक्षक वा गुरू किस बातके ?

सो देखते हैं कि पोशाक सम्बन्ध में इंगलिस्तान ने चमत्कारिक उन्नति की है। फौजी और मुल्की दोनों पोशाकों में आज अंग्रेज आदर्श बन गया है। जिसकी नकल करने को सभी का मन चलायमान होजाता है । जापान ने तो सम्पूर्णरूप से नकल उतारही ली है।

हमारी हिन्दुस्तान की नवीन संतान अनेकों भांति से रोके जाने पर भी बरा-

वर नकल कर रही है। रुचिकी प्रबलता कहीं रोके रुकसकती है? खींचा खींच में चाहे चिथड़े भलेही उड़जायँ।

चीनमें अब तक विदेशियों का स्वतन्त्र यातायात नहीं था इसी कारण इन की प्राचीन रस्म रिवाजों में परिवर्तन अधिकांश नहीं संघटित हुवा!

पुराने समय में जैसी पोशाक जामा आदि की हिन्दुस्तानमें थी वैसी चीन में अब तक है।

भेद केवल इतनाही है कि चीन शीत प्रधान और हिन्द ग्रीष्म प्रधान देश हैं सो चीन के वस्त्र बहुत भारी शीतोपयोगी और हिन्द के ग्रीष्मोपयोगी हल-के होते हैं!!

हिन्दुस्तान महात्मा कृष्ण के अन्तर्ध्यान होने के दिनों से लेकर आज तक विदेशियों के लिये खुला पड़ा है। सो इसके पोशाक की बातही क्या कही जाय? बदलते बदलते आज यह दशा होगई है कि हम कौनसी पोशाक को अपनी बतावें यही नहीं समझ पड़ता!

धोती का पहिनावा तो प्रायः उठही गया है। बंगाली लोग पहिनते हैं सो वह तो बिलकुल जनानी पोशाक सी जान पड़ती है। और घर भीतर की पोशाक है सभ्य समाजमें बङ्गाली भी पतलून पहिनता है॥ कुरता टोपी अङ्गरखा पायजामा मुसल्मानी समय से चले हैं।

कोट पतलून वा इसी भांति की काट छांट के अन्यान्य वस्त्र अङ्गरेजी समय के हैं—सो यह सब यूरेशियन हैं। मारवाड़ी भाइयों की पगड़ी को यदि हिन्दु-स्तानी पोशाक कहें तो वह भी नवीन तर्ज तरीके और काट छांटके कारण पा-रसी टोपी जैसी बनगई है-अतः वह भी खांटी वस्तु नहीं रही! बङ्गाल के वकीलों की टोपी जिसे शिम्ला वा समला (मंचष्टर क्यों न कहें?) कहते हैं वह भी अंगरेजी हैट की भद्दी नकल है॥ किसी दरजी को जब आप कपड़े बनाने का हुक्म देंगे तो बतलाना पड़ैगा कि वह आप का कोट अंग्रेजी पारसी-तुरकी-चायना आदिमें से किस फैशन का बनावे!

उस से क्या आप कह सकते हैं कि हिन्दुस्तानी फैशन का बनावै? हिन्द में फौजी पोशाक तो कोई हई नहीं-केवल मुल्की पोशाक-सो भी आधा तीतर आधा बटेर! सारांश यह कि आप की अपनी पोशाक कुछ भी नहीं है—न फौजी न मुल्की!

आज कल थोड़े से मान्यवर बड़े बुजुर्गों को छोड़कर समस्त हिन्द की रुचि अंग्रेजोयतकी प्रवल धारामें वही चली जा रही है जिसका रोकना बड़ा कठिन काम है बड़ाही प्रवल आत्मा शायद इस प्रवाह के रोकने में कृतकार्य्य होसके हमारे साम्प्रतिक अगुआ महाशयों की शक्ति से तो यह विलकुल वाहर है जो कि स्वयम् उसी धार में वहे चले आरहे हैं।

इस लिये इस प्रवल वेगके रोकने में पहाड़ खोदकर चूहा निकालने की अपेक्षा नवीन फैशन को पूरा पूरा अङ्गीकार करलेनेही में क्या ऐवहै ?

वड़ा ऐव तो यही है कि वह सव चीजें विदेशीय हैं। सो इस पाप से तो यों भी नहीं वचे है ? इस पाप का प्रायश्चित्त यदि होसकै तो अहोभाग्य। फिर तो पूर्व पुण्य का उदयही न होजाय ?

हमारे एक मित्र ने कहा कि सादगी का जीवन निर्वाह करना वड़ा श्रेष्ठ है संसारी जीवन की अपेक्षा ऋषिजीवन कैसा निर्द्वन्द्व और सुखी होता है ? वात तो सत्य है ऋषि जीवन की पवित्रता महान् है और वह आवश्यकताओं की कमी करने अथवा त्याग सेही प्राप्त होसकती है। हमारी आवश्यकतायें जितनी ही कम होंगी उतनीही वेफिकरी की ज़िन्दगी हम निर्वाह करसकैंगे और निश्चिन्त होने से सुखी भी होंगे। परन्तु प्रश्न तो फिर भी रह जाता है कि क्या वैसा जीवन सवके लिये साध्य है ?

यदि साध्य होता तो आज हमारा देश पश्चिमी सभ्यता की नहर में न वह चलता ! प्राचीन रीति के कारीगरों की दुर्दशा न होती ! ढाका के मलमल वनाने वालों को हाथ मलमलकर भीख मांगना न पड़ता !

सो देखते हैं कि संसाररूपी अखाड़े में प्रतिद्वन्द्वी मल्ल से, विजय पाने में केवल अपने प्राचीन पेंच काम नहीं देसकते ! प्रतिद्वन्द्वीके दांव पेंच का समझना और उसके काट फांस करना भी ज़रूरी है॥

सो हमारी तुच्छ समझ में जहां महान् पुरुषों को अपनी जीवनी सादी वनाकर नमूना दिखलाना आवश्यक है तहां, सर्वसाधारणकी प्रवल रुचि के अनुसार समयानुकूल नवीन सभ्यता की सारी आवश्यकताओं की पूर्ति के उपाय प्रस्तुत करना भी परम कर्तव्य है॥

—खान पान—

जैसा कि मैं वर्णन कर चुका हूं—चीन में भी सब अन्न उसी भांति उपजते हैं जैसे कि हिन्दुस्तान में सो ज्वार बाजरा—गेहूं जव धान इत्यादि सब अन्न को चीना लोग यथायोग्य खाने के काम में लाते हैं॥ मकाई और बाजरा और जुवार का नमकीन हलवा बनाते हैं जिस में पक्के सुखाये हुवे बेर और उन्नाबके फल डालते हैं और गेहूं के भांति भांति के बिस्कुट बनाते हैं। मांस की पिट्ठी भरकर कचौड़ियां बनाते हैं! मिठाई भी तरह तरह की बनातेहैं परन्तु नमकीन खाना अधिक पसन्द करते हैं। अचार मुरब्बे भांति भांति के बनाते हैं। सिरका में बेर, मूली इत्यादि डालकर अधिक खाते हैं। मांस को तरह तरह से पकाते हैं परन्तु हिन्दुस्तान की भांति मसाला का अधिक मेल नहीं करते॥

सुवर और मुरगी का मांस बहुत प्रिय और आदर की चीज समझते हैं बैल भेंड़ा बकरा बत्तक सभी कुछ खाते हैं और सब के साथ खाते हैं। खान पानमें किसी के साथ किसी वस्तु का किसी प्रकार का परहेज़ वा विचार बिलकुल नहीं है॥ चीनालोग अंगरेज़—जापानी—जरमनी—फ्रैंच इत्यादि सब के साथ सब चीज़ खाते पीते हैं॥ इस संसार शक्तियों के जमघट्ट (१९००-१ ई० स० में) में हमने तो किसी जाति को किसी के साथ किसी प्रकार का परहेज़ करते नहीं देखा—सिवाय हिन्दुस्तान के थोड़े से गिने गिनाये आदमियों के इन में भी परहेज़ का बहुत अंश टूट गया है!

जो चीना आदमी बैल गोरू सुवर मुरगा सभी कुछ खाता था वही हमारे हिन्दू फौज़ों में बरतन मांजने आदि कहारके कामपर नौकर था पानी के छुआ छूत का विचार भी नहीं रहसका क्योंकि सभी जातियों का छुआ हुवा पानी सभों को पीना पड़ा॥ कठिन शीत के दिनों में आभ्यन्तर उष्णता संचार के लिये रम आदि शरावें भी प्रायः सभों ने पान कीं॥

और चीना तथा जापानी आदि के आदर की चाय भी ग्रहण की ही! सो वास्तव में समरक्षेत्र को हिन्दू जगन्नाथ क्षेत्र कह दिया जाय तो हर्ज नहीं जान पड़ता क्योंकि यहां से लौटकर लोक दिखावे के लिये हमारे लोग छूत छात का विचार फिर भी तो जारी कर देंगे? चीना लोग भी अंग्रेज़ों की भांति मेज़ पर भोजन करते हैं—अथवा चौकी पर। कटोरों में भात मांस तरकारी

इत्यादि धरते हैं और लकड़ियों से जो छुरी कांटा चम्मच की भांति काम देते हैं, खाना खाते हैं। चाय इनकी बड़ी प्रिय वस्तु है। आगन्तुक की सुश्रूषा चाय से ही अधिकतर की जाती है॥

भोजन करने के लिये उत्तम वस्त्र पहिनकर सफाई के साथ सबलोग मेज-पर बैठते हैं और खाने के बरतन सन्मुख धरे जाते और वह लोग परस्पर बात चीत करते हुवे आनन्द से भोजन करते हैं। यही रीति सारे यूरोप एवं जापान में भी है॥ भोजन को अनादर के साथ ग्रहण करना तो हम ने अकेले अपने आपही में देखा! हिन्दू का चौका बटलोई में दाल वा मांस चढ़ी हुई।

छोटे से तवा पर एकही आदमी की थोड़ी सी रोटियां पकती हुई! गीले चौका में उघारा बदन नंगा धड़ंगा हिन्दू बैठा पकाता हुवा। इधर उधर ताकता जाता है कि कहीं कोई छू न ले!

रोटी पकाकर उसी काले चूल्हे के सामने बैठा हुवा—भूमि पर थाली को धरे दाल आदि परोसी फिर वही हिन्दू मूर्ति अकेली उसी ठौर उसी दशा में बैठी हुई भोजन करने लगी! यही तो हमारे चौके का दृश्य है! यही तो हिन्दू की प्राचीन सभ्यता है! यही नमूना हिन्दू सिपाही ने भी चीन में संसार भर को दिखलाया॥ प्रिय पाठक! इस दृश्य को तनिक अपने नेत्रों के सन्मुख धरकर देखिये तो कैसा बोध होता है? विदेशी लोग तो देख देखकर हँसते और हमारे लोगों को बनमानुस बताते थे भला हो हमारे अंगरेज अफसरों का जिन्हों ने हुक्म दे दिया कि खाना खाने पकाने के लिये कोई कपड़ा नहीं उतारैगा। खाना भी एकही साथ पकाया जावैगा। सो वह बनमानुसी दृश्य दिखलाकर अधिक दिनों तक हँसी के पात्र नहीं बनना पड़ा!!!

खेल तमाशे—आमोद प्रमोद—

चीन के लड़कों में नानाप्रकारके खेल पाये जाते हैं। जैसे कोई वस्तु खड़ी करते हैं उस पर फेंक कर निशाना लगाते हैं। लोहे के छोटे छोटे पहिये फेंकना। बांस के लट्टू नचाना। इत्यादि—

एक खेल उनका आंख मिचौली के समान होताहै। इसमें एक बालक की

आंख बंद की जाती है और वह दूसरों को पकड़ना चाहता है वे उससे अलग अलग भाग जाते हैं॥ एक खेल है जिसमें सब लड़कों की आंखें बांध देते हैं और एक दूसरे को धरने दौड़ता है॥

हिन्दुस्तानी "पट दर्शन" की भांति का झांकी खेल भी यहां होता है। दर्शक शीशेके झरोखे से देखता है और दिखाने वाला तसवीरों को उलट उलटकर दिखाता और अद्भुत कहानियां कहता जाता है॥ चीना लोग कठपुतलियों के नाच से बहुत प्रसन्न होते हैं। लड़के सयाने बूढ़े सभी यह तमाशा देखते हैं। हिन्दुस्तान में यह तमाशा पहिले बहुत किया जाता था अब भी होताहै। ठीक उसी भांति चीन में भी होता है॥

पतंग उड़ाना छोटे बड़े सभों का एक व्यसन है। यह लोग पतंग नानारूप की बनाते हैं। पक्षी और तितली-सांप और मनुष्य सभी रूप की पतंगें बनाते हैं। कभी कभी पतंग में छोटे से कागज़ की लालटैन बांधते हैं॥ और जब वह ऊपर चढ़ती है तब ऐसा मालूम पड़ता है कि छोटा सा तारा अंधियारे में चढ़ता है॥ कभी कभी बड़ी पतंग की डोर में छोटी छोटी डोरियां बांधी जाती हैं और जब वह पतंग ऊपर चढ़ गई तब ऐसा दिखाई देता है कि पक्षियों का झुंड एक साथ उड़ता है चीनियों में पतंग उड़ाने का एक त्यौहार होताहै (जैसा हमारा अक्षय तृतीया) जो इनके नवमें मासका नवां दिन होताहै। इस त्यौहार की उत्पत्ति विषय में यों कहते हैं कि प्राचीन समय में आकाशवाणी हुई कि अमुक दिन जो अपने घर पर रहैगा उस पर बड़ी विपत्ति आवैगी सो सब लोग पहाड़ों में चले गये दूसरे दिन जब घरों पर लौट आये तब देखा कि जो पशु आदि घर पर रहगये थे सो सब मर गये हैं तभी से वह दिन विपत्ति का समझा गया और सब लोग घरों के बाहर जाकर विपत्ति भगाने के लिये पतंग उड़ाने लगे॥ हमारे हिन्दू भाइयों को यह कहानी कुछ आश्चर्य्य की नहीं प्रतीत होगी क्योंकि हमारे भी प्रायः सभी त्योहारों की कुछ इसी भांतिकी उत्पत्तियां कही जाती हैं॥

जाड़े के दिनों महल्ले महल्ले में नाटक के खेल नित्य हुवा करते हैं। हिन्दुस्तान में यह खेल रात्रि में हुवा करते हैं परन्तु चीन में दिन के समय ग्यारह बजे से चार पांच बजे सायंकाल तक। नाटक क्या हिन्दुस्तान की रासलीला समझिये। परदे नहीं होते चबूतरे (सहन) पर सब पात्रगण लीला दिखाते हैं। हां एक नेपथ्य अवश्यही होताहै—दृश्य समाप्ति पर सब उसी के भीतर चले जाते हैं-

इसी को पटाक्षेप समझिये और दूसरे रूप में फिर आजाते हैं तव पटोत्तोलन समझ लीजिये ॥ वस्त्र वहुत अच्छे होते हैं-दर्शकों के वैठने का प्रवंध भी अच्छा होता है हरएक के सन्मुख मेज और चाय की पियालियां मौजूद ॥ सभी कुछ न कुछ खाते पीते और हुक्के का दम घूंटते रहते हैं। अभिनय वहुत प्रकार के करते हैं-नटकी कलायें भी अच्छी करते हैं—सास पतोहू की लड़ाई-सौतिया डाह-पुराने राजदरवारों का नमूना-लड़ाइयों के दृश्य सभी कुछ दिखलाते हैं परन्तु सभों में शृंगार रस का मेल जोल अवश्यही होता है।

यहां के नाटक को देखने से देश की वहुतेरी चालों का पता अनायासही लग जाता है ॥

मिलजुल घराने में रहने का रिवाज चीन में भी है सो सास वहू—देवरानी जेठानी की लड़ाइयां यहां भी होती हैं। पुरुषों को स्त्रियों पर पूरा अधिकार है। पुरुष अनेक विवाह कर सकता है—लेन देन मद्धे झगड़े भी वहुत होते हैं। स्त्रियों को ठगने वाले वंचक भी होते हैं देव दानव भूत चुड़ैल—और भांड़ भगतिये सव कुछ होते हैं।

राजा सव का सर्वाधिकारी होता है वात की वात में अपने महामंत्री का शिर उड़ा देता है और किसी साधारण व्यक्ति को महामन्त्री अपनी इच्छानुसारही वना सकता है। रिशवत की खूव धड़ाधड़ी होती है । हाकिम अधिकांश अत्याचारी होते हैं। राजकर्मचारियों को छद्मवेष से नगर निरीक्षण करने की प्रथा कभी कभी वर्ती जाती थी हाकिमों को दण्ड दिये जाते हैं इत्यादि वहुतेरी वातें नाटकाभिनयों से ज्ञात होती हैं ॥

नाट्यशालायें नित्य सैकड़ों दर्शकों से भरी रहती हैं—सारा दिन कामकाज छोड़ छाड़ नाटक देखने वालों की इस वड़ी संख्या को देखकर अनुमान किया जा सकता है कि यह लोग कैसे आलसी निकम्मे और निश्चिन्त हैं ! दिन दोपहर सवके लिये काम काज का समय है। सर्वत्रही सव कोई इस समय अपने अपने कारवार में लग जाते हैं परन्तु चीना अपनी चाय की चमची लिये नाटकशाला में मौजूद है। देश में आग लग रही है। सव ओर हाहाकार क्षारक्षार हो रहा है—चीना का आमोद मण्डल अव भी पूर्ण कला धारण किये है ! इसीसे अनुमान किया जा सकता है कि इनके हृदय पटपर कितना गाढ़ा परदा पड़ गया है। परदा तो निःसन्देह पड़गया है परन्तु हमारे कहने के लिये नहीं !

हम किस मुंह से चीनों को ऐसी कड़ी वात कहैं जब कि स्वयम् उन से भी अधिक गई वीती दशा में पड़े हों!

हमारा भी तो धन गया धान्य गया धर्म कर्म मान मर्य्यादा--विद्या बुद्धि सभी तो चला गया!

फिर भी हम कोट पतलून और डासन के बूट शिरपर नये फैशन की फेल्ट टोपी और आंखों को चश्मा से छिपाकर नाटक देखने चलते हैं--नाटक भी एलफ्रेड कम्पनी का--महाभारत मण्डली का नहीं क्योंकि वह तो पुराणों का गपोड़ा है! कहिये हमारा हृदय क्या वेपर्दहै? राम राम वेपर्दगी बड़ी बुरीबात है। इसी से तो हमारे भाई जान बूझकर भी पर्दा उठाना नहीं चाहते!!!

चीना लोग अपनी मण्डली में अपनेही देशी बाजे--झांझ--तवला पत्थर का डमरू--बांस के करताल और सितार सारङ्गी आदि वजाते हैं-हमने तो अपनी पुरानी चीज़ों को भद्दी समझकर छोड़ दिया है-उन्नति करने के लिये विलायत के बने हारमोनियम और पियानों बजाने लगे हैं! धिक्कार है हमारी इस उन्नति पर! यदि रुचि का रोकना हमारे अख्तियार में न था तो रुचि के अनुकूल चीज़ों का वनाना तो अपनेही हाथ की वात थी? सो न करके अपनी आवश्कताओं के लिये परमुखापेक्षी वनकर हमने अपना मन और आत्मा भी खो दिया-धन और धर्म तो आगेही खो चुके थे!!!

नाटक मण्डलियों के सिवाय शहर में हर ठौर वेश्याओं के नाच गान भी होते हैं-तमाशाइयों के ठट्ठ लगे रहते हैं।

कहीं कहीं भांड़ संयुक्त नाच होता है बीच बीच में भण्डराज नकलैं करते जाते हैं॥ भांड़ों की अलग जमायतें भी तमाशा करती हैं हंसी मस्खरापन के चुटकुले कहते और दर्शकों को हंसाते हैं किस्से कहानियां कहनेवाले भी अपनी मेज विछाकर मार्गों के पार्श्व में बैठते और वहुतों को अपनी ओर आकर्पित कर लेते हैं इन की गप्पैं सुनने को भी भीड़ैं लगी रहती हैं॥

पहिले पहिल ऐसे लोगों को देखकर मैंने इन्हैं व्याख्यान दाता समझा था-परन्तु ज्ञात हुवा कि वह केवल गपोड़ा पांड़े लोगही हैं॥ चौसर पांसे का खेल भी इन लोगों में होता है।

बाजियां लगाई जाती हैं॥ हार जीत बहुधा नाम की परन्तु कभी कभी दाम (धन) की भी होती है॥

चीना लोग बैठे बैठे घरके अन्दर के खेल बहुत पसन्द करते हैं। नाच नाटक पांसा चौसर सभी बैठकर देखने और खेलने की चीज़ें हैं।

मैदानके खेल-जैसे क्रिकेट गेंद—पैर गेंद—हाकी—घोड़दौड़ इत्यादि नहीं खेलते! हिन्दुस्तानमें भी कम प्रचार है परन्तु अंग्रेज़ों में तो ऐसा खेल बहुत कम होगा जिसमें शारीरिक परिश्रम थोड़ा बहुत न हो॥

अंटा-अर्थात् बिलियर्ड में भी थोड़ी बहुत चल फिर हई है और नाच तो पूरी कसरत है। स्त्री पुरुष दोनों का भर पेट काम होजाता है॥

सो देखते हैं कि आज कल अंग्रेजों की सभी बातें बड़ी सुडौल और मनुष्य को उद्योगी और मेहनती बनानेवाली हैं।

जान पड़ता है कि जगत् गुरू की सन्तान को भी बिना उनका अनुकरण किये निस्तार नहीं होगा! अनुकरण इच्छा पूर्वक न करनेपर भी रुचिकी प्रबलता के कारण अन्ततः अनायासही करना पड़ैगा॥

—संस्कार—

जैसा वर्णन होचुका है कि पितृ सेवा जीवित दशा में और श्राद्ध कर्म मरणान्तर करना चीना लोग परम कर्तव्य मानते हैं। मरणान्तर श्राद्ध पुत्र के द्वाराही होना भला समझते हैं-इसी कारण से यह लोग सन्तान के बड़े अभिलाषी होते हैं॥ जैसे हिन्दुस्तानियों को पुत्र संतान की अधिक कामना होती है उसी भांति चीनियों की भी अभिलाष होती है॥ स्त्रियां चाहती हैं कि पहिली सन्तान उनकी पुत्र होवे। मंदिरों में एक देवी "पुत्रदा" होती है जिसका नाम "कानीन देवी" है सो पुत्र कामना से स्त्रियां उसकी पूजा करतीहैं। पूजाका विधान धूप दीप से होता है और बहुधा देवी की जूतियों की पूजाकी जाती है॥

कामना पूरी होने पर बड़ी धूमधाम से नवीन जूती बनाकर देवी को पहिनाई जाती है। महात्मा कान फ्यूशस के उपदेशों में इस भांति देवी देवतों की पूजा का कोई विधान नहीं है। उनका उपदेश तो केवल यही है कि सन्तान को माता पिता की सेवा करना परमधर्म है और मरणान्तर भी उन के नाम का आदर करना और समय समय पर श्राद्धादि करते रहना चाहिये॥

इसलिये नहीं कि वह आदर सत्कार मृत प्राणी को पहुंचता है वरन संसारी लोगों पर सिद्ध करने के लिये कि माता पितादि का आदर उपस्थित वा अनुपस्थित सब अवस्थाओं में करना सन्तान का परम कर्तव्य है॥

श्राद्ध करना सन्तान का कर्तव्य है परन्तु श्राद्ध करवाना पितरों का आवश्यकीय कर्तव्य नहीं है॥ सन्तानगण पितरों के नाम का उन के मरणान्तर आदर सत्कार न करैं तो मृत प्राणियों की कोई हानि नहीं न उनको इस से किसी प्रकार का दुख सुख प्राप्त होता है परन्तु यदि करैं तो सन्तानगण की श्रद्धा और पितृभक्ति प्रगट होगी, सो यह श्राद्ध कर्म ऐसा नहीं है कि जिस के लिये सन्तान का होना बड़ा आवश्यकहो ! जिसके बिना कामही न चल सकै।— क्योंकि पुरखों का हानि लाभ तो इस में कुछ हई नहीं॥ परन्तु बात को न समझकर जैसे हिन्दुस्तानी लोग उसी भांति चीना लोग भी श्राद्ध के लिये पुत्र कामनाकरने लगे॥ पुत्र न होगा तो मरे बाद श्राद्ध कौन करैगा ?—इसी कारण महात्मा कानफ्यूशस के मत विरुद्ध एक पुत्रदादेवी कल्पित हुई॥ ज्ञानी चीना लोग कहते हैं कि बौद्धधर्म प्रचार के कारण से यह देवी देवते प्रगट हुवे यह सब उसी का घाल मेल है सो सत्य भी हो सकता है क्योंकि हिन्दुस्तान में भी मूर्ति पूजा का धर्म से संबन्ध बौद्धों के समय से ही हुवा है॥

पुत्रकामना से स्त्रियां एक और टोटका करती हैं। किसी शुभ मुहूर्त में प्रातःकाल अंधेरेही उठकर अपने पति के वस्त्र पहिनती हैं और टोपी भी पहिन कर नगर के वाम भाग स्थित किसी कूप की तीनवार परिक्रमा करती हैं और चुपचाप घर फिर आती हैं इस कार्य्य के करने में यदि उनको मार्ग में कोई न मिलै और घर पहुंचने तक कोई न टोक पावै तो समझती हैं कि मनोरथ पूरा होगा॥

नव विवाहिता स्त्री के प्रथम गर्भवती होने पर आठ महीने की गर्भावस्था में उसकी माता वस्त्राभूषण आदि उपहार भेजती है॥ और घर पर कुछ उत्सव मनाया जाता है। धूपदीप और आतशबाजी आदि छुड़ाई जाती है॥

बालक के जन्म दिन को साधारण गृहोपचार के सिवाय विशेष उत्सव नहीं मनाया जाता परन्तु जन्म से तीसरे वा छठवें दिन उत्सव किया जाता है और बंधुबांधव इष्ट मित्रादि का निमन्त्रण और ज्योतिषी की पूजा अर्चा दान दक्षिणा की जाती है॥

ज्योतिषी जी एक वर्ष बाद जन्मपत्र बनाकर देते हैं॥

जन्म के एक महीने बाद बालक को घर के बाहर निकालते हैं और उसी दिन नाम धरते हैं—यह नाम बालक का जन्म नाम कहलाता है। इस दिन बड़ी धूमधाम से उत्सव किया जाता है बहुत इनाम इकराम दान दक्षिणा बांटी जाती है। और घर की ठाकुरबाड़ी (पितरों की कोठरी) में धूप दीप आदि जलाये जाते हैं॥ इसी दिन बालक का चूड़ाकर्म (क्षौर कर्म) भी कियाजाता है॥

नाम धरने में भी चीना लोगों के बीच मिथ्या विश्वास घुसा हुवा है-बालक को भूत प्रेतकी बाधा न हो और नजर न लगै इस लिये जन्म नाम अधम रीति का दिया जाता है—जैसे कुत्ता—पिस्सू—दांत—कूड़ा—इत्यादि॥ हिन्दुस्तान में भी तो "एककौड़ी" से लेककर "शतकौड़ी" तक और "कूड़े" से लेकर "मल" तक नाम होते हैं!!!

बच्चे के पहिले वस्त्र को किसी सत्तर अस्सी बरस के बूढ़े के वस्त्र से काटकर बनाते हैं। इस मनोरथ से कि उसके पहिनने से बालक का जीवन अधिक होग॥

चीनियों में पुत्र होने से बड़ी खुशी होती है परन्तु कन्या होने से खुशी नहीं होती॥ बालक के हाथ में और गले में लाल डोरी बांधी जाती हैं और भी कई प्रकार के टोने टटके बांधे जाते हैं॥

बालक एक वर्ष का होने पर सालगिरह का उत्सव होता है। इस में भी बड़ी बड़ी जेवनारें और धूप दीप आदि से देव पूजा होती है॥

छः सात वर्ष की अवस्था होने पर विद्यारंभ का समय है॥ बड़े उत्सव के साथ बालक को विद्याशिक्षा का आरम्भ कराया जाता है। महात्मा कानफ्यूत्सी के नामपर पूजा की जाती है और बालक गुरू के सिपुर्द कर दिया जाता है—अलग गुरुकुल में रहने की प्रथा नहीं है॥ महन्त लोगों के मन्दिर हैं जिनमें अनेकों बालक देखने में आये सो उनकी कथा इस भांति है कि जो साधारण व्यक्ति अपने बालक की पालना न करसकै वा विद्या न पढ़ा सकै वह मन्दिरके महन्त को सिपुर्द कर आवै-वहां बालक की भली भांति पालना और विद्या शिक्षा भी की जाती है मंदिरोंमें शिक्षा पाये हुवे बालक प्रायः सभी ब्रह्मचारीही रहते हैं गृही नहीं बनते॥

सर्व साधारण यातो अपने घरों पर ही बालकों को पढ़ाते हैं अथवा नगर के स्कूलों में पढ़ने भेजते हैं॥

इम्तहान पास करके घर वापिस आनेपर बड़ा उत्सव किया जाताहै-लड़के को बड़े भारी आदर सत्कार से लेते हैं। इसी को समावर्तन कह लीजिये॥

इसके पश्चात् विवाह का समय है विवाह का साधारण समय बीस वर्ष की अवस्था है परन्तु बहुधा कम अवस्था में और अधिक अवस्था में भी विवाह होते हैं॥ कभी कभी बिलकुल छोटी अवस्था में भी विवाह होजाता है—विवाह दम्पति के आधीन नहीं वरन माता पिताके आधीन होता है॥

वरपक्ष को कन्याके लिये रुपया देना पड़ता है कम अवस्थामें ब्याहनेपर कम रुपया लगताहै सो इसी कारण निर्धन लोग बचपन में ब्याह देते हैं॥

विवाह की बात चीत भाटों की मार्फत की जाती है-भाट वरपक्ष का सन्देशा लेकर कन्याके पिता के पास जाताहै और यदि बात चीत पक्की होजावे तो उस को कुछ दान पहुंचाया जाता है॥ इस रस्म के होने पर तीन दिन के बीच में यदि वरपक्ष में कोई हानि होजावे-कुछ बहुमूल्य पदार्थ नष्ट होजावे अथवा अन्य कुछ अनिष्ट घटना संघटित हो तो समझते हैं कि कन्या कुलक्षणी है और सगाई तोड़ देते हैं॥

सगाई होने के बाद कन्या को परदा में रहना पड़ता है॥ यदि घर पर कोई महमान आवै तो कन्याको अन्तःपुरकी किसी कोठरी में छिपजाना पड़ता है॥

वर कन्या को विवाहके दिनतक देख नहीं सकता है॥ यदि प्रतिज्ञाके अनुसार रुपया न दियाजावे तो भी सगाई टूट जाती है॥

सब बात स्थिर होजाने पर ज्योतिषी कोई शुभ दिन निर्णय करता है और उस दिन वरके सब सम्बन्धी और इष्ट मित्रलोग उसके स्थान पर एकत्रित होते हैं और बड़े सज धज से बरात साज कर कन्या के घर को चलते हैं॥ दूरी के अनुसार ही यात्रा का सामान किया जाता है बहुतसी आतशबाज़ी फूल पत्ते आदि साथ चलते हैं। गाड़ियां घोड़े टट्टू पालकी आदि सवारियां साथ होती हैं और कई प्रकारके बाजे गाजे भी सङ्ग चलते हैं—तुरही—नफीरी ढोल झांझ नकारे साधारणतः यही बाजे हैं॥

बाजे वालों की पोशाक रंगीली निराली ही होती है॥ बरातमें पुरुष और स्त्रियां दोनों सम्मिलित होते हैं। बरातमें भूत प्रेत का बड़ा डर समझा जाता है। न हो कि मार्ग में भूत लगजाय इस लिये बरात के आगे शुवर के मांस का बड़ा

सा टुकड़ा लेकर चलते हैं कहते हैं कि यदि भूत मिलैंगे तो इस मांसको पाकर प्रसन्न होजायँगे और बराती लोग भूतबाधासे बच जायँगे॥

विवाहके दिन कन्याका शृङ्गार बहुत अच्छी तरह किया जाताहै गहने और वस्त्र सब बहुत सुंदर प्रायः लाल रंग के पहिनाये जाते हैं॥ विवाह के दिन बालों को गूंथ कर बांधा जाता है। इससे पहिले कन्याओं के बाल पीठपर लटकते रहते हैं बरात कन्या के घर केवल उस को लेने जाती है। विवाह के नियम वरके घरपर पूरे किये जाते हैं। सो कन्या के वास्ते एक बहुत सुंदर लालरंग की पालकी वा झम्पान जिसे चार आदमी उठाते हैं जाती है और उसी पर सवार कराके ले आते हैं॥ पालकी के सब ओर परदा बन्द रहता है। जबबर के द्वारपर पहुंचते हैं तब कन्या पालकी से बाहर उतरती है उस समय डेवढ़ी पर एक बर्तन रक्खा जाता है जिसको दो सुहागिन स्त्रियां दो ओर से रखती हैं बर्तन में कोयले जलते रहते हैं।

कन्या को सहारा देकर उस बर्तन के ऊपर से होकर घरमें ले जाते हैं। घर के एक स्थान में विवाह की वेदी बनाई जाती है-उस वेदी पर बैठा हुवा वर कन्या के आने की बाट जोहताहै। जब कन्या समीप पहुंचती है तब बड़े आदर सन्मान से प्रणाम करती है। तब वर वेदी से नीचे उतर के उसका घूंघट उठा कर पहिलीबार मुखावलोकन करता है॥ हमारे बंगाल प्रान्त में इस क्रिया को "शुभदृष्टि" वा "शुभ दर्शन" कहते हैं॥ तब दोनों एक संग वेदी पर बैठ जाते हैं। बैठने में दोनों यह यत्न करते हैं कि जहां दूसरे का कपड़ा आसन पर पड़ा है तहां मैं उसपर बैठूं क्योंकि उनका यह विचार है कि जो दूसरे के कपड़े को दबाके बैठ जाता है सो घर में अधिकारी होगा॥ इसके पश्चात् दोनों व्यक्ति सब नातेदारों सहित घर के ठाकुरद्वारे में जाते हैं और वहां स्वर्ग—पृथिवी-और पितरों की पूजा यथा विधि करते हैं॥ पूजा के पश्चात् सब लोग भोजनालय में जाकर मेजोंपर बैठ जाते हैं जो पहिले से प्रस्तुत रहती हैं। सब लोग भोजन करते हैं भोजन समाप्त होने पर वर कन्या दोनों के हाथों में एक एक कटोरा दाख रस (शराब) दिया जाता है इन्हें हाथ में लेकर वे एक दूसरे से प्रतिज्ञा करते हैं। प्रतिज्ञाओं के पश्चात् विवाह क्रिया समाप्त हो जाती है॥

चीन में विधवा विवाह नहीं होता-परन्तु नीच और कंगालों में कभी कभी जीविका पाने के लिये विधवा स्त्रियां विवाह करलेती हैं। कभी कभी बड़े लोगों

में भी ऐसा होजाता है परन्तु देश की साधारण रीति बिधवा विवाह होने की नहीं है ॥ पतिव्रत धर्म की बड़ी चर्चा है स्त्रियों को पतिव्रत के बड़े उपदेश दिये जाते हैं। पति कैसाही पापी कुकर्मी क्यों न हो स्त्री के लिये पूज्य बताया जाता है॥ परन्तु स्त्री व्यभिचारिणी-वकवादिनी अवज्ञा कारिणी आदि होने पर त्यागी जा सकती है !!! इसकी समालोचना आवश्यक नहीं-विचारवान् लोग जान सकते हैं कि यह कैसा न्याय है !

सती की बड़ी महिमा गाई जाती है। कभी कभी स्त्रियां पति के देहान्त होने पर अपना भी आत्म घात कर डालती हैं-ऐसी स्त्रियों के नाम पर स्तम्भ खड़े किये जाते हैं। और बड़ी महिमा होती है । स्त्रियों का विश्वास है कि पति के साथ प्राण त्यागने से परलोक में फिर अपने पति को प्राप्त करके अन्तकाल तक सुख से रहैंगी ॥

विधवा स्त्रियां शिरका शृंगार और लाल वस्त्र नहीं पहिनतीं ॥

सफेद वस्त्र शोक का चिह्न समझा जाता है॥ जैसा कि वर्णन हो चुका है-हिन्दुस्तान की भांति चीन में भी संयुक्त परिवार (सब कुटुम्ब एक साथ रहने) का रिवाज है। मकान एक होताहै परन्तु हरएक के लिये अलग अलग स्थान नियत रहता है ॥ बहू अपनी सासु को प्रतिदिन प्रातः सायं प्रणाम करने जाती है और खाना खिलाने के समय सादर प्रणाम करके भोजन कराती है॥

यदि कुटुम्ब में कुल तीन चार वा पांच स्त्री पुरुष हों तो सब मिलकर एक ही मेज पर भोजन करते हैं परन्तु अधिक आदमी होने पर पुरुषों की मेज अलग और स्त्रियों की अलग रहती है ॥ साधारणतः दोबार भोजन करतेहैं। और चायपान कई बार यथा रुचि हुवा करताहै ॥

मृतक क्रिया में दाह का नियम नहीं है। काठ का एक-बहुत लम्बा सुघर कफन बनाया जाता है जो ढांक देने पर बिलकुल सब ओर से बिना संधिका मालूम होताहै। उसी में शव को वस्त्रों से लपेट कर और कुछ सुगंधादि डालकर बंद कर देते हैं।

सात—ग्यारह-पंद्रह-वा अधिक दिनों में जब ज्योतिषी स्थान निर्णय कर लेता है तब उस कफन को बड़ी धूमधाम से शव स्थान को ले जाते हैं और वहां यथाविधि भूमि के अर्पण करदेते हैं समस्त कुटुम्बीजन श्वेत वस्त्र पहिरते

हैं और सन्तानगण को तीन वर्षतक श्वेत वस्त्र पहिनकर शोक प्रगट करना पड़ता है॥ रेशमी वस्त्र तीन वर्षों तक नहीं पहिनते॥ मृत्यु के तीसरे और छठे महीने कबर पर जाकर यथाविधि पूजा करते हैं। वार्षिक श्राद्ध भी करते हैं कागज की वस्तुवें बनाकर जलाते हैं जिन्हें विश्वास करते हैं कि मृतकों के पास पहुंच जायँगी॥

इस भांति जन्म से मरणतक के संस्कारों का आदर्श (नमूना) जो चीन में बर्ता जाता है वर्णन किया गया॥ इससे पाठक समझ लेंगे कि इन संस्कारों से हमारे भारतीय संस्कारों की कितनी समताहै मृतक संस्कार में दाह के स्थान भूमिस्थ करना तो अवश्यही भिन्न है, शेष के सभी संस्कार भारतवर्ष की भांति के प्रगट होते हैं॥

यह नियमावली महात्मा कान्फ्यूशस और महात्मा बुधदेव के समय के इधर की ही चली हुई है॥ इस समय के प्रथम क्या था सो मैं पता नहीं लगा सका। हिन्दुस्तान में महात्मा बुध के समय भी शायद आजकल की भांति के संस्कार किये जाते थे और अब भी वही किये जाते हैं। सो अनुमान होता है कि हिन्दुस्तान के धर्म नियमों के साथ चीन का सनातन सम्बन्ध चला आता है। क्या आश्चर्य है जब आर्य्यावर्त में वैदिक संस्कारों का प्रचार रहा हो तब चीन में भी वही जारी हो॥

यह समता देखकर विश्वास होता है कि अवश्यही आर्य्यावर्त देश एक समय में जगत् गुरु था जहां जहां प्राचीन काल की कर्म पद्धतियां अबतक उसी भांति घट बढ़ जारी हैं तहां सर्वत्रही आर्य्यावर्तीय नियमों का आभास पाया जाता है परन्तु शोक है कि आज वही जगत् गुरु आर्य्यावर्त देश गुरुत्व तो अलग रहै—साम्प्रतिक गुरुओं की शिक्षा ग्रहण करने तक की योग्यता नहीं रखता! अपनी प्राचीन सर्वश्रेष्ठ शिक्षा दीक्षा और संस्कारों को तो बिलकुल भुला दियाही है—अब नवीन नियमावली को ग्रहण करने में भी असमर्थ बन रहा है! अंधकार और विप्लव समय की कालिमा रूप कुसंस्कारों को न जानैं कबतक वहन करता हुवा जगत् हँसाई कराता रहैगा?

प्यारे आर्य्य सन्तान! अब समय अंधकार का नहीं है जिस उन्नति के शिखर पर एक दिन तुम विराजमान थे उसी ओर आजकल सारी दुनियां

बड़े वेग से अग्रसर होरही है । यूरोप आदि देशों के मस्तिष्क में ज्यों ज्यों विद्या का प्रकाश बढ़ता जाता है त्यों त्यों वह तुम्हारी प्राचीन सचाई का अनुभव करते जाते हैं॥ उन के नये नये नियम सब तुम्हारे प्राचीन नियमों की नकल मात्र हैं। चाहे उनके परिच्छद दूसरेही काट छांट के क्यों न हों! समस्त संसार उन्नति करते करते एक दिन तुम्हारी सच्ची सीधी-प्राकृत सृष्टि क्रमानुकूल वैदिक शिक्षाओं को मनप्राण से मान लेवेगा-जिस के चिह्न अभी से पूर्ण रूपेण दिखाई पड़ने लगे हैं॥

इस दशा में तुम्हारा स्वयम् अपने कर्तव्यों के विषय पीछे पड़ा रहना बड़े लज्जा की बात है॥ उठो प्रिय बंधुजनों और अपनी प्राचीन वैदिक प्रथाओं को जो आज़ नवीन अनुमोदित भी हैं ग्रहण करने और कार्य्य परिणयन में अब विलम्ब मत करो॥ देखो!

बड़े बनते जाते हैं छोटे तुम्हारे!
नसीबे हैं किस दर्जे खोटे तुम्हारे!!!

—त्यौहार—

चीनियों के तीन बड़े बड़े और सर्व साधारण के त्यौहार होते हैं॥ एक तो "नौरोज़" अर्थात् नवीन संवत्सर का नूतन दिवस। जैसे हमारे हिंदुस्तान की होली!

यह सबसे बड़ा और सर्व प्रधान त्यौहार है सब राजकाज व्यापार आदि कार्य्यालयों में अठारह दिनकी तातील होती है॥ और सब लोग यह समय बड़े आमोद प्रमोद से बिताते हैं!

सब लोग परस्पर एक दूसरे से मिलते जुलते और आदर सत्कार करते हैं॥ भेंट मुलाकात का यह प्रधान त्यौहार है चीना लोगों की वर्ष गणना चन्द्रकलाओं से होती है-प्रथम मास के शुक्ल पक्ष की परिवा प्रथम दिन है॥ तेरहवीं से सत्रहवीं तिथि तक नगर में बड़ी दीपावली कीजाती है॥ सब घर द्वार मार्ग मन्दिर स्वच्छ सुथरे किये जाते और उत्तमोत्तम लालटैनों से विभूषित होते हैं॥

पांच रात्रियों तक बराबर खूब रोशनी और बाजेगाजेसे उत्सव मनाया जाता है मार्गों पर नगर कीर्तन मण्डालियां घूमती हैं और लोग परस्पर मिलभेंट कर-

तेहैं ॥ दूकानों और मकानों की शोभा विचित्र होजाती है ॥ आतशबाजियां भी तरह तरह की छुटाई जाती हैं ॥

यह सब शोभा चीनके सम्पत्काल की है आज तो यहां विपत्काल है !!!

सो वर्तमान संवत्सर का उत्सव (१९ फरवरी १९०१ प्रथम दिन था) चीना लोगों ने नहीं वरन विदेशियों ने मनाया ॥ शामिल सड़कों (International roads) पर लालटैनें गाड़ दीगई हैं जिसमें सैनिक यातायात की सुविधा हो- सो उन्हीं लालटैनों की रोशनी और गोला गोलियों की आतशबाजी और फौजी वैन्डका बाजा यही सब उत्सव पूजा के उपचार हुवे ! चीना लोगों के लिये वर्त्त- मान नवीन संवत्सर बिलकुलही नया हुवा है।

अनेक जन्मों से उन्हों ने जिस बात को नहीं देखा था—कदाचित् विचार में भी नहीं लाये थे वही सब प्रत्यक्ष देखा और पाया ॥ नवीन संवत्सर के आरम्भ दिनकी पूजा में चीना ज्योतिषी लोग संवत् फल वर्णन करते हैं ॥

इस पूजा का नाम " वसन्त सम्मिलन " है इस दिन बड़े बड़े राजकर्मचारी गण एवं धनवान् महाजन लोग वसन्ती वसन धारण करके एकत्रित होते हैं— बड़े झंडे में एक गोमूर्ति बनी हुई निकालते हैं—और उसी परसे ज्योतिषी वर्ष फल का निर्णय सुनाता है ॥

संवत्सर की कामधेनु यदि पीत वर्णा हो तो अन्नकी उपज बहुत होगी। रक्त वर्णा होने से दुर्भिक्ष होगा ॥ श्वेत रंग अतिवृष्टि सूचक है कृष्णवर्णा से रोग फैलने का भय ज्ञात होता है। और नीलिमा युद्ध सूचक है ॥ संवत्सर का राजा यदि नंगे सिर हो तो गरमी अधिक होगी यदि मुकुट धारण किये हो तो शरद् अधिक पड़ैगी पैरों में यदि जूते पहिने हो तो वर्षा अधिक होगी और नग्न पाद होना अनावृष्टि का लक्षण है ॥

ज्योतिषी जी यही सब सुनाते हैं ॥ खूब दान दक्षिणा से सन्मानित होकर घर जाते हैं और जनसमूह संवत्सर का भविष्यत् सुनकर अपने अपने कामकाज में लगता है ॥

हमारे हिन्दुस्तान में भी इसी भांति संवत्सर के राजा—मन्त्री—वाहन— परिजन सब होते हैं। शुभाशुभ फल भी बड़े बड़े बोलों में कहा सुना जाता है ॥

पंडित जी बतादेते हैं कि अकाल होगा वा सुकाल–बीमारी फैलैगी, मरी पड़ेगी, युद्ध विग्रह होंगे, वा निरी शान्ति विराजैगी॥ इत्यादि—

हम लोग यह सब भविष्यद्वाणी सुनही लेते हैं कुछ करते धरते नहीं—वा करधर सकते ही नहीं!

यदि अकाल की सूचना होती है तब भी हम से यह नहीं होसकता कि चैत का उपजा हुवा अन्न रेलीब्रादर को अर्पण न करके अपनी उदर दरी की रेलारेली के वास्ते धर रक्खैं। और यदि सुकाल की सूचना हो तब भी विदेशी रेलारेल के कारण हमारे लिये सस्ता अन्न भाग्य में नहीं लिखाजाता!

सो यही दशा यदि चीना लोगों की रही हो तो कहने का कुछ अवकाश नहीं है॥ फल यथा योग्य ही हुवा॥ इस प्रसंग में मैं अपने स्वदेशी भ्रातृ वर्गों को एक और भविष्यद्वाणी की याद दिलाना चाहता हूं।

भगवान् कृष्णचन्द्र जी ने राजसभा में एक भविष्य वाणी कही थी महाभारत आदि के मन्थन से आप उसे खोज सकते हैं–सारमर्म उक्त महावाणी का यह है कि:—

जिस संवत्सर में राजा मनन शीलता पूर्वक उद्योग परायण रहैगा वह संवत् प्रजा के लिये सुखकारी होगा॥

राजाके मन्त्रिलोग जब विचारवान् और जितेन्द्रिय होंगे तभी राजा उद्योग परायण रहसकैगा॥

राजा की दण्ड नीति जब जागृत अवस्था में रहैगी तभी मन्त्रि लोग जितेन्द्रिय होंगे॥

दण्ड नीति का विधान और सञ्चालन जब देश काल पात्र आदिके विचार पूर्वक और प्रजाकी अवस्था जान बूझकर कियाजायगा तभी नीति का जागरण सम्भव होगा॥

प्रजागण में राजनीति के समझने की विद्या बुद्धि न होने से राजा को देश की वास्तविक दशा जानना असंभव होगा॥

प्रजा की वास्तविक दशा और काल पात्र आदि का ज्ञान न होने से राजा और राजसभा उत्तम शासन नहीं कर सकैंगे अतएव राज विप्लव की सम्भावना होगी॥

परमेश्वर संसार भर के राजा हैं और देश देशान्तरों के राजा लोग अपनी

अपनी देश की प्रजाके प्रतिनिधिमात्र हैं॥ सो परमेश्वर की ओर से अपने अपने देशीय प्रजाकी रक्षा धनधान्य धर्म कर्म सब प्रकार से करना राजा का कर्तव्य कर्म है॥

इसमें शिथिलता करने से राजा और प्रजा सब का नाश होगा॥

सकल जगत् साम्राज्य के सर्वेश्वर राजाधिराज ने अपनी सम्पूर्ण सृष्टि सब पदार्थ और प्राणी को एक दूसरे का सापेक्ष्य बनाया है। सकल संसार मिलजुल काज करने का ज्वलन्त आदर्श है। सो जो राजा इस बड़े नियम को नहीं जानैगा वह अवश्यमेव नाश को प्राप्त होगा॥

संसार में प्रकृति के नियमों को न समझने वाले लोग जैसे सदा अनेक आधि व्याधियों से पीड़ित रहते हैं उसी भांति राजनीति को न जानने वाली प्रजा अनेक प्रकार की पीड़ाओं से क्लेशित रहैगी॥

जो जो काम परवश हैं वही सब दुख और जो जो अपने वशमें हैं वही सुख हैं। ऐसा सनातन नियम है। सो जो राज नियम प्रजाके अनुमोदन से बनाये गये हों उन्हीं के चलाने में राजा कृतकार्य्य होगा। इसके विरुद्ध स्वेच्छा चार करने से प्रजा में अशान्ति फैलैगी; और विप्लव की सम्भावना होगी। क्योंकि ऐसा करना सर्वाधिराज परमेश्वर के नियम से विरुद्ध है॥

जैसे सूर्य्य पृथिवी पर से कण कण जल शोषण करके पुनः वर्षाद्वारा सब का सिंचन करता है उसी भांति राजा को प्रजा से कर ग्रहण करके उसी की भलाई के लिये व्यय करना उचित है। जो राजा ऐसा न करके प्रजा को केवल शोषण करना जानता है उसका नाश अवश्यमेव होगा॥

जो प्रजा राजनियमों से अनजान है वह परमेश्वर की आज्ञाओंको भी नहीं समझ सकती! ऐसी प्रजाकी भलाई कभी नहीं होगी॥

जो प्रजा अपने व्यौहारोंको ईश्वरीय नियमों (कानून कुदरत)के अनुकूल नहीं करती वह अवश्यमेव नाशको प्राप्तहोगी॥

परमेश्वरने जीवों के सुख सम्पादन के लिये अनेकों प्रकारके पदार्थ सिरजे हैं-जो प्रजा उनका उचित उपयोग नहीं जानती वह दुःखको प्राप्त होगी॥

परमेश्वर सर्वज्ञ हैं और उन्होंने समस्त संसार की रचना यथा योग्यही की है। देशों के अनुरूप देशियों को और आवश्यकताओं के अनुकूल पदार्थों को रचा है। परन्तु देश देशके राजालोग सर्वज्ञ नहीं हैं। इसी हेतु प्रजाको

उचित है कि राजनियमों के निर्माण विधान में सदा योग देती रहै। जो प्रजा राजनियमों में योग देने के अयोग्य होगी वह सदा अनुचित राजदण्डों से पीड़ित रहैगी ॥

देशके कल्याणके लिये आवश्यक है कि राजा प्रजा दोनों में समभाव सद्भाव रहै ऐसा न होनेसे विप्लव अवश्यम्भावी होगा ॥

इत्यादिः-

उपरोक्त वचन महाराज कृष्णके राजकाज सम्बन्धी उपदेश हैं-और सच्ची भविष्यद्वाणी ॥

सो यदि ज्योतिषीलोग अनर्गल कथाओं की अपेक्षा उपरोक्त भगवद्वचन की भांति देशके कल्याणकारी और आवश्यक भविष्य सूचन कियाकरैं तो देशका अनिर्वचनीय उपकार साधन हो!

परन्तु हमारे लोगों में ऐसी सुमतिही काहेको उपजैगी?

जेहि विधिना दारुण दुखदेई!
तेहिकी मति पहिले हरिलेई!!

क्या इसी कारणसे तो हमलोग मतिहीन तनछीन मनमलीन नहीं होगये हैं?

भगवन् रक्षाकरो! हे भगवान् कृष्ण! तुमको हिन्दू दीनदयालु पतित-पावन कहते हैं! सदा तुमने असहाय की सहायकरी है। हिन्दू नित्यही तुम्हारी आराधना करते हैं-स्मरण करते हैं कि प्रभु तुमने ग्राहके फंदसे गज को कैसे उबारा था! नाथ किमि गजके फंद छुड़ाये!!!

गजकी टेर सुनी प्रभु तुमने पायपियादे धाये!
नाथ किमि गजके फंद छुड़ाये!

भारत गजराजपर जब किसी टापूका ग्राह चढ़ि आयाथा-और भारतसागर के मध्यमें धूम्रयानोंका घनघोर संग्राम (Naval fight) हुआ था तबभी हे प्रभु (कृष्ण) (विष्णु) तुमने सहायकी और भारतकी विजय हुईथी! हे भगवन् कृष्णचन्द आनंदकंद! एक दिन वह था कि तुम्हारा नाम समस्त पृथिवी पर आकाशवत् व्याप्तथा! आकाश पाताल सागर हिमालय सभी तुम्हारे लिये हस्तामलकथे! और एक दिन आज है कि तुम्हारे नामकी भी निन्दा कीजाती है!

दूसरा त्यौहार जुलाई के महीने में होता है। उस अवसरपर नदी आदि जलाशयों में नौकाओंपर सुन्दर सुन्दर मंच सजाय कर रोशनी करते हैं। जलको आलोकमय करदेते हैं।

इस दिन सबधनी और सेठ लोग जलदेवता की पूजा और जलविहार करना परम पुनीत समझते हैं॥

हमारे हिन्दुस्तान में जिसभांति काशी में बुढ़वा मंगलका मेला होता है बस उसी भांति चीनियोंका इसे मंगलही समझिये॥

जनवरी महीने में चीनियों के पितर श्राद्धका दिन होता है। इस दिन बड़ी धूम धामसे पितरों के नामपर दान दक्षिणा भोजन आदि कराते और उत्सव मनाते हैं॥

हमारे यहां जैसे कारका महीना होता है और अंगरेज़ोंका "All soul's day" (आलसोलसडे) वैसाही चीनियोंका यह बड़ा तीसरा त्यौहार पितर पूजा का होता है॥

और भी बहुतेरे त्यौहार और उत्सव होतेहैं परन्तु मुख्य यही तीन हैं जिनको समस्त देश एकही प्रकारसे मानता और करता है॥

साधारण चीना जीवन,

निम्नलिखित घटनायें एक चीना समाचारपत्र से लेकर लिखी जाती हैं- जिससे विदित होगा कि साधारण दरिद्र चीनालोगों की जीवनी कैसी दुखमय है?

(१) वैदेशिक मंत्रिभवन (Legation) के एक अंगरेज महाशय अपनी देखी बात लिखते हैं कि एक दिन सवार होकर वह पीकिन के मध्य राजमार्ग से कहीं को जा रहे थे कि मार्ग के एक ओर बहुत बड़ी भीड़ लगी हुई देखी! वहां जाकर बड़ी कठिनाई से भीड़ के भीतर घुसकर देखा कि एक मजूर (मोटिया) अपना शिर जोर जोर से भीत पर पीट रहा है और इस तरह आत्महत्या करने की चेष्टा में है! साहब चीनाभाषा बोलते थे। पूछने पर ज्ञात किया कि अमुक व्यक्ति ने उस मजूर से कुछ परिश्रम लिया था परन्तु मजूरी में दस कैश (कौड़ी) कम दिये हैं—बहुत मांगने पर भी जब पूरी मजूरी नहीं मिली तब मोटिये ने अपने प्राण देकर बदला लेने का निश्चय किया था।

विश्वास यह था कि जिस के कारण आत्महत्या कीजायगी उस पर भविष्यत् में भारी विपत्ति आवैगी ॥

चहुँओर लगी हुई भारी भीड़ केवल तमाशा देखने मात्र को खड़ी थी! किसी के मन में न तो तनिक दया थी न कोई वचाने की ही चेष्टा करना चाहता था!

साहब ने अपने पास से कुछ देकर उसके प्राण बचाये ॥

---

(२) "पीहो" नदी के तटपर एक दिन एक बड़ी भीड़ देखकर एक अंगरेज़ राही उस ठौर गया तो देखा कि एक मृत कंकाल भूमि पर पड़ी है और भीड़ चारों तरफ खड़ी कुछ बक बक कर रही है। अन्वेषण करके उसने जाना कि वह मृत व्यक्ति आत्महत्या करके मरा था ॥

कारण यह था कि अमुक पुरुष ने उस से कुछ ठगई की थी-सो बदला लेने के लिये यह आदमी नदी में कूद पड़ा परन्तु लोगों ने निकाल लिया था। तिसपर भी वह उसी ठौर निराहार कई दिन लों बैठा रहा और अन्त में मर गया! उसी से उस जगह जमा हुई भीड़ के लोग भावी अनिष्ट की चिन्ता कर के व्यथित हो रहे थे!!!

---*---

(३) एक दिन किसी एक "बीबी फेङ्ग" के नौकर ने एक अन्य "बीबी वाङ्ग" के वाहरी दरवाजे के जँगला का कुछ नुकसान करादिया! बीबी फेङ्ग फौरन् अपना हरजा अदा कराने को उद्यत हुई! परन्तु जब "बीबी वाङ्ग" ने नुकसान भर देना किसी तरह स्वीकार नहीं किया तब प्रथम दर्शित बीबी ने अपना प्राण देकर बदला चुकाने की ठान ली!

यह समाचार पाते ही "बीबी वाङ्ग" तुरन्त अपने शत्रु पर विपत्ति डालने की कामना से निकल खड़ी हुई और निकट की नहर में कूद कर प्राण दे दिये!!!

उपरोक्त बातें सुनी हुई हैं परन्तु मैंने स्वयम् देखा है कि दो जन लड़ते लड़ते शिर तक फोड़लें परन्तु आस पास जुटी हुई भीड़ तनिक भी बचाने आदि की चेष्टा न करैगी ॥

पड़ोस के मकान में आग लगजाय तो भीड़ खूब जमा हो जायगी परन्तु मालिक मकान के सिवाय दूसरा कोई तनिक भी बुझाने में सहायता न करैगा ॥ केवल खड़े होकर तमाशा देखैंगे!

चीना पुलीस का कानून है कि "खून" के मुकद्दमें में जब तक खूनी का पता न लग जाय तब तक "लाश" वधस्थली से न उठाई जावे। सो हफ़्तों क्या महीनों एक ही ठौर पर पड़ी हुई लाश सड़ा करती है—न उसको कफन की सन्दूक में धरते और न उठा ले जाकर गाड़ते ही हैं !!!

सो इन सब बातों को विचारते हुवे जब चीना जाति पर दृष्टि पात करें तो स्पष्ट विदित हो जायगा कि जिस जाति में परस्पर सहानुभूति का इतना अभाव हो वह संसार में कितने दिन "जाति" रूप से जीवित रह सकती है ?

शोक है कि हमारे हिन्दुस्तान की भी दशा इससे कुछ अच्छी नहीं है—प्रत्युत अधिक हीन है !

मेंढक का साग।

अब से १४ वर्ष पीछे के एक चीना अखबार की कही हुई बात है कि:— मुकाम "निङ्गपो" के हाकिम ने एक आज्ञापत्र अपने जिले के किसानों के प्रति जारी किया था उस में लिखा था।

"किसान लोगो ! मेंढक तुम्हारे खेतों के बीच में पैदा होते हैं।

यद्यपि वह छोटी चीज़ हैं परन्तु तौ भी जीवधारी हैं।

वह तुम्हारे खेतों को अपनी पैतृक भूमि समझते हैं और प्राणान्त पर्य्यन्त वहीं रहते हैं। रात्रि में और वर्षा में वह खुले स्वर से गायन करते हैं। इसके सिवाय मेंढक खेती के हानि कारक टिड्डी आदि जन्तुओं को खा लेते हैं जिस से कृषि की रक्षा होती है॥ सो किसानों को उनका उपकार मानना चाहिये॥

फिर क्यों अंधेरे में लालटैन लेकर खेतों में खोज खोज कर मेंढक पकड़ना उचित है ?

यद्यपि तुम्हारे चावलों को वह अच्छा स्वादिष्ट कर सकते हैं परन्तु तौ भी उन पर दया करना चाहिये !

अब से आज्ञा दी जाती है कि कोई आदमी मेंढकों को न बेंचै न खरीदे।

यदि कोई बेचता खरीदता पाया जायगा तो कठिन दंड का भागी होगा॥

उपरोक्त वार्ता चीनियों की एक साग भाजी का नमूनामात्र आप को सुना दी गई ! टीका टिप्पणी की आवश्यकता नहीं !

लोग सुनकर शायद घृणा प्रगट करेंगे ! परन्तु हम पूछते हैं क्या मछली की

भाजी मेंढक से कुछ कम है? फिर उस को आप क्यों सराहना पूर्वक खा जायँ और मेंढकखोरों से घृणा करें?

प्रियवर यह रुचि और अभ्यास की बात है।

अभ्यास अर्थात् आदत को सब पर अधिक अधिकार है॥

इन्द्र वरुण देवता।

टीनसिन के गवर्नरी कचहरी के निकट एक प्रशस्थ मंदिर (अब उजड़ा और लूटा हुवा) है। इस में जल और पवन के प्रकोप से रक्षा करनेवाले देवता की स्थापना है। कहते हैं कि यह मंदिर बहुत पुराना है परन्तु आकृति से वैसा प्रतीत नहीं होता!

इस मंदिर के देवता की पिछली बड़ी भारी राज पूजा सन् १८९० में हुई थी उस का वृत्तान्त यों सुनने में आया है कि एक जंक नामक बड़ी नौका में बड़े बड़े राज कर्म चारी गण आरोहण किये हुये पीकिन को जाते थे कि यकायक टीनसिन के उपरोक्त मंदिर के सन्निकटही वायु वेग से नौका डोलगई-और आरोहियों को बहुत कष्ट सहन करना पड़ा तत्काल ज्योतिषियों को अन्वेषण करने की आज्ञा हुई! बहुत कोशिश और मेहनत करके विचार और तलाश करने पर ज्योतिषी दलने एक पुल के नीचे एक छोटासा सर्प मराहुवा पाया! निश्चय हुवा कि उस सर्प के मरने ही से देवता को दुख पहुंचा है॥ राजन्यवर्ग का रक्षक भी स्वर्गीय सर्प ही है॥

बस-- बड़ी धूमधाम से उस सर्प कंकाल की अर्थी निकाली गई और मंदिर में उस की प्रतिष्ठा की गई!

कहिये पाठक! ज्योतिर्विद की बड़ी पदवी इन चीनाचार्य्य को दीजियेगा वा अपने भदरीजी को?

हांकाङ्ग के एक अखबार में पढ़ा था कि अमुकव्यक्ति ने एक मकान असली दाम से तीन गुणा अधिक देकर खरीद किया। रजिस्ट्री के हाकिम ने जब पूछा कि इतना अधिक दाम देने का क्या प्रयोजन था जब कि उसी मकान के निकट बहुतेरे मकान हैं जो चौथाई दामों मिल सकते थे?

इसपर क्रेता ने उत्तर दिया कि हां महाशय यह तो ठीकहै परन्तु इस मकान के बराबर "Feng Shui फेङ्ग-शूई-" अन्य किसी घरकी नहीं है॥

"फेङ्ग शूई" चीना ज्योतिषियों का व्यवहृत एक शब्द है। जिसके शब्दार्थ "फेङ्ग=वायु शूई=जल" "वायु जल" है॥ परन्तु तात्पर्य्य असली वायु जल का न लेकर कल्पित (फ़र्ज़ी) फेङ्ग शूई ज्योतिष के देवता का तात्पर्य्य लिया जाता है॥

हमारे पढ़ने सुनने वाले महाशयों को शायद यह बात कुछ नई न मालूम होगी क्योंकि हिन्दू लोग भी तो इसी तरह पितर श्राद्ध आदिकों का असली तात्पर्य त्यागकर मुरदों का पीछा करने दौड़ते हैं? वैसीही एक बात इसे भी समझ लेंगे॥

—दंड प्रणाम—

चीन के महाराजाधिराज के सिंहासन के सन्मुख जाने पर प्रणाम का यह दस्तूर था कि सिंहासन के सन्मुख नौबेर शिरको भूमितक झुकाना होताथा। विदेशों के एलची (मन्त्री) लोग जो चीन राजदरबार में जाते थे उन सब को भी यही रीति करना पड़ती थी—इस दण्ड प्रणाम का नाम "कोटो" है॥ इंगलिस्तान के एलची लार्ड मेकार्टनी ने सन् १७९३ ई० में "कोटो" करने से इन्कार किया था।

बहुत कुछ अनुरोध प्रतिरोधके बाद सम्राट् ने लार्ड मेकार्टनीको उसबेर कोटू माफकर दिया और वह सिर्फ घुटना टेककर प्रणाम करते हुवे दरबार में आने पाये थे॥

फिर सन् १८१६ ई० में लार्ड एमहर्स्ट ने भी कोटू करने से इन्कार किया इसकारण उनको राज दरबार में जानेकी आज्ञाही नहीं दीगई।

तत्पश्चात् विदेशी राजदूतों के भेंटके लिये "कोरिया" स्थान नियतहुवा॥

सन् १८९१ में भी उसी जगहपर राजदर्शन हुवा॥

सन् १८९३ में इंगलिस्तान के राजदूत का समादर राजमहल में कियागया परन्तु केवल प्रतिनिधि द्वारा॥

गत युद्धके दिनों में कहाजाता है कि शाहंशाहने स्वयं निज राज महल में राजदूत से भेंट की थी॥

शायद "कोटो" न कियागयाहो परन्तु घुटना टेककर प्रणाम के विना तो सम्राट् के सन्मुख जाना संभवही न था।

सो इस दण्डवत् प्रणामकी पहिली माफी सन् १७९३ ई० के दिनसे आज तक कोई एकसौ आठ वर्ष व्यतीत हुवे। आज उस प्रणालीका निम्न लिखित नियम के अनुसार प्राणान्त होगयाः—

Peace negotiations:—

12. An obligation upon the Chinese govt. to reform the Ministry for foreign affairs and to change the court ceremony for the reception of the foreign ministers in a manner to be indicated by the Powers.

अर्थात्।

चीन सरकार को आवश्यक होगा कि वैदेशिक कार्य्य प्रणाली का संशोधन करै और वैदेशिक मंत्रियों के लिये चीन दरबार में जाने के समय रीत रस्मों का ऐसा नवीन निर्धारण करै जो सब देशों के अनुमोदित हों॥

वजीर आज़म लीहङ्गचङ्ग

The Grand Secretary Lee.

चीनके महामंत्री लीहङ्गचङ्गका नाम प्रायः सभी देशों में प्रसिद्ध है॥

यह इंग्लिस्तान आदि देशों में भ्रमण भी करचुके हैं॥

इनका जन्म मसीही सन् १८२५ में "अनहुई" नामकनगर में हुवा था सन् १८४७ ई० में इन्होंने राजकीय बड़ी परीक्षा पासकी॥ जिसके दूसरेही वर्ष यह राजनैतिक कार्य्यक्षेत्र में अवतीर्ण हुवे॥

यह "सूची"नामक प्रान्त के अर्थ नियामक (Financial Commissioner) नियुक्त हुवे॥ पहिला काम इन्होंने जाली सिक्का बनाने वालोंको दंड देना और जाल रोकनेका किया॥

सन् १८५२ ई० में "टायपिंग" जाति के लोग चिहली सूबे (पीकिन) की सरकारी फौजके विरुद्ध उभड़े थे उनका दमनभी "ली" महाशयने योग्यता के साथ किया॥

"याङ्गत्सी" घाटियों में "वाङ्ग" जातिके लोगोंने सन् १८५८ में जब पुनः अस्त्र धारण कियाथा तबभी लीहङ्गचङ्ग सरकारकी ओर के प्रधान अगुआथे॥

सन् १८५९ ई० में यह "फूक्यीन" प्रान्त के गवर्नर नियतहुवे और सन् १८६२ ई० में कियाङ्गसू के गवर्नर हुवे॥

इन्हीं दिनों चीन सरकारने नवीन राजकीय सेना (Imperial Troops) भरती कराई थी जिसका नाम"सदा समर विजयिनी सेना (Ever victorious army) रक्खा था इससेना के प्रधान सेनापति और शिक्षक अंगरेज़ अफसर " वार्ड " टायपिङ्ग लोगों के विरुद्ध " त्सेकी " की लड़ाई में मारेगये ॥

इनके निम्न कर्मचारी (Second in Command Burgevine) वरजिवाइन को अधिकार मिलना चाहिये था क्योंकि वरजिवाइनने बहुतेरे खंडयुद्ध कृत-कार्य्यता के साथ जय किये थे परन्तु लीहङ्गचङ्गने इनको अधिकार देनेसे इन्कार किया— यहांतक कि राजदरबार से इनको पदच्युत भी करादिया ॥

तत्पश्चात् सदा विजयिनी सेनाका सर्वाधिकार जनरल चिङ्गको दियागया !

सन् १८६३ ई० में अंगरेज़ी सरकारकी सलाहसे उपरोक्त फौजकी जनरल कमांडपर कप्तान गार्डन साहब नियत कियेगये ॥

प्रथमतः गवर्नर " ली " साहब को गार्डन साहब का सेनापति नियतहोना अच्छा नहीं लगाथा परन्तु जब उनकी कार्य्यावली से यहबात सिद्धहुई कि सिवाय युद्धके विजय लाभ में और सेनाकी सुशिक्षा में जबतक कोई अनधि-कार चेष्टा वा बेजा दखल न दे तबतक किसी अन्य बातकी उनको परवाह नहीं है—तब गवर्नर साहब का मन ठंढा होगया ॥

गार्डन साहब और गवर्नर साहब के मध्य सौहार्द भी अच्छा स्थिररहा— जबतक कि द्वितीयने एक महापाप कार्य्य नहीं किया ॥

गार्डन साहब के युद्ध कौशल और निरन्तर विजय से जब टायपिंग लोगों ने निश्चय जान लिया कि, अब सूचो इलाकेका अवश्यही पतन होगा तब सभोंने अधीनता स्वीकार करना स्थिर करलिया ॥

अधीनता के नियमों में जनरल चिङ्गने सरदार लारवाङ्ग के साथ भ्रातृभाव की शपथकी और सेनापति गार्डन ने लीहङ्गचङ्गसे वाङ्गजातिके सब सरदारों के जीवनदान की प्रतिज्ञा लेलीथी ॥

फौजोंकी तनख्वाह न अदा करने के सबब गार्डन साहब लीहङ्गचङ्ग से ना-राज होगये थे और सब सेना को हेडक्वार्टर (प्रधान स्थान) क्विन्सान में बुला लिया था ॥ इस अवसर को अच्छा जान कर लीहंग चंग के मन में मलीनता का संचार हुवा और एक दिन उन्हों ने सरदार लारवाङ्ग और उनके आठ सजातीय साथियों को अपनी नौकापर निमन्त्रण किया । ज्यौनार

मेजपर एकत्रित होने के क्षणकाल बादही उनके नव धड़ शिर हीन दूर पड़े हुवे दिखाई दिये !!!

इस विश्वासघातरूपी महापाप कर्म की खबर सुनते ही गार्डन साहब क्रोध से अधीर होगये ! और तत्काल उस स्थान को वापिस आये। आते ही सारा दिन लीहङ्ग की खोज करते रहे ! पिस्तौल भरी हुई हाथ में ! सचमुच उस दिन यदि ली—गार्डन के सन्मुख पड़ जाते तो आज केवल नाम ही नाम उनका याद रहजाता !

लम्बी सूरत और सन्जीदा सूरत काहे को देख पाते !

सो भाग्य वश वह कहीं छिपछिपाकर प्राण बचा पाये थे ॥

गार्डन साहब बहुत उदासीन चित्त से अपने स्थान को लौटगये और इरादा किया कि अब कुछ कार्य्य "ली" अथवा उसके अधीन सूबे के लिये नहीं करेंगे ॥

चीन राजदरबार ने जो विजय करने के उपहार में बड़ी खिलअत और बहुत सा धन गार्डन साहब को भेजा उस को भी जनरल गार्डन ने स्वीकार नहीं किया ॥

परन्तु काम छोड़ने के बाद तत्कालही गार्डन साहब के महान हृदय ने अनुभव किया कि इस प्रकार क्रोधवश कार्य्य त्याग देने से चीन सरकार की बड़ी हानिहोगी और जिस सूबे को बड़े परिश्रम से विजय किया है वह फिर भी विद्रोह का घर बना रहैगा। सो यह विचार कर अपने फौजों की कमांड फिर लेली और कार्य्य करने लगे, पीछे से शायद गार्डन साहब ने "ली" का अपराध क्षमा कर दिया परन्तु पहिले की भांति विश्वासपात्र नहीं समझ सके ॥

शंहाई के एक समाचार पत्र ने गार्डन साहब की एक राय लीहङ्ग के विषय में छापी थी ॥

राय—चीन और रूस के भावी सम्बन्ध विषय में थी कहागया था कि रूस यदि चीनपर चढ़ाई करना चाहेगा, और चीना फौज को हटाता हुवा पीकिन की ओर बढ़ैगा तब लीहङ्गचंग राजदरबार को तो उलटा विश्वास दिलावेंगे परन्तु रूस को हटाने का कुछ भी उद्योग वास्तव में नहीं करेंगे। जब रूसी फौज पीकिन में प्रविष्ट होजायगी तब संधि के नियम प्रस्तुत करेंगे। और इस कौशल से रूस को पूरे पूरे अधिकार दिलाने की बात पर अपना पूरा पूरा प्र-

योजन सिद्ध करके रूसी फौजें वापिस करावेंगे । और प्रसिद्ध करेंगे कि लीहङ्ग-चङ्ग ने देश को बचा लिया ॥

इस वार्ता के छपते ही "ली" उस समाचार पत्र पर बड़े क्रोधित हुवे और अन्ततः उसका प्रकाशित होना बन्दही करवादिया ॥

सन् १८६७ ई० में शान्टङ्ग सूबे में बलवा उठा था उसको दवाने के लिये लीहंगचंग ने स्वयम् सेना संधान कियाथा ।

इसके दूसरे ही साल वह हूकाङ्ग के गवर्नर जनरल नियत हुये ।

सन् १८७० ई० में चिहली सूबेके वायसराय बनाये गये ।

चीन का यह सूबा सर्व प्रधान गिना जाता है क्योंकि राजधानी के सिवाय विदेशी कारवार का सम्बन्ध भी इसी प्रान्त के साथ है ॥

सन् १८८४ ई० में यह राज्य के प्रधान अमात्य के पद पर नियुक्त हुवे ।

जब कभी चीन सरकार को विदेशियों के साथ विशेष वार्तायें निश्चय करने कराने का अवसर हुवा है तब तब लीहंगचंग ही अगुआ बनते रहे हैं ॥ चीन सरकार के विश्वास पात्र तो यह महाशय हुई हैं पर विदेशी राजनैतिक लोग भी इनका अधिक विश्वास करते रहे हैं ।

यह विलायत के देशों में भी घूम आये हैं और वहां बड़े आव भगत से इन का स्वागत किया गया था ॥

पिछले कई वर्षों से किसी कारणवशात् यह महामंत्री के पद से च्युत हो कर कानटान के वाइसराय पद पर काम करते थे ।

चीन का वर्तमान बखेड़ा जब शिर उठा रहा था तब पीकिन विदेशी मंत्रि-दल के अफसरों ने इन से पत्र व्यौहार जारी किये थे । और बाक्सरों के उत्पात जारी होने पर लीहंगचंग को अपनी सहायता के लिये पुकारा था मान्यवर "ली" ने यथा साध्य मदद पहुंचाने की भी कोशिश की और देश की सेवा भी उचित रीति से करने में उद्यत हुवे ।

पीकिन पतन के बाद जब सुलह नामे की बात चीत चली तब चीन सरकार की ओर से ली महाशय (Pleni potentiary) मुख्य मंत्री नियत हुवे और बड़ी योग्यता के साथ बहस मुबाहिसों में कार्य्य किया ॥

सुनाथा कि जिस दिन सुलहनामे की आरम्भिक बारह शर्त्तें हस्ताक्षर होने के लिये मंत्री लीहंगचंग के सन्मुख प्रस्तुत कीगईं थीं उस दिन वह बहुत

ही वेचैन थे! कुल कागजों पर ग्यारह ठौर हस्ताक्षर होने थे सो इतने अवसर में कई वेर मंत्री जी को वेहोशी हो गई थी!!!

लीहंगचंग के अधीन १५००० फौज रहने की आज्ञा थी। कहते हैं कि यह फौज युद्ध विद्या में वड़ी निपुण थी। टाकू किलेंके रक्षार्थ इसी फौज में से सहायक (Contingent) भेजे जाया करते थे!

वजीर आज़म ली मांचू नामक राज घराने के नहीं किन्तु शुद्ध चीना जाति के व्यक्ति हैं॥

एक वात सुनकर मुझ को वड़ा आश्चर्य्य हुवा कि यहां मंत्र को गुप्त रखने की परवाह नहीं कीजाती!

सुना है कि वजीर आज़म की भेंट चाहे जिस राजनैतिक मन्त्रणा के लिये क्यों न करने जाइये-उन के आस पास दो चार जन झांक ताक में कान लगाये ही मिलेंगे। एक तो मंत्रीजी का हुक्का वरदार सदा ही पास में सलाई तम्वाकू थांभे खड़ा रहेगा और दूसरे कई लोग भी कोई द्वारपाल कोई चोव-दार वने डटे रहेंगे।

कैसी ही गुप्त वात क्यों न हो वह छिपी हुई नहीं रह सकती! यहां तक कि शाही वड़े गुप्त फरमानों की नकलें भी चाहे कोई गुप्त रीति से कुछ रुपया खरच करके प्राप्त कर सकता है॥

चीनियों के नाम।

चीनियों के नाम करण संस्कार की एक ज्योतिष की पोथी है उस में १६७८ नाम दिये हैं। इन के अतिरिक्त १६८ संयुक्त और ८ प्रधान नाम हैं॥ यह आठ नाम शायद जातियों के सूचक हैं क्योंकि यह नियम सुनने में आया है कि इन में से एक ही नाम वाले व्यक्ति परस्पर विवाह संवंध नहीं करते!

नामों के साथ जैसे हिन्दुस्तान में—प्रसाद—लाल—सिंह—इत्यादि लगाते हैं अथवा जैसे अंग्रेजों के नाम वहुधा जैसे व्राउन—जोन्स वगैरः होते हैं वैसे चीनियों के नाम अधिक तर "चाङ्ग" "वाङ्ग"—"ली"—"चाव" होते हैं॥

चीनियों के वहुतेरे नाम सार्थक होते हैं—

नमूने की भांति कुछ चीना नामों के हिन्दी अर्थ नीचे लिखे जाते हैं॥

जैसेः—क्षेत्र-विलाव-कँकड़ा-वसन्त-गृह-उदरम्भर-कृषक-श्वेत-स्वर्ण-आनन्द-गैंद-इत्यादि—

संयुक्त नाम इस भांति के होते हैं जैसेः—

सुंदर पाक-वसन्त बहार-उदरम्भर ज्योतिर्विद-इत्यादि—

—चीना उपन्यास—

चीनी भाषा में नाटक उपन्यासों की भी कमी नहीं है ॥

अनेक प्रकार की शब्द शास्त्रीय रचना-कल्पना आदि में चीना लोग किसी से पीछे क्या दुनियां के जंगली जमाने में भी आगे थे ।

इन का एक उपन्यास "लाल महल का स्वप्न" बड़ा प्रसिद्ध अलंकार ग्रन्थ है ॥

इस में अठपेजी चार हजार से ऊपर पृष्ठ हैं। कहते हैं कि यह ऐसी हृदय मुग्धकारी भाषा में सौन्दर्य्य सर्वाङ्ग लिखा गया है कि एक समय में राजाज्ञा से इस का साधारण बिकना बन्द कर दिया गया था। क्योंकि शृंगार रस की इस में इतनी अधिकता है कि वह युवक दल के लिये हानिकारक समझा गया था ॥

—ताला चाबी—

चीन की राजधानी पीकिन में शाही शहर नाम से एक चतुर्वेष्ठन है इसी के अन्दर राजमहल आदि बड़ी बड़ी शाही इमारतें हैं इसके बाहरी फाटक का ताला अमेरिका के अजायब खाने में धरागया है ॥

यह ताला लोहे का तीन फीट दश इंच लम्बा है मोटा डंडा फाटक में जड़े हुवे हुकके अन्दर डालकर ताला जड़ा जाता था ।

—दीवार क़हक़हा—

The Great wall.

चीन में सर्व प्रसिद्ध मानवी कृत्य "महा वेष्टन" वा "दीवार क़हक़हा"—है । इसका चीना नाम "Wan. Li. chang. cheng" बाण लक्षाङ्ग चयन"

अर्थात् दश हज़ार ली लम्बी दीवार (Myriad. li. long wall) है ॥

अंग्रेजी माप के हिसाब से करीब तीन "ली" का एक मील होता है। सो दश हज़ार "ली" के तीन हज़ार चारसौ मील हुवे ॥

सहस्त्रों वर्षों की प्राचीन यह दीवाल ईसामसीह से दोसौ तीस बरस पहिले ॥ "सिंह" राज घराने के महाराजा सिंह जय वाणत्रयी (Tsin. chi Hwan-gti) के राजत्वकाल में बनकर तय्यार होचुकी थी॥ दो हजार वर्षों से ऊपर की यह प्राचीन यादगार दीवार यद्यपि अब बहुत स्थानों पर टूटगई है और बहुधा पर्वतों पर ऐसी ढालू होगई है जिसके कारण उन स्थानों पर दीवाल नाम न देकर पर्वत वा टीलाही कहना पड़ता है;तथापि यह महाकार्य्य अपने स्थापकों के पराक्रम और साहस की घोषणा ऊंचे स्वर से कर रहा है ॥

इस बड़ी भारी मुद्दत के बाद भी अंग्रेज़ों ने नाप कर अन्दाज बताया है कि यह दीवार अब भी करीब एक हजार छः सौ मील के लम्बी मौजूद है ॥ विलग होकर एक और भाग ४०० मील का लम्बा है ॥

पाठक विचार तो कीजिये-दो हज़ार वर्षों के भारी ज़माने को देखिये-कितने खानदान कितने देश कितने राज्य और साम्राज्य मरमिटे ऐसे कि आज दिन उनके खंडहर और ठीक इतिहास भी देखे नहीं जाते !

हा ! मिटे नामियों के निशां कैसे कैसे ! ! !

पर वह चीन का महावेष्ठन, साढ़े तीन हजार मील की महादीवार आज भी दोहजार मीलके विस्तार में बाहुप्रसार कियेहुवे महाराजा सिंहजय के महापराक्रम का प्रकाश संसार में प्रत्यक्ष किये है ॥

यह महादीवार पत्थर मट्टी और ईंटोकी बनी है ॥ ईंटें जो इस में लगाई गई हैं वह मट्टी की पकाई हुई बीस इंच मोटी हैं और बहुधा काटकर बड़ी बड़ी ईंटों की भांति पत्थर जोड़े हुवे हैं। ईंटें जोड़ने में चूना लगाया गया है । वह चूना जो कि दो हजार वर्षों से बराबर ईंटों को जोड़े हुवे आज दीवार से सटा हुवा है उस की मज़बूती की सराहना और उन जोड़ने वाले कारीगरों और मज़दूरों की तारीफ हमारे मुंह से कीजाने की सापेक्ष्य (मोहताज) नहीं है ॥

दीवार की मोटाई ऊंचाई आदि सब ठौर एकसां नहीं है। तथापि सामान्यत या जहां हम लोगों ने देखाहै वहां चौड़ाई १५ से २० फ़ुट तक है ॥

इतनी कि ऊपर से तीन कतारें गाड़ियों की बराबर बराबर चल सकती हैं और उंचाई बीस से तीस फुट तक है ॥

थोड़ी थोड़ी दूरी पर मीनारें बनी हैं जो कि ४०-५०. फुट ऊंची और तोपें लगाने के योग्य सर्वथा सुरक्षित (defensible) हैं ॥ यह मीनारें बहुधा गिर कर पर्वताकार होगई हैं परन्तु बहुतेरी अब भी अच्छी दशा में हैं ऐसी कि उन से सामरिक कार्य्य भली भांति साधन होसकते हैं ॥

दीवार के किनारे इस तरह से ईंट काटकर बनाये हुवे हैं कि फौजें उनपर खड़ी होकर स्वयंआड़ में रहकर शत्रु दल पर बखूबी गोली चला सकैं ॥ बुर्जों पर तोपें चढ़ाकर फायर करने के सुपास बने हुवे हैं ॥

बड़े आश्चर्य्यकी बात इस दीवार में यह है कि इसका लगाव कहीं टूटने नहीं पाया है ॥

बड़े बड़े दुर्गम पर्वतों को पारकरते हुवे-नीची धरती पर उतरते हुवे और बड़े बड़े नद नदियों को लांघते हुवे यह महावेष्ठन अटूटभाव से चलता गया है ॥

अनेकों अभेद्य बन्द (करारे) इसके रास्ते में पड़कर बन्द हुवे हैं ।

हज़ारों मीलों के रास्ते में इस दीवार में न जानै कितने पहाड़ पहाड़ियां बाट घाटियां-और बन्दकरारै पार किये हैं कुछ ठिकाना है ?

—जापान के अधिक वृत्तान्त—

अंग्रेज़ों के एक प्रसिद्ध विद्वान् राजनीतिज्ञने कहा था कि " संसार में आश्चर्य्य शक्ति सम्पन्न मनुष्य दो हैं । जरमनी के प्रिंस बिस्मार्क और जापान के महाराज मिकाडो मत्सुहितु ! एक अंग्रेज़ने कहा " The child of the world's old age has proved to be its most remarkable offspring. " (संसार के बुढ़ौती का बेटा कैसा महा शक्तिशाली हुवा है)

एक चौथाई शताब्दी ही के बीच में जापानने जो आश्चर्य्य चमत्कार संसार भर को दिखाया है उससे संसारियों में डाह उत्पन्न होना कुछ आश्चर्य्य की बात नहीं है । इसी पचीसी में हजारों विदेशी यात्री जापान देश को गये निरीक्षण किया और सैकड़ों ग्रन्थ उनके उन्नायक विषयों पर लिखे । परन्तु पश्चि-

भी सम्राटों और नीतिज्ञों को वड़ा भारी आश्चर्य्य तो इस बात को देखकर हुवा कि वही बुढ़ापे की नन्ही सी सन्तान जब कृपाण पाणि (तलवार हाथ में लेकर) होकर ऊषाकाल ही में (अपनी आरम्भ ही अवस्था में) संसार समरांगण का आश्चर्य्य नायक दीख पड़ा!

हमारे हिन्दुस्तान के राजाधिराज अंग्रेज़ की धीरता और पराक्रम आज दिन किससे छिपे हैं? इनके कौशल संसारभर से सचमुच चढ़े बढ़े हैं राजनीति के तो मानो यही उत्पादक हैं। परन्तु उस दिन (१८९४—९५ में) जापान की वीरता देखकर इन को भी आश्चर्य्य में पड़ना पड़ा था! एक राजनीतिज्ञने उन्हीं दिनों लिखा थाः—

"Now that she (Japan) has been seen sword in hand, sweeping the Chinese hordes out of Korea and Manchuria, driving the Chinese ships off the sea and capturing their principal fortress in the course of a morning and at the same time concluding a treaty with Great Britain on equal terms, Japan stands no longer in need of the encomiums and the prophe-" cies of her friends" * * * *

It had never occurred to the statesmen of Europe that Japan possessed, behind all her cleverness and her genius, a spirit of true originality, a creating power, in the great things of life politics, administration, morals, science and art.

"जव कि आजकल जापान कृपाणहस्तहो, एक ओर चीनियों के दलको कोरिया और मंचूरिया से भगाते, उसके धूम पोतोंको समुद्रसे निकालते, और अपने प्रभात कालही में उसके मुख्य दुर्गोंपर अधिकार करते, एवं दूसरी ओर अंगरेज़ों से वरावरी की संधि करतेहुवे देखागया, तव उसे प्रशंसाओं और मित्रोंकी भविष्य वाक्योंकी कोई भी आवश्यकता न रही॥

यूरोप के राज नैतिज्ञों को कभी ध्यानतक न आया था कि जापान की तीव्रता और बुद्धिमत्ता के आड़में जीवन की महान वातों-राजनीति, प्रवंध,

विज्ञान, कला, और कौशल-में वास्तविक आविष्कारिणी और आविर्भाविनी शक्तियां भी वर्तमान हैं" ॥

यह बातें-प्रिय पाठक! क्या आप को ऊंचे स्वर से नहीं बतलारहीं हैं कि जापानने थोड़े ही दिनों में कैसी आश्चर्य्यमय उन्नति की है? और उसके द्वारा पश्चिमी शक्तियां कैसी चकित होउठी हैं?

जापान का अनेक छोटे छोटे टुकड़ों के समूह से एक शक्तिमान् साम्राज्य बन जाना साम्प्रतिक नैतिज्ञों को बड़े अचरज में डालता है!

अंग्रेज़ कहते हैं कि पूर्वीय देशों में जो सब बुराइयां प्रायः पाईगई हैं उन सभोंके जापान में मौजूद होने पर भी यह जाति (Nation) जो उन्नति करसकी इसका कारण यही है कि वह शासन शक्ति रखनेवाली और मानवीय रुचि की पहिचानने वाली थी। पूर्वीय देशों में सबसे अधिक बुराई यह देखी गई है कि वह अन्य देश के लोगों से घृणा करते हैं—कैसीही बड़ी भलाई और गुण विदेशियों में क्यों न हों पूर्वीयजातियां उन को ग्रहण नहीं करतीं वरन द्वेष करती हैं।

पहिले जापानियों में भी यह बुराई थी परन्तु ज्योंही उनको ज्ञात हुवा कि वास्तविक उन्नति का सूर्य्य आजकल पश्चिम देशों मेंही प्रकाश कर रहा है-त्योंही वह पश्चिमी रीति नीतियों को सीखने और अपने देश में प्रसारित करने लगे।

जापान ने अपनी सैनिक शक्ति को इतनी उन्नति दी कि जल और स्थल दोनों प्रकार की सेनाओं में वह यूरोप की बराबरी करने लगा ॥

दुनियां भरके सभ्यदेशों में जो राजनियम और कानून प्रचलित हैं उन सभों से जापानी कानून किसी दरजे कम नहीं है ॥—

कारखाने इतने अधिक जारी होगये हैं कि विदेशियों का माल उनके आगे मन्दा पड़ने लगा है ॥

उनकी कारीगरी ने सब ओर विलक्षण नवीन चाहना उत्पन्न करदी है ॥

वैद्य विद्या में भी बड़ी निपुणता प्राप्त की है। यहांतक कि प्लेग संबंधी कृमि का परिज्ञान सर्व प्रथम जापानी डाक्टरनेही हाङ्काङ्ग में प्राप्त किया था ॥

जापान की राज्य विस्तार शक्ति ने एशिया के मानचित्र (नकशे) में अनेक परिवर्तन उपस्थित कर दिये हैं ॥ उनके राजनीतिज्ञ और कर्मचारिवृन्द ने अ-

पनी सत्यता और धीरता (मुस्तैदी) के आगे बहुतेरे पश्चिमी देशों को भी पीछा दिखाया है॥

जापान की प्रजा नये नये भूखंडों के हस्तगत करने को मानों तृषातुर हो रही है॥ निष्फलता का तो शायद किसी कार्य्य में उन्हें ध्यान भी न आता होगा॥

प्रसिद्ध फील्डमार्शल लेबोअफ़ (Marshal Leboeuf) के कथनानुसार जब जरमनी के सिपहसालार ने सैन्य सज्जा "Crieg mobil" का हुक्म तार द्वारा जारी किया तब बात की बात में फौजों की बड़ी बड़ी क़तारें तय्यार होगईं। "रिज़र्व" फ़ौजों का "पताका सम्मिलित" होना (Reserve Joining colours) अद्भुत शीघ्रता से हुवा। और साज़ सामान (Equipment) मद्धे पैर की गेटर का एक बटन भी कम न रहगया था—

सो आज देखते हैं जापान ने भी वैसेही वा उससे अधिक शीघ्रता के साथ चीन देश का जल और स्थल दोनों जापानी सैन्यमय कर दिया है॥

जापानी सिपाहियों की सुचाल (Discipline) और अफसरों की समर चातुर्य्य (Scientific tactics) अपने आपही आदर्श हैं॥

विगत सोंहवान (Song hwan) की लड़ाई का एक वृत्तान्त सुनकर प्रिय पाठक ! जापान के एक ग्रामीण दरिद्र किसान के विचारों पर तनिक ध्यान दीजिये ! कप्तान "मत्सुज़र्की" के पार्श्व में खड़ा होकर उनके आदेशानुसार ब्यूगलर गंजीरो कुछ आवाज़ दे रहाथा कि अचानक एक गोली आकर उसके छाती में लगी ! कठिन घायल होने पर भी गंजीरो की सांस जबतक चल सकी वह ब्युगुल फूंकताही रहा ! जबतक वह निर्जीव होकर भूमिपर उसी ठौर गिर न पड़ा तबतक बिगुल उस के हाथ से नहीं छूटा !

वह "फूनाओ मूरा" नामक गांव का रहने वाला था—सो वहां की सार्वजनिक सभाने गंजीरो की समर सम्बन्धी वीरता का समाचार पाकर उसके परिवार के लोगों को कुछ भेंट देने का विचार किया और गांव के प्रधान पुरुष ने एक सभा एकत्रित करके गंजीरो के पिता को पुरस्कार देकर आस्वासन वचन कहे। जिसके उत्तर में वृद्ध किसान ने क्या कहा सो सुनिये!—

"मृत्यु सब के लिये है। इससे कोई बचनहीं सकता ! सो मेरा बेटा भी बच नहीं सकता था मरना उसको भी अवश्यही पड़ता वह बड़ा भाग्यवान् था

कि छोटे से झोंपड़े के एक कोने में केवल दो चार नातेदारों के मध्य में निद्रालीन होने के बदले प्रशस्त समराङ्गण में वीरोचित कार्य करते हुवे अपने साथियों की सहायता करते हुवे और अपने बड़े बड़े अफसरों से प्रशंसित होते हुवे प्राण त्याग किया ॥ सो उस के माता पिता किसी भांति से शोकित नहीं होसकते वरन परम सन्तुष्ट हैं कि उनके पुत्रने अपने देश के गौरव के लिये अपना प्राण अर्पण किया और अन्त पर्य्यन्त अपनी जननी जन्मभूमिका शुभचिन्तक सेवक बनारहा" ॥

उपरोक्त वृत्तान्त दिग्दर्शन मात्र यहां उल्लेख कियागया है । ऐसे सैकड़ों नमूने जापानियोंने दिखाये हैं। जिन्हें देख सुनकर विदेशी लोग चकित रहजाते हैं ।

जापान के फौजकी संख्या दोलाख सत्तर हज़ार है ॥

जैसे हिन्दुस्तानकी सेना बंगाल—बम्बई आदि में "कमांड" के नामसे बटीहुई है जो कुल प्रायः दोलाख १६ हज़ार होंगे उसीतरह जापानी सेना एक इम्पीरियल गार्ड और ६ डिवीजन में बटीहुई है । प्रत्येक डिवीजन में फ्रंटलाइन-पहिला और दूसरा रिज़र्व बटाहुआ है । प्रत्येक फ्रंटलाइन प्रायः दशहज़ार योद्धाओं की है ॥

इसके अतिरिक्त बहुतसी साधारण फौज (Volunteers—Levies) (बलुमटेर आदि) इत्यादि की भी देश में मौजूद हैं ॥

सो युद्ध समय में जापान ढाईलाख सर्व सम्पन्न सेना प्रस्तुत करसकता है ॥

पोर्ट आर्थर की लड़ाई के वास्ते जापान सरकारको धनकी आवश्यकता हुई थी। पांचकरोड़ डालर लोनकी आवश्यकता प्रगट होतेही तत्काल महाजनोंने सातकरोड़ सत्तरलाख डालर प्रस्तुत करादिये थे ॥

वर्तमान चीनयुद्ध के सम्बन्ध में जापानी एक अत्यन्त दरिद्रगृहकी छोटीसी बातभी बड़े ध्यान देनेकी अधिकारिणी है ॥

"गोही नातातनी" एक तेली है जापान के "ह्योगो" जिले के "तामन डोरी" गांवका रहनेवाला। और दिनभर पीठपर एकभार तेल लादेहुवे फेरी करके पेटपालनेवाला ६८ वर्षका वृद्ध मनुष्य है।

जापान देशकी अवनत और उन्नत दोनों दशायें इसवृद्ध पुरुषने देखी हैं—

उन्नतिका मूलकारण क्याहै ? यही बात वह अपने जीवन का उद्देश्य बनाये हुवेहै !

उसने अपने हृदयपटपर अमिट अक्षरों में यह लिख रक्खाहै कि किसी देश की रक्षा और भलाई न धनपर निर्भर करती है न जनपर और न बलपर वह केवल सच्चे शुभचिन्तक मित्रोंपरही निर्भर करती है ॥

सो इसबातको वह बराबर अपने मनके भीतर पोषण करता रहा—वह सोचताथा कि " मुझसा दरिद्री निर्बल-निर्जन-निर्धन-असहाय व्यक्ति किस भांति देशकी सेवाकरै ? " फिर विचारता कि संसार में परमेश्वरने ऐसी तो कोई वस्तुही नहीं रची है जो किसी न किसी भांति कुछ कामकी न हो, तो मैं मनुष्य होकर क्या देश के लिये कुछभी नहीं कर सकूंगा ?

सो वह अपनी नित्यकी मँजूरी मेंसे एक " सेन " (दो रुपये का सौवां-भाग) रोज़ बचाकर रखता जाताथा कि जब कभी देशको किसी अन्य देशके साथ युद्ध में जाना पड़ैगा तब यह पैसा उस युद्ध कोषमें देकर देशकी यथा साध्य सेवा करूंगा यही बचत गत जून १९०० के महीने तक तीसयेन (डालर) (६० रुपये) तक पहुंची थी सो महाशय गोहीने वही तीसयेन अपने नगर के प्रधान पुरुष (Mayor) द्वारा उत्तर चीन संग्राम के कोषमें भेजदिये। महाराजाने इस दानकी मुक्तकंठसे बड़ी सराहनाकी थी॥ यह सब यद्यपि बहुत छोटी छोटी बातें हैं तथापि बड़े बड़ों के लिये नेत्राञ्जनका काम देंगी॥

जापान के उन्नतिका एक और हेतु व्यापार की वृद्धि है॥

इसविषय में भी जापान पश्चिमी देशों के साथ होड़ लगाता है॥

अंगरेज़ व्यापारी लोग बड़ी चिन्ता से देखते हैं कि पूर्वीय देशों के बहुतेरे बाज़ारों से पश्चिमी मालको जापानी मालने प्रायः निकालसा दिया है॥

सन् १८७१ में जापान में कपड़ा बुनने की एकभी कल न थी उसी साल में इंग्लिस्तान से छोटी २ (Cotton Spinning Mills) रूई कातनेकी कलें वहां गईं— १८९३ में वहां करीब पचीस हज़ार पुतली घर बनगये थे। और १८९५ ई० में पुतलीघरों की संख्या आधे लाखसे कम न होगी॥

जुलाई सन् १८९४ ई० में अकेले " ओसाका " (Osaka) नगर के एक बैंकने साठ लाख डालर कपास की खेती के वास्ते कृषकों को पेशगी बांटाथा॥

नीचे लिखा हुवा हिसाब यह प्रगट करता है कि थोड़ेही समय में जापान

में विदेशी माल की आमद कितनी घट गई और देशी पैदावार कितनी अधिक बढ़ी :—

सन्	देशी पैदावार	विदेशी आमद
१८८८.	१५६८०४.	४७४३९६३६.
१८८९.	२०९५२६८७.	४२८१०९१२.
१८९०.	३२२१७४५६.	३१९०८३०२.
१८९१.	४५३०६४४४.	१७३३७६००.
१८९२.	६४०४६९२५.	१४३०८४९१.

घड़ी का शौक दुनियां में बढ़ता देखकर जापान ने बहुतेरे कारखाने घड़ी के भी जारी करदिये हैं और दीयासलाई से तो पूर्वी देशों के प्रायः सभी बाज़ार भरदिये हैं ॥

जापानी दियासलाई के पचास लाख ग्रास केवल एक दफे में (१८९५ में) अकेले हाङ्काङ्ग को चालान हुवे थे ॥

लाखों जोड़े बने बनाये कपड़े जापान से सिंगापूर को चालान होते हैं ॥

जापान से मकाओ (Macao) को अधिकतर यह चीजें जाती हैं:—

सूती कपड़े-कम्बल-फलालैन-साबुन-लैम्प-चायदानी-दीयासलाई-टोपी-छाता-ग्लाडस्टोन बैग-रेशम-इत्यादि—यह सभी चीज़ें विलायती माल की अपेक्षा दामों सस्ती और सुन्दरता में रुचि के अनुकूल होती हैं ॥

अंग्रेजी नमूने का छाता ३० सेंट से एक डालर तक का होता है ॥

जापान की तौलिया ने "तमसूई (Tamsui)" से विदेशी माल को निकाल कर अपना पूरा पूरा अधिकार जमा लिया है ॥

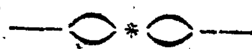
फलालैन-दरी-बिछावन कम्बल-बटन-छाता-आईना-तस्वीर-इत्यादि का व्यापार पूर्वी सभी देशों के साथ और विशेष कर न्यू चुआंग—निङ्गपो—और कोरिया में दिन दिन अधिक बढ़ता चला जाता है ॥

Chinese Imperial Maritime customs Report 1893:—

" It may not be out of place to remark here that while the bulk of the Piece goods and Metals sold in Fusan are of European origin principally British, the fact should not be overlooked that Japan by carefully studying arising needs,

and supplying articles suitable to the tastes and means of Koreans and her Fusan colonists, is able to compete, more successfully each year with almost all the goods of European manufacture * * * Besides these there are foreign style suits, under clothing and hose, felt and straw hats, household furnitures and culinary utensils, carpets, glassware, Chinaware, lamps and fittings, soaps, scents, tinned provisions, (fish, meat, and vegetables,) wines and beer, farming implements, etc, mostly made in Osaka and selling at prices very much cheaper than those of European manufacture. * * * Is it not highly improbable that at no distant date Japan will run Europe Manufactures entirely off the Eastern markets."

चीनकी राजकीय समुद्री चुंगीकी रिपोर्ट १८९८ में यह बात लिखी थीः— "इसस्थानपर यह कहना अनुचित न होगा कि जहां छोटी छोटी वस्तुवें और धातुके पदार्थ जो फूसानमें विकते हैं यूरोपीय और विशेषतः ब्रिटिश बनावट के हैं तौभी इसबातका ध्यान रखना चाहिये कि जापान आवश्यकीय पदार्थों पर विचारकर और कोरिया वासियों, एवं अपने फूसान उपनिवासियों के इच्छानुकूल और वित्तानुसार वस्तुयें प्रस्तुतकर प्रतिवर्ष प्रायः सभी यूरोपीय पदार्थों की समता करनेमें विशेषतर कृतकार्य्य होता जाता है उनके अतिरिक्त विदेशीय पहिरावे के कोट, पतलून, कुरते, बनियाइन, मोज़े, नमदा, और तृणकी टोपियां, गृहसजावट का सामान, बरतन, कालीन, कांच और चीनी के बरतन, लम्पें, जोड़, साबुन, सुगंधित वस्तुएँ , रक्षित खाद्य पदार्थ, मछली, मांस, शाक, मदिरा, कृषिक यंत्र इत्यादि, मिलते हैं जोकि विशेषतः ओसाका में निर्मित हुए हैं और जो यूरोप की बनी वस्तुओंकी अपेक्षा बहुत सस्ते विकते हैं—यह बात विशेष कष्टम्भव नहीं है कि कुछही कालमें जापान यूरोपीय पदार्थों को पूर्वीय हाटों से पूर्णरूप से बहिष्कृत करदेगा



सिपाहियों को उत्साह ॥

जिस जहाज में हम लोग चीन को चले थे उसका नाम पालम कोटा था-सो पालम कोटा के भंडारी (Steward) (प्रत्येक जहाज में एक खान पान प्रबंध का ठेकेदार रहा करता है) ने अनेक बात चीत के मध्य में कहा कि हमने कई बार (South Africa) ट्रान्सवाल आदि का सफर फौजों के साथ किया है सो अंग्रेज़ी फौजें जब युद्ध यात्रा के लिये जहाज पर सवार होती थीं तब सर्व साधारण का एक बड़ा समूह बन्दरगाह पर एकत्रित होजाता था और धनी लोग झुण्ड के झुण्ड अनेकों प्रकार के उपहारों से जहाज को भर देते थे॥ कोई हजारों लाखों नारंगी नींबू आदि फल-कोई बिसकुट आदि के टीन कोई शिरका पिकिल चटनी आदि की बोतलें और कोई हजारों प्रतियां अखबार और पुस्तकें तथा चुरुट सिगरेट आदि ढेर के ढेर सिपाहियों को भेंट करतें थे!

उसने कहा कि यह देख कर हमको बड़ी प्रसन्नता होती थी कि वास्तव में इंगलिस्तान की प्रजा सिपाहियों का यथार्थ सन्मान करती है॥ परन्तु हिन्दुस्तानियों की रीति देख कर दुख होता है कि यह लोग उपहार देना तो अलग रहा-घाट पर आकर सिपाहियों को आशीर्वाद की रीति पर दो बात भी कहना आवश्यक नहीं समझते!!!

भंडारी महाशय का रिमार्क सुनकर मन में अनायासही एक प्रश्न उपस्थित हो उठा!

हिन्दुस्तानी लोग क्या सचमुच युद्ध की बात वा युद्धप्रिय सिपाही से उपेक्षा करतेहैं? अथवा इनका आदर किस रीति से करना चाहिये यही नहीं जानते? और यह भी होसकता है कि इनके विचार में हिन्दुस्तान की सेना वास्तविक सेना ही न हो! हिन्दुस्तान की सेना अंग्रेज़ परिचालित और अंग्रेज़ राज्य ही के रक्षा वा वृद्धि के लिये है सो इससे हिन्दुस्तानी प्रजा को क्या मतलब?

परन्तु देखने सुननें में तो हिन्दुस्तानी लोग बड़े राजभक्त हैं-ऐसा विचार उनका होना प्रतीत तो नहीं होता?

और न इन बड़े बड़े धनीमानी और नीतिज्ञ लोगों को सिपाही की खातिरदारी के रीति व्यौहार से अनजान ही कहने की हिम्मत पड़ती है!

सो मुझको इस बात का सन्तोषदायक उत्तर मनसे तो नहीं मिल सका ! जो लोग चापलूसी के लिये अंग्रेज़ के सवूट चरण में अपना चन्दन चर्चित और श्री एवं रामानन्दी तिलकांकित मस्तक बारम्बार रगड़ते रहते हैं और अमित धन ऊपर से दक्षिणा स्वरूप अर्पण करते हैं वह उन्हीं अंग्रेज़ बहादुर के सिपाही की कदर करना न जानै यह बात तनिक समझ में नहीं आती ! चाहे आप इसको मेरा स्वार्थीपन (सिपाही होने के कारण) भले ही कहलीजिये !!!

एक अमेरिकन की आलोचना॥

ता० ६ मार्च १९०१ का दिन होली का बिहान–हिन्दू राजपूत फौज में होलीही का घमासान मच रहा था ॥ होली हिन्दूमात्र का बड़ा त्यौहार है सो हिन्दुस्तानही के भीतर नहीं वरन हिन्दू जहां कहीं हों–वहीं उसका त्यौहार मनाया जाना उचित ही है सो हमारी फौज में ५–और ६ मार्च १९०१ बड़े हर्ष और उत्सवका दिन था–पीकिन स्वर्ग मन्दिर के सब ओर फागही फाग की धमाचौकड़ी मच रही थी चीना लोगों के बड़े बड़े ढोल और झाँझें और बहुतेरे लोग तो घी तेल की खाली टीनें लकड़ियों से पीट पीटकर बजाते और गला फाड़ फाड़कर फाग गाते थे ॥

मार्च छठी तारीख को स्वर्ग पार्श्व में ऐसाही जमघट जम रहा था–हम सभी बैठे हा हा ही ही मचा रहे थे–कहार आदि लोग उछल कूदकर नाच रहे थे और बैसवाड़ा–बनौधा–भोजपुर–आदि के सिपाहियों के जुदे जुदे फाग मण्डल चिल्ला चिल्ला और हल्ला उठा उठाकर गा बजा रहे थे।

इतने में एक अमेरीकन साधारण सिविल पोशाक पहिने हुये आया। निकट खड़ा होकर देखने लगा। आगन्तुक का आदर करना हम लोगोंने उचित जान कर उस को सत्कार पूर्वक आसन दिया और चुरुट सिगरेट से आदर किया (अब अधिकांश राजपूत लोग सिगरेट पीने लगे हैं सो बहुतेरों के पाकट सिगरेट और सलाई से खाली न थे) ज्ञात हुवा कि वह व्यक्ति अमेरिकन फौजी डाकखानों का एक अफसर था ॥

हममें से कई लोगों के मनमें बड़ी लज्जा सी बोध होने लगी थी कि यह विदेशी आदमी हमारे हिन्दुस्तानियों की यह धमा चौकड़ी देखकर क्या विचा-

रता होगा ? निःसन्देह कहता होगा कि सचमुच यह लोग जंगली हैं ॥ इनके नाच कूद और व्यौहार वर्ताव सभी जंगली हैं ॥

देखो न-वह लोग कैसे जंगलीपन से गला फाड़ फाड़कर चिल्ला रहे हैं-ढोल और टीनों को पीटे डालते हैं-न सुर है न ताल-राग है न-रंग ॥

इन जंगलियों को इस हाय हाय में भी सुख बोध होता होगा ॥ बीच बीच में जो लोग अश्लीलता के शब्द बोलते थे वह बातें तो अमरीकन जैन्टिलमेन अवश्यही नहीं समझता था परन्तु लोगों के अश्लीलभावों को देखताथा ॥ सो हमारे साथी लोग शरम से बहुतही दबसे रहे थे कि उक्त महाशयने बात चीत करना आरम्भ की ! उसने पूछा कि क्या उत्सव है ? कहा गया कि नवीन संवत्सर का नौरोज़ी आनन्द है ॥ उसने कहा कि हमको भी बड़ी खुशी हुई कि आपके इस आनन्द में शरीक होगये ॥ अपने आने का हाल उसने इस तरह बतलाया कि आज कल वह स्थान टीनसिन में है पीकिन राजधानी में केवल सैर के लिये आया था-स्वर्ग मन्दिर देखने को आकर यहां गुल गपाड़ा सुनाई पड़ा सो इधर भी चला आया, उसने कहा कि बाहर से तो केवल हल्ला गुल्ला, और जानवरों का सा गुल गपाड़ा और ढोलों को पिटन्त मात्र ही जान पड़ी थी परन्तु भीतर आकर आदमियों से मिलना हुवा यह बड़ी खुशी की बात है ॥ इस रिमार्क के अर्थ पाठक स्वयम् समझ लें हमें खोलने की आवश्यकता नहीं ॥

अमेरिकन अफसरने कहा कि हमने सुना था कि हिन्दुस्तान में गान और वाद्य विद्या पुराने समयमें भी अच्छी थी और अब तो और भी अच्छी होनी चाहिये क्योंकि नये नये वाद्य यन्त्र आविर्भूत होते जाते हैं । परन्तु सिपाही लोग अच्छी तरह क्योंनहीं गाते बजाते ? उत्तर दिया गया कि सिपाही लोग इस विद्या को अच्छी तरह नहीं जानते-इस कारण यहलोग सिर्फ सिपाहिआना तरीके से ही अपना गाना बजाना कर लेते हैं हिन्दुस्तान में तो गाना बजाना बहुत सुन्दर रीति से होताहै। बात काटकर उसने कहा कि नहीं-नहीं-मुझको मालूम है कि हिन्दुस्तान में गाने बजानेवाली एक खास जाति होती है और उस जाति के पुरुष और स्त्रियां गाने बजाने और नाचने का व्यवसायही करते हैं । सो सब लोगों के उत्सवों और जलसों में वही गायक गायिका बुलाये जाते हैं। इसी कारण से साधारण हिन्दुस्तानी लोग इस विद्याको बिलकुल नहीं जानते ! शायद यही सबब होगा कि सिपाही लोग गाना बजाना नहीं जानते ! हमारे में

से एक महाशयने कहा कि होलीका गानाही ऐसा होता है सिपाही लोग गाना जानते हैं और ठीक गाते हैं। अमरीकनने कहा कि यदि आप का कहना सत्यहो तब तो मानना पड़ैगा कि हिन्दुस्तान में यह विद्या हई नहीं !!!

फिर उसने कहा कि आप लोग परतन्त्रता को क्यों अच्छा समझते हैं? अपने आमोद प्रमोद के कार्य्य में भी परतन्त्र ही रहना पसन्द करते हैं?

क्योंकि नाचने गाने वाली एक विशेष जाति के होने से यह बात प्रत्यक्ष है कि यदि वह लोग न हों तो आप का उत्सव अधूरा रह जाय ! जैसे आज यहां पर आप अच्छी तरह से रीति पूर्वक उत्सव नहीं मना सकते ? यदि आप लोग परतन्त्रता को प्रिय न समझते तो इस विषय में भी अपने आप कोशिश करते और इस उत्तम विद्या को स्वयम् प्राप्त करते। जैसे यूरोप की सब जातियां अपने आमोद प्रमोद स्वयम् करलेती हैं किसी के मुखापेक्षी नहीं रहतीं ! नाटक आपेरा नाच गान प्रायः सभी लोग क्या सैनिक क्या सिविल सभी जानते हैं ॥ और अपना सब काम अपने आप ही पर निर्भर करते हैं ॥

उसकी बात सच ही थी सो हम से कुछ उत्तर नहीं बन पड़ा रिमार्क की सत्यता को स्वीकार किया ॥

मन ने भी स्वीकार किया और कहा कि क्या हिन्दुस्तान में अपनी बैठक की महफ़िल में बैठे हुवे नाच देखनेवाले महाशयगण इस रिमार्क पर कुछ मन न करेंगे ?

इसके बाद फौजी बातें होने लगीं। अमेरिकन ने कहा कि हिन्दुस्तानी फौजों ने चीन में आशातीत वीरता दिखाई है। किसी को भरोसा नहीं था कि हिन्दुस्तानी फौजें भी आज कल की नवीन सैनिक शिक्षा में यूरोप के बराबर ही शिक्षित हैं ॥ न केवल बराबर ही बल्कि सहिष्णुता में तो और भी बढ़ चढ़ कर ! उस ने और कहा कि चीन में देखा गया है कि हिन्दुस्तानियों की तरह मेहनत बरदाश्त करनेवाले और हुक्म माननेवाले सिपाही दूसरे किसी देश के नहीं हैं ॥ सेना सम्बन्ध में और मुल्की अमन चैन के लिये भी यह बातें बड़ी आवश्यक हैं ॥ उस ने फिर कहा कि हम ने सुना था कि हिन्दुस्तानी लोगों में जात पांत का बड़ा भारी विचार है एक दूसरे का छुआ वा पकाया हुवा नहीं खा पी सकता है ! परन्तु यह बात शायद पूर्णतया सत्य नहीं है क्योंकि यहां तो देखने में आया कि सब हिन्दुस्तानी लोग एक साथ ही खाते

पीते और रहते हैं। कपड़े जूते भी नहीं उतारते। उसने यह भी कहा कि हमने कई हिन्दुस्तानी अफसरों और डाक तथा कमसरियट के ओहदेदारों की चाय पान की खातिरदारी की है और उन्होंने प्रेमपूर्वक स्वीकार किया है इससे ज्ञात होता है कि जाति पांति की बात बहुत पक्की नहीं है॥ अन्य जातिके लोगों के साथ भी खाना पीना लोग बुरा नहीं समझते! ऐसा होना ही अच्छा है क्योंकि एक दूसरे से मिलने के विना मनुष्य धर्म की पूर्ति नहीं हो सकती! यह बातें सुनकर मेरे मनसे चुपके एक आवाज आई कि "बंधन से छूटना ही तो मुक्ति कहाती है न?" बात करते करते अमेरिका की स्वतंत्रता के विषय बात चल पड़ी—

वह यों चली कि—हमारे आगन्तुक मित्र ने हिन्दुस्तानियों की आलोचना करते करते यह भी कह डाला कि हिन्दुस्तान आज कल बहुत उन्नति कर रहा है, जात पांत के बंधन भी टूटते जाते हैं पश्चिमी विद्या भी सीखता जाता है और विदेशों में जा जा कर नवीन सभ्यता भी सीखता जाता है सो यदि ऐसी ही उन्नति जारी रहे तो किसी दिन हिन्दुस्तान फिर एक स्वतन्त्र शक्ति (Power) बन जायगा॥ मैंने कहा कि नहीं महाशय हिन्दुस्तानी आदमी तो स्वप्न में भी ऐसा विचार नहीं करते! हिन्दुस्तान आज कल बहुत सुखी है और अपने सुखदायक नरेश की जय मनाना अपना परमधर्म समझता है। और चाहता है कि सदा काल ब्रिटिश राज्य हिन्दुस्तान में स्थिर रहे॥

बात काटकर अमेरिकन अफसर ने कहा कि हां—यह बात सत्य है परन्तु प्राकृतिक नियमानुसार प्रत्येक जाति को अपना शासन अपने आप करना चाहिये॥

जो अपने आप न करसके उस पर तो दूसरे का अधिकार अवश्य ही उचित होगा। पर जब आत्मशासन की विद्या और योग्यता प्राप्त कर ले तब तो दूसरों का अधिकार अनुचित होगा॥ इसी नियम के अनुसार जब हिन्दुस्तान पूर्ण रीति से आत्म शासन के योग्य बन जाय तो ब्रिटिश को हिन्दुस्तान का राज्य हिन्दुस्तानियों को फेर देना क़ानून के अनुसार सुयोग्य होगा हिन्दुस्तान की इच्छा चाहे हो वा न हो॥

इत्यादि यही बातें कहते हुये उस ने अमरीकन और इंगलिश युद्ध और स्वतन्त्रता लाभ की पूरी कहानी कह डाली जो हमारे पाठक जानते ही होंगे—यहां फिर दोहराना आवश्यक नहीं जान पड़ता!

दूसरे यह कि उस की इस राजनैतिक आलोचनाका हमारा कुछ सम्बन्ध भी नहीं है ॥

हमको तो केवल अपने धर्म और अपनी कहानी से मतलब अमेरिकन स्वयम् स्वतन्त्र हैं उन्हें हर बात में स्वतन्त्रता सूझती है ॥

लूट और अत्याचार ॥

अभी बहुत दिन नहीं व्यतीत हुवे—उस साल जब चीन जापान की लड़ाई हुई थी और पोर्ट आर्थर में जापानियों ने विजय लाभ किया था ॥ तब समाचार पत्रों से हमने सुना था कि जापानियों ने युद्ध के घायलों को कतल और कैदियों को जीते ही आग में भस्म किया था !

यह पाशवी कर्तव्य सुनकर हृदय विदीर्ण होता था और जापानियों के जंगली पन पर बहुत दुःख होता था उन दिनों अंगरेजी अखबारों ने जापानियों को मनमानी और भरपेट गाली देने में कसर नहीं छोड़ी थी हम लोग भी उन पत्रों को पढ़ पढ़ कर मन में जापानियों को कोसते थे क्योंकि कहा जाता था कि ऐसी पाशवी करतूत कोई भी यूरोपीय सभ्यजाति कदापि नहीं कर सकती !

परन्तु चीन में लूट खसोट और अत्याचार देखकर खूब अघा गये – देखने और सुनने की अधिक लालसा वा कसर बाकी नहीं रह गई !

चीन में उपस्थित अठरंग शक्तियों मेंसे किसने कितनी किस प्रकार लूट खसोट की और किसका नम्बर कौन स्थान पर रहा यह कहना बहुत कठिन है मैं तो इतना ही कह सकता हूं कि जिसकी जितनी जहां पर जिस भांति घात लगी उस ने कोई कसर नहीं छोड़ी ! यह बात दूसरी है कि किसी की किसी जगह घात ही न लगी हो और वह अपने को "पाक दामन" सिद्ध करने लग जाय ! इस अखीरी बात में शायद अमेरिकन फौजों का नम्बर पड़ सकता है ॥

ठीक ठीक (accurate) तो नहीं पर यदि अटकल की बात पूछिये तो माल टाल की लुटन्त में रूसी और जापानी अौवल रहें ॥

लूट खसोट और अत्याचारमें रूसी और फ्रांसीसी पहिले नम्बर पर रहे ॥ और हिन्दुस्तानी ? हिन्दुस्तानियों की एक मसल है :—

" लूटि न आवै-लै लै भागैं " सो इसमसल को चरितार्थ करने में अंगरेज़ी

हिन्दुस्तानी फौजें सर्वश्रेष्ठरहीं ! जरमनी को रूसियों का पड़ोसी कहलीजिये परन्तु असल दिनों में तो यह चीनमें थेही नहीं ! जुलाई और अगस्त १९०० चीन की अथवा चिहली सूबे की घोर विपद्के दिन थे तब जरमनी बिलकुल ही मुट्ठी भरथे ! यह तो पीछे से अवतीर्ण हुवे हैं! पर पीछे आगे की बातक्या ?

"राजाकरै सो न्याव" पीछेसे जरमनों की संख्या खूब बढ़ी यहांतक कि सम्पूर्ण चीनकी बागडोर उन्हीं के हाथ में आगई फिर मनमानी करने में किसका डर !

जिन जापानियों को उन दिनों अंगरेज़ी अखबारवाले जंगली जानवर और असभ्य कहकर भरपेट गालियां देतेथे वही जापानी अखबार आजकल गाली के बदले गाली न देकर अंगरेज़ों की तारीफ करते नहीं अघाते—प्रशंसाके गीत गाते गाते उनके गले बैठे जाते हैं जबान में छाले पड़ते हैं !

इस बात से हम हिन्दुस्तानियों को शिक्षा लेनी चाहिये—हमारे यहां कहते हैं-"शठंप्रति शठं कुर्य्यात्" परन्तु इस में तो शठताकी ही वृद्धि हुई न !

भलाई तो तबहो। जब शठताका तिरोभाव कियाजावै ! यह तो शायद तब होगा जब कि :—

जो तो कूं कांटा बुवै-
वाको बो तू फूल !

याद रहै कि देशकाल पात्रका विचार इसमें भी आवश्यक होगा क्योंकि :—

बिना विचारे जो करै
सो पाछे पछिताय !

चीन में विदेशी लूटमार असल में टीनसिनसे आरम्भ हुई ! टाकू से टीनसिन तक के मार्गस्थ गांवों को भी सफाई करनेपर पूरा पूरा ध्यान दिया गयाथा परन्तु वहां सिवाय थोड़ा बहुत असबाब और दो चार दस बीस सौ दोसौ आदमियों के शिकार होनेके अधिक कुछ नहीं होता था !

टीनसिन एक बड़ा समृद्धि शाली नगरथा- बैंक टकसाल सभी कुछ थे—सो यहांपर जापान रूस और फ्रांसने खूब हाथ लगाये । अन्य माल असबाब के सिवाय सैकड़ों टन चांदीही रूसी और फ्रेंच फौजोंने लूटकर जमाकी थी ! सैनिकों के पाकट खर्चकी चांदी और असबाब अलग ॥

टीनसिन में जब अंगरेज़ी हिन्दुस्तानी फ़ौजें (सिवाय हाङ्काङ्ग पल्टन की दो कम्पनियों के जो पहिले से मौजूद थीं) पहुँची (जुलाई के तीसरे हफ्ते में) तब वह नगर विदेशी दखल में आचुकाथा। शहर के सभीलोग भाग गये थे—उजाड़ होरहाथा। बचे खुचे अपाहिज लोग जो रहगये थे उनका यत्किंचित् असबाब बन्दूक के सहारे छीन लाना सिपाहियों का अच्छा गौरव ? प्रगट करता था! सिपाहियों की पार्टियां जाकर अपनी आवश्यकीय चीजें सन्दूक बक्स-मेज कुरसी-कपड़े पोस्तीन-खच्चरटट्टू-रिक्शा गाड़ी आदि सभी कुछ लूटलाते थे! घड़ी छड़ी छाता पंखा सभी कुछ लूटकर आता था-कहीं कहीं चीनों को धमकाकर और कहीं यमपुरीको भेजकर! किसी चीज़की मांग होनेपर तनिक भी विलम्ब होनेसे असहाय चीनाको सशरीर अर्पण होना पड़ता था-अवश्यही चीज़का चाहनेवाला केवल चीज़ही लेता था—और लोथको दयापूर्वक कूकुरों के भोजनार्थ दान करदेता था!

कहा भी तो है- { दान में दान देय।
तीनलोक जीतिलेय।

'चीना' सशरीर इनपर न्योछावर होताथा और निर्जीव लोथ यह लोग कूकुर को दान कर देते थे॥ हिन्दुस्तान की म्यूनी सिपालटियों में देखाथा कि डोम लोगों को कुत्ते मारने के लिये दो चार आना फी मूड़ मेहनताना देकर सालाना वा छःमाही कूकुर मुक्तिकीजाती थी-बस वही दृश्य यहां मनुष्य मुक्तिका समझ लीजिये। जिसके पास थोड़ाभी माल मेहनताना भरको होता बस उसको मुक्ति देदीजाती थी-फरक यही था कि हिन्दुस्तान के कूकुर मार डोम होते हैं—यहांके मानुष मार सुलभ्यलोग और भले भले हिन्दू लोग भी थे!!!

टीनसिन से पीकिन चढ़ाई के अवसर परभी बाजार गर्मरहा लड़ाई भिड़ाई के साथ साथही लूट पाटभी चलता था॥

सन्मुख समर में शस्त्र धारण पूर्वक मारना और मरना वीरता है परन्तु असहाय निर्बल और निर्वीर्य्य का हतन करना भीरुता कायरता और हत्या का काम है! सो ऐसी हत्यायें अनगिनतियों होतीथीं!!!

पीटसांग (५ अगस्त १९०० का) वृत्तान्त है कि सवेरे से दोपहर तक लड़ाई के बाद जब नगर में विदेशी फौजोंका दखल होगया तब मार्ग के

पार्श्व में एक मकान के द्वार पर एक चीना जवान पुरुष घायल पड़ा हुआ मिला! उसका क्रन्दन सुनकर और दुर्दशा देखकर हमारे डाक्टर साहब को दयाआई और तत्काल वहां पहुंचकर "मेडिकेल एड" का (दवा का) वाक्स खोल उसके घावकी मलहम पट्टीकी-उसकी जंघामें जख़म बहुत सख़्त लगाथा-बड़ी मेहनत के साथ इलाजकरके डाक्टर साहब पंडित रामदत्त अवस्थीजी ने उसको मकानके एक चबूतरेपर लेटादिया इतने में एक अन्य चीना आदमी जो शायद घायल का कोई सम्बन्धी प्रतीत होता था आ गया—उसको घायलकी बाबत कुछ शिक्षा देकर डाक्टर साहब कैम्प को चले आये॥ उस चीना तथा घायल ने कितना धन्यवाद दिया-उन के हृदय में कितनी कृतज्ञता थी इसका अनुभव पाठक स्वयम् करलें—घंटा भर भी नहीं व्यतीत होने पाया कि नगर में आग लगाई गई (शायद जापानियों या रूसियों ने लगाई थी) सर्वमेध्र होने लगा!

डाक्टर साहब को गरीब असहाय घायल चीना के प्राणरक्षा की फिक्र पड़ी-सोचे कि नगर में आग लगी है-वह घर भी अवश्य ही फुंक जायगा-बेचारा चीना भी जल मरैगा सो तुरन्त डोली कहार साथ ले उस को उठाकर अपने अस्पताल में लाने के वास्ते चले वहां पहुंचकर क्या देखते हैं कि चार पांच जापानी सिपाहियों ने उस घायल को पांव से घसीटकर दूर मार्ग पर फेंक दिया है जिससे उसकी पट्टी आदि तो सब अलग होहीगई हैं सिर से भी रक्तजारी है-और वह अन्तिम श्वास ले रहा है॥ साथवाले दूसरे चीना को दीवाल में लटकाकर हथेलियों में खूंटा आदि गाड़कर अजब दुर्दशा कर रहे हैं यह हृदय विदारी दृश्य कौन देख सकता है?

डाक्टर साहब उलटे पांव फिर आये!

एक जगह देखा गया था कि एक जवान चीना आदमी को सात आठ विदेशियों ने मिलकर लातों लात मार डाला!

२० गज की भूमि पर बूट की ठोकरों से उस को लंथाड़ते और फुटबाल की भांति फेंकते थे-जभी बेचारा उठना चाहता तभी ठोकरों से गिरा देते और सब ओर से ठोकरें मार मार कर घंटा डेढ़ घंटातक खेल खेलकर प्राण ले डाला!!!

यह सभी खेलाड़ी सब सभ्य जातियों के थे!!!

सात तारीख अगस्त १९०० की बात है टीनसिन से पीकिन पयान के तीसरे

मुकामपर एक चीना इन्टर प्रीटर (दो भाषिये) का बड़ी क्रूरता से प्राण लिया गया था ! अभागे से मार्ग बताने अथवा कुछ और समाचारदेने में असावधानी होगई थी !

बस फिर क्या था ? काल की प्रत्यक्ष मूर्त्ति सामने आ बिराजी पहिले तो खूब धक्का मुक्की की गई—मारे धक्कों के अभागा भूमिपर गिर पड़ा ! बड़ी दूर तक कंकरीली और कटीली भूमि पर पांव पकड़कर घसीटा गया ! जब अध-मरा होगया तब पिस्तौल की गोली से काम तमाम कर दिया गया। समय संकीर्ण था नहीं तो और भी कुछ देर खेल होता ! लोथ नदी के किनारेही पर फेंक दीगई !!! नदी मार्ग से सैकड़ों नौकायें पीकिन को चली थी—इनमें सब देशों की फौजें थीं-चलते हुवे यदि नदी के किनारे कोई अभागा चीनियां दीख पड़ता. बस निशाने की आज़मायश उस पर होने लगती थी ! हमको शोक से देखना पड़ा कि अभागे चीना लोग खटमलों की तरह कुचले जाते हैं !!!

कहते मुंह मलीन होता है कि इस पैशाचिक क्रूरता और हत्यामें हिन्दुस्तानी सिपाही भी कहीं२ सने हुवे थे ! इन अबोधों को किसी तरहका उचितानुचित वा कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान तो थाही नहीं-(हैही नहीं) बन्दूक पास होने से किसी न किसी को मारनाही अपनी इति कर्तव्यता समझते थे !!!

नौकायें और नाविक कुली और मँजूर सभी लोग पकड़े धरेहुवेही थे नहीं तो ऐसे आपत्काल में अपनी इच्छानुसार अपनेही दुश्मनों की सेवा और समर सेवा करना कौन पसन्द करता ! सो जिस किश्तीपर मैं था वह भी इसी तरह की एक थी !

टीनसिन से कूच के पांचवें दिन हमलोग नदी मार्ग से चल रहे थे कि कुछ दूर आगे एक गांव धूधू करके जलताहुवा दीख पड़ा उस ज्वाला को देखकर ना के मल्लाहों में से दो एक मनुष्य बड़े चिन्तित और विकल दीख पड़ने लगे ! हमारे समझ में नहीं आता था कि इस गांव को जलता देखकर यह लोग क्यों इतना दुखी हो रहे हैं-क्योंकि यह लीला तो नित्यही देखते चले आ रहे हैं। मानों फौजों का यही तो नित्य कर्म हो रहा था !

गांवके निकट किश्ती पहुंचतेही वह दोनों हा ! हा ! करके गिर पड़े ! ज्ञात हुवा कि यह गांव इन लोगों की जन्मभूमि है ! इनका परिवार भी इसी गांव में है ! नावपरसे कूदकर यह लोग गांव की ओर गये !

पर हाय! गांव में अब अंगारों के सिवाय और कुछ नहीं था!

यह लोग सिर पीटते हुवे लौट आये! उनकी आर्त दशा और हृदय विदारी क्रन्दन देख सुनकर पाषाण भी पिघलता था!!! इशारों से ज्ञात हुवा कि उन लोगों का सारा कुटुम्ब जिसमें उनकी माता-स्त्री और छोटे छोटे बालक भी थे! सब जल मरे! बैल गोरू आदि पशु भी सब जल मरे! उनका धन धान्य घर दुवार सभी कुछ भस्म की ढेर होगया! हाय हाय आज दुनियां में उनके कुछ भी न रहगया!

पाठक इस दुख की कहानी को कहां तक सुनावैं—ऐसे ऐसे न जानें कितने कुटुम्ब परिवार कितना धन धान्य कितने प्राणी और कितने पशु आदि शेष की भस्म ढेरी बन गये! कुछ ठिकाना है!!! गांवों में आग लगादेने का काम तो प्रायः सभी देशवाले करते थे—यहां तक कि स्वयम् राजपूतों ने भी अनेकों गांव उन के थोड़े बहुत निवासियों और गाय बैल टट्टू खच्चर आदि सहित फूंक दिये थे-परन्तु प्रत्यक्ष अत्याचार की मूर्त्तियां रूसी और फ्रेंच ही थे॥

यह लोग गांवों में घुस जाते थे और प्रथम घर के पुरुषों का शिकार करते फिर बच्चों का- पश्चात् स्त्रियों से बलात्कार करके उन्हें भी मार डालते थे। और विदा होते समय गांव को अग्नि के अर्पण कर देते थे। गांवों के कूप अनगिनतियों स्त्रियों की लोथों से भरे हुवे थे—बिचारियां धर्म नाश के भय के कारण पहिले ही आत्महत्या कर डालती थीं!!!

हमारे विदेशी साथी लोग कहते थे कि यह लोथैं बाक्सरों की मारी फेंकी हुई हैं--स्वयम् आत्म घात की हुई नहीं हैं!

परन्तु यह बात बिलकुल मिथ्या है! मैंने स्वयम् अपनी आंखों (हा कष्ट!) देखा था कि जब हम लोग एक गांव के किनारे पहुंचे उस समय एक स्त्री अपने पांच छः बरस के बालक सहित एक खेत में कुछ काम करती थी। आहट सुनते ही वह स्त्री ज्ञान शून्य होकर चिल्ला उठी और बालक को अलग छोड़ कर नदी में कूद पड़ी! हाय हाय बालक किनारे पर पड़ा हुवा चिल्ला चिल्ला कर रो रहा है और माता छाती पीट पीट कर नदी गर्भ में डूबती हुई आत्म हत्या की चेष्टा कर रही है!!!

कैसा हृदय विदारी दृश्य!!!

हमने अपने साथ के चीना कुलियों को तत्काल दौड़ाया कि कूद कर उस की प्राण रक्षा करें।

पाठक! विना कहे चीना कुली उस डूबती हुई के प्राण रक्षा के लिये नहीं तत्पर हुआ था! स्वजाति हित की जहां इतनी न्यूनता हो वहां की दशा और क्या हो सकती थी?

अन्ततः वह स्त्री डूबते से निकाल लीगई और बालक सहित गांव को भेज दी गई परन्तु मृतप्राय हो गई थी!!!

इस से प्रत्यक्ष है कि स्त्रियों ने अपने आप आत्म हत्यायें की थीं!!!

ऐसे समय में जब कि सिवाय भक्षक के रक्षक कोई भी नहीं--आत्म हत्या करना ही सूझ पड़ता है!

रूसी और फ्रेंच फौजों का तो यह हाल था कि झुंड के झुंड गांवों में घुस जाते और मकानों में प्रवेश करके पहिले दो चार पुरुषों को गोली से मारडालते थे--फिर घर का सब बहु मूल्य माल असबाब निकाल कर जमा कर लेते फिर बाल बच्चों को संगीनों से छेदकर फेंक देते क्योंकि वह रोकर गुल शोर करते थे! पश्चात् स्त्रियों का धर्म नाश करके प्राण नाश कर डालते थे--फिर गहना जेवर आदि सब नोच बीन कर मकान के बाहर निकलते और आग लगा देते थे!!!

अकसर सिपाही लोग जब चीना लोगों के द्वार पर जाकर आघात करते तभी घर के आदमी तत्काल आकर द्वार खोलते थे परन्तु खोलनेवालाही पहिला शिकार होता था क्योंकि लूट पार्टीवाले शक करते थे कि कहीं मकानवाला हम को ही पहिले न मार दे!

पीकिन राजधानी में विदेशी दखल हो जाने के बाद भी यह दुर्दशा जारी रही थी——

जरमनी की फौजें पीकिन पतन के बहुत पीछे आई परन्तु लूट लालसा उन में भी किसी से कम न थी--सो चारापार्टी-अनाजपार्टी--तलाशपार्टी आदि २ पार्टियों के नाम से कम्पनियां गांव गांव विचरने लगीं और जो इच्छा थी सब कुछ करने लगीं-मुझे पूरी फेहरिस्त खोलने की आवश्यकता नहीं है॥

अगस्त १९०० के तीसरे और चौथे हफ्तों में चीन में चांदी का भाव सच मुच टके सेर लगा हुआ था! आधपाव से लेकर सवा दो सेर तक की चांदी

की ईंटें होती हैं जिन को टायल कहते हैं और अंग्रेज लोग "शू" कहते थे सो उन दो हफ्तों में सवा दो सेरवाली चांदी की ईंट का भाव एक रुपया से लेकर १२ रु० तक रहा था—इसी तरह क्रमानुसार समझलीजिये। बेंचनेवाले अधिकांश रूसी और जापानी थे और खरीदनेवाले बहुधा अंग्रेजी हिन्दुस्तानी!

घड़ियां भी हज़ारों जोकि आठ दश रुपये से लेकर पांच छः सौ रुपयें तक के मोल की थीं इसी तरह सस्ते दामों बिकी थीं!

स्त्रियों के सोने चांदी के गहने भी इसी तरह बिके थे!

पाठक! यह सभी चीजें असमर्थ चीनियों को मारकर लूटी हुई थीं! नहीं तो क्या कोई स्वेच्छा से उनके चरणों में समर्पण करने दौड़ आया था?

अधिक कहांतक इस कालिख को लिखकर कागज काला करें—आप चीन की लूट का इसीसे अन्दाजा लगा लीजिये कि पीकिन के एक महाजनकी छः दूकानें इसी शहर के जुदे जुदे भागों में थीं वह सभी लूट ली गई। करीब बीस लाख रुपये की मालियत लुटी और तीस आदमी नौकरों गुमाश्तों सहित मारे गये? अभागा महाजन अपनी दुर्दशा बखानने के लिये इस कारण बचरहा कि उसका निज रहने का मकान दूकानों से अलग जापानी हद्द में पड़ गया था!

यह एक व्यक्ति की आत्म कहानी है-ऐसे कितने लुटे कुछ ठिकाना है?

चीन का करोड़ों रुपयों का धन लूट लिया गया!!!

सच कहा है "वीर भोग्यावसुन्धरा"! धनधान्य सब कुछ धरती की उपज है और धरती स्वयम् चलायमान है-लक्ष्मी भी अचला नहीं है सो उसका उपभोग आलसी निरुद्यमी जाति कबतक कर सकती है! ऐसी दशा में चीन की जो दशा होनी थी वही हुई-इस सम्बन्ध में मुझको कुछ कहना नहीं है और नाहीं मैं इन यूरोपियन शक्तियों अथवा जापान को ही इस सम्बन्ध में कुछ दोष लगाना चाहता हूं।

एक दिन एक चीना हकीम से मैं बात चीत कर रहा था-बात करते करते यही निर्दयता की बातें चल पड़ीं! मैंने कहा कि चीनालोगों को अँगरेज़ों को धन्यवाद करनाचाहिये कि जो सबतरह प्रजा की रक्षाही करना चाहते हैं और रूसियों की अपेक्षा बहुत श्रेष्ठहैं क्योंकि रूसी लोग बड़ी निर्दयतासे चीनियों के बाल बच्चों तकको कतल करनेसे नहीं छोड़ते! चीना हकीमने कहा कि यह बात सत्य तो है परन्तु अकेले रूसियों कोही हम निर्दयी क्योंकर मानलें? उसने उपमा

दी कि बेला चमेली आदि के फूल कैसे सुहावने होते हैं—नरम नरम डालियां और पत्तियां कैसी मनोहर होती हैं—क्या उनको कभी तोड़ना मरोड़ना चाहिये ? परन्तु यदि हमारी पुष्पवाटिका पर कोई शत्रु आक्रमण करै तो क्या हम इसलिये उसका सामना वाटिका में न करैं कि हमारे नरम नरम डालियां वा फूल टूट जावैंगे ?—सो युद्ध के समय इन सब बातों का ध्यान कोई भी नहीं कर सकता। अकेले रूसियों कोही दोष क्यों दिया जाय जब कि सभी शक्तियों ने एक दूसरे से चढ़बढ़ कर लूट और अत्याचार किये हैं ! स्वयम् अंगरेज़ों ने भी लूटमार में कमी नहीं की—लड़के बाले शायद इसलिये बचा दिये गये हों कि पीछे अपनेही काम आवैंगे। सो सत्य भी है देखते नहीं हो सैकड़ों अनाथ बालक तुम्हारे कैम्प में मंजूरी करते हैं जिन के मा बापों को तुमने मारडाला था !

और तो क्या हिन्दुस्तान चीन का पड़ोसी और भाई भी है पर स्वयम् हिन्दुस्तानियों ने क्या लूट खसोट में भरसक कमी की थी ?

पाठक ! चीना हकीम की इस बात से मेरे हृदय पर चोट लगी ! कुछ कह नहीं सका !

हकीम जी आगे कहने लगे कि हम इन बातों के लिये विदेशियों को किञ्चित् मात्र भी दोष नहीं देते !

यह तो युद्ध के खेलही हैं परन्तु शोक इतनाही करते हैं कि चीन की प्रजा युद्ध के नये नये खेलों और संसार के नये नये तमाशों से अनजान हो गई थी इसी से आज यह सब दुख देख रही है ॥ इत्यादि—

चीन और हिन्द ॥

कौन नहीं जानता कि एशिया खण्ड में हिन्दुस्तान और चीन यह दोनों देश बहुत बड़े और उपजाऊ हैं सभ्यता की ओर से भी यही दोनों देश सर्व जेष्ठ हैं ॥ यह सर्व सम्मत बात है कि संसार भरमें सब से प्राचीन पुस्तक जिसके पहिले का कुछ पताही नहीं है (वास्तव में पहिले कुछ था ही नहीं) वेद हैं। वैदिक शिक्षा सर्व प्रथम आर्य्योंद्वारा हुई। इसी से आर्य्यावर्त देश सब संसार भर का विद्या गुरु ठहरता है ॥

और चीन भी बहुत ही प्राचीन देश है चीनियों के पास सन् ईस्वी से ढाई

हज़ार वर्ष पहिले तक के इतिहास ग्रन्थ क्रमानुकूल (सिलसिलेवार) मौजूद हैं ॥

तबसे थोड़े बहुत हेर फेर के सिवाय बराबर स्वतन्त्रता पूर्वक अपनेही राजाओं के आधीन रहा है ॥ संसारभर में जो कुछ पैदा होता होगा वह सब चीन में भी अवश्य उपजता है ।

इस दशामें चाहिये था कि देश खूब उन्नत दशा में होता ! परन्तु अवस्था इस के विरुद्ध है ! चीन अत्यन्त हीन दशा को पहुँच गया है ॥ मैं यहां पर एक अंग्रेज़ पादरी का बनाया हुवा हिसाब जो कि उसने थोड़े दिन हुवे हिन्दुस्तान चीन और इंगलिस्तान के साथ तुलना करके बनाया था लिख देताहूं जिससे साधारण लोगों की आमदनी का हाल विदित होजायगा ॥

"पादरी साहब कहते हैं कि औसत के हिसाब से अंग्रेज़ लोग ३५०) साल कमाते हैं और कुल यूरोपवालों की कमाई का औसत १८०) साल है ॥ हिन्दुस्तानियों की आय २०) साल मात्र है !!! चीनियों की आमदनी का औसत भी इसी तरह का है !!!

हिन्दुस्तान के कितने ही भागों में लोग अधिक और कितनोंही में कम कमाते हैं ! खेतों में काम करनेवालों की आय कहीं अढ़ाई रुपया महीना और कहीं १५) महीना तक है ! बंगाल में छः रुपया । पश्चिमोत्तर में ४) पंजाब में ६॥) बम्बई में ७) मद्रास में पौने पांच रुपया मिलता है । उसका मध्य पांच रुपया होगा अर्थात् दो आना आठ पाई रोज़ ॥

चीन देश में शान्तुङ्ग जिले में किसान लोगों को दो आना तीन पाई से लेकर तीन आना तीन पाई तक मिलता है और ज्यों ज्यों समुद्र से दूर रहते हैं त्यों त्यों उनको कम मिलता है ॥

बढ़ई लोहार राज आदि कारीगरों को हिन्दुस्तान के कलकत्ता मद्रास बम्बई आदि नगरों में सात से दश आना रोज तक मिलते हैं चीन के बड़े बड़े नगरों में राज और बढ़ई पांच आना और लोहार सात आना रोज कमाते हैं !

देश की आय बढ़ाने का उपाय यह होता है कि वहां की उपजी वा बनाई हुई वस्तु विदेशों को अधिक भेजी जावें । सो चीन में यह बात बढ़ती नहीं किन्तु घटती है ॥

चीन से चाय और कौपाम्बर विदेशों को भेजते हैं । इन्हीं दो वस्तुन का

व्यापार विदेशों के साथ अधिक तर था–सो चाय के बनाने में यह लोग अब चिन्ता कम करते हैं और बहुत मिलौनी भी करते हैं इसी से विदेशों में चीना चाय की बदनामी हुई और हिन्दुस्तान तथा लंका की बनी चाय अधिक तर विकने लगी जिससे चीन के व्यापार को हानि हुई ! पूर्वकाल की अपेक्षा कौ-षाम्बर को भी अब यह लोग बहुत कम बनाते हैं। और बनाने की रीतों में कुछ उन्नति न करने के कारण इनकी वस्तु भी भद्दी पड़गई जब कि विदेशों में नई नई रीतियों से अधिक सुन्दर सुन्दर वस्त्र पट्ट कौषाम्बर आदि बनाये जाने लगे इत्यादि ॥

उक्त पादरी साहब यह भी कहते हैं कि आज कल जिस भांति की आमद-नी चीन और हिन्दुस्तान में है उसी भांति की आमदनी इंग्लिस्तान की चार सौ वरस पहिले थी ! उन दिनों इंग्लिस्तान के बढ़इयों को चार आना रोज मिलता था ! इत्यादि ॥

ऊपर के हिसाब से स्पष्ट है कि यूरोप और एशिया के आय सम्बन्ध में कितना अन्तर है ! व्यापार ही मनुष्य जीवन का प्राण स्वरूप है ! व्यापार की उन्नति के लिये बड़ी उद्योग शीलता आवश्यक है।

भली भांति विद्या उपार्जन करना संसार भर की उपज और जरूरतों से अभिज्ञ होना—अपनी बाहुवों पर भरोसा रखने की योग्यता प्राप्त करना इत्यादि व्यापार की सीढ़ियां हैं। इस संबंध में चीन और हिन्द का इंगलिस्तान से मिलान करना कौड़ी और मोहर के तुल्य है ! धरती की उपज अन्न फल आदि की पैदावार जहां अधिक हो वही देश बहुत श्रेष्ठ गिना जाता था सो देखते हैं इस विषय में इंगलिस्तान सब से कम है। अन्न की पैदावार तो नाम मात्र ही को है। तिसपर भी उन्नति में सर्व शिरोमणि बनाहुआ है !

हिन्दुस्तान में आये दिन अकालही अकालकी पुकार पड़ी रहती है परन्तु इंग्लिस्तान के लोग अकाल को जानते तक नहीं ! अपनी विद्या जवांमर्दी और मेहनत की बदौलत बलात सदा सुकाल को स्थिर रखते हैं !

धरती की उपज कम हो वा अधिक उसी पर भाग्य का निर्णय करना आल-सियों का काम है ॥

जैसा चीनियों और हिन्दुस्तानियों का परन्तु अंगरेज ऐसे कदापि नहीं हैं ! क्या हुवा यदि उनके यहां रुई नहीं उपजती वह तुम से उचित दामों पर और

उचितही क्यों तुम्हारे अन्दाज से दुगने दामों पर भी मोल ले जायँगे ॥ रुपये की चार सेर वा दोही सेर रुई लेजाकर उसको अपने हाथों के कर्तव्य से ऐसा बनावेंगे कि फिर उसी वस्तु को तुम्हारेही हाथों रुपये की छटांक भर (कपड़ों के रूप में) वेंच जायँगे !

बताइये तो सही आपके धरती की उपज श्रेष्ठ हुई वा उनके बाहुबल की ? फिर भला अकाल उनको क्योंकर मुंह दिखा सकता है ॥

दुनियां में चाय की पत्ती का इस्तेमाल सर्व प्रथम चीन देश से ही आरंभ हुवा है-सो चाहिये था कि इसके व्यापार में चीनवाले नित नूतन उन्नति करते अच्छी से अच्छी रीति द्वारा पत्तियों को साफ सुथरी करने-सुगंधित स्वादिष्ट सुंदर औ लाभकारी बनाने में यत्न करते जिसमें उसकी बिक्री सब देशों से अधिक अधिक फैलती। परन्तु वैसा न करके उलटे वे बिगाड़ने में प्रवृत्त होगये ! मूर्खता के कारण अच्छी वस्तु में मिलौना करके भेजने लगे—कदाचित् यह समझकर कि मिलौना भेजने में खरच कम होगा परन्तु दाम उतनेही आवेंगे सो नफा अधिक होगा !

परन्तु परिणाम यह हुवा कि चीना चायका व्यापारही लगभग बन्द होगया!!!

यही दशा हिन्दुस्तान के सूती वस्त्रों के विषय हुई !

इंगलिस्तान के लोगों को जब शाहंशाह रूम के द्वारा कुछ शिक्षा प्राप्त हुई और विदेशों के हाल सुनने और गुनने लगे उस समय मिश्र और हिन्दुस्तान आदि देशों से व्यापार की बहुत चीज़ें वहां जाती थीं और विदेशी लोग बड़ा लाभ उड़ाते थे। यह देखकर उनके मनमें भी यह इच्छा उत्पन्न हुई कि जैसे यह विदेशी लोग बाहर से माल लाकर हमारे यहां बेचते हैं और लाभ उठाते हैं उसी तरह हम लोग स्वयम् क्यों न उन देशों को जाकर माल लाने का उद्योग करें ? इस बातको पक्की करके अंगरेज लोग जिस भांति अमरीका और हिन्दुस्तान पहुंचे वह सब दोहराने की आवश्यकता नहीं है। आप जानतेही हैं ॥ हिन्दुस्तान में आकर सुन्दर सुन्दर सूती वस्त्रों को देख वह लोग मोहित होगये इरादा किया कि इन वस्त्रों को लेजाकर अपने देशमें बेचेंगे और बहुत बड़ा लाभ उठावेंगे ॥ ऐसाही करने भी लगे ! काम की अधिक सुविधा के लिये कपास की खेती का भी उपाय करने लगे ! और बहुत कुछ लाभ उठाते रहे ! होते होते उन्हों ने इस व्यापार को यहांतक उन्नत दशा में पहुंचाया कि न केवल अपनेही देश में अनु-

पम वस्त्रादि प्रस्तुत कर दिये वरन हिन्दुस्तान को भी अपनेही बनाये वस्त्रों में लपेट दिया। जो इतना करसकता था–सुदूर समुद्रपार हमारे हनूमान्‌जीसे भी बढ़कर एकही उछाल में इंगलिस्तान से हिन्दुस्तान में आकर कूद सकताथा और मानुषीय रुचि पहिचाननें के साथ साथ उसकी पूर्त्ति के उपाय भी सोच सकताथा वह यदि अन्त में सर्वाध्यक्ष तक बनजाय समस्त राज्यपाट धन धरम का अधिकारी बनजाय तो आश्चर्य्यही क्या है?

यह सब उतार चढ़ाव देख सुनकर भी चीन देश सचेत न हो सका—इसे विधि विडम्बना के सिवाय और क्या कहा जाय? अथवा मिथ्या धर्म विश्वास का परिणाम कहिये! और इसी घातक के शिकार एशिया के प्रायः देश हुवे हैं!!!

यही पादरी साहब कहते हैं कि यदि कोई पूछे कि हजारों बरस से अपना राज्य होते हुवे और उपजाऊ भूमि रखते हुवे भी चीन देश की उन्नति क्यों नहीं हुई तो यह कहना है कि वहां उन्नति पथ की बहुत सी रुकावटें हैं पहिली रोक घमंड और अपने देश पर मिथ्या भरोसा रखना है कहावत है कि वह जो सोचता है कि मैं सब कुछ जानता हूं वह कुछ भी न सीखेगा जैसा चीनवाले अपनी स्त्रियों के पांव को छोटी जूतियों से छोटा कर देते हैं–इसी रीति से वह घमंडसे अपनी समझ को भी छोटी कर देते हैं। सो देखने में आता है कि सैकड़ों बरस से उनका शिष्टाचार वैसाही बना रहता है बदलता वा बढ़ता नहीं—इसका कारण यह है कि वे कूप मंडूक के समान हैं जो सोचते हैं कि संसार भर में हमारे समान और लोग हैं हीं नहीं तो हम किससे क्या सीखें—और किस बात में उन्नति करें॥

दूसरी रोक उत्कोच (घूस) है—

चीन के अध्यक्षों (जिलों के हाकिम) को सरकार से कम वेतन मिलता है। इसलिये वे घूस लेने और अन्याय करने और प्रजा को तंग करने से कमाते हैं॥

इस से प्रजा भयभीत रहती है और धन उपार्जन के बड़े बड़े उपाय नहीं कर सकती वरन धनवान् लोग भी अपने आप को कंगाल दिखाने के लिये धन को धरती ही में गाड़ रखतेहैं. न हो कि अधिक व्यापार फैलानेसे अधिक राजदंड लग जाय!

तीसरी रोक आबादी की अधिकता है—जब छोटे देश में अगणित लोगों का निवास होता है तो उन के लिये जीविका पाना कठिन हो जाता है। जिन लोगों के पास थोड़ी जमीन है यदि इस बात का विचार न करके कि हमारे बाल बच्चे कहां से खायँगे वे विवाह करते हैं तो अवश्य ऐसे देश के लोग कंगाल होंगे क्योंकि उन के योग्य अन्न भूमि उत्पन्न नहीं कर सकती है ॥

चौथी रोक अपव्यय है—

चीन वाले शादी गमी और पर्व्व त्योहार आदिकों में और पूजा इत्यादि में बहुत खर्च करते हैं इस से अनेक लोग ऋणी हो जाते और जीवन भर तंग रहते हैं ॥

पांचवीं रोक स्त्रियों का न पढ़ाना है ॥

छठवीं रोक अफीम पीना है ॥

चीन वाले अफीम के लिये हर साल घट बढ़ चौदह करोड़ रुपया विदेशियों को देते हैं। इस से दो बड़ी हानियां होती हैं—एक तो इतना अधिक धन हरसाल देश से वृथा ही निकल जाता है दूसरे अफीम पीने वाले अच्छी रीति से परिश्रम नहीं कर सकते। और इस से कंगाल पन बहुत बढ़ जाता है ॥

सातवीं रोक मिथ्या धर्म विश्वास है—जो लोग ईश्वर की उपासना नहीं करते उन्हें आशीष नहीं मिलती। वह लोग ईश्वर को त्यागकर देवी देवताओं की ओर फिरकर हृदयकी मलीनता पैदा करते हैं। न केवल इतनाही बरन ऐसे लोग भूत प्रेतों से बहुत डरते और अपनी रक्षा के लिये उन देवी देवताओं वा भूत प्रेतों के नामपर वृथा बहुत रुपये पाखंडियों और ठगोंके हवाले करते हैं।

स्वभाव से चीन वाले बहुत चतुर हैं परन्तु ऐसे मिथ्या धर्मसे कैसे कुबुद्धि वा मतिहीन होगये हैं सो प्रत्यक्ष है ॥

उपरोक्त पादरी साहबके रिमार्क चीना लोगोंको और हम हिन्दुस्तानीलोगों को भी ध्यानदेने योग्य है ॥

पहिली रोक घमंड और अपने देश पर मिथ्या भरोसा रखना बताते हैं सो ठीक भी प्रतीत होती है।

उन्नति का अर्थ बढ़ती है—सो यदि हम यह मानलें कि हम में कुछ कमी ही नहीं है तो बढ़ती किसबात की करेंगे ?

बस किस्सा तमाम हुवा !!!

यह बात हिन्दुस्तान के विषय में भी सम्पूर्ण रूपसे घटित होती है राजपूत कहलानेवाली आर्य्य सन्तान आज अपने इसी गर्व में चूर है कि वह अमुक घराने में ब्याह सम्बन्ध रोटी बेटी करेंगे और अमुक में नहीं करेंगे—इत्यादि राजपूती का गर्व आपुस में तो इतना बड़ा—परन्तु हाय हाय उदर दरी के भरने के वास्ते उन्हें यातो कलकत्ते के दूकानदारों की दरवानी या डीलडौल अच्छा हुवा पलटन की सिपाहीगरी ही करनी पड़ती है॥—वहां गौरव गरिमा और मान सम्भ्रम सब दूर हो जाता है !!! क्या यही ऊंची जात की पहिचान है ?

भाई इस तरह तो उस दिन कहारों की पंचायत ने फैसला किया था कि धोबिन की पालकी कोई कहार न उठावें क्योंकि रजक की जाति बहुत नीच है और धोबियों की पंचायत ने यह फैसला किया था कि कहारों के कपड़े कोई धोबी न धोवें क्योंकि कहार खिद्मतगारी पेशा करनेवाले निषिद्ध जाति के हैं॥—इतने में एक दारोग़ा जी आये और दोनों पंचों को पकड़ लेगये कोड़ों की मार से पंचायतें सब रद्द होगईं !!!

क्या ठीक यही दशा हमारी नहीं हुई है ? फाटक पर खड़ाहुवा दरवान क्या राजपूत कहलाने का अधिकारी है ?

प्यारे क्षत्री सन्तान ! विचार कर देखो तो आजकल सच्चे राजपूत हमारे अंगरेज बहादुर ही हैं ! सो यदि तुम भी अपनी बीती बिसूर कर राजपूती का दावा करते हो तो सब तरह से इन सच्चे राजपूतों से शिक्षा ग्रहण करो और उनका अनुकरण करो॥

मिथ्या घमण्ड और अभिमान सचमुच तुमको शिक्षा ग्रहण करने और उन्नति करने से रोकता है॥ माना कि अहंकार बड़ी भारी चीज़ है और यह जातीयताका अनमोल पदार्थ है परन्तु अहंकार करना भी तो विना सीखे न आवेगा—सो यह भी राजपूतों को राजा से ही सीखना उचित है॥—

चीन की उन्नति में दूसरी रोक रिश्वत लेना बताई गई है॥ सो यह चीन के विषय में तो ठीक हुई है क्योंकि उसका रोकना राजा के हाथ में था। सो न करके राजा ने अपने कर्तव्य में शिथिलता की परन्तु हिन्दुस्तान इस विषय में परवश है। और हिन्दुस्तान में इसकी अधिकता भी नहीं है। इतना

तो अवश्य है कि बड़े बड़े व्यापार देश भरके सब विदेशियों के हाथ में हैं।

सो वे रोजगारी के कारण दिन दिन प्रजा कंगाल होती जाती है और तुच्छ नौकरी के ही पीछे जान देती फिरती है !!! छोटी नौकरी वाले घूस भी लेने लगते हैं ॥

तीसरी रोक आबादी की अधिकता कहा है-

यह बात बिलकुल सच है-यही कारण है कि जब अंगरेजों की नसलें बढ़ने-लगीं और इंगलिस्तान की भूमि में उनके लिये स्थान की कमी बोध हुई तब अमरीका अफरीका और अन्यान्य टापुओं में जाजाकर बसने लगे ॥ परन्तु यह हमारे समझ में नहीं आया कि उस समय इन पादरी साहब की तरह का कोई शिक्षक मौजूद था वा नहीं? शायद नहीं होगा क्योंकि होता तो विवाह की रुकावट होजाने से आबादी ही क्यों बढ़ती और काहे को बेचारे रेड इंडियन्स और अफ्रीकन हबशियों का सत्यानाश होता ॥ आबादीकी अधिकता से कंगाली न फैलने देने का असली उपाय व्यापार है। धरती की उपज पर सन्तोष न करके अन्यान्य उपायों से उपार्जन करना और यों अपने देश को हराभरा बनाना देश की सच्ची सन्तान का अवश्य कर्तव्य है !

कोई वस्तु किसी देशमें अधिकतासे पैदा होती है और कहीं न्यूनता से-सो एक स्थान की बहुतायत को दूसरे स्थान में पहुंचाना और इस के द्वारा लाभ उठाना व्यापार का मुख्य तात्पर्य्य है। सो आबादी अधिक हो वा कम—यदि सन्तान व्यवसायी हो तो कंगाली निकट नहीं आ सकती !

क्या इंगलिस्तान अपनी आवश्यकता भर को पर्य्याप्त गेहूं पैदा कर सकता है? परन्तु न करने पर भी क्या इंगलिस्तान कंगाल है?

हां—इतना तो अवश्य हुवा कि इंगलिस्तान की आबादी बढ़ने के साथ साथ ही वहां की सन्तान अधिकता से अन्यत्र बसती भी गई-सो चीन और हिन्दुस्तान को भी अन्यान्य टापुओं में बसने की सलाह दी जाती तो ठीक होता !

चौथी रोक अपव्यय कहा गया है। यह ऐब चीन और हिन्दुस्तान दोनों देशों में है। व्याह बरात और गमी मौत आदिकों में सचमुच लोग इतना अधिक खर्च करते हैं कि बहुधा ऋणी भी हो जाते हैं—यह चाल बहुत बुरी है. परन्तु उन्नति में रोक की कोई बात इस में नहीं प्रतीत होती ॥

पांचवीं रोक स्त्रियों का न पढ़ाना—वास्तव में सच्ची वात है ॥ बालक की शैशव अवस्था में माता ही आदि शिक्षक है सो मातायें यदि स्वयं अपढ़ हों तो सन्तान गण शिक्षित कैसे होंगे ! सो सम्पूर्ण देश भर के लोगों के जीवन का आदि भाग मूर्खता में व्यतीत होगा ! यह बड़ी भारी रुकावट है ॥

यह कुचाल जैसी चीन में वैसी ही हिन्दुस्तान में भी है !

हिन्दुस्तान में तो स्त्रियों के अपढ़ होने के कारण परिवारों में आये दिन कलह व बखेड़े और दम्पति में परस्पर बिरोध बने ही रहा करते हैं जिस से सन्तान भी कलह कारिणी उत्पन्न होती है ! इस दुर्दशा के कारण हिन्दू परिवार में सुख और आमोद का अभाव ही जैसा हो रहा है ॥ तो आगे की आशा क्या की जाय ?

सो इस रोक के निकालने में उन्नत्याभिलाषी लोगों को मन चित्त से लगना चाहिये ॥

छठवीं रोक अफीम पीना है ॥

पादरी साहब ने वहुत सत्य कहा है कि इस से धन वल और पुरुषार्थ सभी नष्ट होते हैं ॥

चीन में अफीम का व्यापार विलकुल अंग्रेजों के ही हाथ में है । सो यदि यह चाहैं तो अफीम का प्रचार देश से वहुत घट सकता है परन्तु यह चाहना भी कैसे हो सकती है ? जव कि एक वड़ा व्यापार उसी वस्तु पर निर्भर है !

हिन्दुस्तान में अफीम का प्रचार है तो परन्तु इतना अधिक नहीं जैसा कि चीन में ।

चीन की कंगाली का हेतु और उन्नति की रुकावट जैसे अफीम है—उसी भांति हिन्दुस्तान की कंगाली का हेतु और उन्नति में रुकावट विदेशी वस्त्रादि पदार्थों का व्यापार है संसार की तवदीलियों के साथ साथ हिन्दुस्तानियों की रुचि तो वदलती जाती है परन्तु नवीन रुचि की आवश्यकता पूर्ति विलकुल विदेशों पर निर्भर करती है हमारे सारे जीवन की आवश्यकतायें विदेश से पूरी की जाती हैं ॥

मानो हमारी आवश्यकता पूर्ति का प्रवंध हमारे राजाधिराज ने अपने ही हाथ में ले लिया है ॥ सो हमको जैसे न्याय के लिये और शासन के लिये उन

का मुख निहारना है उसी भांति अपने अंग ढांकने और आमोद प्रमोदकी वस्तुयें पाने के लिये भी उन्हीं का मुंह तकना पड़ता है ॥ यदि कोई हिन्दुस्तानी धृष्टता करके कोई कारखाना खोलना भी चाहता है तो उस के मार्ग में अनेकों रुकावटें बाधा देती ह जिससे लाचार होकर उस को चीना अफीमी की तरह शान्त और निर्द्वन्द जीवन का सुख अनायास ही प्राप्त करना होता है ॥

सो जैसे चीनकी उन्नति में रुकावट अफीम पीना है उसी भांति हिन्दुस्तान की उन्नति की रुकावट व्यापार दौर्बल्य है ॥

सातवीं बात धर्मसम्बन्धी है इसपर तो कुछ कहनाही नहीं है मिथ्या विश्वास न जाने कितने घर चापर करेगा ?

धार्मिक शिक्षा एक महान् शिक्षा है और धार्मिक बलभी ज्वलन्त शक्ति है ॥ मनुष्य का हृदय जलवत् तरल और शीतल है तथा धार्मिक बल एक ज्वलन्त अग्नि है ॥ जैसे रेलके एंजिन के हृद में जल भराहुवा होता है- और अग्नि की उष्णता पहुंचतेही उसमें कैसी वेगवान् शक्ति उत्पन्न होजाती है जो हमलोग नित्यही देखते हैं, उसी भांति मनुष्यके सरल हृदयरूपी हृद में धर्म रूपी आंचकी उष्णता पहुंचनेसे जितना द्रुत बल उत्पन्न होता है वह इतिहास वेत्ताओं से छिपानहीं है धर्मबल से बलवान् आत्मा संसार में क्या कुछ नहीं करसकता !

परन्तु वही महाबल यदि अनृतकी ओर प्रवृत्त होजाय तो बड़े बड़े अनर्थ और संकट भी उपस्थित होजाते हैं जैसे जल और अग्निसे शक्ति प्राप्त एंजिन यदि मार्ग छोड़कर इधर उधर डिग जाय तो अपने पीछे लगी हुई सारी गाड़ियों को भी अपने साथही चकना चूर करडालैगा। ठीक यही दशा हमारे हिन्दुस्तान और चीनकी धर्म सम्बन्ध में हुई है !

हमारे धर्मका पुरातन जहाज संसार सागर में न जानै कितनी हिलोड़ें खाता हुवा कितने आंधी तूफान और विघ्नों के झंकोरे सहन करता हुवा डांवाडोल हो गया था ! इसी डांवाडोल के कारण समस्त आरोही गण कितना विचलित होगये कुछ ठिकाना है ? अकुलाकर और आतुर होकर कितने लोगोंने जहाज को त्याग दिया और छोटी छोटी नौकाओं (life boats) के सहारे पारहोने की इच्छा से समुद्र में कूदपड़े ! हाय हाय कितनेही लोगोंने इसभांति प्राण देदिये ! (हज़ारों ईसाई और मुसलमान होगये) परन्तु समुद्र के मध्य में जब बड़े बड़े जहाज डांवाडोल होजाते हैं तब नौकाओं का कहां ठिकाना लग सकताहै ?

जहाज में हालाडोल पड़ जाना वा मार्ग भ्रमका होना सुदक्ष मांझी के अभावसेही होता है—अन्यथा उसमें कोई भयकी बातनहीं होती अज्ञानी लोग जहाज छोड़ छोड़कर अलग होते और प्राण गँवा देते हैं।

प्यारे आर्य्यगण!

तुम्हारे धर्मरूपी जहाज में जो यह धर्म विप्लवरूपी हाला डोल मच गयाथा सो केवल सुदक्ष मार्ग दर्शक के अभाव से ही था!

धन्यवाद करो कि अब वह अभाव नहीं रहा! अब धर्मके जहाज को चलाने के लिये तुम्हारे सन्मुख समस्त संसार का वेदरूपी मानचित्र उपस्थित है सो उसी के अनुकूल जहाज को अभिलषित मार्गकी ओर लक्ष्यकरके यात्रा करो निःसंदेह तुमको किनारा मिलैगा और सुखसे यात्रा समाप्त होगी॥

❀ चीन चित्र माला ❀

चीन के प्रसिद्ध मंदिरों, इमारतों, परिवारों आदि के चित्र तथा रूस, जापान, फ्रान्स, इटाली, आस्ट्रिया, अमेरिका आदि देशों के अफ़सरों और सैनिकों के ग्रूप्स, एवं चीन के अन्यान्य प्राकृतिक दृश्यों की तस्वीरें इस ग्रन्थकर्ता ने संग्रह की हैं जो कि ग्राहकों की रुचि जानने पर छपाई जायँगी॥ कुल पचास से ऊपर तस्वीरों के अलबम् की लागत, फोटो चित्र कोई १०) और छापा चित्र ५) होगी।

अलग अलग तसवीरें भी मिल सकेंगी॥

कृपा करके पत्र व्यौहार करें॥

ठाकुर गदाधर सिंह.

दिलकुशा लखनऊ.